भारत में नाथ संप्रदाय की राजनीतिक और सामाजिक अभिव्यंजना

शोध-प्रबन्ध

राजनीति शास्त्र में

पी-एच०डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोधकर्ता

सरवन सिंह बघेल

MUIT0120038258

शोध निर्देशिका

डॉ० ऋतू सिंह मीना

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग

महर्षि विज्ञान एवं मानविकी स्कूल

महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

सीतापुर रोड, पोस्ट महर्षि विद्या मंदिर

लखनऊ, 226013

अक्टूबर 2024

"ॐ नमो भगवते गोरक्षनाथाय"

प्रार्थना

असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय। भोः परमात्मन्, असतः सकाशात् मां सत्यं गमय, तमसः मां प्रकाशं गमय, मृत्योः सकाशात् माम् अमृतं गमय।

पवित्रो ह्ययं मन्त्रः। सार्वत्रिको मन्त्रोऽयम्। विश्वशान्तिमन्त्रोऽयम्। सार्वजनीनशान्तिमन्त्रोऽयम्।

सर्वैरपि मानवैः विश्वशान्त्यै पठनीयोऽयं मन्त्रः। ईश्वरे प्रार्थनीयोऽयं मन्त्रः॥

भोः परमात्मन्, अस्मान् असत्यात् सत्यं प्रति गमय। इदं सर्वं हि जगत् मिथ्यारूपमेव। परमात्मा एक एव हि सत्यम्। अस्मान् अस्मात् आभासरूपात् जगतः सत्यं परमात्मानं प्रति गमय इत्यर्थः।

सर्वोऽप्ययं प्रापञ्चिको व्यवहारः अन्धकारमयः। अहङ्कारममकारैः पूर्णोऽयं व्यवहारः सर्वोऽपि अन्धकार एव। अस्मात् अस्मान् परमार्थस्वरूपं प्रकाशं प्रति नय इत्यर्थः। तथा सर्वमिदं शरीरं मृत्युरेव, अस्मात् शरीरबन्धनात् अस्मान् अमृतत्वं प्रति गमय इत्यर्थः। एताः तिस्रः मुमुक्षुभिः भगवति क्रियमाणाः प्रार्थनाः॥

बृहदारण्यकोपनिषद

महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

शोध छात्र का प्रतिज्ञा-पत्र

मैं, सरवन सिंह बघेल, प्रमाणित करता हूँ कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध **"भारत में नाथ संप्रदाय की राजनीतिक और सामाजिक अभिव्यंजना"** मेरे स्वयं के प्रयास से और पूर्णतया वास्तविक है। इस शोध प्रबन्ध को किसी अन्य उपाधि के लिए प्रस्तुत नहीं किया गया है।

दिनांक: **शोध छात्र**

स्थान: **सरवन सिंह बघेल**

महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध **"भारत में नाथ संप्रदाय की राजनीतिक और सामाजिक अभिव्यंजना"** श्री सरवन सिंह बघेल, शोध छात्र, राजनीति शास्त्र विभाग, महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ द्वारा राजनीति शास्त्र में पी-एच०डी० उपाधि हेतु मेरे निर्देशन में नियमानुसार परिपूर्ण कर प्रस्तुत किया गया है। इस विषय पर यह शोध सर्वथा मौलिक और नवीन उपलब्धियों से युक्त होने के साथ ही इनके निजी अध्यवसाय एवं कठिन परिश्रम का परिणाम है। यह शोध श्री सरवन सिंह बघेल द्वारा एक किये गए तथ्यों एवं आकड़ो पर आधारित है। इसके अन्तर्गत वैज्ञानिक तथा पद्धति शास्त्रीय रूप में तथ्यों एवं आकड़ो का प्रस्तुतिकरण उनका स्वतः प्रयास है।

मैं, श्री सरवन सिंह बघेल के इस कार्य से पूर्ण रूप से संतुष्ट हूँ तथा इस शोध-प्रबन्ध को पी-एच०डी० उपाधि हेतु परीक्षणार्थ सम्प्रेषित करने के लिए अनुमोदित करती हूँ।

दिनांक

स्थान

शोध निर्देशिका

डॉ० ऋतू सिंह मीना

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग

आभार

गुरु गोरक्षनाथ की असीम कृपा अनुकम्पा, साईं की कृपाद्रष्टि, गुरुजनों के विव्द्त्तापूर्ण मार्गदर्शन , आत्मीयजनो के आशीर्वचन एवं मित्रो के सहयोग से प्रस्तुत शोध प्रबंध अपनी पूर्णता को प्राप्त कर सका है। मैं आप सभी के प्रति आभार ज्ञापित करना अपना परम कर्त्यव समझता हूँ। सर्वप्रथम मैं अपनी शोध निर्देशिका परम आदरणीय डॉ० ऋतू सिंह मीना के प्रति नतमस्तक हूँ, जिनके विव्दतापूर्ण स्नेहाशीष की छाँव में मैं अपना शोध कार्य संपन्न कर सका। आपका आशीर्वाद सदैव बना रहे ईश्वर से यही कामना करता हूँ साथ ही अधिष्ठाताथा शोध डॉक्टर डी के सिंह के प्रति उनके सहयोग के प्रति श्रद्धा पूरक आभार प्रकट करता हूं, ज्ञात करता हूँ।

अन्तः अथक प्रयास के बावजूद शोध प्रबंध की त्रुटिपूर्ण एवं दोषपूर्ण रह जाना अवश्यम्भावी है क्योंकी प्रबंध एक इकाई है और ज्ञान अखंड असीम होता है। अनुसंधानकर्ता इस बात से आश्वस्त एवम् संतुष्ट है कि उसने अपने ज्ञान और शक्ति के अनुसार डॉ० ऋतू सिंह मीना के कुशल निर्देशन में विषय के साथ न्याय करने की पूरी चेष्ठा की है, जैसा की -

“ आ परितोषद विदुषां न साधु मन्ये प्रयोग विज्ञानम्।। “

(सरवन सिंह बघेल)
राजनीति शास्त्र विभाग
महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय

सार

नाथ संप्रदाय भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह संप्रदाय अनेक धार्मिक और आध्यात्मिक तत्वों का संगम समर्थन करता है और विभिन्न योगियों के माध्यम से आध्यात्मिक सिद्धि की ओर प्रेरित करता है।

नाथ संप्रदाय का उद्गम महासिद्ध गोरखनाथ योगी के नाम से जुड़ा है, जिन्होंने अपने अनुयायियों को ध्यान, तपस्या, और आध्यात्मिक साधना के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति की सीख दी। इस संप्रदाय के अनुयायी नाथ योगीश्वरों को महासिद्धों के रूप में मानते हैं और उनकी विशेष शक्तियों और साधना विधियों का सम्मान करते हैं।

नाथ संप्रदाय ने अपने धार्मिक और सामाजिक अंतर्निहित तत्वों के माध्यम से भारतीय समाज को समृद्धि और एकता का संदेश दिया है। इसके सिद्ध और अनुयायी विभिन्न कालों में समाज के भीतर धर्मिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के माध्यम से नाथ संप्रदाय की अभिव्यंजना करते रहे हैं।

भारतीय समाज में नाथ संप्रदाय विशेष धार्मिक और सामाजिक महत्व रखता है। इस संप्रदाय का अभिव्यंजन भारतीय इतिहास और संस्कृति के माध्यम से देखने पर समझा जा सकता है। यह अध्ययन अखंड भारत में नाथ संप्रदाय की अभिव्यंजना पर ध्यान केंद्रित करता है। नाथ सम्प्रदाय की मूल धारा उन्हें नाथ योगीश्वरों के शिष्यों के रूप में पहचानती है, जिन्होंने ध्यान, तपस्या, और धर्म के माध्यम से आध्यात्मिक परिपूर्णता की प्राप्ति के लिए संकल्प लिया। इस अध्ययन में नाथ संप्रदाय के ऐतिहासिक विकास, उनके धार्मिक और सामाजिक प्रभाव, और उनके संस्कृतिक योगदान को समझाने का प्रयास किया गया है। इस प्रक्रिया में, विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक स्रोतों से प्राप्त आंकड़े और तथ्यों का उपयोग किया गया है।

यह अध्ययन नाथ संप्रदाय के संस्कृतिक विरासत और भारतीय समाज में इसके स्थान को समझने में मदद कर सकता है। इसके अलावा, नाथ संप्रदाय की आध्यात्मिक परंपराओं और उनके धार्मिक तत्वों का मानवीय विकास और सामाजिक समृद्धि में योगदान का भी विश्लेषण किया गया है।

-: विषय सूची :-

विवरण		पृष्ठ संख्या
मुखपृष्ठ		i
प्रार्थना		ii
शोध छात्र का प्रतिज्ञा-पत्र		iii
प्रमाण पत्र		iv
आभार		v
सार		vi
विषय सूची		vii
प्राक्कथन (अखंड भारत में नाथ संप्रदाय की अभिव्यंजना)		1-4
अध्याय-एक	भगवान श्री कृष्ण द्वारा प्रतिपादित श्रीमद् भागवत कथा के अनुसार संतो के लक्षण	5-6
अध्याय- दो	श्री तुलसीदास जी द्वारा रचित श्री रामचरित मानस में संत-असंत लक्षण	7-11
अध्याय- तीन	नाथ पंथ का प्रादुर्भाव (दर्शन और स्वरुप)	12-31
अध्याय-चार	नवनाथ, सिद्धबारह पंथ, चौरासी सिद्ध	32-50
अध्याय-पांच	नाथसिद्धों की परम्परा और बारहपंथ	51-58
अध्याय-छ:	नाथयोग का सामाजिक जीवन पर प्रभाव	59-76
अध्याय-सात	नाथ सम्प्रदायें और भारत	77-84
अध्याय-आठ	नाथ संप्रदाय का भारतीयता (स्वाधीनता, राजनीतिक और सामाजिक) आन्दोलन में सहयोग	85-94
अध्याय-नौ	योगी मत्स्येंद्रनाथ	95-99
अध्याय-दस	गुरु गोरखनाथ	100-116
अध्याय-ग्यारह	गोरखनाथ मन्दिर और उसका विराट प्रभा मण्डल	117-121
अध्याय-बारह	योगिराज बाबा गंभीरनाथ	122-129
अध्याय-तेरह	पूज्य महंत दिग्विजय नाथ जी महाराज	130-139
अध्याय- चौदह	राष्ट्रीयता के अनन्य साधक : महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज	140-155
अध्याय-पंद्रह	महाराज योगी आदित्यनाथ	156-168
	हिंदी ग्रन्थसूची संदर्भिका	169-176

प्राक्कथन

समय के सनातन प्रवाह में हमारा जीवन एक पड़ाव की तरह है। पूरी सृष्टि एक दिव्य चेतना से संचालित है। नाना प्रकार के जीवन इस सृष्टि में हैं किन्तु जिसने इस ईश्वरीय सत्ता की अनुभूति कर परब्रह्म परमात्मा का साक्षात्कार किया वह मानव इस सृष्टि की सर्वोत्तम कृति है। यूँ तो इस धरती पर लाखों वर्षों में कोटि-कोटि मनुष्यों ने जन्म लिया और काल के विकराल मुख में समा गये। किन्तु कुछ ऐसे दिव्यात्माओं ने भी जन्म लिया जो अपने ज्ञान, कर्म, अपनी दिव्य चेतना के कारण यशकाय शरीर धारण कर अमरत्व को प्राप्त हुए हैं।

विश्व की संस्कृतियों में भारतवर्ष की संस्कृति को प्राचीनतम संस्कृति के रूप में माना जाता है जिसे सनातन वैदिक संस्कृति के रूप में विश्व ने स्वीकार किया है। हमारी संस्कृति का ही उद्घोष है- **'एकम् सद् विप्र बहुधा वदन्ति'**[1] अर्थात् ईश्वर एक ही है परन्तु विद्वान् (पंडित) उसे अनेक नामों से सम्बोधित करते हैं। इस संस्कृति का ही उद्घोष है- **'वसुधैव कुटुम्बकम्'**[2] सारी वसुधा एक परिवार है जिस विषय की अनुभूति आज हम कर रहे हैं, वह हजारों वर्ष पूर्व हमारे मनीषियों ने ही उद्घोषित किया। आखिर हमारी संस्कृति को इतना महान बनाया किसने, इसके लिए हमें अपने अतीत के उस विराट समय का मंथन करना होगा जिसे असंख्य ऋषियों, मुनियों, संतों, महात्माओं, योगियों, आध्यात्मिक गुरुओं, अवतारों ने अपने ज्ञान, कर्म, साधना, आत्म चेतना से पल्लवित पुष्पित किया। जिनकी दिव्य चेतना के कारण ही आर्यावर्त भारतवर्ष को देवभूमि के रूप में जाना गया। वे सभी भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर हैं। ऐसी दिव्य विभूतियों के कारण ही भारत को विश्व गुरु की संज्ञा से अलंकृत किया गया जिन्होंने सदैव ही मानव कल्याण, विश्व कल्याण की कामना को आधार मानकर अपने उपदेशों, विचारों से मानव का मार्ग प्रशस्त किया। सन्तों के विषय में स्वयं योगीराज भगवान् कृष्ण ने कहा है-

सन्तों दिशन्ति चक्षूंषि बहिरर्कः समुत्थितः।

देवता बान्धवाः सन्तः सन्त आत्माहमेव च॥[3]

अर्थात् जिस प्रकार सूर्य आकाश में उदित होकर लोगों को, जगत् तथा अपने को देखने के लिए नेत्रदान करता है, ऐसे संत स्वयं और ईश्वर दर्शन के लिए अन्तर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

महायोगी गोरक्षनाथ आदिनाथ भगवान शंकर के साक्षात् अवतार थे। उनका पावन चरित परमार्थ पथ के पथिकों के लिए महान संबल है। वह नाथदेव के प्रतिष्ठाता तथा योगी सम्प्रदाय के 'महागुरु' माने जाते है। गोरक्षनाथ जी की प्रतिभा और तेजस्विता अलौकिक थी और उनकी योग साधना अद्वितीय।

भारत सहित अनेक देशों में नाथपंथ का प्रभाव देखा जा सकता है। महायोगी गुरु गोरक्षनाथ की प्रखर दूर दर्शिता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। भारतीय योग परम्परा में गुरु गोरखनाथ का अप्रतिम स्थान है। उनके अलौकिक आध्यात्म बल की शक्ति योग सनातन परम्परा में स्पष्ट दिखाई देती है।

---

[1] ऋ. 1.164.46

[2] महोपनिषद्, अध्याय ६, मंत्र ७१

[3] एकनाथी भागवत - श्लोक १२४ वां

आज के इस उथल-पुथल और संघर्षपूर्ण युग में हम अपने धर्म के संरक्षको तथा प्रतिष्ठापकों को धीरे-धीरे भूलते जा रहे हैं। परन्तु गुरु गोरक्षनाथ की पूज्य पावन पुनीत जीवनी, उज्ज्वल यशगाथा एवं अलौकिक विशुद्ध कर्म भूलने की वस्तु नहीं है अपितु जीवन में ग्रहण करने योग्य विषय हैं। ऐसे महान योगी को भूलना अपने आप को भूलने जैसा है महान योगी एवं सन्तों को भूलना स्वयं एवं भारतीय समाज का घनघोर अपराध और कृतघ्नता होगी। गुरु गोरखनाथ सहित नाथ संप्रदाय के सभी श्रेष्ठ संतों ने अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व की अप्रतिम गरिमा से भारत का गौरव समस्त संसार की दृष्टि में बहुत ऊँचा उठाया इसमें रंचमात्र भी संदेह नहीं कि उनके जीवन, योग प्रणाली, साधना प्रणाली और आदर्शो से भारत -'श्रेयस' और 'प्रेयस' अध्यात्म पक्ष और व्यवहार पक्ष के बीच सामंजस्य स्थापित कर सकता है। मात्र भारत ही नहीं अपितु समस्त संसार को महायोगी के आदर्शो से प्रेरणा, स्फूर्ति और शक्ति अर्जित करने में सहायता मिल सकती है। नाथपंथ मे बताये गये आदर्शों, उपदेशों और शिक्षाओं पर आचरण करने से यह भूमण्डल नन्दनकानन वन (गार्डन ऑफ हेवन) में परिवर्तित हो सकता है।[4]

इस विषय व्यापक दृष्टि से अध्ययन करने पर पता चलता है कि राष्ट्रीय चेतना से युक्त मानव जीवन आदर्शो एवं मूल्यों का प्रतिपादन करने वाली वैदिक काल एवं उससे भी पूर्व अनाहद एवं अबाध गति से प्रवाहित अविच्छिन्न भारतीय परम्परा कई अर्थो में विशेष एवं महत्वपूर्ण है। जहाँ विश्व की अन्य चिन्तन परम्पराएँ एक ईश्वर एक पुस्तक एवं एक देवदूत में आबद्ध होने के कारण सीमित एवं संकुचित दृष्टि का परिचय देती है । वही इस मौलिक चिन्तन की परम्परा का फलक विश्वव्यापी है। भारतीय सन्त परम्परा की इस कड़ी में नाथपंथ के प्रवर्तक के रूप में मान्य, सम्प्रदाय की दृष्टि में शिव के अवतार के रूप में महायोगी गोरखनाथ का अनन्य महत्व है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार आदि गुरु शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और इतना महिभान्वित व्याक्तित्व भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। प्राक्कथन के रूप में यह भी जानना महत्वपूर्ण है कि भक्ति आन्दोलन के पूर्व सबसे शक्तिशाली आन्दोलन महायोगी गोरखनाथ का भक्ति मार्ग था। मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में महायोगी के योगदान को सम्पूर्ण भारतवर्ष ने स्वीकार किया है।[5]

भारतीय वाङ्मय एक सनातन यात्रा का लेखा-जोखा है। सभ्यताओं का उत्कर्षापकर्ष जन समुदाय का सांस्कृतिक ह्रास और धार्मिक आंदोलन का आधार इतिहास के झरोखे से झाँकता रहता है। सन्यासी,ऋषि-मुनि, मनीषी, महार्षि और योगी ये पर्यायवाची शब्द हैं इनके अन्दर ज्ञानज्योति निरन्तर जगमगाती रहती है। युग के पुकार के अनुसार सांस्कृतिक विप्लव में इनकी अमरवाणी भारतीय समाज का दिशानिर्देशन करती है। योगी समग्र जगत को सूक्ष्म रूप से अपने आतंरिक जगत के अन्दर व्यवस्थित कर पाता है तथा अपने आत्मज्योति के अन्दर समग्र जगत को आलोकित पाता है। इस विकसित भाव-भूमि को उपनिषदों के शब्दों में कह सकते हैं कि-

"त्वमेव भानतमनुभाति सर्व

तस्यभाषा सर्वमिदं विभाति ।"[6]

भारतवर्ष अनेक युग-प्रवर्तकों, दार्शनिकों, संत और योगियों का जन्मदाता रहा है यदि इस अंचल में साम्राज्य वृद्धि के लिए लोमहर्षक युद्ध हुए तो साथ ही साथ जन समुदाय को दिशा निर्देश करने के लिए "तत्वदर्शियों का उद्भव भी हुआ। संत, योगी, महापुरुष अनुगृहशील देव होते हैं जो हितैषी एवं सहृदय

[4] A History of Literature and Communal Selfhood in the Nath Sampradāy(2020), Christine Hope Marrewa Karwoki, COLUMBIA UNIVERSITY

[5] नाथ सम्प्रदायें (१९५०), श्री हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश

[6] मुण्डक उपनिषद 2-2-10

होकर विश्व कल्याण की कामना करते हैं। **'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय'**[7] का संदेश देते हुए सभी को ज्ञान का प्रकाश देते हैं। कभी बुद्ध, महावीर, आदिगुरु शंकराचार्य, गुरु गोरखनाथ, सूर, तुलसी, कबीर, नानक, रैदास, रहीम, मीरा के रूप में तो कभी ऋषि अरविन्द, महर्षि दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द आदि महापुरुषों के रूप में आकर समाज को दिशा दी ।[8] इसी विकसित चेतना के आकाश में देदीप्य नक्षत्र के समान कालजयी एवं तपःपूत गोरखनाथ का उद्भव भी हुआ । महायोगी ने अपनें ज्योतिर्मय प्रभा मण्डल से तिमिराच्छन्न जनजीवन को ज्योतिर्मय किया। गम्भीर साधना और तप के द्वारा अनुभूत विचारों को जन-जन तक पहुंचाने के लिए सफल प्रयास किया । लोक कल्याणार्थ अनेक शिव-पीठो को निर्मित कर अपनी रचित साहित्य निधि को संचित किया। जलवायु, भौगोलिक सीमा और जाति की संकीर्ण परिधि का अतिक्रमण करके एक ऐसे लोक का निर्माण किया, जहाँ मानवता अपने विकसित रूप में स्थापित हुई।[9]

वर्तमान में एक चिन्ता का विषय है कि ऐसी अमूल्य धरोहर, महान् संस्कृति के उत्तराधिकारी भारत का भविष्य हमारी युवा पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव और बाजारीकरण के संघर्ष में इस अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर और जीवन मूल्यों को भूलती जा रही है। फिर भी हम अनुभव करते हैं कि इस संक्रमण काल में भी हमारे महापुरुषों की वाणी समाज को, विशेष कर भटके हुए युवाओं को नवप्रेरणा, नवचेतना देकर मार्ग प्रशस्त कर रही है। हजारों वर्षों की प्रताड़ना, विधर्मी आक्रमणों एवं पराधीनता के उपरान्त भी हमारी संस्कृति के अजस्र प्रवाह को महापुरुषों का आशीर्वाद नवदिशा एवं शक्ति प्रदान करता रहा है ।

इस संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित ग्रन्थ (**'अखंड भारत में नाथ संप्रदाय की अभिव्यंना'**)के माध्यम से गुरु गोरखनाथ एवं नाथ परम्परा में गुरु शिष्य की परम्परा, विराटता तथा गोरखनाथ मंदिर की अलौकिकता, इतिहास को जानते हुए वर्तमान एवं भविष्य जनमानस को जाग्रत करना है, जिससे मानवता अपने सर्वोच्च शिखर पर पहुंच सके। यहाँ यह कहना उचित होगा कि नाथपंथ का इतिहास बहुत व्यापक एवं विराट है अन्य ज्ञान के द्वारा जो भी सम्भव हो पा रहा है उसे उद्घाटित करने का प्रयास मात्र है, भविष्य में नाथपंथ को जानने की असीम सम्भावनाएं बनी रहेंगी। **'अखंड भारत में नाथ संप्रदाय की अभिव्यंजना'** ऐसे ही महान संतों, योगियों, ऋषि मुनियों, महात्माओं, धार्मिक आध्यात्मिक गुरुजनों के जीवन चरित्रों का एक संग्रह है, यह ग्रन्थ अनुपम अनूठा संकलन है । इस ग्रन्थ के पठन-पाठन से यह धारणा बलवती होती है कि जिस देश की संस्कृति का आधार ऐसे महापुरुषों की दिव्य चेतना हो वहाँ धर्म, नीति, न्याय, संस्कार परम्पराएं कभी विलुप्त नहीं हो सकतीं। जब-जब भी हमारे समक्ष अज्ञान का अंधकार या आत्मविश्वास में कमी का भाव आया तो हमारे जीवन की चुनौतियों में महापुरुषों का चरित्र ही मार्ग प्रशस्त कर समस्याओं का समाधान करता रहा है। जन-जन के मन को प्रेरणा देकर नवजीवन नवचेतना का संचार करता है। संत एक गुरु रूपी सेतु है जो जीवन और ब्रह्म में निरन्तर संयोग कराते हैं । कहा गया है-

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागू पाँय ।

बलिहारी गुरु आपने, गोविन्द दियो बताय ॥

---

[7] बृहदारण्यकोपनिषत् १-३-२८

[8] भारत के संत महात्मा, राधा प्रेस दिल्ली, नवीन संस्करण-२००९, रामफल बंसल

[9] St Madabhushini Narasimhacharya (2004). Sri Ramanuja. Sahitya Akademi. p. 32. ISBN 9788126018338. As for Ramanuja, his commentary on the Gita and the Brahmasutra are quite well known as conforming to this practice . But he did not write any regular commentary on the Upanishads as other philosophers like, say, Sankara and Anandatirtha (Madhva) did.ephen Phillips (26 June 2009). Yoga, Karma, and Rebirth: A Brief History and Philosophy. Columbia University Press. p. 309. ISBN 9780231144858.

सनातन वैदिक धर्म एवं संस्कृति के समक्ष आज अनेक चुनौतियां हैं जिनमें वैश्वीकरण और बाजारवाद, उग्रवाद, आतंकवाद को आधार देता धार्मिक उन्माद, पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में जीवन मूल्यों का हनन ये सभी केवल भारत ही नहीं पूर विश्व एवं मानवता के लिए संकट पैदा कर रहे हैं। अतः इस संक्रमण काल में निज धर्म, संस्कृति, मानवता एवं विश्व की रक्षा करना प्रत्येक धर्मप्राण. बुद्धिजीवी एवं मानवतावादी का परम कर्तव्य है। किसी राष्ट्र की संस्कृति ही उसकी आत्मा होती है, उसकी पहचान होती है उस पहचान को जीवित रखना हर पीढ़ी का पावन कर्तव्य है। संस्कृति की पहचान उसकी भाषा, साहित्य, ज्ञान, विज्ञान, रीति-रिवाज, ललित कलाओं एवं महापुरुषों के जीवन चरित्र से होती है और इन सभी मापदण्डों पर भारतीय संस्कृति विश्व की श्रेष्ठतम संस्कृति के रूप में परिभाषित होती है। अपने अतीत, भारतीय संस्कृति, महापुरुषों के विषय में पढ़ सुनकर मैं सदा अभिभूत होता रहा हूँ और उसी प्रेरणा में सदैव आगे बढ़ता रहा हूँ।

सभी महापुरुष भारतीय संस्कृति के आकाश के जाज्वल्यमान[10] नक्षत्र की तरह हैं या कहें भारतीय संस्कृति के सागर में रत्नों की तरह हैं। जिनके कारण हमारी सभ्यता, संस्कृति अत्यन्त समृद्ध है। जिसका उद्देश्य जनमानस, विशेषकर युवा पीढ़ी को भारतीय धर्म, संस्कृति एवं परम्पराओं से अवगत कराने के साथ-साथ महापुरुषों, संतों, महात्माओं, तपस्वियों के जीवन से परिचित कराना था। नाथ संप्रदाय के महापुरुषों के जीवन चरित्र के साथ-साथ भारतीय संस्कृति एवं इतिहास की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ मानक रूप में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

जीवन में निरन्तर सद्मार्ग पर बढ़ने के लिए ऐसे ही ग्रन्थों की आवश्यकता होती है। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि पीढ़ियों के बीच धर्म-संस्कृति के मार्ग को प्रशस्त करने हेतु एक सेतुरूप इस ग्रन्थ के प्रकाशन में गिलहरी जैसे योगदान को आप सहर्ष स्वीकार करेंगे एवं इस संग्रहणीय ग्रन्थ के महत्व को जनमानस तब प्रचारित-प्रसारित कर पुनीत कर्त्तव्य का निर्वाह करेंगे।

महापुरुषों, संतों, मनीषियों के जीवन चरित्र को जानने पढ़ने की आवश्यकता जीवन में क्यों है इसका एक तार्किक उत्तर बड़ा स्पष्ट है। जो राष्ट्र, जो लोग अपने अतीत, महापुरुषों, अपने धर्म, अपनी संस्कृति को भूल जाते हैं वे दुनिया के मानचित्र से विलुप्त हो जाते है। विश्व में इस प्रकार के अनेकों उदाहरण हैं। हम हजारों सालों की पराधीनता के उपरान्त भी फिर से शक्तिशाली राष्ट्र बनने की श्रेणी में खड़े हैं। यदि कोई और राष्ट्र होता तो शायद उसका अस्तित्व ही मिट गया होता। फिर भी इतिहास गवाह है कि घाव हमारे भी अत्यन्त गहरे लगे हैं जब मानचित्र देखते हैं तो कहीं अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बर्मा, बांग्लादेश आदि कुछ उदाहरण हैं जो हमें अपने अतीत की गलतियों को न दोहराने की शिक्षा देते हैं। हमें अपने गौरवशाली अतीत का ध्यान करते हुए शक्ति का आह्वान करते हुए भविष्य की रूपरेखा तय करनी चाहिए और उसमें हमारे महापुरुषों का ज्ञान-विज्ञान, उनकी शिक्षा, प्रेरणा, मार्गदर्शन करती रहेगी यदि हम उन्हें समुचित मान सम्मान देते रहें, उनका अनुसरण करते रहें।

उन समस्त पुण्यात्माओं, आध्यात्मिक महापुरुषों एवं शक्तियों को जिन्होंने भारतीय सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक चेतना के सनातन प्रवाह को शक्ति प्रदान की एवं उन समस्त हुतात्माओं को जिन्होंने भारतवर्ष की एकता, अखण्डता, धर्म, संस्कृति एवं स्वाभिमान के लिए जीवन का सर्वोच्च बलिदान किया।[11]

---

10 प्रज्वलित; दीप्तिमान; प्रकाशित; प्रकाशमान

11 भारतीय मनीषियों की प्रेरक भूमिका, प्रभात प्रकाशन दिल्ली-२०२१, डॉ बघेल

अध्याय-एक

भगवान श्री कृष्ण द्वारा प्रतिपादित श्रीमद् भागवत कथा के अनुसार संतो के लक्षण

सन्तोऽनपेक्षा मच्चित्ताः प्रशान्ताः समदर्शिनः ।

निर्ममा निरहङ्कारा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः ॥ २७ ॥

(११/२६/२७)

अर्थ- संत पुरुषों का लक्षण यह है कि उन्हें कभी किसी वस्तु की अपेक्षा नहीं होती। उनका चित्त मुझमें लगा रहता है। उनके हृदय में शान्ति का अगाध समुद्र लहराता रहता है। वे सदा-सर्वदा सर्वत्र सबमें सब रूप से स्थित भगवान् का ही दर्शन करते हैं। उनमें अहङ्कार का लेश भी नहीं होता, फिर ममता की तो सम्भावना ही कहाँ है। वे सर्दी गरमी, सुख- दुःख आदि द्वन्द्वों में एकरस रहते हैं तथा बौद्धिक, मानसिक, शारीरिक और पदार्थ-सम्बन्धी किसी प्रकार का भी परिग्रह नहीं रखते ॥ २७ ॥

यथोपश्रयमाणस्य भगवन्तं विभावसुम् ।

शीतं भयं तमोऽप्येति साधून् संसेवतस्तथा ॥ ३१ ॥

(११/२६/३१)

अर्थ- उनकी तो बात ही क्या है जिन्होंने संत पुरुषों की शरण ग्रहण कर ली उनकी भी कर्मजडता, संसारभय और अज्ञान आदि सर्वथा निवृत्त हो उसे शीत, भय अथवा अन्धकार का दुःख हो सकता है ॥ ३१॥

निमज्ज्योन्मज्जतां घोरे भवाब्धौ परमायणम् ।

सन्तो ब्रह्मविदः शान्ता नौर्दृढेवाप्सु मज्जताम् ॥ ३२ ॥

(११/२६/३२)

अर्थ- भगवान् के भक्त, जो कि परम ज्ञान को शान्त भाव से प्राप्त हैं, उन लोगों के लिए चरम शरण हैं, जो भौतिक जीवन के भयावने सागर में बारम्बार डूबते तथा उठते हैं। ऐसे भक्त उस मजबूत नाव के सदृश होते हैं, तो डूब रहे व्यक्तियों की रक्षा करती है। ॥ ३२ ॥

अन्नं हि प्राणिनां प्राण आर्तानां शरणं त्वहम् ।

धर्मो वित्तं नृणां प्रेत्य सन्तोऽर्वाग् बिभ्यतोऽरणम् ॥ ३३ ॥

(११/२६/३३)

अर्थ- जिस तरह समस्त प्राणियों के लिए भोजन ही जीवन है, जिस तरह मैं दुखियारों का परम आश्रय हूँ तथा जिस तरह इस लोक से मर कर जाने वालों के लिए धर्म ही सम्पत्ति है, उसी तरह मेरे भक्त उन लोगों के एकमात्र आश्रय हैं, जो जीवन की दुखमय अवस्था में पड़ने से डरते रहते हैं।॥ ३३ ॥

सन्तो दिशन्ति चक्षूंषि बहिरर्कः समुत्थितः।

देवता बान्धवाः सन्तः सन्त आत्माहमेव च॥ ३४॥

(११/२६/३४)

अर्थ- जैसे सूर्य आकाश में उदय होकर लोगों को जगत् तथा अपने को देखने के लिये नेत्रदान करता है, वैसे ही संत पुरुष अपने को तथा भगवान् को देखने के लिये अन्तर्दृष्टि देते हैं। संत अनुग्रहशील देवता हैं, संत अपने में हितैषी सुहृद् हैं, संत अपने में प्रियतम आत्मा हैं। और अधिक क्या कहूँ, स्वयं मैं ही संत के रूप में विद्यमान हूँ॥ ३४॥

श्रीमद् भागवत कथा पुराण के अनुसार संतो के लक्षण[12]

[12] श्रीमद् भागवत पुराण, एकादशः स्कन्धः, षड्विंशोऽध्यायः

अध्याय- दो

श्री तुलसीदास जी द्वारा रचित श्री रामचरित मानस में संत-असंत लक्षण

दोहा

बंदउँ संत असज्जन चरना। दुःखप्रद उभय बीच कछु बरना॥
बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं। मिलत एक दुख दारुन देहीं ॥2॥

भावार्थ:- अब मैं संत और असंत दोनों के चरणों की वन्दना करता हूँ, दोनों ही दुःख देने वाले हैं, परन्तु उनमें कुछ अन्तर कहा गया है। वह अंतर यह है कि एक (संत) तो बिछुड़ते समय प्राण हर लेते हैं और दूसरे (असंत) मिलते हैं, तब दारुण दुःख देते हैं। (अर्थात् संतों का बिछुड़ना मरने के समान दुःखदायी होता है और असंतों का मिलना।)॥2॥

उपजहिं एक संग जग माहीं। जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं॥ सुधा सुरा सम साधु असाधू। जनक एक जग जलधि अगाधू॥3॥

भावार्थ:- दोनों (संत और असंत) जगत में एक साथ पैदा होते हैं, पर (एक साथ पैदा होने वाले) कमल और जोंक की तरह उनके गुण अलग-अलग होते हैं। (कमल दर्शन और स्पर्श से सुख देता है, किन्तु जोंक शरीर का स्पर्श पाते ही रक्त चूसने लगती है।) साधु अमृत के समान (मृत्यु रूपी संसार से उबारने वाला) और असाधु मदिरा के समान (मोह, प्रमाद और जड़ता उत्पन्न करने वाला) है, दोनों को उत्पन्न करने वाला जगत रूपी अगाध समुद्र एक ही है। (शास्त्रों में समुद्रमन्थन से ही अमृत और मदिरा दोनों की उत्पत्ति बताई गई है।)॥3॥

भल अनभल निज निज करतूती। लहत सुजस अपलोक बिभूती॥ सुधा सुधाकर सुरसरि साधू। गरल अनल कलिमल सरि ब्याधू॥4॥ गुन अवगुन जानत सब कोई। जो जेहि भाव नीक तेहि सोई॥5॥

भावार्थ:- भले और बुरे अपनी-अपनी करनी के अनुसार सुंदर यश और अपयश की सम्पत्ति पाते हैं। अमृत, चन्द्रमा, गंगाजी और साधु एवं विष, अग्नि, कलियुग के पापों की नदी अर्थात् कर्मनाशा और हिंसा करने वाला व्याध, इनके गुण-अवगुण सब कोई जानते हैं, किन्तु जिसे जो भाता है, उसे वही अच्छा लगता है॥4-5॥

भलो भलाइहि पै लहइ लहइ निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरताँ गरल सराहिअ मीचु॥5॥

भावार्थ:- भला भलाई ही ग्रहण करता है और नीच नीचता को ही ग्रहण किए रहता है। अमृत की सराहना अमर करने में होती है और विष की मारने में॥5॥

जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।

संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि बिकार॥6॥

भावार्थ:- विधाता ने इस जड़-चेतन विश्व को गुण-दोषमय रचा है, किन्तु संत रूपी हंस दोष रूपी जल को छोड़कर गुण रूपी दूध को ही ग्रहण करते हैं॥6॥

ग्रह भेजष जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग॥7 (क)॥

भावार्थ:- ग्रह, औषधि, जल, वायु और वस्त्र- ये सब भी कुसंग और सुसंग पाकर संसार में बुरे और भले पदार्थ हो जाते हैं। चतुर एवं विचारशील पुरुष ही इस बात को जान पाते हैं॥7 (क)॥

सम प्रकास तम पाख दुहुँ नाम भेद बिधि कीन्ह।
ससि सोषक पोषक समुझि जग जस अपजस दीन्ह॥7 (ख)॥

भावार्थ:- महीने के दोनों पखवाड़ों में उजियाला और अँधेरा समान ही रहता है, परन्तु विधाता ने इनके नाम में भेद कर दिया है (एक का नाम शुक्ल और दूसरे का नाम कृष्ण रख दिया)। एक को चन्द्रमा का बढ़ाने वाला और दूसरे को उसका घटाने वाला समझकर जगत ने एक को सुयश और दूसरे को अपयश दे दिया॥7 (ख)॥

जड़ चेतन जग जीव जत सकल राममय जानि।
बंदउँ सब के पद कमल सदा जोरि जुग पानि॥7(ग)॥

भावार्थ:- जगत में जितने जड़ और चेतन जीव हैं, सबको राममय जानकर मैं उन सबके चरणकमलों की सदा दोनों हाथ जोड़कर वन्दना करता हूँ॥7 (ग)॥

देव दनुज नर नाग खग प्रेत पितर गंधर्ब।
बंदउँ किंनर रजनिचर कृपा करहु अब सर्ब॥7 (घ)

भावार्थ:- देवता, दैत्य, मनुष्य, नाग, पक्षी, प्रेत, पितर, गंधर्व, किन्नर और निशाचर सबको मैं प्रणाम करता हूँ। अब सब मुझ पर कृपा कीजिए॥7 (घ)॥

चौपाई

खल अघ अगुन साधु गुन गाहा। उभय अपार उदधि अवगाहा॥

तेहि तें कछु गुन दोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने॥1॥

भावार्थ:- दुष्टों के पापों और अवगुणों की और साधुओं के गुणों की कथाएँ- दोनों ही अपार और अथाह समुद्र हैं। इसी से कुछ गुण और दोषों का वर्णन किया गया है, क्योंकि बिना पहचाने उनका ग्रहण या त्याग नहीं हो सकता॥1॥

भलेउ पोच सब बिधि उपजाए। गनि गुन दोष बेद बिलगाए॥ कहहिं बेद इतिहास पुराना। बिधि प्रपंचु गुन अवगुन साना॥2॥

भावार्थ:-भले-बुरे सभी ब्रह्मा के पैदा किए हुए हैं, पर गुण और दोषों को विचार कर वेदों ने उनको अलग-अलग कर दिया है। वेद, इतिहास और पुराण कहते हैं कि ब्रह्मा की यह सृष्टि गुण-अवगुणों से सनी हुई है॥2॥

दुख सुख पाप पुन्य दिन राती। साधु असाधु सुजाति कुजाती॥
दानव देव ऊँच अरु नीचू। अमिअ सुजीवनु माहुरु मीचू॥3॥
माया ब्रह्म जीव जगदीसा। लच्छि अलच्छि रंक अवनीसा॥
कासी मग सुरसरि क्रमनासा। मरु मारव महिदेव गवासा॥4॥
सरग नरक अनुराग बिरागा। निगमागम गुन दोष बिभागा॥5॥

भावार्थ:-दुःख-सुख,पाप-पुण्य, दिन-रात, साधु-असाधु, सुजाति-कुजाति, दानव-देवता, ऊँच-नीच, अमृत-विष, सुजीवन (सुंदर जीवन)-मृत्यु, माया-ब्रह्म, जीव-ईश्वर, सम्पत्ति-दरिद्रता, रंक-राजा, काशी-मगध, गंगा-कर्मनाशा, मारवाड़-मालवा, ब्राह्मण-कसाई, स्वर्ग-नरक, अनुराग-वैराग्य (ये सभी पदार्थ ब्रह्मा की सृष्टि में हैं।) वेद-शास्त्रों ने उनके गुण-दोषों का विभाग कर दिया है॥3-5॥

अस बिबेक जब देइ बिधाता। तब तजि दोष गुनहिं मनु राता॥
काल सुभाउ करम बरिआईं। भलेउ प्रकृति बस चुकइ भलाईं॥1॥

भावार्थ:- विधाता जब इस प्रकार का (हंस का सा) विवेक देते हैं, तब दोषों को छोड़कर मन गुणों में अनुरक्त होता है। काल स्वभाव और कर्म की प्रबलता से भले लोग (साधु) भी माया के वश में होकर कभी-कभी भलाई से चूक जाते हैं॥1॥

सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं। दलि दुख दोष बिमल जसु देहीं॥ खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू। मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू॥2॥

भावार्थ:- भगवान के भक्त जैसे उस चूक को सुधार लेते हैं और दुःख-दोषों को मिटाकर निर्मल यश देते हैं, वैसे ही दुष्ट भी कभी-कभी उत्तम संग पाकर भलाई करते हैं, परन्तु उनका कभी भंग न होने वाला मलिन स्वभाव नहीं मिटता॥2॥

लखि सुबेष जग बंचक जेऊ। बेष प्रताप पूजिअहिं तेऊ॥

उघरहिं अंत न होइ निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू॥3॥

भावार्थ:-जो (वेषधारी) ठग हैं, उन्हें भी अच्छा (साधु का सा) वेष बनाए देखकर वेष के प्रताप से जगत पूजता है, परन्तु एक न एक दिन वे चौड़े आ ही जाते हैं, अंत तक उनका कपट नहीं निभता, जैसे कालनेमि, रावण और राहु का हाल हुआ ॥3॥

किएहुँ कुबेषु साधु सनमानू। जिमि जग जामवंत हनुमानू॥

हानि कुसंग सुसंगति लाहू। लोकहुँ बेद बिदित सब काहू॥4॥

भावार्थ:- बुरा वेष बना लेने पर भी साधु का सम्मान ही होता है, जैसे जगत में जाम्बवान् और हनुमान्‌जी का हुआ। बुरे संग से हानि और अच्छे संग से लाभ होता है, यह बात लोक और वेद में है और सभी लोग इसको जानते हैं॥4॥

गगन चढ़इ रज पवन प्रसंगा। कीचहिं मिलइ नीच जल संगा॥

साधु असाधु सदन सुक सारीं। सुमिरहिं राम देहिं गनि गारीं॥5॥

भावार्थ:-पवन के संग से धूल आकाश पर चढ़ जाती है और वही नीच (नीचे की ओर बहने वाले) जल के संग से कीचड़ में मिल जाती है। साधु के घर के तोता-मैना राम-राम सुमिरते हैं और असाधु के घर के तोता-मैना गिन-गिनकर गालियाँ देते हैं॥5॥

धूम कुसंगति कारिख होई। लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई॥

सोइ जल अनल अनिल संघाता। होइ जलद जग जीवन दाता॥6॥

भावार्थ:- कुसंग के कारण धुआँ कालिख कहलाता है, वही धुआँ (सुसंग से) सुंदर स्याही होकर पुराण लिखने के काम में आता है और वही धुआँ जल, अग्नि और पवन के संग से बादल होकर जगत को जीवन देने वाला बन जाता है॥6॥

रामरूप से जीवमात्र की वंदना

चौपाई :

आकर चारि लाख चौरासी। जाति जीव जल थल नभ बासी॥

सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥1॥

भावार्थ:- चौरासी लाख योनियों में चार प्रकार के (स्वेदज, अण्डज, उद्भिज्ज, जरायुज) जीव जल, पृथ्वी और आकाश में रहते हैं, उन सबसे भरे हुए इस सारे जगत को श्री सीताराममय जानकर मैं दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता हूँ॥1॥

अध्याय- तीन

नाथ पंथ का प्रादुर्भाव

'बिनु गुरु पन्थ न पाइअ भूले सो जो मेट।

जोगी सिद्ध होइ तब, जब गोरख सो ।'

—**पद्मावत**[13]

नाथ सम्प्रदाय भारत का परम प्राचीन, उदार, समदर्शी भावना से ओतप्रोत, अवधूत अथवा योगियों का सम्प्रदाय है। इसका आरम्भ आदिनाथ भगवान शिव से हुआ है और इसका वर्तमान रूप देने वाले योगाचार्य शिवावतार बालजति श्री गोरक्षनाथ जी हुए हैं। इस परम्परा तथा इसके प्रवर्तक योगेश्वरों के प्रादर्भाव और विलय का कोई भौतिक वर्णन प्राप्त नहीं होता है क्योंकि योगीजन देश, काल, स्थितिभेद से परे होते हैं।

गोरक्ष नाथ जी महाराज ने चारों युगों में चार भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में प्रगट होकर योग मार्ग का प्रचार किया और सामान्य मनुष्य, चक्रवर्ती सम्राट और साथ ही अनेक दैवीय अवतारों को भी उपदेशित किया। गुरु गोरक्षनाथ जी सत्ययुग में पंजाब के पेशावर में, त्रेतायुग में गोरक्षपुर में, द्वापर युग में द्वारिका के आगे हुरभुज में और कलिकाल में काठियावाड़ की गोरखमढ़ी में प्रादुर्भूत हुए थे, ऐसा योगियों की परम्परा में प्रसिद्ध है।[14]

नाथ संप्रदाय अत्यंत प्राचीन है इसका संबंध आदिनाथ भगवान से हैं - महादेव से हैं। सभी नाथों में प्रथम आदिनाथ हैं जो स्वंय शिव ही नाथ सम्प्रदायवालों का विश्वास है।'[15]

"आदिनाथः सर्वेषां नाथानां प्रथमः, ततो नाथ सम्प्रदायः प्रवृत्त इति नाथ सम्प्रदायिनो वदन्ति। "

'हठयोगप्रदीपिका की टिप्पणी (1-5), ब्रह्मानंद |

[13] पद्मावत, -बाबा मलिक मोहम्मद जायसी

[14] *Gorakhcarit* (Gorakhpur: Sri Gorakhsnath Mandir, 1986), IV.

[15] हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली 6. पृ. 19 व पृ 21

नाथ सम्प्रदाय के ग्रंथो में 'नाथ' शब्द की भिन्न भिन्न रूपों से शाब्दिक एवं दार्शनिक व्याख्या की गई हैं। यहां नाथ' शब्द 'ना + थ' के संयोग से बना हैं। 'राजगुह्य' ग्रंथ के अनुसार 'ना' का अर्थ हैं 'अनादि रूप' और 'थ' का अर्थ 'भुवनत्रय' (त्रिलोक) का स्थापित होना। इस प्रकार नाथ मत का स्पष्ट अर्थ हँ 'नाथ वह तत्व हैं जो अनादि रूप हैं, तथा भुवनत्रय (तीन लोक) की स्थिति का कारण है। श्री गोरक्ष को इसी कारण से 'नाथ' कहा जाता हैं|[16]

नाकारोऽनादि रूपं थकाराः स्थाप्यते सदा।।

भुवनत्रयमेवैकः श्री गोरक्ष नमोऽस्तुते।।

'शक्ति-संगम तंत्र ग्रंथ में 'ना' का अर्थ नाथ ब्रह्म, जो मोक्ष दान में दक्ष हैं, उनका ज्ञान कराना हैं और 'थ' का अर्थ हैं अज्ञान के सामर्थ्य को स्थगित करने वाला। नाथ वह तत्व हैं जो मोक्ष प्रदान करता है, नाथब्रह्म का अनुबोधन करता है तथा अज्ञान का स्थगन करता है। चूंकि नाथ के आश्रयण से इस नाथब्रह्म का साक्षात्कार होता है और अज्ञान की माया अवरुद्ध होती है, इसलिये नाथ शब्द का व्यवहार किया जाता |[17]

"श्री मोक्षदानदक्षत्वात् नाथ ब्रह्मानुबोधनत्।

बलीज्ञान विभवत् श्रीनाथ इति गीयते।।"

-शक्ति संगम तंत्र

मूल रूप से इन प्राचीन ग्रंथों (राजगुहा शक्ति संगम तंत्र) के अनुसार नाथ तत्व परमात्मा है, वे भुवनत्रय के कारण परमज्ञान के दाता और मोक्षदाता है। इसके अनुसार सृष्टि-स्थिति लय की प्रक्रिया में शक्ति विश्व का सृजन करती है, शिव उसका परिपालन करते हैं काल उनका संहार करते हैं और नाथ मुक्ति देते हैं।"[18]

"शक्त्या तु सृज्यते विश्व शिवेन परिपाल्यते।" कालेन च संह्यते मुक्तिर्नाथेन दीयते।।"

---

[16] गोरक्षसिद्धांत संग्रह पृ. 11 पर उद्घृत राजगुहा (गोरखनाथ नाथ संप्रदाय के परिपेक्ष्य में डॉ. नागेंद्रनाथ उपाध्याय के पृ. 1 से उद्धृत।)

[17] हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली - 6 पृ. 21

[18] गोरक्षसिद्धांत संग्रह पृ. 49 व 51 पर शक्तिसंगम तंत्र से (पृ. 1 डॉ. नागेन्द्र नाथ उपाध्याय गोरखनाथ नाथ के परिपेक्ष्य में)

इस नाथ के तीन रूप माने गए हैं। अद्वैतपरिचालक नाथ प्राप्य देवता हैं। निराकार ज्योतिरूप नाथ ध्येय हैं तथा आदिरूप के रूप में साकार नाथ उपाय है।

"अस्मिन् मार्गे अद्वैतपरिविद्या नाथो देवता प्राप्य निराकार ज्योतिनाथो ध्येयः साकारनाथ उपास्योऽथ च आदिगुरुः।"

यही अद्वैतपरिवर्ती नाथ दो प्रकार की सृष्टि (नाद रूप और बिंदुरूपा के मूल हैं।)[19]

"नाथाद द्विगुण सृष्टिरजाता - नादारूपा बिंदुरूपा
गोरखनाथ- सब जग नाथ्या।

श्री गोरक्षनाथ जी ने योग सम्बन्धी सिद्धसिद्धांतपद्धति, गोरक्ष संहिता आदि अनेकों ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे जिनमें बहुत से प्रकाशित हो चुके हैं और कई अप्रकाशित रूप में योगियों के आश्रमों में सुरक्षित हैं। श्री गोरक्षनाथ की शिक्षा एवं चमत्कारों से प्रभावित होकर अनेकों बड़े-बड़े राजा इनसे दीक्षित हुए। उन्होंने अपने अतुल वैभव को त्याग कर निजानन्द प्राप्त किया तथा जनकल्याण में अग्रसर हुए। इन राजर्षियों द्वारा बड़े-बड़े जन कल्याण के कार्य हुए।

हिन्दू-धर्म, दर्शन, अध्यात्म और साधना के अन्तर्गत विभिन्न सम्प्रदायों और मत-मतान्तरों में नाथ सम्प्रदाय का प्रमुख स्थान है। भारतवर्ष का कोई प्रान्त, क्षेत्र, गाँव या शहर नहीं है जिसे नाथसम्प्रदाय के सिद्धों या योगियों ने अपनी चरण रज से साधना और तत्वज्ञान की महिमा से पवित्र न किया हो। देश के कोने-कोने में स्थित नाथ सम्प्रदाय के तीर्थ-स्थल, मन्दिर, मठ, आश्रम, दलीचा, खोह, गुफा और टीले इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि नाथ सम्प्रदाय भारतवर्ष का एक अत्यन्त गौरवशाली प्रभविष्णु, क्रान्तिकारी तथा महलों से कुटियों तक फैला सम्पूर्ण मानवता के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने वाला लोकप्रिय प्रमुख पंथ है। श्री गोरक्षनाथ का नाम नेपाल देश में वंदनीय है और वर्तमान में नेपाल के राजा इनको अपना प्रधान गुरु के रूप में मानते हैं और वहाँ पर इनके बड़े-बड़े प्रतिष्ठित आश्रम हैं। यहाँ तक कि नेपाल की राजकीय मुद्रा (सिक्के) पर श्रीगोरक्ष नाथ जी का नाम है और वहाँ के एक प्रांत के निवासी गोरखा कहलाते हैं।

श्री गोरक्षनाथ ने सांसारिक और गुरु शिष्य परम्परा और मर्यादा की रक्षा के निमित्त श्री मच्छेन्द्रनाथ को अपना गुरु माना और चिरकाल तक इन दोनों में शंका समाधान के रूप में संवाद चलता रहा। श्री मत्स्येन्द्र महागुरु को भी आगममशास्त्र में नारायण का अवतार माना गया है और अनेक जगह इनकी कथाएँ लिखी हैं। भारत के प्रायः सभी प्रान्तों में योगी सम्प्रदाय के बड़े-बड़े वैभवशाली आश्रम हैं और उच्च कोटि के विद्वान् इन आश्रमों के संचालक हैं।

संस्कृत के शब्द ‘‘नाथ’’ का शाब्दिक अर्थ "स्वामी’’ या ‘‘रक्षक" है जबकि इससे संबंधित संस्कृत शब्द ‘‘आदिनाथ’’ का अर्थ ‘‘प्रथम’’ या ‘‘मूल’’ भगवान है और यह नाथ सम्प्रदाय के संस्थापक शिव के लिए प्रयुक्त होता है। शब्द "नाथ" उस नाम से जाना जाने वाला शैववाद परंपरा के लिए एक नवाचार है। 18 वीं सदी से पहले नाथ सम्प्रदाय के लोगों को ‘‘जोगी या योगी’’ कहा जाता था। हालांकि औपनिवेशिक शासन के दौरान ‘‘योगी/जोगी" शब्द का उपयोग ब्रिटिश भारत की जनगणना के दौरान ‘‘निम्न स्थिति वाली जाति’’ के लिए किया जाता था। 20वीं शताब्दी में इस समुदाय के लोगों ने अपने नाम के अंत में

[19] गोरक्षसिद्धांत संग्रह -पंडित गोपीनाथ पृ. 1

वैकल्पिक शब्द "नाथ" का इस्तेमाल करना शुरू किया जबकि अपने ऐतिहासिक शब्द "योगी या जोगी" का प्रयोग अपने समुदाय के भीतर एक-दूसरे को संदर्भित करने के लिए करते हैं। नाथ शब्द का प्रयोग वैष्णववाद (जैसे गोपीनाथ, जगन्नाथ) और जैन धर्म (आदिनाथ, पार्श्वनाथ) में भी किया जाता हैं| भारत में नाथ योगियों की परंपरा बहुत ही प्राचीन रही है। नाथ समाज हिन्दू धर्म का एक अभिन्न अंग है। ''ऋग्वेद'' के एक प्रसिद्ध सूक्त के अंतर्गत यह ''समर्थ'' वा ''सक्षम' के अर्थ में प्रयुक्त जान पड़ता है, परन्तु ''अथर्ववेद'' के एक स्थल पर इसका प्रयोग वस्तुतः ''आश्रय ग्रहण करने योग्य स्थान'' के लिए किया गया प्रतीत होता है तथा वहीं अन्यत्र इसे ''स्वामी'' अथवा ''रक्षक'' के अर्थ में भी प्रयुक्त समझा जा सकता है। इसी प्रकार बौद्धों के प्रसिद्ध मान्य ग्रन्थ ''धम्मपद'' के अन्तर्गत भी, हम इसे ''स्वामी'' अथवा ''मालिक'' वाले अर्थ में व्यवहृत होता देखते हैं। इसके सिवाय, जैन धर्म वाले दिगम्बर संप्रदाय के साहित्य में भगवान महावीर के कुल का नाम तक ''नाथवंश'' के रूप में दिया गया पाया जाता है।

''नाथ सिद्ध'' शब्द उन लोगों का बोध कराता है, जिन्होंने न केवल परमात्मतत्त्व का अपनी साधना द्वारा प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया हो, प्रत्युत जो इस प्रकार पूर्ण सफल बन कर उसके तद्रूप तक भी हो चुके हों और जो दूसरों के लिए आदर्श कहे जा सकते हों। नौ नाथों की परंपरा से 84 नाथ हुए। नौ नाथों के संबंध में विद्वानों में मतभेद हैं। भगवान शंकर को आदिनाथ और दत्तात्रेय को आदिगुरु माना जाता है। इन्हीं से आगे चलकर नौ नाथ और नौ नाथ से 84 नाथ सिद्धों की परंपरा शुरू हुई। आपने अमरनाथ, केदारनाथ, बद्रीनाथ आदि कई तीर्थस्थलों के नाम सुने होंगे। आपने भोलेनाथ, भैरवनाथ, गोरखनाथ आदि नाम भी सुने ही होंगे। गोगादेव, बाबा रामदेव आदि संत भी इसी परंपरा से थे। तिब्बत के सिद्ध भी नाथ परंपरा से ही थे। 'नाथ सिद्ध'' शब्द का एक पर्याय-वाची शब्द ''नाथ योगी'' भी है, जिसमें जुड़े हुए ''योगी'' को भी तत्त्वतः ''सिद्ध'' से अधिक भिन्न नहीं कहा जा सकता। इन दोनों में से किसका प्रयोग, सर्वप्रथम किया गया होगा तथा ये कब से प्रयुक्त होते आये हैं, इस बात का निर्णय करने के लिए यथेष्ट साधन उपलब्ध नहीं हैं। इस सम्बन्ध में, अभी तक केवल इतना ही कहा जा सकता है कि ये कदाचित् बहुत पुराने नहीं ठहराये जा सकते। हो सकता है कि ''नाथ सिद्ध'' का प्रयोग पहले पहल बौद्ध धर्मावलम्बी सहजयानी या वज्रयानी सिद्धों से भिन्नता दिखलाने के ही लिए किया गया हो तथा नाथपंथियों के मूलतः योगी भी होने के कारण, अधिकतर ''नाथ योगी'' शब्द का ही व्यवहार स्वभावतः होता आ रहा हो। ''इसमें संदेह नहीं कि ''नाथ सिद्ध'' के स्थान पर केवल ''नाथ'' शब्द का प्रयोग कहीं अधिक प्रचलित रहता आया है और तदनुसार ही, नाथों के मत को ''नाथमत'' और उसके अनुयायियों को ''नाथपंथी'' कहने की परम्परा है। नाथ संप्रदाय शिव का उपासक है और इस संप्रदाय का मानना है कि शिव ही सबके गुरु हैं। वे कहते हैं कि शिव ही मानव गुरु में प्रवेश कर विश्व-मुक्ति का कार्य करते हैं। गोरक्षनाथ ने कहा है कि ये आदिनाथ शिव 'शक्तिशाली शिव' हैं। अर्थात शक्ति शिव से भिन्न नहीं है, वह उनके भीतर है और ब्रह्मांड की उत्पत्ति और प्रलय के लिए जिम्मेदार हैं । इस शक्ति से संपन्न शिव पिंड-ब्रह्मांड का आधार हैं और शक्ति के बिना शिव केवल एक 'शव' हैं, यानी, 'शिव' में ही शक्ति है। चंद्रमा और चन्द्रमा की तरह ये एक दूसरे से संबंधित हैं।[20]

गुरु गोरक्षनाथ की पुस्तक 'सिद्धसिद्धान्तपद्धति' में निम्नलिखित श्लोक मिलता है:

शिवस्याभ्यन्तरे शक्तिः शक्तेभ्यन्तरे शिवः॥

अन्तरं नैव जानीयात् चन्द्रचन्द्रिकयोरिव ॥

[20] The names of different members of the Nath sampradāy are often shortened by removing the word "nath" from their endings.

इसीलिए श्री गोरक्षनाथ अपने ग्रन्थ 'सिद्धसिद्धान्तपद्धति' के प्रारम्भ में कहते हैं-

आदिनाथ नमस्कृत्य शक्तियुक्तं जगद्गुरुम्।

वक्षये गोरक्षनाथोहं सिद्धसिद्धान्तपद्धतिम्।

जैसे दो स्वरों की ध्वनि एक जैसी है, दो फूलों की गंध एक जैसी है, दो ज्वालाओं की रोशनी एक जैसी है, दो आँखों की दृष्टि एक जैसी है, उसी प्रकार 'शिव शक्ति' नाम में निहित सिद्धांत यह ब्रह्माण्ड एक ही है.

चूंकि यह संप्रदाय शिव का उपासक है, इसलिए नाथ पंथी योगी 'जयशंकर भोलेनाथ' या 'अलख निरंजन' का जाप करते हैं और भिक्षा मांगते हैं। पूरे भारत में इनके कई अखाड़े हैं और वहाँ हम अक्सर साधुओं को शरीर पर भस्म लगाए धूनी के सामने बैठे देखते हैं। कानों में कुंडल वाले साधुओं को 'कनफटे' साधू कहा जाता है। ये कनफटे हाथ में किनरी या कोकया जैसे वाद्ययन्त्र लेकर गोपीचंद और मैनावती के गीत भी गाते हैं। फिर भी 'नाथसम्प्रदाय' शब्द में 'नाथ' का अर्थ स्वामी या भगवान होता है। इस प्राणी जगत का रचयिता एवं पालनकर्ता ईश्वर या नाथपंथियों की भाषा में 'शिव' है। गुरु गोरक्ष की प्रसिद्ध पुस्तक 'गोरखबानी' में इस शब्द का प्रयोग 'ब्राह्मण' या 'परमत्त्व' के अर्थ में हुआ है। जबकि संस्कृत टीकाकार मुनिदत्त इस शब्द का प्रयोग 'सद्गुरु' के अर्थ में करते हैं। संक्षेप में 'नाथ' शब्द का अर्थ 'आध्यात्मिक मार्ग में श्रेष्ठ या सम्मानित व्यक्ति' कहा जा सकता है।[21]

नाथ सम्प्रदाय में ज्ञान, धर्म, कर्म और भक्ति के चारों अंग एक साथ आ जाते हैं और सिद्धक पवलोपावली बनकर मोक्ष की खान खोल देते हैं और जिस गाँव में आप जाना चाहते हैं वह गाँव बन जाता है, यही 'पंथराज' है। (श्री ज्ञानेश्वरी 6-152-160) संत ज्ञानेश्वर ने लोगों को इस संप्रदाय की महिमा बताई; इसीलिए संत नीलोबाराई कहते हैं-

नाथ संप्रदायाची थोरी।

प्रकट केली ज्ञानेश्वरी॥

संत रामदास और संत तुकाराम भी इस संप्रदाय का उल्लेख बड़े आदर से करते हैं।

जाईन सिद्धपंथे अवघ्या चुकतील खेपा॥

इस प्रकार उनकी थोरवी तुकोबा गाती है, जबकि समर्थ 'सकल संतों' की आरती में नाथसिद्धों को बड़े सम्मान के साथ शामिल करते हैं। ऐसे सिद्ध पंथ में शैव, बौद्ध और तांत्रिक संप्रदायों के कई सिद्ध शामिल थे और उन्हें 'सिद्धयोगी' या 'नाथसिद्ध' नाम मिला, इसी तरह इस संप्रदाय को 'अवधूतपंथ' या 'अवधूतामार्ग' जैसे विभिन्न नामों से जाना जाने लगा। ये नाम कबीर के कई पदों में देखने को मिलते हैं, जैसे 'सिद्धसिद्धान्तपथी', 'गोरखबानी'। भगवान दत्तात्रेय द्वारा गोरक्षनाथ को दिया गया उपदेश 'अवधूतगीता' नाम से भी प्रसिद्ध है।

[21] George Weston Briggs, *Gorakhnāth and the Kānphaṭa Yogis* (Delhi: Motilal Banarsidass, 2009), 228-229.

सभी नाथ साधुओं का मुख्य स्थान हिमालय की गुफाओं में है। नागा बाबा, नाथ बाबा और सभी कमंडल, चिमटा धारण किए हुए जटाधारी बाबा शैव और शाक्त संप्रदाय के अनुयायी हैं, लेकिन गुरु दत्तात्रेय के काल में वैष्णव, शैव और शाक्त संप्रदाओं का समन्वय किया गया था। नाथ संप्रदाय की एक शाखा जैन धर्म में है तो दूसरी शाखा बौद्ध धर्म में भी मिल जाएगी। यदि गौर से देखा जाए तो इन्हीं के कारण इस्लाम में सूफीवाद की शुरुआत हुई।

नाथ सम्प्रदाय की उत्पति:

यह नाथ पंथ वास्तव में कब उत्पन्न हुआ यह प्रश्न भी महत्वपूर्ण है। भारत में नाथ परंपरा की शुरूआत कोई नया आंदोलन नहीं था बल्कि यह "सिद्ध परंपरा" का एक विकासवादी चरण था। "सिद्ध परंपरा" ने योग का पता लगाया, जिसमें मनोवैज्ञानिक एवं शारीरिक तकनीकों के सही संयोजन से सिद्धि की प्राप्ति होती है। मल्ललिन्सन के अनुसार, "पुरातात्विक सन्दर्भों और शुरूआती ग्रंथों से पता चलता है कि मच्छेन्द्रनाथ और गोरक्षनाथ का संबंध प्रायद्वीपीय भारत के दक्कन क्षेत्र से था जबकि अन्य लोगों का संबंध पूर्वी भारत से हैं।" नाथ सम्प्रदाय के योगी की सबसे पुरानी प्रतिमा कोंकण क्षेत्र में पाई गई है। विजयनगर साम्राज्य के कलाकृतियों में उन्हें शामिल किया गया था। मा-हुन नामक चीनी यात्री, जिसने भारत के पश्चिमी तट का दौरा किया था अपने संस्मरण में नाथ योगियों का उल्लेख किया है। नाथ परंपरा के सबसे पुराने ग्रंथो में इस बात का उल्लेख किया गया है कि नाथ सम्प्रदाय के अधिकांश तीर्थस्थल दक्कन क्षेत्र और भारत के पूर्वी राज्य में स्थित हैं। इन ग्रंथों में उत्तर, उत्तर-पश्चिम या दक्षिण भारत का कोई भी उल्लेख नहीं है।

नाथ गुरूओं की संख्या के बारे में विभिन्न ग्रंथों में मतभेद है और विभिन्न धर्मग्रंथों के अनुसार नाथ सम्प्रदाय में क्रमशः 4, 9, 18, 25 और इससे भी अधिक धर्म गुरू थे। सबसे पहला ग्रन्थ जिसमें नौ नाथ गुरूओं का उल्लेख किया गया है वह 15वीं शताब्दी का तेलुगू ग्रन्थ "नवनाथ चरित्र" है। प्राचीनकाल के अलग-अलग धर्मग्रंथों में नाथ गुरूओं को अलग-अलग नाम से उल्लिखित किया गया है। उदाहरण के लिए, मच्छेन्द्रनाथ को 10वीं शताब्दी में लिखित अद्वैतवाद के ग्रन्थ "तंत्रलोक" के अध्याय 29.32 में "सिद्ध" के रूप में और शैव धर्म के विद्वान अभिनवगुप्त के रूप में उल्लेख किया गया है।

तिब्बत और हिमालय के क्षेत्रों में पाये गये बौद्ध ग्रंथों में नाथ गुरूओं को "सिद्ध" गुरु के रूप में उल्लेख किया गया था और शुरूआती विद्वानों का मानना था कि नाथ गुरू मूल रूप से बौद्ध हो सकते हैं, लेकिन नाथ सिद्धांत और धर्मशास्त्र बौद्ध धर्म की विचारधारा से बिलकुल अलग हैं। तिब्बती परंपरा में मच्छेन्द्रनाथ को "लुई-पे" के नाम से पहचाना जाता है, जिन्हें पहला "बौद्ध सिद्धाचार्य" के रूप में जाना जाता है। नेपाल में उन्हें बौद्ध "अवलोकीतेश्वर" के रूप में जाना जाता है। भक्ति आंदोलन से जुड़े संत कबीर ने भी नाथ योगियों की प्रशंसा की है।

महाराष्ट्र में निवृत्तिनाथ और ज्ञानेश्वर के कारण नाथ संप्रदाय अपने चरम पर पहुंचा। निवृत्तिनाथ का जन्म 1273 में और ज्ञानदेव का जन्म 1275 में हुआ था। इनमें से निवृत्तिनाथ को गहिनीनाथ ने शिक्षा दी थी और ये गहिनीनाथ गोरक्षनाथ के शिष्य थे। इसका अर्थ यह हुआ कि गोरक्षनाथ का समय ग्यारहवीं शताब्दी रहा होगा। साथ ही गोरक्षों के गुरु और नाथ सम्प्रदाय के प्रथम मानव गुरु श्रीमच्छिन्द्रनाथ का काल नौवीं या दसवीं शताब्दी मानने में भी कोई समस्या नहीं है। (हालाँकि, हमेशा की तरह, इस पर भी विद्वानों में मतभेद है!)

राहुल सांकृत्यायन जैसे कुछ शोधकर्ता इस सिद्ध परंपरा को थोड़ा अलग ढंग से लेते हैं और उनके अनुसार नाथ पंथ के संस्थापक श्रीमच्छिन्द्रनाथ के बजाय सरहपाद हैं। (यह सहजनी सिद्धों की तिब्बती परंपरा है।)

यह एक ऐतिहासिक अभिलेख है| लेकिन इस परंपरा का एक और पौराणिक पक्ष भी है। एक प्रचलित कहानी है कि मत्स्य के पेट के माध्यम से मत्स्येंद्रनाथ तैत शिव द्वारा पार्वती को दिए गए उपदेश को सुनते हैं। यदि इसे सत्य मान लिया जाए तो नाथों का उदय ऐतिहासिक काल की बजाय पौराणिक काल तक जाता है।

ऐसे पंथ में मूर्तिपूजा, वेद, स्मृति का कोई महत्व नहीं है, जातिगत और धार्मिक मतभेदों का भी कोई स्थान नहीं है। जो कोई भी अलक्षा का ध्यान करता है और मोक्ष के मार्ग पर चलता है वह यहां प्रवेश कर सकता है।

इस संप्रदाय का मानना है कि 'जो ब्रह्मांड में है वही सभी पिंडों में है।' साथ ही यहां कुंडलिनी जागरण का भी बहुत महत्व है। जब यह कुंडलिनी शक्ति, पहले चक्र में सुप्त अवस्था में, सहस्रार चक्र में शिव के साथ सामंजस्य स्थापित करती है, तो धर्मी व्यक्ति कैवल्यावस्था या सहजसमाधि प्राप्त कर लेते हैं। गोरक्षनाथ सिद्धसिद्धाण्डपद्य में कहते हैं कि इस कुण्डलिनी की चमक 'बालार्ककोटिस-जैसी' है। वे यह भी कहते हैं कि हठ योग के माध्यम से यह कुंडलिनी जागृत होती है और सहस्रार चक्र तक पहुंचती है।

इस सम्प्रदाय के योगी अर्थात नाथ योगी को अपना आचरण कैसा रखना चाहिए (जिसे गोरक्षनाथ 'रहनी' कहते हैं) के संबंध में वे कहते हैं- 'कठोर ब्रह्मचर्य, जप, शारीरिक और मानसिक पवित्रता, ज्ञान के प्रति समर्पण, बाहरी आडंबर के प्रति अनादर, अत्यधिक घृणा। शराब और मांस के लिए नाथ योग का सख्ती से पालन करना चाहिए।'

इस संप्रदाय में गुरु का महत्व अपरंपार है, इसीलिए वे कहते हैं **'निगुरा न रहिबा'** (गुरु के बिना नहीं रहना चाहिए)।

नाथपंथ अनुष्ठान, सगुण पूजा, वर्णाश्रमधाति, होमहवन, संन्यासाश्रम, अग्निहोत्र आदि। वह हिंदू धर्म के पारंपरिक विषयों को भ्रामक मानता है। लेकिन वह हर धर्म या संप्रदाय की अच्छी बातों को समान सहजता से स्वीकार करते हैं।

नाथ पंथ की प्रमुख बातों के बारे में इतनी जानकारी ही काफी है। आगे श्री गुरु गोरक्षनाथ के दर्शन की व्याख्या करते हुए यही जानकारी कुछ विस्तार से आई है, इस विषय को यहीं रोककर अब हम नाथ पंथ की वेशभूषा की ओर रुख करेंगे, क्योंकि एक विशिष्ट प्रकार की वेशभूषा ही नाथ की विशिष्ट विशेषता है।

"नौ लख पातरि आगे नाचे,पीछे सहज अखाड़ा।

ऐसो मन ले जोगी खेलै,थब अंतरि बसै भंडारा।।

नाथ पंथ की वेशभूषा-

भारत के प्रायः सभी प्रान्तों में योगी सम्प्रदाय के बड़े-बड़े वैभवशाली आश्रम हैं और उच्च कोटि के विद्वान् इन आश्रमों के संचालक हैं। श्री गोरक्षनाथ का नाम नेपाल देश में वंदनीय है और वर्तमान में नेपाल के राजा इनको अपना प्रधान गुरु के रूप में मानते हैं और वहाँ पर इनके बड़े-बड़े प्रतिष्ठित आश्रम हैं। यहाँ तक कि नेपाल की राजकीय मुद्रा (सिक्के) पर श्रीगोरक्ष नाथ जी का नाम है और वहाँ के एक प्रांत के निवासी गोरखा कहलाते हैं।

इस सम्प्रदाय में पंच गुरु होते हैं यथाः- चोटी गुरु, चीरा गुरु, उपदेशी गुरु, भस्मी गुरु, लंगोट गुरु आदि। श्री गोरक्षनाथ ने कर्ण छेदन- या चीरा चढ़ाने की प्रथा प्रचलित की थी, यह एक यौगिक क्रिया के साथ दिव्य साधना रूप की परीक्षा भी है। कान चिराने को तत्पर होना तथा कष्ट सहन की शक्ति, दृढ़ता और वैराग्य का बल प्रकट करता है।

श्री गुरु गोरक्षनाथ जी ने यह प्रथा प्रचलित करके अपने अनुयायियों और शिष्यों के लिये एक कठोर परीक्षा नियत कर दी। कान फाड़ने के पश्चात् मनुष्य बहुत से सांसारिक झंझटों से स्वभावतः या लज्जा से बचता है। लम्बी अवधि तक परीक्षा करके ही कान फाड़े जाते थे और अब भी ऐसा ही होता है। बिना कान फटे साधु को 'औघड़' कहते हैं और इसका आधा मान होता है। भारत में श्री गोरखनाथ के नाम पर कई विख्यात स्थान हैं और इसी नाम पर कई महोत्सव मनाये जाते हैं। यह सम्प्रदाय अवधूत सम्प्रदाय है। अवधूत शब्द का अर्थ होता है "स्त्री रहित या माया प्रपंच से रहित" जैसा कि " सिद्धरिद्धान्तपद्धति" में लिखा है:

"सर्वान् प्रकृतिविकारानवधुनोतीत्यऽवधूतः।

"अर्थात् जो समस्त प्रकृति विकारों को त्याग देता है वह अवधूत है।"

पुनश्चः"वचने वचने वेदास्तीर्थानि च पदे पदे।

इष्टे इष्टे च कैवल्यं सो5वधूतः श्रियस्तु नः॥

एक हस्ते धृतस्त्यागो भोगश्चैककरे स्वयम् ।

अलिप्तस्त्यागभोगाभ्यां सोऽवधूतः श्रियस्तुनः॥

जिसके प्रत्येक वचन में वेदसम्मत वाणी हो, जिसका प्रत्येक कदम तीर्थ के समान पावन हो, जिसकी प्रत्येक कामना में केवल मोक्ष हो, ऐसा अवधूत हमारे वैभव मड़ल की वृद्धि का निमित्त बने। जिसने अपने एक हाथ में त्याग और दूसरे हाथ में भोग को धारण किया हो, किन्तु फिर भी त्याग भोग से लिप्त न होता हो, ऐसा अवधूत हमारे वैभव मड़ल की वृद्धि का निमित्त बने। नाथ योगी अलख (अलक्ष) शब्द से अपने इष्ट देव का ध्यान करते हैं। परस्पर आदेश शब्द से अभिवादन करते हैं। अलख और आदेश शब्द का अर्थ प्रणव या परम पुरुष होता है, जिसका वर्णन वेद और उपनिषद् आदि में किया गया है।

आत्मेति परमात्मेति जीवात्मेति विचारणे।

त्रयाणामैक्यसंभूतिरादेश इति कीर्तितः॥

आदेश इति रद्वाणीं सर्वद्वंद्कक्षयापहाम यो योगिनं प्रतिवदेत्स यात्यात्मानमैश्वरं॥

(सिद्धसिद्धांतपद्धति)

"आ" आत्मा। दे" देवात्मा /परमात्मा। "श" शरीरात्मा/जीवात्मा, आत्मा, परमात्मा और जीवात्मा की अभेदता ही सत्य है, इस सत्य का अनुभव या दर्शन ही आदेश कहलाता है। व्यावहारिक चेतना की आध्यात्मिकता प्रबुद्धता जीवात्मा और आत्मा तथा परमात्मा की अभिन्नता के साक्षात्कार में निहित हैं। इन तथ्यों का ध्यान रखते हुए जब योगी एक-दूसरे का अभिवादन करते हैं अथवा गुरुपद में प्रणत होते हैं तो आदेश-आदेश का उच्चारण कर जीवात्मा, विश्वात्मा और परमात्मा के तादात्म्य का स्मरण करते हैं। चूंकि नाथ पंथ के देवता भगवान शिव हैं, इसलिए यह स्वाभाविक है कि उनकी पोशाक नाथ पंथ पर प्रभाव छोड़ती है। नाथपंथियों की इस वेशभूषा का वर्णन प्रसिद्ध ग्रंथ 'नवनाथ भक्तिसार', ' सिद्धसिद्धांतपद्धति ', महानुभव कृत प्रसिद्ध ग्रंथ 'लीलाचरित्र' और चिंतामणिनाथ कृत 'नाथकैवल्य' में मिलता है। उससे ऐसा प्रतीत होता है कि भगवा वस्त्र, भस्म, रुद्राक्ष, मुद्रा, मेखला, कण्ठ, शिंगी, त्रिशूल, धनधारी, दण्ड, किंगारी, खप्पर, अधारी, कमण्डल, जानवे, चिमटा और शंख उनकी वेशभूषा में प्रमुख हैं। इसके अलावा खड़ाव, डमरू, कूका या कोका जैसी वस्तुएं भी मिलती हैं।

आइए अब इन वस्तुओं का संक्षेप में परिचय समझते हैं -

भस्म - भस्म को 'बभूत' भी कहा जाता है। कुछ स्थानों पर इसे 'नमक' भी कहा जाता है। भस्म उचित पोशाक का एक अनिवार्य हिस्सा है। दो पुस्तकों 'पद्मावत' और 'चित्रावली' में भस्म को पूरे शरीर पर लगाने का उल्लेख है, लेकिन 'चंद्रायण' और 'मधुमालती' में इसका उल्लेख है कि इसे केवल मुंह पर ही लगाना चाहिए। जैसे भी हो, नाथपंथिया को भस्म अवश्य लगाना चाहिए। मानो यह भस्म संदेश देती है कि 'अंत में सभी शरीर इसी तरह भस्म हो जाएंगे, इसलिए शरीर के प्रति प्रेम कम करें और आत्मा पर ध्यान केंद्रित करें।' इसके अलावा भस्मधारण से उस स्थान का ऊर्जा केंद्र भी जागृत हो जाता है। यह भस्म सर्दी से भी रक्षा करती है, भस्म की इसी महिमा के कारण नाथपंथियों ने इसके महत्व को स्वीकार किया है।

रुद्राक्ष- रुद्राक्ष एक पेड़ का फल है और रुद्र+अक्ष का अर्थ है शिव की आंख। साधना में रुद्राक्ष का महत्व अत्यधिक है। इसे बहुत पवित्र माना जाता है. तंत्रशास्त्र की दृष्टि से रुद्राक्ष की माला भी बहुत पवित्र मानी जाती है। ये रुद्राक्ष 1 से लेकर 14 मुखी तक विभिन्न मुखी होते हैं एक इक्कीस मुखी रुद्राक्ष भी वर्तमान लेखक के संग्रह में है और एक बड़े आंवले के आकार का है। इन चेहरों का अंदाजा उनके शरीर पर मौजूद गहरी रेखाओं से लगाया जाता है। आमतौर पर पांच मुखी रुद्राक्ष बहुतायत में पाए जाते हैं, जबकि एक मुखी रुद्राक्ष काफी दुर्लभ होते हैं। नाथपंथी लोग इन रुद्राक्षों की माला बनाते हैं, जो 28, 32, 64 या 108 मनकों की होती हैं।

मुद्रा -(कुंडल)- यह किस धातु का बना होना चाहिए इसके बारे में नाथ पंथी साहित्य में कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि भगवान शंकर के कानों में कुंडल देखने के बाद मछिंदरनाथ ने अपने संप्रदाय में इस प्रथा की शुरुआत की होगी, जबकि कुछ के अनुसार, गोपीचंदा द्वारा नाथ पंथ को अलग करने की इच्छा व्यक्त करने के बाद जालंधरनाथ ने कान फाड़ने और कुंडल पहनने की प्रथा शुरू की थी। अन्य संप्रदायों से, लेकिन कुछ स्थानों पर गोरक्षनाथ ने राजा भर्तृहरि के कान फाड़कर उनमें ये कुंडल डाले थे। इसका उल्लेख भी किया गया है मुद्रा नाथपंथी योग का एक अनिवार्य हिस्सा है यह मुद्रा कान छिदवाकर पहनी जाती है और आमतौर पर वसंत पंचमी के शुभ दिन पर पहनी जाती है। क्योंकि वे इसे कान फाड़कर (कान छिदवाकर) पहनते हैं। यह मुद्रा धातु या हिरण के सींग से बनी होती है कुछ धनी महंत सोने, हाथी दांत या क्रिस्टल की मुद्राएं भी पहनते हैं। योगी के द्वारा पहना जाने वाला छल्ला 'मुद्रा', 'दरसन', 'कुण्डल' आदि नामों से प्रसिद्ध है। यह गुरु के प्रति शिष्य के शरीर के पूर्ण आत्मसमर्पण का प्रतीक है। इस प्रकार का आत्मसमर्पण ही शिष्य के शरीर और मनको पूर्णतः शुद्ध कर देता है। उसे समस्त अहमन्यताओं और पूर्वाग्रहों से मुक्त करके इतना स्वच्छ कर देता है कि वह ब्रह्म, शिव या परमात्मा की प्रत्यक्ष अनुभति कर सके। आध्यात्मिक ज्योति को प्रकाशित करने वाले तथा योगियों के जीवन के आदर्श स्वरूप गुरु के प्रति इस प्रकार के पूर्ण आत्मसमर्पण का तात्पर्य शिष्य के चिन्तन की स्वच्छन्दता में बाधा पहुँचाना नहीं होता वरन् इस स्वच्छन्दता की पूर्ति करना और उसे विकसित करना होता है। अवधूत (गुरु) की पूर्ण मुक्त आत्मा के साथ एकत्व स्थापित करके अहंकारमयी प्रवृत्तियों और इच्छाओं के बन्धन से उसकी आत्मा को मुक्ति प्राप्त होती है। गोरखनाथ के उन अनुयायियों को, जिन्होंने सभी सांसारिक सम्बन्धों को त्याग दिया है और योगी-सम्प्रदाय में प्रविष्ट हो गये हैं किन्तु जिन्होंने अन्तिम दीक्षा-संस्कार के रूप में कान नहीं फड़वाया है, सामान्यतः औघड़ कहते हैं। इनकी स्थिति बीच की है एक ओर तो सामान्य शिष्य हैं जो अभी योगी सम्प्रदाय के बाहर हैं और दूसरी और दरसनी योगी हैं, जिन्होंने सांसारिक जीवन को पूर्णतः त्याग दिया है और जब तक लक्ष्य- सिद्धि न हो जाय, योग के गुह्य साधना-मार्ग से विरत न होने का दृढ़ व्रत लिया है। यद्यपि सम्प्रदाय के औघड़ों का उतना आदर नहीं है, जितना कनफटे योगियों का, फिर भी जब तक उनमें त्याग की भावना है, जबतक वे गुरु के निर्देशों पर दृढ़ हैं और आदर्श की अनुभूति में अपने जीवन को अर्पण किये रहते हैं, तब तक योग की गुह्य साधना में उन्हें किसी प्रकार की रोक नहीं है।

मेखला- मेखला कमर बांधती है। यह 22 से 27 हाथ लंबी रस्सी जैसी रस्सी होती है जो कमर से छाती तक एक विशिष्ट तरीके से बांधी जाती है। यह रस्सी या ऊन से बना होता है। इसके सिरे पर एक घंटी बंधी होती है. मेखा को 'हर्पीज़' के नाम से भी जाना जाता है। 'हल मातंगा' मेखले का ही एक रूप है।

कंथा- कंथा फटे कपड़ों को जोड़कर बनाई जाने वाली रगड़ है। जब इसे गले से पहना जाता है तो यह पूरे शरीर को ढक लेता है। इसे 'गुदरी' के नाम से भी जाना जाता है। इसका रंग केसरिया या लाल होता है और यह गेरू से रंगा हुआ होता है। यह रंग ब्रह्मचर्य के लिए अनुकूल है। क्योंकि इससे स्खलन होता है। कहा जाता है कि सबसे पहले पार्वती ने अपने रक्त से यह लेप गोरक्षनाथ को लगाया था और तभी से नाथ पंथ में इसका प्रयोग किया जाता है।

सींग (श्रृंगी)- ये हिरण के सींगों से बनाये जाते हैं। इसे तोडों के साथ बजाया जाता है और योगी इसे जंव्य से बांधते हैं। खासतौर पर शाम की पूजा के दौरान या भोजन से पहले श्रृंगी बजाने का रिवाज है।

त्रिशूल- यह सर्वविदित है कि भगवान शिव त्रिशूल का उपयोग करते हैं, और चूंकि शिव नाथ पंथ के आदि देवता हैं, इसलिए इस नाथ पंथ के योगी भी इसका उपयोग करते हैं, कहते हैं कि त्रिशूल योगी बुरी शक्तियों को दूर रखते हैं।

ढंढारी- इसे ढंढौर या ढंढोरा के नाम से भी जाना जाता है। गोरखपंथी साधु लोहे या लकड़ी की सलाइयों के हेर फेर से एक चक्र बनाते हैं। उस चक्र के बीच में एक छेद करते हैं। इस छेद में से कौड़ी या मालाकार धागे को डालते हैं और फिर मन्त्र पढ़कर उसे निकाला करते हैं। इसी को गोरखधंधा या धंधारी कहते हैं। इसका उल्लेख योगियों के वेष में प्रायः सर्वत्र मिल जाता है। गोरखधंधा या धंधारी में से क्रिया जाने बिना कौड़ी या डोरी निकालना बहुत कठिन कार्य है। इसीलिए गोरखधंधा शब्द का प्रचलन आजकल उलझन और झंझट वाले कार्यों का वाचक बन गया है। स्थानीय भाषा में इसे 'गोरखधंधा' कहा जाता है। गोरख पंथियों का मानना है कि मंत्र के रूप में धागे को बाहर निकालने से भगवान गोरक्षनाथ की कृपा से प्रसन्न होते हैं और समुद्र में फंसे प्राणी को मुक्त कर देते हैं।

डंडा- इसे डंडा भी कहा जाता है. कुछ स्थानों पर इसका उल्लेख 'वैसाखी' के नाम से भी मिलता है। यह डंडा गोल और काले रंग का होता है और लंबाई में लगभग डेढ़ हाथ होता है। योगी इसे 'भैरवनाथ का दण्ड' या 'गोरथनाथ का सोटा' कहते हैं।

किंगरी- इसे सारंगी भी कहा जाता है. यह एक प्रकार का तारयुक्त वाद्ययंत्र है और धनुष की सहायता से इससे ध्वनि निकाली जाती है। आज भी भर्तृहरि के गीत गाने वाले योगी इसी सारंगी को लेकर घूमते नजर आते हैं।

खपर- खपर आमतौर पर टूटे हुए मिट्टी के बर्तन का एक टुकड़ा होता है। नाथ पंथ के योगियों द्वारा इसका उपयोग भिक्षा पात्र के रूप में किया जाता है। कुछ योगी नारियल के खोल से भी यह भिक्षा पात्र बनाते हैं। कभी-कभी इसके लिए चावल के कटोरे का उपयोग किया जाता है।

अधारी- अधारी का अर्थ है आसन। योगी इस पर बैठते या लेटते हैं। यह आकार में छोटा होता है।

कमंडल- इसका उपयोग पीने के पानी के बर्तन के रूप में किया जाता है।

नादी जनेऊ- औघड़ तथा दर्शनी योगी ऊन का पवित्र 'जनेव' (उपवीत) पहनते हैं। इसी में एक छल्ला जिसे 'पवित्री' कहते हैं, लगा रहता है। छल्ले में एक नादी लगी रहती है जो 'नाद' कहलाती है और इसी के साथ रुद्राक्ष की मनिया भी रहती है। 'नाद' उस सतत एवं रहस्यात्मक ध्वनि का प्रतीक है, जिसे प्रणव (ॐ) की अनाहत ध्वनि कहते हैं, जो परमतत्त्व (ब्रह्म) का ध्वन्यात्मक प्रतीक है तथा पिण्ड और ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। रुद्राक्ष (शिव या रुद्र की आँख) तत्त्वदर्शन (ज्ञान) या ब्रह्म की प्रत्यक्ष अनुभूति से मानव-चेतना के प्रकाशित होने का प्रतीक है। योग-पद्धति के अनुसार स्वभावतः हृदय स्थित नाद की बाह्य अभिव्यक्ति के रूप में प्रत्येक श्वांस के साथ प्रणव की पुनरुक्ति, ये दोनों ही ब्रह्म की साक्षात् चेतना को प्रकाशमान करने के उपाय हैं। यह 'नाद-योग' है और प्रतीकों के द्वारा इसका महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। यज्ञोपवीत नाड़ी मण्डल का प्रतीक है, जिसे नादयोग के अभ्यास से प्रशान्त और नियमित करना होता है। इस प्रकार योगियों के द्वारा धारण किये जाने वाले सभी बाह्य उपकरण, जिस सत्य की उन्हें अनुभूति करनी है, जिस आदर्श तक उन्हें पहुँचना है और जिस अनुशासन एवं विधि का उन्हें पालन करना है, उसकी स्मृति को सतत सजीव करने के लिए हैं। नाथ पंथ में अभिवादन की एक अलौकिक प्रथा है। सामान्य जन से अभिवादन के समय इस पंथ के लोग प्रचलित अभिवादनों का प्रयोग करते हैं। परन्तु आपस में अभिवादन के लिए 'आदेश' शब्द का घोष किया जाता है। अपने से वरिष्ठ को अभिवादन करते समय 'आदेश महाराज जी' कहा जाता है। प्रति उत्तर में वरिष्ठ द्वारा आदेश-आदेश बोला जाता है।

चिमटी - एक दूरदर्शी साधक अपने साथ चिमटी का एक जोड़ा रखता है। इसकी लंबाई 27, 32 या 54 इंच होती है. चिमटी की नोक गोल है. इसमें नौ और छल्ले हैं। नाथपंथी लोग इस चिमट्या की विशेष ध्वनि या धुँध में अपना रास्ता तय करते हैं। इस चिमटी का उपयोग धूनी में अग्नि प्रज्वलित करने के लिए किया जाता है।

शंख- नाथपंथी लोग भिक्षा मांगते समय और शिव के दर्शन करते समय शंख बजाते हैं। शंखनाद को ओंकार का प्रतीक माना जाता है। नाथपंथियों की इस वेशभूषा का वर्णन पाठक की आँखों के सामने नाथपंथियों की तस्वीर प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त है। अब हम नाथ सम्प्रदाय के दो महासिद्धों अर्थात् श्री गुरु मच्छिन्द्रनाथ और उनके शिष्य श्री गुरु गोरक्षनाथ का परिचय देते हैं। क्योंकि वे नाथ सम्प्रदाय के आधार स्तम्भ हैं।

नाथ पंथ का साहित्य- नाथ-पंथी योगियों का साहित्य विशाल है- संस्कृत में भी और विभिन्न प्रान्तीय बोलियों और भाषाओं में भी। योग-साधना तथा सिद्धान्त को लेकर लिखे गये प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों के अतिरिक्त, जिन्हें योगी लोग पूर्णतः प्रामाणिक मानते हैं, स्वयं गोरखनाथ, ऐसी अनेक रचनाओं के प्रणेता बताये जाते हैं, जो योग-साधना के पथ पर चलने वालों के लिये अमूल्य हैं। सम्प्रदाय के परवर्ती शिक्षकों ने भी प्रचुर साहित्य-सृजन किया है। 'गोरक्ष-शतक', गोरख-संहिता, सिद्धान्त-पद्धति, योग-सिद्धान्त पद्धति, सिद्धसिद्धान्त-पद्धति, हठयोग, ज्ञानामृत आदि अनेक संस्कृत-ग्रन्थ गोरखनाथ जी कृत बताये जाते हैं। हठ-योग प्रदीपिका, शिव-संहिता, और घेरण्ड-संहिता योग-साधन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं और इनके रचयिता इसी सम्प्रदाय के योगी बताये जाते हैं। 'गोरक्षगीता', 'गोरक्षकौमुदी', 'गोरक्ष-सहस्रनाम', 'योग-संग्रह', 'योग-मंजरी', 'योग-मार्तण्ड' तथा इसी प्रकार की अन्य अनेक कृतियाँ गोरखनाथ के शिक्षा-सिद्धान्तों पर आधृत हैं। इनके साथ ही हिन्दी, बंगाली, मराठी तथा अन्य भाषाओं में इस सम्प्रदाय से सम्बद्ध अनेक पुस्तकें हैं।

नाथ बोले अमृतवाणी,

बरिसैगी कंबली भीजैगा पाणी।

<u>नाथ योग का दर्शन और स्वरुप:-</u>

नाथयोग के आदि प्रवर्तक आदिनाथ शिव हैं। नाथपन्थ के महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ श्री गोरखनाथ श्री जालन्धरनाथ सहित नौ नाथों एवं अनेक नाथपन्थी साधकों ने नाथ योग का विकास एवं संवर्धन किया। इसी विकास-क्रम में नाथयोग का दर्शन क्रमशः विकसित हुआ। यद्यपि कि नाथ सम्प्रदाय के अभ्युदयकर्ताओं एवं साधकों ने किसी नवीन दार्शनिक मत का प्रतिपादन नहीं किया, अपितु केवल नाथपन्थी साधकों ने पूर्वप्रचलित भारतीय सनातन संस्कृति में प्रचलित योग की विस्तृत व्याख्या के साथ एक निश्चित दार्शनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। नाथपन्थ ने अपने तत्त्वदर्शन एवं साधना के लिए सभी वैदिक-अवैदिक निगम-आगम परम्पराओं में विकसित यौगिक एवं तांत्रिक विचारधाराओं और साधनाओं का समन्वित, संशोधित और विकसित स्वरूप प्रस्तुत किया। निश्चित रूप से श्री मत्स्येन्द्रनाथ एवं उनके शिष्य श्री गोरखनाथ ने नाथयोग को युगानुकूल विकसित कर उसे एक नयी पहचान दी स्पष्ट है कि नाथयोग के दर्शन एवं स्वरूप के निर्धारण में पूर्ववर्ती औपनिषदिक चिन्तन, पतंजलि के योगदर्शन, कश्मीर में विकसित योगिनी कौल दर्शन एवं साधना की पर्याप्त महत्त्वपूर्ण भूमिका है। नाथयोग दर्शन एवं साधना का स्वरूप नाथपन्थी योगियों के जिन महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों में दिखायी देता है उनमें 'सिद्धसिद्धान्त पद्धति', 'अमनस्क योग', 'गोरक्षशतक श्योगबीज' महत्त्वपूर्ण हैं। अक्षय कुमार बनर्जी द्वारा लिखित 'गोरख दर्शन भी नाथयोग के दर्शन और उसकी साधना के स्वरूप को स्पष्ट करता है।

नाथपन्थ के योगियों के चरम लक्ष्य की व्याख्या बिना उनकी दार्शनिक विवेचना के कठिन है। वस्तुतः दार्शनिकों की तरह योगी भी मानव चेतना के आन्तरिक अभीप्साओं से प्रेरित होकर चरम सत्य के जिज्ञासु होते हैं। दृश्य जगत् के साधारण परिवर्तनशील सापेक्षिक सत्य मात्र के ज्ञान से संतुष्ट न होकर वे अपने अन्तर में शाश्वत एवं परम सत्य के अन्वेषण की तीव्र उत्कण्ठा अनुभव करते हैं। उनका लक्ष्य उस सर्वव्यापी परम सत्ता को ढूँढ़ना और पाना है जो सबसे परे, ब्रह्माण्ड का मूलाधार तथा मानव अनुभव एवं समस्याओं का अन्तिम समाधान है। नाथपन्थ के योगियों ने ब्रह्माण्ड के अंतरतम रहस्य को जानने और समझने का अहर्निश प्रयत्न किया। अपने द्वारा विकसित योग के माध्यम से उन्होंने आत्मा-परमात्मा, जीव-जगत्, चर-अचर के साथ-साथ सृष्टि के रहस्यों को सुलझाने

के मार्ग का अन्वेषण किया। चरम सत्य के अन्वेषण में तार्किक एवं बौद्धिक प्रक्रियाओं के द्वारा दार्शनिकों ने जिस प्रकार प्रयत्न किये नाथपन्थ के योगियों ने भी आध्यात्मिक आत्मानुशासन और योग के द्वारा उन्हीं प्रक्रियाओं को अपनाते हुए चरम सत्य तक पहुँचने का प्रयत्न किया। नाथपन्थ की योग परम्परा योगाभ्यास के साथ-साथ पारमार्थिक तत्त्वों का दार्शनिक विवेचन भी प्रस्तुत करती है।

नाथपन्थ के योगियों की दृष्टि में पारमार्थिक रूप से दृश्यमान प्रपंच अर्थात् ब्रह्माण्ड और पिण्डों का कोई अस्तित्व-विनाश नहीं होता क्योंकि परसंवित् रूप परमतत्त्व कार्य-कारण इत्यादि से शून्य, अव्यक्त, संज्ञा से परे निरपेक्ष, निरंजन होता है। उस परमतत्त्व को किसी देश काल और भाषा की सीमा में नहीं बाँधा जा सकता। शब्दों में इसे व्यक्त करना सम्भव नहीं है। नाथपन्थ के योगियों ने चेतना की पारमार्थिक अवस्था में चरम सत्ता के साक्षात्कार का उल्लेख करते हुए कहा है कि न तो वहाँ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, इन्द्र तथा अन्य देवताओं का पृथक अस्तित्व है और न पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और न प्रकाश का ही कोई चिह्न है। वहाँ न तो कोई काल की स्थिति है और न दिशाओं की, वेद, यज्ञ, सूर्य, चन्द्र, नियम और संसार चक्र का वहाँ कोई अस्तित्व है। वहाँ स्वयं को पूर्ण सच्चिदानन्द स्वरूप में तथा आत्मरूप एकमेव आत्मप्रकाशयुक्त चरम सत्ता का प्राकट्य है। गोरखवाणी में गोरखनाथ जी कहते हैं कि परमतत्त्व परमात्मा अगम और अगोचर हैं; न तो वह सत् और न तो ही असत् है। सत् असत् दोनों से अतीत पद में वह चौतन्य सच्चिदानन्दघन परमात्मा स्वतः अभिव्यक्त है। वह बालक की तरह निष्प्रपंचतम अभिज्ञान से परिलक्षित निष्पक्ष निर्मल चेतन ब्रह्म पाप-पुण्य विकार से सर्वथा परे, जीवन-मरण की अवस्था से सदैव अबाधित रूप नाम से रहित परमात्म चौतन्य ही योगियों, परमज्ञान से युक्त सिद्ध सन्त-महात्माओं और आत्मविज्ञानियों का ध्येय तथा साध्य है। गोरखवाणी में इसे स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि परमतत्त्व न बसती है न शून्य है, न शून्य है न बसती है वह अगम और अगोचर है। गगन शिखर में बालक वाणी जैसे अभिव्यक्त है उसका नाम कोई कैसे ले सकता है। गोरखवाणी में ही आगे कहा गया है- परब्रह्म परमात्मा अलख है, निरंजन और सर्वथा त्रिगुणातीत - निर्गुण और निराधार है। उसका अनुभव करने के बाद उसे चित्त में अधिष्ठित सुव्यक्त कर लेना चाहिए। ब्रह्म साक्षात्कार के लिए मणिपूरचक्र पाताल में स्थित गंगा, परम ज्योति (योग - शक्ति कुण्डलिनी) को ब्रह्माण्ड (ब्रह्मरन्ध्र, सहस्रार अथवा सहस्रदल कमल) में उन्मुख (प्रबुद्ध) कर वहाँ परब्रह्म का साक्षात्कार करना चाहिए। ब्रह्मरन्ध्र में कुण्डलिनी के सम्मिलन से अमृत, अमरता अथवा सनातन, अक्षय - अव्यय ब्रह्मपद का रसानुभव दुर्गम हो जाता है। वह परमात्मा इस शून्य स्थान ब्रह्मरन्ध्र में निर्विकार चेतन तत्त्व के रूप में निराकार है, अभिव्यक्त होकर अनभिव्यक्त सा है। यह ब्रह्मरन्ध्र सृष्टि का केन्द्रस्थल सम्पूर्ण अविकल ब्रह्माण्ड का वाचक है, स्वरूप है, यहीं पिण्ड में ब्रह्माण्ड की संस्थिति का तात्त्विक अनुभव ही जीवात्मा और उसी के सर्वथा अभिन्न अंशी परमात्मा का सामरस्य है, रसबोध है। इसी परब्रह्म का साक्षात्कार कर परमात्म अमृतरस, चौतन्य महारस का आस्वादन कर संत सिद्ध योगमार्ग आश्रय से शरणागति अथवा प्रपत्ति से योगेश्वर पद में प्रतिष्ठित हो जाते हैं।

परमात्मा के स्वरूप का वर्णन शब्द साक्ष्य के धरातल पर उपलब्ध है और वेद में वह नेति नेति रूप में वर्णित है पर अनुभव अथवा साक्षात्कार तो परमज्ञान, आत्मविज्ञान से ही सम्भव होता है। सभी प्रकार की वाणी को उसके तात्त्विक स्वरूप निरूपण में मौन हो जाना पड़ता है। गगन - मण्डल ब्रह्मरन्ध्र में समाधि के द्वारा शब्द अनाहत (चिन्मय - अमृतमय) नाद में अभिव्यक्त विज्ञान परमात्मज्ञान से ही उस ब्रह्म का अलखनिरंजन, जगदाधार परमात्मा का साक्षात्कार अथवा स्वरूपानुभव प्राप्त करना चाहिए।

अलखनिरंजन परब्रह्म परमात्मा ने निराकार और साकार अमूर्त और मूर्त (अव्यक्त और व्यक्त) निर्विकल्प और सविकल्प समाधि के रूप में दो दीपक की रचना की। इन दोनों स्थितियों में अलक्ष्य ब्रह्म की एक ही ज्योति विद्यमान है। उस परम ज्योति के सहजध्यान से तीनों लोकों का रहस्य- ज्ञान प्रकट हो जाता है, उसी ज्योति में परमचिन्मय प्रकाश में 'हंसस्वरूप' आत्मा ज्ञानरूप मोती चुगने लगता है।

हठयोग प्रदीपिका में भी परमतत्त्व को शून्याशून्य विलक्षण कहा गया है। अमनस्कयोग में कहा गया है कि परमतत्त्व भाव - अभाव से मुक्त नाश और उत्पत्ति से विवर्जित तथा सर्वसंकल्पनातीत है। नाथपन्थ में प्रापंचिक और व्यावहारिक अनुभव से परे की सत्ता को असत् या शून्य कहा गया है। योगशास्त्र में निर्विकल्प या अस्प्रज्ञात समाज के पारलौकिक अनुभव का शून्य या पूर्ण कहकर स्पष्ट किया गया है कि शून्य अन्दर व शून्य बाहर आकाश में स्थित रिक्त घड़े की भाँति तथा पूर्णतः अन्दर और पूर्णतः बाहर है। सागर में डूबे घड़े की भाँति है।ष् गोरखनाथ और उनका सम्प्रदाय चरम सत्य के बारे में ऐसी किन्हीं बौद्धिक

विचारणा वाली संज्ञाओं तथा सत् या असत् पूर्ण या शून्य, द्वैत या अद्वैत से कोई कट्टर लगाव अनुभव नहीं करता क्योंकि उसके मतानुसार चरम सत्य ऐसी समस्त संज्ञाओं के क्षेत्र से परे है और पूर्ण पारमार्थिक अनुभव में प्रत्यक्ष साक्षात्कार के योग्य है। इसलिए वे इस चरम सत्ता को कभी प्रसंग में सत् तथा दूसरे प्रसंग में असत् कहते हैं, कभी पूर्ण तो कभी शून्य किसी प्रसंग में द्वैत तथा किन्हीं में अद्वैत और प्रायः सत्-असत्, शून्य - अशून्य, द्वैत-अद्वैत के परे कहते हैं। स्वात्माराम योगीन्द्र द्वारा लिखित हठयोग प्रदीपिका में लिखा है। वह चरम सत्ता शाम्भवी मुद्रा के आचरण से पूर्ण समाधि अवस्था में शून्य और अशून्य से भिन्न, विशिष्ट रूप में प्रकाशित होती है। ठीक अगले वाक्य में मानस के शून्य में विलीनीकरण के आनन्द का वर्णन मिलता है, जो चिदानन्द का समानधर्मा है। विश्व के परम कारण जिसे ब्रह्म, शिव, परमपद अनाम अव्यक्त आदि शब्दों से सूचित किया जाता है, वही नाथ है। दूसरा सम्प्रदाय के आचार्य - पुरुष या गुरु नाथ कहलाते हैं, इस अर्थ में नाथ गुरु का वाचक है। वस्तुतः इस सम्प्रदाय में गुरु और शिव में अन्तर नहीं माना जाता । नाथ - सिद्ध का परम लक्ष्य नाथ में अवस्थान की प्राप्ति है । नाथ वह अनिर्वचनीय परमतत्त्व है जो केवल अनुभवगम्य है उसे दर्शन की भाषा में न द्वैत कहा जा सकता है न अद्वैत ही वह दोनों से परे द्वैताद्वैत विलक्षण अथवा लक्ष्यालक्ष्यविलक्षण है। वह अण्ड - पिण्ड सर्वत्र व्याप्त है, परन्तु वह अलभ्य कदापि नहीं । अविरत - यत्न एवं गुरुकृपा से उसकी उपलब्धि इसी जन्म और इसी देह में सम्भव है। अतः देह या काय को सिद्ध कर लेना जिससे साधक जरा - मरण से मुक्त हो जाय, परम आवश्यक है। सिद्ध योगियों में एक किंवदन्ती प्रचलित है, जिससे सम्यक् कायसिद्धि और असम्यक् कायसिद्धि का भेद स्पष्ट हो जाता है। यह भी प्रचलित है कि किसी समय नाथसिद्ध श्री गोरखनाथ ने अल्लाम प्रभुदेव नामक किसी महासिद्ध के निकट आविर्भूत होकर उन्हें अपनी वज्रांगता दिखलायी थी । प्रभुदेव के मतानुसार केवल वज्रांगता ही सम्यक् सिद्धि नहीं है। देह की स्थिरता सिद्ध होने पर भी जब तक माया पर विजय प्राप्त नहीं होती, तब तक परामुक्ति की सम्भावना ही नहीं होती। उनके मतानुसार क्षर और अक्षर (कूटस्थ) के अध्यक्ष जो महेश्वर हैं, उनकी भक्ति ही परामुक्ति-प्रदायिका है। उसके बिना जो देहसिद्धि है, वह सम्यक् देहसिद्धि नहीं है। श्री गोरखनाथ ने कहा, 'मेरे शरीर पर तीखी तलवार का वार करने पर भी वह तनिक भी कट नहीं सकता।' उन्होंने कहा-

मदीयकाये यदि रोममात्रं त्रुट्यते चेत्तर्हि न कायसिद्धिः।

अहंच लोके न भवामि सिद्धः सत्यं ब्रुवे प्रत्ययमाषु पष्य ।।

अर्थात्, मेरे शरीर में यदि एक रोआँ भी टूट जाय, तो मुझमें कायसिद्धि नहीं और मैं लोक में सिद्ध न कहलाऊँ (महामहोपाध्याय कविराज गोपीनाथ तान्त्रिक वाङ्मय में शाक्त दृष्टि, पृष्ठ 269-270))। कहा गया है कि बिन्दु ही रक्षित अवस्था में मोक्षदाता है और अरक्षित स्थिति में मरणदाता है। यह बिन्दु स्वर्गदाता है और धर्माधर्म का विधायक है। उसके मध्य सूक्ष्म रूप से समस्त देवता वास करते हैं। बिन्दु ही बुद्ध, शिव, विष्णु एवं प्रजापति हैं । वह सर्वगत देव हैं, तीनों लोकों को प्रतिबिम्बित करने वाला दर्पण भी वही हैं।

नाथपन्थ में परासंवित् परमतत्त्व, परमब्रह्म, अलखनिरंजन परमशिव के विलक्षण पारमार्थिक स्वरूप का लोक-व्यवहार की दृष्टि से व्याख्या सहज बोधगम्य नहीं है। एक अभेद अपरिवर्तनीय स्वयंभू स्वतः प्रकाशित संवित् या चित् को सिद्ध योगियों ने चरम सत्ता माना। यह चरम सत्ता समस्त सीमित कालाश्रित, सापेक्षिक, व्यावहारिक सत्ताओं अर्थात चेतन और अचेतन, सजीव एवं अजीव शरीरी और अशरीरी, स्थूल और सूक्ष्म का एकमात्र स्रोत आत्मा है । यही आत्मतत्त्व को नाथपन्थ में शिवतत्त्व कहा गया है। इसलिए यह परमतत्त्व परमशिव में सदा निहित एवं एकाकार रहती है और उसकी स्वरूपभूता है अर्थात् उससे भिन्न कुछ भी नहीं है।

नाथपन्थ योगियों ने परमात्म-आत्म तत्त्व और सृष्टि की उत्पत्ति की व्याख्या करते हुए यह माना है कि परमतत्त्व परमशिव में सृष्टि की इच्छामात्रधर्मा निजाशक्ति का बीज अंकुरित हुआ । यह निजाशक्ति परमतत्त्व परमशिव में एकाकार रहती है उसकी स्वरूपभूता है और उससे अभिन्न है। परमशिव से परमशक्ति उत्पन्न हुई, परमशक्ति से अपराशक्ति प्रकट हुई, इस अपराशक्ति से सूक्ष्माशक्ति का जन्म हुआ और इसी से कुण्डलिनी शक्ति का विकास हुआ। इस प्रकार नाथयोग दर्शन के अनुसार निजा, परा - अपरा, सूक्ष्मा और कुण्डलिनी नामक शक्ति पंचक शिव पर पिण्ड की उत्पत्ति में एक कारण है। शक्तिपंचकों में प्रथम निजाशक्ति के पाँच गुण नित्यता, निरंजनता, निस्पन्दता, निराभासता और निरुत्थानता बताये गये हैं। इसी प्रकार परा- अपरा, सूक्ष्मा और कुण्डलिनी शक्तियों के

भी पाँच-पाँच गुण हैं। परा के पाँच गुण अस्तिता, अपरामेयता, अभिन्नता, अनन्तता और अव्यक्तता हैं। अपरा के पाँच निरंशता, निरन्तरता, निश्चलता, निश्चयता और निर्विकल्पता तथा सूक्ष्मा के पाँच गुण पूर्णता, प्रतिबिम्बिता, प्रबलता, प्रोच्चलता और प्रत्यङ्मुखता हैं। शक्ति-तत्त्व के इन्हीं पाँच-पाँच गुणों के योग से परपिण्ड की उत्पत्ति मानी गयी है।

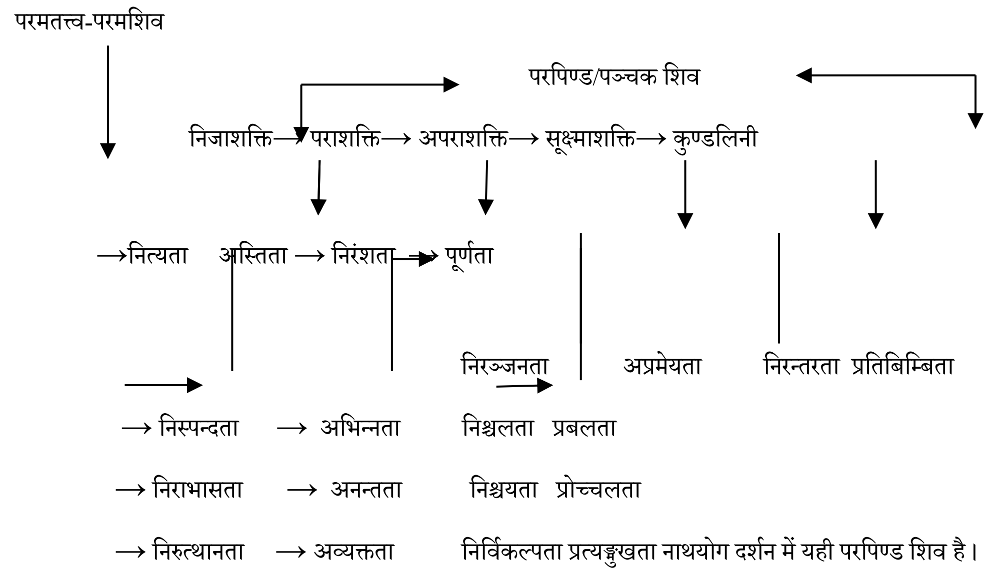

नाथयोग दर्शन में यही परपिण्ड शिव है।

सिद्धयोगियों द्वारा परमात्मा अर्थात् शिव के चरम आध्यात्मिक शरीर को ही परमपिण्ड कहा गया है। परपिण्ड के जन्म का तात्पर्य परमशिव का अपने स्वयंप्रकाश पारमार्थिक स्वरूप की पूर्ण स्थिरता और शक्ति को धारण करते हुए अपनी समस्त शाश्वत अनन्त महिमामयी शक्तियों तथा उनके गुणों एवं इन शक्तियों गुणों की पूर्ण चेतना के साथ परम पुरुष के रूप में आत्म- प्रकाशन है। इस प्रकार गोरखनाथ व सिद्धयोगी मत परमात्मा के चरम व्यक्तित्व के लिए परपिण्ड शब्द का प्रयोग करते हैं। नाथयोग दर्शन में पिण्ड शब्द का अर्थ एक व्यवस्थित पूर्ण इकाई है जो अनेकता को समेटे हुए एक केन्द्रीय सत्ता है। इसके प्रत्येक अंश में पूर्ण व्याप्त रहता है। सभी भागों में पूर्णता समायोजित रहती है। गोरखनाथ एवं नाथपन्थ के सिद्धों ने पिण्ड शब्द को विशेष महत्त्व दिया है। पिण्ड अनेकता में एकता और पूर्णता का सूचक है। पिण्ड से उनका आशय अस्तित्व के समस्त स्तरों अर्थात् उच्चतम आध्यात्मिक स्तर से लेकर निम्नतम भौतिक स्तर तक की समग्रता है। इस प्रकार गोरखनाथ उच्चतम आध्यात्मिक सत्ता के स्तर पर भी वेदांतियों के शुद्ध अद्वैत का और द्वैतवादियों के द्वैत का खण्डन करते हुए दिखायी देते हैं। अद्वैत आत्मा नाथपन्थ के योगदर्शन में अपनी निजी शक्ति से युक्त है जो उससे अभिन्न है। परमशिव की पूर्णसत्ता न केवल शुद्ध अद्वैत, न केवल द्वैत और न अनेकत्वयुक्त है। यह दर्शन लघुतम से लेकर विशालतम जीव शरीरों एवं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त असंख्य प्रकार के पिण्डों से युक्त एक पिण्ड माना गया है। इनके अनुसार एक विराट समष्टि पिण्ड में असंख्य व्यष्टि पिण्ड समाविष्ट हैं। नाथयोग दर्शन के अनुसार शिव या परमात्मा के आत्मचेतन आध्यात्मिक व्यक्तित्व में पाँच प्रकार की आध्यात्मिक चेतनाएँ व्याप्त रहती हैं। गोरखनाथ कहते हैं कि

इन पाँच शक्तियों अपरम्पर, सदाशिव - निजाशक्ति के अधिष्ठाता परमपद (परमेश्वर), पराशक्ति के अधिष्ठाता शून्य (रुद्र) अपरा शक्ति के अधिष्ठाता निरंजन (विष्णु), रागद्वेषादिरहित, ज्ञानशक्ति विशिष्ट सूक्ष्माशक्ति के अधिष्ठाता और परमात्मा (ब्रह्मा) कुण्डलिनी शक्ति के साक्षी जगत् के सृष्टा हैं। इनमें अपरम्पर से स्फुरता मात्र, परमपद से भावना मात्र, शून्य से सत्ता मात्र, निरंजन से साक्षात्कार मात्र और परमात्मा से परमात्मा की 19 उत्पत्ति कही गयी है। अपरम्पर (सदाशिव) के पाँच गुण हैं। पहला गुण अललंकत्व (दोष - शून्यता - रागद्वेषादि) का अभाव है। दूसरा गुण अनुपमत्व (सजातीयतारहित - अद्वितीय सत्तामात्र) है। तीसरा गुण अपारत्व असीमत्व (अनन्तता) है। चौथा गुण अमूर्तत्त्व (परिच्छेदरहित अमापकत्व) है- श्न तस्य प्रतिमाअस्ति। (श्वेताश्वतर 4 / 19)। पाँचवाँ गुण अनुदयत्व

(प्रागभावशून्यता) है, क्योंकि वह उत्पत्ति से परे है; सर्वव्यापक, अकाल और सनातन शाश्वत है। परमपद (परमेश्वर) निष्कल (अवयवशून्य निराकार), अणु से भी अणु (सूक्ष्म), अचल (व्यापक), असंख्य (अद्वय) और निराधार (आधाररहित स्वाश्रित अथवा स्वाभिव्यक्त) है। ये ही परमेश्वर परमपद के पाँच गुण हैं।

शून्य (रुद्र) के पाँच गुण धर्म हैं। पहला गुण लीनता (अव्यक्तावस्था) है - कारण में कार्य का लय ही लीनता है। दूसरा गुण पूर्णता (सर्वव्यापकता, अखण्डता) है। तीसरा गुण उन्मनी (सहज स्वरूप में प्रतिष्ठा) है। चौथा गुण लोलता (संहार आदि कार्य सम्पादन में तरलता) है और पाँचवाँ गुण मूर्च्छा। महाप्रलय में एकरसात्मकता (भावापन्नता, विलीनता) है।

निरंजन (रागद्वेषादि से रहित द्वन्द्वातीत विष्णु) पाँच गुणों से युक्त हैं। पहला गुण सत्यत्व (तीनों काल में अकाल रूप से उत्पत्ति - विनाश से परे सच्चिदानन्द स्वरूप) है, दूसरा गुण सहजत्व (स्वरूपस्थता) है, तीसरा गुण समरसता (निर्विकारता) है, चौथा गुण सावधानता (प्रमादादिदोषरहितता) है और पाँचवाँ गुण सर्वव्यापकत्व है।

परमात्मा (ब्रह्मा - सृष्टिकर्ता) के पाँच गुण हैं। पहला गुण अक्षयत्व (संसाररूप उपाधि के क्षय होने पर भी स्वरूप की अक्षयता - सत्ता) है; दूसरा गुण अभेद्यता (अनेक उपाधिगत भेद रहने पर भी स्वरूप में अभेद रहना) है; तीसरा गुण अच्छेद्यता (शाश्वत - सनातन सत्ता में अधिष्ठाता है); चौथा गुण अविनाशित्व (उत्पत्ति - विनाश के अभाव में स्वाभिव्यक्तता) है और पाँचवाँ गुण अदाह्यत्व (आन्तरिक, आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक त्रिविध ताप अतीतता) है। यही अनादि पिण्ड पंचतत्त्वात्मक सदा शिवादि (अपरंपदादि) के पच्चीस गुण अथवा धर्म का निरूपण है। महाप्रलय में समस्त जगत् महाशक्ति में लय को प्राप्त होकर विलीन रहता है। चिद्रूपा महाशक्ति भी चिद्रूप परमेश्वर से अभिन्न रहती है, सृष्टि की रचना के समय पाँच-पाँच गुणों से युक्त पाँच महाशक्तियों का प्राकट्य होता है। वे पाँच-पाँच देवों से पृथक-पृथक (कार्य भेद से) युक्त होती हैं। ये ही पाँच देव - शक्तियों के अनुरूप अपरंपर, परमपद, शून्य, निरंजन और परमात्मा हैं इन सभी पाँच प्रधान महाशक्तियों के सहित चेतन का नाम ही अनाद्य पिण्ड है। यही सच्चिदानन्दघनस्वरूप परमेश्वर ही उपर्युक्त गुण और नाम से पाँच रूपों में स्वाकारित - अभिव्यक्त होता है। यह स्वरूपाभिव्यक्त समष्टिदेव ही परमेश्वर शिव हैं, आदिनाथ हैं।

अनाद्यपिण्ड से महाकाश, महाकाश से महावायु, महावायु से महातेज, महातेज से महासलिल और पिफर महासलिल से महापृथ्वी रूप महासाकार पिण्ड की उत्पत्ति होती है। इनमें क्रमशः अवकाश, अच्छिद्रता, अस्पृश्यता, नीलवर्णता तथा शब्दवत्ता महाकाश के संचार, चलन, स्पर्श, शोषण और धूम्रवर्णता महावायु के दाहकता, पाचकता, उष्णता, प्रकाशत्व और रक्तवर्णता; महातेज के प्रवाह, तृप्तिकारकता, द्रवता रसता और श्वेतवर्णता; महासलिल के महापृथ्वी के पाँच-पाँच गुण हैं अर्थात् कुल 25 गुण हैं। इस विकास में महासाकारपिण्ड की आठ मूर्तियाँ बतायी गयी हैं। ये आठों मूर्तियाँ शिव ही हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं- शिव, शिव से भैरव, भैरव से श्रीकण्ठ, श्रीकण्ठ से सदाशिव, सदाशिव से ईश्वर, ईश्वर से रुद्र, रुद्र से विष्णु, विष्णु से ब्रह्मा। तदन्तर ब्रह्मा से उनके अवलोकन मात्रा से नर-नारी रूप प्रकृति - पिण्ड - भौतिक - पिण्ड की उत्पत्ति हुई है। भूमि आदि स्थूल पंचभूतों से तत‌द्भूतों के पाँच-पाँच गुणों से युक्त 25 गुणों वाला भौतिक शरीर बनता है। यहाँ चित्त, मन, बुद्धि, अहंकार और चौतन्य इन पाँच को अन्तःकरण कहा गया है तथा उनके अलग-अलग गुण भी बताये गये हैं। इसी क्रम में तीन गुणों के साथ काल 25 और जीव के भी पाँच-पाँच गुण बताये गये हैं।

नाथपन्थ के योग दर्शन में दृश्यमान भौतिक जगत् शिव और उनकी स्वरूपभूता अन्तर्निहित शक्ति का ही प्रकटीकरण (चिद्विलास) है। अपनी अनन्त शक्ति से युक्त शिव तात्त्विक रूप में अपने पूर्ण आनन्दमय, अपरिवर्तनीय स्वरूप में रहते हुए भी विलास रूप में अपने को विभिन्न रूपों में प्रकट करते भोग और भाग्य स्रष्टा और सृष्टि, आधार और आधेय, आत्मा और शरीर आत्मा और उसकी अभिव्यक्तियाँ आदि दोहरे रूपों में भासित होते हैं। वह कभी शक्ति को नहीं त्यागते और उनकी शक्ति कभी उनको नहीं छोड़ती। इस प्रकार शिव यद्यपि अपनी शक्ति के द्वारा शाश्वत रूप से अपने को समस्त रूपाकारों में व्यक्त करते हैं तथापि वह अनादिकाल से आत्मस्वरूप में अद्वैत, परिवर्तनरहित, अभेदसत्ता 26 निर्गुण ब्रह्म के रूप में रहते हैं वह शक्ति जो प्रापंचिक द्वैतताओं का आधार, कारण और पोषक है जब अपने मूल स्वतः प्रकाश शिव के पारमार्थिक स्वरूप में विराजती है तब शिव से पूर्ण तदाकार हो जाती है। इस प्रकार वह शिव के कुल (जागतिक) और अकुल (पारमार्थिक) दोनों रूपों का सामंजस्य और एकता प्रदर्शित करने वाली है।

अतः यह स्पष्टतः कहा जा सकता है कि नाथपन्थी दर्शन सत्कार्यवादी है। इसकी धारणा है कि कार्यरूप जगत् अपने वास्तविक उत्पत्ति के पूर्व अव्यक्त रूप में तथा उपादान कारण में उपस्थित रहता है। वे मानते हैं कि सक्रिय रूप में शिव या परमात्मा की आध्यात्मिक शक्ति ही इस सृष्टि प्रक्रिया में उपादान और निमित्त कारण भी है।

महासाकार पिण्ड शिव की अष्टमूर्तियों के रूप में भैरव से ब्रह्मा तक जिन मूर्तियों का वर्णन है वे ब्रह्माण्ड के विभिन्न कार्यो - सृजन, पालन और संहरण के लिए हैं। ये सभी अलग-अलग नामों के बावजूद शिव ही हैं क्योंकि ये उन्हीं की तद्‌तद् अभिव्यक्तियाँ हैं। शिव के इस महासाकार पिण्ड - ब्रह्माण्ड शरीर से विभिन्न लोकों का विकास हुआ है। इसे निरूपित करते हुए अक्षय कुमार बनर्जी ने यह बताया है कि शिव की प्रथम विशिष्ट दिव्य आत्माभिव्यक्ति जड़ जगत् के रूप में है जो प्राकृतिक नियमों से शासित होता है।

दूसरी अभिव्यक्ति जीवन और प्राण शक्तियों का लोक है जो जैविक नियमों अथवा प्राण के नियमों से शासित होता है। तीसरी अभिव्यक्ति मनोजगत् रूप में है जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति मनस् की दशाएँ हैं; प्रेम, घृणा, दया, क्रूरता, काम, क्रोध, लोभ और महत्त्वाकांक्षा आदि मनोजगत् के प्रपंच हैं और ये साधारणतया अधिक विकसित और अधिक सजीव भौतिक शरीरों में विशेषतः स्नायुमण्डल और मस्तिष्क में अनुभव किये जाते हैं। शिवशक्तिमय विकास की चौथी अभिव्यक्ति बुद्धि है जिसे उच्चतर मनस कहा जा सकता है। यह मुख्यतः अध्यवसाय या सत्य निश्चय के रूप में है । पाँचवीं अभिव्यक्ति धर्म जगत् के रूप में है जिसका अनिवार्यतः अर्थ है एक नैतिक व्यवस्था । विराट ब्रह्माण्ड की छठीं अभिव्यक्ति रसजगत् के रूप में है जो सौन्दर्यात्मक व्यवस्था है । समस्त ब्रह्माण्ड शरीर में रस व्याप्त है। आश्चर्यजनक रूप से परस्पर सम्बन्धित जड़जीवन, मनस् और बुद्धिजगत् ये समस्त सम्पूर्ण व्यवस्था के सौन्दर्य से गर्भित है और वे सब इस ब्रह्माण्ड शरीर में शिवशक्ति के चिद्विलासी आत्मप्रकटीकरण के सौन्दर्य में अपनी निर्धारित भूमिकाएँ निभाकर पूर्णतया प्रकट करते हैं। महासाकार पिण्ड की सातवीं अभिव्यक्ति आनन्द जगत् है। ब्रह्माण्ड व्यवस्था का यह आनन्द रूप तत्त्वज्ञानालोकित आध्यात्मिक चेतना के समक्ष प्रकट होता है। भौतिक ब्रह्माण्ड के समस्त निर्माणकारी तत्त्व जिन्हें योगियों द्वारा महाभूत या महातत्त्व कहा गया है आनन्द के आत्माकार हैं। समस्त पुद्गल और प्राण तथा मनस् और बुद्धि जो इस ब्रह्माण्ड शरीर में विकसित हुए हैं इस आनन्द की आत्माभिव्यक्ति के रूप में हैं। इन्द्रियों एवं सौन्दर्यानुभूतियाँ ये सभी परमात्मा के आनन्द से विकसित हुई हैं तथा आनन्द इन सबमें परिव्याप्त है।

नाथयोग दर्शन के सन्दर्भ में लोकप्रसिद्ध 14 भुवनों के अतिरिक्त विष्णुलोक, रुद्रलोक, ईश्वरलोक, नीलकण्ठलोक, शिवलोक, भैरवलोक, अनादिलोक, कुललोक, अकुललोक, परापरलोक तथा शक्तिलोक का भी वर्णन है। किन्तु यह वर्णन भी उपलक्षण मात्रा हैं। ब्रह्माण्ड की यह इयत्ता नहीं है । व्यष्टिपिण्ड (वैयक्तिक शरीर) का समष्टिपिण्ड (ब्रह्माण्डशरीर) से समरसकरण नाथयोगी सम्प्रदाय द्वारा प्रचारित एक महान आदर्श है जिसके द्वारा वे ये अनुभव कराना चाहते हैं जो ब्रह्माण्ड में है वही पिण्ड में भी है और हम इस प्रकार महाशक्ति की महिमा के समान रूप से भागीदार हैं। नाथयोग में प्रकृति पिण्ड को नर-नारी के रूप में द्विधा विभक्त बतलाया गया है। ये सब अन्तिम रूप में शिव के ब्रह्माण्ड शरीर की वैयक्तिक अभिव्यक्तियाँ हैं और इस प्रकार मूल रूप से उससे अभिन्न है । यहाँ इस सन्दर्भ में तीन बातें अवधेय हैं- एक यह कि शास्त्रों में जो 84 लाख जीव योनियाँ बतलायी गयी हैं उनमें मानव योनि सर्वाधिक व्यवस्थित है। इसमें भौतिक, जैविक, मानसिक और बौद्धिक समस्त अंग समानुपात में परस्पर सहयोगी रूप में विकसित है। इस प्रकार व्यष्टि के रूप में मनुष्य को अपनी श्रेष्ठ शरीर रचना के कारण विभिन्न लोकों में निवास करने तथा विभिन्न अस्तित्व और अनुभव स्तरों में भाग लेने का असाधारण अवसर प्राप्त है। दूसरी बात यह कि नाथयोग एवं दर्शन में वैयक्तिक मानव शरीर को शिवशक्ति जो ब्रह्माण्ड शरीर का लघुरूप ही माना जाता है। तीसरी बात यह कि दिव्यशक्ति जो अपनी ब्रह्माण्ड रूपी आत्माभिव्यक्ति की परिक्रिया में पूर्णएकत्व एवं आनन्द के उच्चतम पारमार्थिक आध्यात्मिक स्तर से शनैः-शनैः अनन्त अपूर्णताओं के निम्नतम प्रापंचिक भौतिक स्तर पर उतर आती है वह पुनः मानव शरीर के अन्तर्गत उसी के माध्यम से योगादि के बल से अपने पारमार्थिक आध्यात्मिक स्तर पर पहुँचकर शिव से पूर्णरूपेण आनन्दमय एकत्व प्राप्त कर लेती है।

परपिण्ड से लेकर गर्भपिण्ड की उत्पत्ति तक का विवरण देने के साथ ही नाथयोग में पिण्ड पर भी गम्भीर रूप से विचार किया गया है। तदनुसार पिण्ड में आधार आदि नव चक्र हैं, अनेक स्थलों पर नाथयोग ग्रन्थों में केवल षडचक्रों का ही उल्लेख मिलता है। मूलाधार - अपान स्थान में ब्रह्मचक्र हैं यह त्रिधावर्त और भगमण्डलाकार है। यहाँ पावकाकार शक्ति का ध्यान किया जाता है, यहीं कामरसपीठ चक्र है। इसके मध्य में पश्चिमाभिमुख प्रवालमणि के अंकुर के सदृश लिंग है, उसका ध्यान करना चाहिए। यही 31 उड्यानपीठ भी है जिसमें ध्यान से जगत् का आकर्षण होता है। तीसरा नाभि-चक्र है, यह पंचावर्त और सर्प के समान कुण्डलाकार है। इसके बीच में करोड़ बालसूर्यों के समान कुण्डलिनी शक्ति का ध्यान करना चाहिए। यह मध्यमाशक्ति है और सब प्रकार की 32 सिद्धियाँ देती है। इसके पश्चात् चौथा हृदय-चक्र है, जो अष्टदलकमल से युक्त और अधोमुख है। पाँचवाँ कण्ठ-चक्र है, जो चार अंगुल का है। इसके वामभाग में चन्द्रनाड़ी इड़ा है, दक्षिण भाग में सूर्यनाड़ी पिंगला है, और दोनों के मध्य में श्वेतवर्णा सुषुम्ना, का ध्यान करना चाहिए। छठाँ तालु चक्र है, इसमें अमृत-धारा का प्रवाह है। यहाँ शून्य का ध्यान करने से चित्त का लय होता है। सातवाँ भ्रू-चक्र है, जिसे आज्ञा चक्र भी कहते हैं। यहाँ दीपशिखाकार ज्ञान - नेत्र का ध्यान करना चाहिए। इससे वाक्सिद्धि होती है। आठवाँ ब्रह्मरन्ध्र - स्थान में निर्वाण चक्र है, जो सुई की नोक के समान सूक्ष्म और तीक्ष्ण है, जो 16 37 कमलदलों का और ऊर्ध्वमुख है और यहीं सर्वसिद्धिदायक पूर्णपीठ है। नवचक्रों के बाद षोडश आधारों का वर्णन मिलता है, जिनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं- पादाङ्गुष्ठाधार, मूलाधार, गुदाधार, मेढ्राधार, उड्डियानबंधाधार, नाभ्याधार, हृदयाधार, घण्टिकाधार, ताल्वाधार, जिह्वाधार, भ्रूमध्याधार, नासाधार, नासामूल, ब्रह्मरन्ध्राधार द्य कण्ठाधार, ललाटाधार, पिण्ड विचार में चक्र और आधार के वर्णन के साथ ही तीन लक्ष्यों और पाँच व्योमों (आकाश) का विचार मिलता है। तदनुसार अन्तः, बहिः और मध्य भेद से लक्ष्य तीन हैं, और आकाश, पराकाश, महाकाश, तत्त्वाकाश तथा सूर्याकाश नाम से पाँच व्योमों का वर्णन है। इनके भी विशेष वर्णन मूल ग्रन्थों में ही द्रष्टव्य हैं। वैसे नाथयोग में इनके सम्यक ज्ञान का बड़ा महत्त्व है। गोरक्षशतक में कहा गया है कि पाँच आकाशों को जो नहीं जानता है, वह भला सिद्धि कैसे पा सकता है। अस्तु, परपिण्ड तक शिव की विभिन्न अभिव्यक्तियों का नाथयोग तत्त्व-दर्शन के अनुसार वर्णन करने के पश्चात् नाथपन्थी साधना का वर्णन भी आवश्यक है। यद्यपि सिद्धसिद्धान्त पद्धति जैसे सिद्धान्त ग्रन्थ में पातंजल योग के समान ही 39 अष्टांग योग का वर्णन है; किन्तु षडंगयोग का भी कई नाथ-ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है।

नाथयोग साधना अष्टांग योग (यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि) ही है। यद्यपि कि नाथपन्थ के कुछ सिद्धान्त - ग्रन्थों में यम-नियम को योग साधना का प्रारम्भिक आधारभूत सोपान मानते हुए षडंग योग की ही चर्चा मिलती है। नाथयोग दर्शन में इस अष्टांग या षडंग योग साधना को हठयोग साधना के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त है। इसीलिए नाथयोगियों को प्रायः हठयोगी भी कहा जाता है। नाथपन्थ के योग साहित्य में प्रकार के हठयोग का उल्लेख है- पहले प्रकार का हठयोग महायोगी गोरखनाथ से पूर्ववर्ती है, जिसे भृकुण्डपुत्रादि द्वारा उपदेशित किया गया था, जबकि हठयोग की दूसरी धारा नाथयोगियों द्वारा प्रवर्तित है, जिसके प्रतिष्ठापक परम आचार्य 40 महायोगी गोरखनाथ हैं। आध्यात्मिक साधना जगत् में हठयोग का विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह साधना मुख्य रूप से प्राणों की साधना है। नाथयोग की परम्परा के अनुसार यह योग विद्या आदिनाथ भगवान् शिव से योगिराज मत्स्येन्द्रनाथ जी को प्राप्त हुई। परम्परा से प्राप्त योग विद्या को योगिराज मत्स्येन्द्रनाथ जी ने महायोगी गुरु गोरक्षनाथ को दिया और गुरु गोरक्षनाथ ने त्रिताप से पीड़ित मानवता के कल्याण के लिए इसे 41 जनसामान्य तक पहुँचाया। महायोगी गोरखनाथ ने सिद्धसिद्धान्त पद्धति में हठयोग के सम्बन्ध में लिखा है- श्हश् कार सूर्य स्वर या नाड़ी का द्योतक है और श्ठश् कार चन्द्र स्वर है। सूर्य एवं चन्द्र स्वरों के योग से ही श्हठयोगश् शब्द निष्पन्न होता है।

हठयोग मुख्यतः स्वर और नाड़ी का विज्ञान है। सूर्य स्वर जिसे पिंगला नाड़ी भी कहते हैं, पौरुष प्रवृत्ति का प्रतीक है और यह दाहिनी नासिका से प्रवाहित होता है। इसका बीज मंत्र श्हश् है। चन्द्र स्वर जिसे इड़ा नाड़ी भी कहते हैं, स्त्रैण प्रवृत्ति का प्रतीक है तथा बायीं नासिका से प्रवाहित होता है। इसका बीज मंत्र श्ठश् है। इस प्रकार सूर्य और चन्द्र के योग को ही नाथपन्थ में हठयोग कहा गया है। हठयोग के आचार्य ब्रह्मानन्द के अनुसार सूर्य स्वर से तात्पर्य प्राणवायु का है और चन्द्र स्वर से अपानवायु का। अर्थात् प्राण और अपान का निरोध रूप योग ही हठयोग है। हठयोग के आचार्यों के अनुसार श्वास साधना और उसका सन्तुलन का विज्ञान ही हठयोग है। ऐसा माना जाता है कि जब हम श्वास लेते हैं तो सामान्यतः दोनों स्वर एक साथ कार्य नहीं करते। कभी एक स्वर

चलता है तो कभी दूसरा, लेकिन इसमें कभी सन्तुलन नहीं होता । हठयोग की साधना से सूर्य और चन्द्र दोनों स्वरों में सन्तुलन स्थापित होता है। उल्लेखनीय है कि जब हमारा दायाँ स्वर चलता है अर्थात् सूर्य नाड़ी चलती है तब हमारे शरीर की प्राणशक्ति क्रियाशील होती है। अधिकांश शारीरिक क्रियाएँ विकास, रक्षण एवं संचालन आदि इसी पाचन संस्थान अवयव एवं ग्रन्थि से इसका सीधा सम्बन्ध होता है। इसी शक्ति के सक्रिय होने से प्राणिक शक्ति एवं शारीरिक क्षमता बढ़ती है। मानसिक शक्ति उसी अनुपात में कम होने लगती है; किन्तु जब चन्द्र नाड़ी चलती है तो चेतना शक्ति क्रियाशील होती है तथा मानसिक क्षमता बढ़ती है। शारीरिक क्रिया-कलापों के प्रति प्राणी की उदासीनता कम होती है एवं प्राणिक क्षमता कम होती जाती है। हठयोग की साधना दोनों स्वरों (सूर्य स्वर और चन्द्र स्वर) अथवा दोनों नाड़ियों (पिंगला और इड़ा) में सन्तुलन स्थापित करता है जिसके परिणामस्वरूप तीसरा स्वर श्सुषुम्णाश् जाग्रत होता है, इसे ही सुषुम्णा नाड़ी अथवा सरस्वती नाड़ी कहते हठयोग का सबसे प्राचीन उल्लेख बौद्ध तांत्रिकों के गुह्य समाजतंत्र में मिलता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसका उल्लेख करते हुए बताया है कि बोधि प्राप्ति की जो विधि बतायी गयी है उसका अभ्यास करने पर भी जब तक सिद्धि न प्राप्त हो तब हठयोग का आश्रय लेना चाहिए। उन्होंने हठ के और भी कई अर्थ निर्दिष्ट किये हैं। योग स्वरोदय में हठ के दो भेद बताये गये हैं। प्रथम भेद में अपान, प्राणायाम, धौति आदि षट्कर्म का विधान है, इनके अभ्यास से नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं। शुद्ध नाड़ियों में प्रवाहित वायु साधना में मन निश्चल करता है जिससे अभीष्ट सिद्ध होती है। दूसरे भेद के अनुसार नासिका के अग्रभाग में ध्यान लगाकर आकाश में कोटि सूर्य का ध्यान करना चाहिए। ऐसा करने से साधक चिरायु होता है और हठात् ज्योतिर्मय होकर चिदस्वरूप हो जाता है। इस योग को इसीलिए हठयोग कहा जाता है जो सिद्धसेवित मार्ग है। हजारी प्रसाद द्विवेदी आगे लिखते हैं- हठयोग साधना कुण्डलिनी के उद्बोधन से हठात् मोक्षद्वार को खोल देता है अर्थात् मेरुदण्ड यहाँ सीधे जाकर वायु और उपस्थ के मध्यभाग में मिलता है वहाँ अग्नि एक त्रिकोण चक्र में स्वयंभूलिंग स्थित है जिसे अग्निचक्र कहते हैं। इसी त्रिकोण या अग्निचक्र में स्थित स्वयंभूलिंग को साढ़े तीन वलयों में लपेट कर सर्पिणी की भाँति कुण्डलिनी अवस्थित है। यहीं कुण्डलिनी ब्रह्मद्वार को अवरुद्ध कर सुप्तावस्था में पड़ी रहती है जिसे जागृत कर शिव से समरस कराना योगी अथवा हठयोग का लक्ष्य है। हठात् मोक्षद्वार खोलने की यह विधि ही हठयोग है। हठयोग की साधना पिण्ड में ही ब्रह्माण्ड दर्शन अर्थात् जो कुछ ब्रह्माण्ड में है, वह सब कुछ हमारे व्यष्टि शरीर में भी है, इसका प्रतिपादन करती है। महायोगी गोरखनाथ का कथन है कि षट्चक्र, त्रिलक्ष्य, पंचव्योम, षोडश आधार, नवद्वार, पंचाधिदैव की अपने शरीर में ही विद्यमानता का जिन्हें ज्ञान नहीं है वे हठयोग की सिद्धि नहीं कर सकते । हमारा शरीर ब्रह्माण्ड का ही एक रूप है । यद्यपि कि गोरखनाथ श्सिद्धसिद्धान्त पद्धतिश् में नवचक्रों का ही वर्णन करते हैं, तथापि हठयोग की साधना छः चक्रों पर ही आधारित है। इन्हीं छः चक्रों के भेदन से साधक सहस्रार में शिव का साक्षात्कार करता है, जिनके नाम मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञाचक्र हैं। हठयोग साधना के लिए जिन षोडश आधारों का ज्ञान होना चाहिए वे - पादाङ्गुष्ठाधार, मूलाधार, गुदाधार, मेढ्राधार, उड्डियान बंधाधार, नाभ्याधार, हृदयाधार, कण्ठाधार, घण्टिकाधार, ताल्वाधार, जिह्वाधार, भ्रूमध्याधार, नासाधार, नासिकामूलाधार, ललाटाधार और ब्रह्मरन्ध्राधार हैं। इसी तरह आत्मा के स्वरूप की अभिव्यक्ति आकाश, पराकाश, महाकाश तत्त्वाकाश और सूर्याकाश अर्थात् पंचाकाश के द्वारा नाथयोग दर्शन में स्वीकारी गयी है । नाथयोगियों ने नवद्वार अर्थात् मुख, दो नेत्र, दो कान, दो नासारन्ध्र एक उपस्थ तथा एक गुदा का ज्ञान आवश्यक माना है। हठयोग की साधना के लिए उपर्युक्त के साथ-साथ पाँच अधिदेवता- आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी का ज्ञान आवश्यक माना गया है।

नाथयोग दर्शन में हठयोग को मन को स्वस्थ रखने मन को स्थिर रखने तथा आत्मा को परम पद में प्रतिष्ठित करने एवं अमृतत्व को प्राप्त करने का अमोघ साधन माना गया है। इस प्रकार नाथपन्थ में योगी मानते हैं कि हठयोग साधना मानवीय जीवन को सहज और नैसर्गिक, प्राकृतिक वातावरण के अनुकूल संयोजित करने का शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक प्रयोग है। हठयोग साधना में शरीर शुद्धि के सात साधन - शोधन, दृढ़ता, स्थैर्य, धैर्य, लाघव, प्रत्यक्ष और निर्लिप्तता बताये गये हैं। नाथपन्थी योगियों ने शरीर शुद्धि के इन सात साधनों के लिए अलग-अलग विधियाँ प्रतिस्थापित की थीं। शरीर शोधन अर्थात् काया - शोधन को एक आवश्यक साधन-तत्त्व मानते हुए इसमें षट्कर्म अर्थात् धौति, वस्ति, नेति नौलि, त्राटक और कपालभाति, इनकी विशेष खोज है। जिसके द्वारा मानव शरीर में कफ-पित्त-वात के दोष नष्ट होते हैं; शरीर में ताजगी आती है, आरोग्यता बढ़ती है तथा शरीर के मल का शोधन होता है। नाड़ियों के शोधन से प्राणवायु का शरीर में सम्यक संचार होता है।

दृढ़ता के लिए नाथयोग दर्शन में आसनों के अभ्यास का निर्देश दिया गया है। इसी प्रकार स्थैर्य के लिए मुद्राएँ, धैर्य के लिए प्रत्याहार, लाघव के लिए प्राणायाम, प्रत्यक्ष के लिए ध्यान और निर्लिप्तता के लिए समाधि आवश्यक माना गया है। वस्तुतः नाथयोगियों ने हठयोग साधना में आसन, प्राणायाम और मुद्रा को महत्त्वपूर्ण माना है। नाथयोग दर्शन के अनुसार आसनों से शारीरिक और मानसिक रोग तथा प्राणायाम से पाप नष्ट होते हैं। मुद्रा से शरीर और मन की स्थिरता सिद्ध होती है। महामुद्रा, नवोमुद्रा, उड्डियानबंध, जालन्धरबंध और मूलबंध के अभ्यास में कुशल योगी मुक्ति का पात्र होता है।

नाथयोग दर्शन में नाद - बिन्दु - साधना एवं अजपा जप नाथपन्थ के योगियों की विकसित की गयी अपनी विशिष्टता है। नाद - बिन्दु-साधना वस्तुतः ध्वनि विज्ञान है। इनका मानना है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ध्वनि सिद्धान्तों का रचनात्मक रूप है। नाद - योग के अनुसार प्रारम्भ में केवल एक पवित्र ध्वनि 'ॐ' की थी। इसी ध्वनि के ध्वनि तरंगों के द्वारा ब्रह्माण्ड की रचना हुई। इस ध्वनि रूप में शक्तियुक्त परमात्मा की आत्माभिव्यक्ति को अनाहत नाद कहा जाता है। नाथयोग दर्शन में इसे ऐसी ध्वनि माना गया है जो किसी प्रकार के आघात या रगड़ से नहीं उत्पन्न होती और न ही यह विभिन्न भागों में विभाजित हो सकती है। यह ध्वनि अनादि, अनन्त एवं पूर्ण है। यह ध्वनि उच्चारण के लिए नहीं अपितु मन की एकाग्रता के अभ्यास के द्वारा परिलक्षित की जाती है। परमात्मा के इस ध्वनि प्रतीक के अनुसन्धान को नाथयोग दर्शन में नादानुसन्धान कहा गया है।

महायोगी गोरक्षनाथ गोरखवाणी में कहते हैं कि नाद का अनुसन्धान साक्षात् 'ॐ' शब्द ब्रह्म परमात्मा की उपासना है। वे कहते हैं कि केवल नाद नाद रटने से साधना की सिद्धि नहीं होती। मन को सम्पूर्ण रूप से एकाग्र कर, अमनस्क कर चित्तवृत्ति का पूर्ण निरोध कर नाद की अन्तिम अवस्था, शब्दातीत अवस्था में प्रवाहित अनाहत में अपने आत्मस्वरूप को लय कर परमात्मा में तादात्म्य किया जाता है।

नादानुसन्धान वस्तुतः ब्रह्म का हृदय का अन्वेषण है। एक साधक के लिए आवश्यक है कि वह अपना ध्यान नाद पर केन्द्रित करे। इच्छाओं, पूर्वकृत कर्मों के प्रभावों तथा अनेक प्रकार की भावनाओं और प्रवृत्तियों से आच्छादित होने के कारण मानव हृदय सामान्यतः अशान्त रहता है। उसमें अनेक प्रकार की हलचलें उत्पन्न होती रहती हैं। अतः सामान्य जीवन - क्रम में इस नाद को सुना जा सकना तथा अनुभव किया जा पाना कठिन होता है; किन्तु हृदय के भीतर शुद्ध और शान्त वातावरण उत्पन्न कर ध्यान को केन्द्रित करने से नाद को सुना जा सकता है। इस प्रकार नाद ब्रह्म को प्राप्त करने का एक आधार बिन्दु है।

नाथयोग साधना में अजपा जप एक ऐसी साधना है जो हर प्रकृति के व्यक्ति के लिए उपयुक्त है। यह जप अपने आप में एक पूर्ण साधना है। गोरखशतक में महायोगी गुरु गोरखनाथ कहते हैं कि जीव की नियमित श्वास प्रक्रिया अपने आप में एक जप है। प्रत्येक जीव प्राणवायु को श्हकार की ध्वनि से बाहर करता है और श्सश्कार की ध्वनि से वह अन्दर खींचता है। इस प्रकार श्सोऽहं शब्द की उत्पत्ति होती है। इस मंत्र का जप ही अजपा जप है। गोरखवाणी में यह उल्लेख मिलता है कि जो साधक अजपा जप करता है, जिसकी चित्तवृत्ति तेलधारावत् 'ॐ' सोऽहं तथा परमात्मा के इष्टनाम मंत्र के जप में लगी रहती है, जिसका मन ब्रह्मरन्ध्र में रमण करता है अर्थात् ऊर्ध्वमुखी रहता है, जिसके सभी इन्द्रिय वश में रहते हैं, जो नश्वर शरीर को ब्रह्मानुभूति रूपी अग्नि में परिशुद्ध कर लेता है, उस योगी 53 की वन्दना साक्षात् भगवान् शिव करते हैं। नाथपन्थ के योगी यह मानते हैं कि श्सश् शब्द के साथ प्राणवायु पेट के अन्दर जाती है और श्हश् शब्द के साथ बाहर निकलती है। एक व्यक्ति साधारण स्वरूप की स्थिति में स्वभावतः प्रत्येक चौबीस घण्टे के भीतर 21,600 (इक्कीस हजार छः सौ) बार श्वास लेता है। ब्रह्मविद्योपनिषद् में कहा गया है कि नित्यप्रति 21,600 की संख्या में हंस का मिलकर जप करने वाला साधक सोऽहं रूप हो जाता है। यही श्वास लेने की नित्य प्रक्रिया को नाथयोग दर्शन में अजपा जप कहा गया है।

नाथयोग दर्शन एक साधनापरक तथ्य - चिन्तन है। तर्क, समीक्षा और तुलना का इसमें बहुत स्थान नहीं है। नाथयोगी बौद्धिकता की विडम्बना में भी नहीं पड़ते। उनका दावा है कि उनका नाथयोग दर्शन उनके अनुभवजन्य चिन्तन का परिणाम है। नाथयोग दर्शन जीव को परमात्मा के साथ एकाकार करने का प्रमुख साधन तन की साधना, मन की एकाग्रता और योग को मानता है। इस प्रकार नाथपन्थ का योग - दर्शन एवं साधना भारतीय तत्त्वज्ञान तथा अध्यात्म विद्या का एक नितान्त मौलिक अध्याय है। नाथयोग साधना का चरम लक्ष्य षट्चक्र भेदन द्वारा कुण्डलिनी जागरण कर सहस्रार में शिव का साक्षात्कार है।

अध्याय-चार

नवनाथ, सिद्धबारह पंथ, चौरासी सिद्ध

नाथ परम्परा या नाथमत में नवनाथों का उल्लेख मिलता है। इन नवनाथों ने अपनी उर्वर चिन्तन क्षमता के बल पर नाथमत को व्यापक, विस्तार दिया है। सम्मानतः नवनाथो में आदिनाथ, मत्स्येंद्रनाथ, गोरखनाथ, जालंधरनाथ, चौरंगीनाथ, भर्तृहरिनाथ, गोपीचंद, कानिफानाथ और काणेरीनाथ है। ये मूल नवनाथ माने जाते है। इन नामों को लेकर विद्वानों में मतभेद है। अनेक जनश्रुतियों पौराणिक साहित्यों और मठो से प्राप्त साहित्य के आधार पर जीवन वृत्ति को स्पष्ट करने का प्रयास विद्वानों ने किया है फिर भी एक सामान्य निष्कर्ष नहीं दिया जा सका है। नवनाथों के क्रम में गोरखनाथ का तीसरा स्थान रहा है गुरू मत्स्येंद्रनाथ के पश्चात इन्होंने नाथमत को अखंण्ड भारत में एक छोर से दूसरे छोर तक पहुंचाया।

गोरखनाथ जी का मानना था कि सिद्धियों के पार जाकर शून्य समाधि में स्थित होना ही योगी का परम लक्ष्य होना चाहिए। शून्य समाधि अर्थात समाधि से मुक्त हो जाना और उस परम शिव के समान स्वयं को स्थापित कर ब्रह्मलीन हो जाना, जहाँ पर परम शक्ति का अनुभव होता है। नाथ संहिता में वर्णन मिलता है कि 'नाथ' वह है " जो वर्णाश्रम धर्म से परे है और समस्त गुरुओं का साक्षात् गुरु है। न उससे कोई बड़ा है और न ही बराबर इस प्रकार के परुपात - विनिर्मुक्त योगेश्वर को ही नाथ पद की प्राप्ति होती है"। नाथो ने गुणमय वर्ण और गुणमय आश्रम का अभिमान करने वाले को गुरू नहीं बनाया। गोरक्षनाथ मानते थे कि ऐसे के साथ गुरु-शिष्य सम्बन्ध उसी प्रकार निष्फल है जिस प्रकार से दो स्त्रियों के सम्बन्ध से पुत्र प्रप्ति की आशा।

"नाथ यानि " ना यानि ब्रह्म जो मोक्षदान में दक्ष है, उसका ज्ञान कराना, 'थ' यानी अज्ञान को स्थगित करने वाला। अर्थात मोक्ष के तत्वों का ज्ञान कराने वाला नाथ है।

नाथ सम्प्रदाय -

सिद्धों की भोग-प्रधान योग-साधना की प्रतिक्रिया के रूप में आदिकाल में नाथपंथियों की हठयोग साधना आरम्भ हुई। इस पंथ को चलाने वाले मच्छेन्द्रनाथ (मछंदरनाथ) तथा गोरखनाथ (गोरक्षनाथ) माने जाते हैं। इस पंथ के साधक लोगों को योगी, अवधूत, सिद्ध, औघड़ कहा जाता है। कहा यह भी जाता है कि सिद्धमत और नाथमत एक ही है।

सिद्धों की भोग-प्रधान योग-साधना की प्रवृत्ति ने एक प्रकार की स्वच्छंदता को जन्म दिया जिसकी प्रतिक्रिया में नाथ संप्रदाय शुरू हुआ। नाथ-साधु हठयोग पर विशेष बल देते थे वे योग मार्गी थे निर्गुण निराकार ईश्वर को मानते थे। तथाकथित नीची जातियों के लोगों में से कई पहुंचे हुए सिद्ध एवं नाथ हुए हैं। नाथ-संप्रदाय में गोरखनाथ सबसे महत्वपूर्ण थे। आपकी कई रचनाएं प्राप्त होती हैं। इसके अतिरिक्त चौरंगीनाथ, गोपीचन्द, भर्तृहरिनाथ आदि नाथ पन्थ के प्रमुख कवि है। इस समय की रचनाएं साधारणतः दोहों अथवा पदों में प्राप्त होती हैं, कभी-कभी चौपाई का भी प्रयोग मिलता है। परवर्ती संत-साहित्य पर सिध्दों और विशेषकर नाथों का गहरा प्रभाव पड़ा है।

इस सम्प्रदाय के परम्परा संस्थापक आदिनाथ स्वयं शंकर के अवतार माने जाते हैं। इसका संबंध रसेश्वरों से है और इसके अनुयायी आगमों में आदिष्ट योग साधन करते हैं। अतः इसे अनेक इतिहासकार शैव सम्प्रदाय मानते हैं। परन्तु और शैवों की तरह ये न तो लिंग की पूजा करते हैं और न शिवोपासना और अंगों का निर्वाह करते हैं। किन्तु तीर्थ, देवता आदि को मानते हैं, शिवमंदिर और देवीमंदिरों में दर्शनार्थ जाते हैं। कैला देवी जी तथा हिंगलाज माता के दर्शन विशेष रूप से करते हैं, जिससे इनका शाक्त संबंध भी स्पष्ट है। योगी भस्म भी रमाते हैं योगसाधना इस सम्प्रदाय के शुरूआत, मध्य और अंत में हैं। अतः इसे शैव मत का शुद्ध योग सम्प्रदाय माना जाता है।

इस पंथ वालों की योग साधना पातंजल विधि का विकसित रूप है। नाथपंत में 'ऊर्ध्वरेता' या अखण्ड ब्रह्मचारी होना सबसे महत्व की बात है। मांस-मद्द आदि सभी तामसिक भोजनों का पूरा निषेध है। यह पंथ चौरासी सिद्धों के तांत्रिक वज्रयान का सात्विक रूप में परिपालक प्रतीत होता है।

उनका तात्विक सिद्धांत है कि परमात्मा 'केवल एक' है और उसी परमात्मा तक पहुँचना मोक्ष है। जीव का उससे चाहे जैसा संबंध माना जाए, परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से उससे सम्मिलन ही "कैवल्य मोक्ष या योग" है। इसी जीवन में उसकी अनुभूति हो जाए यही इस पंथ का लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रथम सीढ़ी काया की साधना है। कोई काया को शत्रु समझकर भाँति-भाँति के कष्ट देता है और कोई विषयवासना में लिप्त होकर उसे अनियंत्रित छोड़ देता है। परन्तु नाथपंथी काया को परमात्मा का आवास मानकर उसकी उपयुक्त साधना करता है। काया उसके लिए वह यंत्र है जिसके द्वारा वह इसी जीवन में मोक्षानुभूति कर लेता है, जन्म मरण जीवन पर पूरा अधिकार कर लेता है, जरा-भरण-व्याधि और काल पर विजय पा जाता है।

इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह पहले काया शोधन करता है। इसके लिए वह यम, नियम के साथ हठयोग के षट् कर्म(नेति, धौति, वस्ति, नौलि, कपालभांति और त्राटक) करता है ताकि काया शुद्ध हो जाए। इस मत में शुद्ध हठयोग तथा राजयोग की साधनाएँ अनुशासित हैं। योगासन, नाड़ीज्ञान, षट्चक्र निरूपण तथा प्राणायाम द्वारा समाधि की प्राप्ति इसके मुख्य अंग हैं। शारीरिक पुष्टि तथा पंच महाभूतों पर विजय की सिद्धि के लिए रसविद्या का भी इस मत में एक विशेष स्थान है। इस पंथ के योगी या तो जीवित समाधि लेते हैं या शरीर छोड़ने पर उन्हें समाधि दी जाती है। वे जलाये नहीं जाते यह माना जाता है कि उनका शरीर योग से ही शुद्ध हो जाता है अतः उसे जलाने की आवश्यकता नहीं है। नाथपंथी योगी अलख(अलक्ष) जगाते हैं। इसी शब्द से इष्टदेव का ध्यान करते हैं और इसी से भिक्षाटन भी करते हैं। इनके शिष्य गुरू के 'अलक्ष' कहने पर 'आदेश' कहकर सम्बोधन का उत्तर देते हैं। इन मंत्रों का लक्ष्य वहीं प्रणवरूपी परम पुरूष है जो वेदों और उपनिषदों का ध्येय हैं।

नाथ सम्प्रदाय के प्रमुख गुरू-

आदिगुरू: भगवान शिव (हिन्दू देवता)

मच्छेन्द्रनाथ: 9वीं या 10वीं सदी के योग सिद्ध, "कौला तंत्र" परंपराओं और अपरंपरागत प्रयोगों के लिए मशहूर।

गोरक्षनाथ (गोरखनाथ): 11वीं या 12वीं शताब्दी में जन्म, मठवादी नाथ संप्रदाय के संस्थापक, व्यवस्थित योग तकनीकों, संगठन , हठ योग के ग्रंथों के रचियता एवं निर्गुण भक्ति के विचारों के लिए प्रसिद्ध।

जलंधरनाथ: 13वीं सदी के सिद्ध, मूल रूप से जालंधर (पंजाब) निवासी, राजस्थान और पंजाब क्षेत्र में ख्यातिप्राप्त

कन्हापनाथ: 10वीं सदी के सिद्ध, मूल रूप से बंगाल निवासी, नाथ सम्प्रदाय के भीतर एक अलग उप-परंपरा की शुरूआत करने वाले।

चौरंगीनाथ: बंगाल के राजा देवपाल के पुत्र, उत्तर-पश्चिम में पंजाब क्षेत्र में ख्यातिप्राप्त, उनसे संबंधित एक तीर्थस्थल सियालकोट (अब पाकिस्तान में) में है।

चरपाथनाथ: हिमाचल प्रदेश के चंबा क्षेत्र में हिमालय की गुफाओं में रहने वाले, उन्होंने अवधूत का प्रतिपादन किया और बताया कि व्यक्ति को अपनी आन्तरिक शक्तियों को बढ़ाना चाहिए क्योंकि बाहरी प्रथाओं से हमें कोई फर्क नहीं पड़ता है।

भर्तृहरिनाथ: उज्जैन के राजा और विद्वान जिन्होंने योगी बनने के लिए अपना राज्य छोड़ दिया।

गोपीचन्दनाथ: बंगाल की रानी के पुत्र जिन्होंने अपना राजपाट त्याग दिया था।

रत्ननाथ: 13वीं सदी के सिद्ध, मध्य नेपाल और पंजाब में ख्यातिप्राप्त, उत्तर भारत में नाथ और सूफी दोनों सम्प्रदाय में आदरणीय।

धर्मनाथ: 15वीं सदी के सिद्ध, गुजरात में ख्यातिप्राप्त, उन्होंने कच्छ क्षेत्र में एक मठ की स्थापना की थी, किंवदंतियों के अनुसार उन्होंने कच्छ क्षेत्र को जीवित रहने योग्य बनाय l

मस्तनाथ: 18वीं सदी के सिद्ध, उन्होंने हरियाणा में एक मठ की स्थापना की थी।

गोरखनाथ से पहले अनेक सम्प्रदाय थे, जिनका नाथ सम्प्रदाय में विलय हो गया। शैव एवं शाक्तों के अतिरिक्त बौद्ध, जैन तथा वैष्णव योग मार्गी भी उनके सम्प्रदाय में आ मिले थे।

गोरखनाथ ने अपनी रचनाओं तथा साधना में योग के अंग क्रिया-योग अर्थात तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणीधान को अधिक महत्व दिया है। इनके माध्यकम से ही उन्होंने हठयोग का उपदेश दिया। गोरखनाथ शरीर और मन के साथ नए-नए प्रयोग करते थे। गोरखनाथ द्वारा रचित ग्रंथों की संख्या ४० बताई जाती है किन्तु डा. बड़्थ्याल ने केवल १४ रचनाएं ही उनके द्वारा रचित मानी है जिसका संकलन 'गोरखबानी' मे किया गया है।

सिद्ध योगी : गोरखनाथ के हठयोग की परम्परा को आगे बढ़ाने वाले सिद्ध योगियों में प्रमुख हैं :- चौरंगीनाथ, गोपीनाथ, चुणकरनाथ, भर्तृहरि, जालन्ध्रीपाव आदि। 13वीं सदी में इन्होंने गोरख वाणी का प्रचार-प्रसार किया था। यह एकेश्वरवाद पर बल देते थे, ब्रह्मवादी थे तथा ईश्वर के साकार रूप के सिवाय शिव के अतिरिक्त कुछ भी सत्य नहीं मानते थे।

नाथ सम्प्रदाय गुरु गोरखनाथ से भी पुराना है। गोरखनाथ ने इस सम्प्रदाय के बिखराव और इस सम्प्रदाय की योग विद्याओं का एकत्रीकरण किया। पूर्व में इस समप्रदाय का विस्तार असम और उसके आसपास के इलाकों में ही ज्यादा रहा, बाद में समूचे प्राचीन भारत में इनके योग मठ स्थापित हुए। आगे चलकर यह सम्प्रदाय भी कई भागों में विभक्त होता चला गया।

यह सम्प्रदाय भारत का परम प्राचीन, उदार, ऊँच-नीच की भावना से परे एंव अवधूत अथवा योगियों का सम्प्रदाय है।

इसका आरम्भ आदिनाथ शंकर से हुआ है और इसका वर्तमान रुप देने वाले योगाचार्य बालयति श्री गोरक्षनाथ भगवान शंकर के अवतार हुए हैं इनके प्रादुर्भाव और अवसान का कोई लेख अब तक प्राप्त नही हुआ।

पद्म, स्कन्द, शिव ब्रह्मण्ड आदि पुराण, तंत्र महापर्व आदि तांत्रिक ग्रंथ बृहदारण्याक आदि उपनिषदों में तथा और दूसरे प्राचीन ग्रंथ रत्नों में श्री गुरु गोरक्षनाथ की कथायें बड़े सुचारु रुप से मिलती है।

श्री गोरक्षनाथ वर्णाश्रम धर्म से परे पंचमाश्रमी अवधूत हुए हैं जिन्होने योग क्रियाओं द्वारा मानव शरीरस्थ महा शक्तियों का विकास करने के अर्थ संसार को उपदेश दिया और हठ योग की प्रक्रियाओं का प्रचार करके भयानक रोगों से बचने के अर्थ जन समाज को एक बहुत बड़ा साधन प्रदान किया।

श्री गोरक्षनाथ ने योग सम्बन्धी अनेकों ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे जिनमे बहुत से प्रकाशित हो चुके हैं और कई अप्रकाशित रुप में योगियों के आश्रमों में सुरक्षित हैं।

श्री गोरक्षनाथ की शिक्षा एंव चमत्कारों से प्रभावित होकर अनेकों बड़े-बड़े राजा इनसे दीक्षित हुए। उन्होंने अपने अतुल वैभव को त्याग कर निजानन्द प्राप्त किया तथा जन-कल्याण में अग्रसर हुए इन राजर्षियों द्वारा बड़े-बड़े कार्य हुए।

श्री गोरक्षनाथ ने संसारिक मर्यादा की रक्षा के अर्थ श्री मच्छेन्द्रनाथ को अपना गुरु माना और चिरकाल तक इन दोनों में शका समाधान के रुप में संवाद चलता रहा। श्री मत्स्येन्द्र को भी पुराणों तथा उपनिषदों में शिवावतर माना गया अनेक जगह इनकी कथायें लिखी हैं।

यों तो यह योगी सम्प्रदाय अनादि काल से चला आ रहा किन्तु इसकी वर्तमान परिपाटियों के नियत होने के काल भगवान शंकराचार्य से 200 वर्ष पूर्व है। ऐस शंकर दिग्विजय नामक ग्रन्थ से सिद्ध होता है।

बुद्ध काल में वाम मार्ग का प्रचार बहुत प्रबलता से हुआ जिसके सिद्धान्त बहुत ऊँचे थे, किन्तु साधारण बुद्धि के लोग इन सिद्धान्तों की वास्तविकता न समझ कर भ्रष्टाचारी होने लगे थे।

इस काल में उदार चेता श्री गोरक्षनाथ ने वर्तमान नाथ सम्प्रदाय क निर्माण किया और तत्कालिक 84 सिद्धों में सुधार का प्रचार किया। यह सिद्ध वज्रयान मतानुयायी थे।

नवनाथ कि विभिन्न सूचियाँ

जिस प्रकार 84 सिद्ध, 84 अंगुल की काया, 84 लाख योनि और 84 आसन, 9 ग्रह, 9 खण्ड पृथ्वी, 9 नाग, 9 दुर्गा, 9 काव्यरस, 9. राजा प्रसिद्ध है, उसी प्रकार नवनाथ भी प्रसिद्ध है। नवनाथों के विषय में पौराणिक ग्रन्थ से भी सूचना मिलती है। "ब्रह्मवैवर्त पुराण" के अनुसार योगनाथ,आदिनाथ,मीननाथ, गोरक्षनाथ का नामोल्लेख है।

नवनाथ नाथ सम्प्रदाय के सबसे आदि में नौ मूल नाथ हुए हैं । वैसे नवनाथों के सम्बन्ध में काफी मतभेद है, किन्तु वर्तमान नाथ सम्प्रदाय के १८-२० पंथों में प्रसिद्ध नवनाथ क्रमशः इस प्रकार हैं –

१. आदिनाथ – ॐ-कार शिव, ज्योति-रुप

२. उदयनाथ – पार्वती, पृथ्वी रुप

३. सत्यनाथ – ब्रह्मा, जल रुप

४. संतोषनाथ – विष्णु, तेज रुप

५. अचलनाथ (अचम्भेनाथ) – शेषनाग, पृथ्वी भार-धारी

६. गजबेली कन्थड़ नाथ – गणपति, आकाश रुप

७. चौरंगीनाथ – चन्द्रमा, वनस्पति रुप

८. मच्छेन्द्रनाथ – माया रुप, करुणामय

९. गोरक्षनाथ – अयोनिशंकर त्रिनेत्र, अलक्ष्य रुप

1. **आदिनाथ-** नवनाथ स्वरूप पर क्रमपूर्वक विचार किया जाये तो सर्वप्रथम आदिनाथ शिव का स्मरण होता है। वेद विज्ञान में शब्द से ही सृष्टि का प्रादुर्भाव माना गया है। इस अनन्त आकाश में प्रतिपल एक ध्वनि अनवरत स्पन्दन उत्पन्न करती रहती है। उसे ही नादब्रह्म कहते हैं। ॐ ही वह शब्द है जिसकी प्रतिध्वनि अनवरत रूप से अखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। सृष्टि का जनक, देवों का देव, समस्त शक्तियों का स्वामी, समस्त सृष्टि जिससे सृजित और समाहित है, समस्त महायोगी उसी के रूप हैं, जो द्वैत और अद्वैत के विवाद से परे अनिर्वचनीय है, उसी परमतत्त्व को आदिनाथ नाम दिया गया है।
2. **उदयनाथ (उमा पार्वती)-** क्रम सोपान के अन्तर से उदयनाथ द्वितीय स्थान पर हैं और यह नाम भगवान् शिव की भार्या पार्वती को दिया गया है। सम्पूर्ण पृथ्वी उनका स्वरूप है। यह समझना आवश्यक है कि यहाँ पृथ्वी से तात्पर्य केवल हमारे सौरमण्डल के इस पृथ्वी ग्रह से नहीं है, अपितु अन्तरिक्ष में जितने भी ग्रह, नक्षत्र और तारे हैं, उनका आधारमण्डल शिवभार्या पार्वती का स्वरूप है। पर्वत की पुत्री होने के कारण इन्हें पार्वती कहते हैं। जीव को सर्वप्रथम अपनी निजशक्ति से उत्पन्न, पलल्लवित और पोषित करने के कारण इन्हें दिव्य शक्ति, महाशक्ति, धरणीरूपा, महीरूपा, पृथ्वीरूपा, प्रजानाथ, उदयनाथ, भूमण्डल आदि कहा गया है। यह शिव की निजा शक्ति हैं जो उनसे भिन्न नहीं होकर समस्त सृष्टि को सभी प्रकार से चलायमान एवं सक्रिय रखती हैं। आदिनाथ एवं उदयनाथ का ये महान दिव्य युगल समस्त दृष्टमान एवं बोधगम्य तत्वों का उत्पादन और भरण करता है। जहां शिव समस्त चराचर जगत में आत्मतत्व के नियन्ता है तो यह शक्ति उस चराचर जगत् का मूर्त रूप है। उदय का शाब्दिक अर्थ उठना या प्रकट होना है अत: उदयनाथ को उदित होने या करने वाले देवता की संज्ञा दी जा सकती है। **विश्वोदयादुदयनाथसनाथयास्मान्** विश्व के उदय करने के निमित्त उदयनाथ हमें सनाथ करें।

3. **सत्यनाथ (ब्रह्मा)**-तृतीय स्थान पर सत्यनाथ नाम से ब्रह्मा पदस्थापित हैं, जिनको जलस्वरूप कहा गया है। सृष्टि के समस्त जीवों, चल व अचल पदार्थो के निर्माण में जल एक प्रमुख तत्त्व है। इन्हें प्रजापति लोकपति भी कहा जाता है। ज्ञान गुदड़ी नामक ग्रन्थ के अनुसार ब्रह्मा भी सृष्टि करने की इच्छा के कारण इस जगत प्रपन्न में अपनी भूमिका का निर्वहन करते हैं।

आदि पुरूष इच्छा उपजाई, इच्छा साखत निरंजन मामही॥

इच्छा ब्रह्मा, विष्णु, महेषा। इच्छा शारदा, गौरी, गणेषा॥

इच्छा से उपजा संसारा। पंच तत्व गुण तीन पसारा॥ (ज्ञान गुदड़ी)

4. **संतोषनाथ (विष्णु)**- चतुर्थ स्थान पर संतोषनाथ नामान्तर्गत विष्णु विराजित हैं, जो तेजस्विता लिये हुए हैं। भगवान् विष्णु सन्तुष्टि का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं जो इस सृष्टि के संचालक, सन्तुलनकर्ता होते हुए भी निर्लिप्त व सन्तुष्ट भाव से अपने कर्तव्य का पालन करते हैं। शाब्दिक अर्थ में देखा जाए तो संतोष भौतिक संसाधनों पर स्वामित्व, महत्वाकांक्षाओं पर विराम और क्षमता आदि पर वर्तमान क्षण की स्थिति पर एक तटस्थ भाव को इंगित करता है अर्थात जो है और जैसा है उसकी निष्पक्ष स्वीकारोक्ति ही संतोष है। इसका अर्थ यह है कि एक वास्तविक योगी महल और कुटिया में तटस्थ भाव से समान रहता है। श्रीमद्भगवद्गीता में **समत्वं योगं उच्यते** कहकर समता को ही योग कहा गया है। संतोष के प्राप्त होने पर स्थायी शान्ति प्राप्त हो जाती है। योगीजन इस आन्तरिक शान्ति को प्राप्त होने के कारण बाहरी शान्ति पर निर्भर नहीं रहते। भारत में सिद्धजन कई परम्परा में अनेक नाम हैं जिन्होंने सन्तोष प्राप्त हो जाने के बाद अपने महान् आदर्श का परिचय दिया। किन्तु संतोष का तात्पर्य अकर्मण्य हो जाना नहीं है अपितु कर्मफल में आसक्त होने की स्थिति का नहीं रह जाना ही संतोष है। इसी बात को श्रीमद्भगवद्गीता में कहते हैं -

अनश्रित: कर्मफलं कार्य कर्म करोति य:।

स सन्यासी च योगी च न निरम्निर्न चाक्रिय: ॥

5. **अचल अचम्भेनाथ (शेषनाग)**- पाँचवें स्थान पर योगीश्वर अचम्भेनाथ नाम का उल्लेख है और इनकी प्रकृति अचल बतायी गयी है। श्रीमद्भगवद्गीता के दूसरे अध्याय में कहते हैं –

नित्य: सर्वगत: स्थाणुरचलो5यं सनातन:॥ पृथ्वी को अपने फन पर स्थिर और अचल भाव से धारण करने के कारण शेषनाग को भी अचलनाथ कहा जाता है। सम्पूर्ण सृष्टि नित्य गतिमान है केवल वायु से बना (बोलचाल में अन्तरिक्ष) आकाश ही स्थिर और अचल है। यह आकाश पृथ्वी की ब्रह्माण्डीय स्थिति में इसके ऊपर नीचे, सर्वत्र व्याप्त है। यह एक विलक्षण तथ्य है कि वायु भी स्थिर नहीं है और एक निश्चित परिधि के बाद आकाश वायु रहित हो जाता है, संभवत: योग की यही विलक्षणता योगियों का ध्येय है।

6. **गजबेली कन्थड़ नाथ (गणेश)**- छठे स्थान पर गणेश जी के अवतार योगीश्वर को गजकन्थड़ नाथ नाम दिया गया है। मुद्गल पुराण में अड्धिरा ऋषि ने संसार के समस्त अवयवों को गण और उनके स्वामी ब्रह्म को गणेश के नाम से बताया है। गणेश अर्थात समूह का नेतृत्व करने वाला जो ऋद्धि और सिद्धियों को देने वाला है। गणेश के अन्य नामों में विघ्नेश अर्थात् विघ्न का नाश करने वाला, उन्हें उत्पन्न, समाप्त या नियंत्रित करने वाला प्रस्तुत विषय के सन्दर्भ में उल्लेखनीय है। इस प्रकार किसी कार्य का निर्विघ्न संचालन एवं सफल समापन गणेश जी की अनुकम्पा पर निर्भर करता है। स्पष्ट है कि भौतिक समृद्धि ऋद्धि, और आध्यात्मिक शक्ति सिद्धि गणेश जी की कृपा से ही संभव है। यह निर्विवादित है कि अवसर मिलने पर त्याग'' पुन: भौतिक सुखों की ओर लालायित होगा और जीती हुई इन्द्रियाँ पुन: अपने व्यवहार की ओर

उन्मुख होंगी किन्तु भौतिक सुखों से संन्यास और माया से अप्रभावित व इन्द्रियों पर नियन्त्रण प्राप्त हो जाने की स्थिति में यह आशंका नहीं रहती।

7. **चौरंगीनाथ (चन्द्रमा)-** सातवें स्थान पर वनस्पतियों के जीवनदाता चन्द्रमा को चौरंगीनाथ नाम दिया है। शाब्दिक अर्थ के सन्दर्भ में चौरंगीनाथ एक निश्चित आकार रहित पुरुष किन्तु पूर्ण ज्ञान के प्रतीक हैं। नवनाथों में इन्हें अपने सम्मोहन, रोगहरण और सौन्दर्य के लिए विशेष महत्त्व दिया जाता है। नवनाथों की सूचियों में कहीं-कहीं चौरंगीनाथ के स्थान पर कूर्मनाथ भी अंकित किया गया है।

8. **मच्छेन्द्रनाथ (मायारूप)**- नवनाथों में सबसे अधिक चर्चित नाम मच्छेन्द्रनाथ तथा गोरक्षनाथ हैं। मच्छेन्द्रनाथ को माया स्वरूप कहा गया है। संस्कृत में मा का अर्थ "नहीं है तथा या का अर्थ "है" है। अर्थात जो नहीं है किन्तु फिर भी है और इसके उलढक्रम से जो है किन्तु फिर भी नहीं है, वह माया है। मच्छेन्द्रनाथ को दादागुरु कहा जाता है और जिस प्रकार परिवार में पितामह को अपने प्रपौत्रों से स्नेह व अनुराग होता है मच्छेन्द्रनाथ को भी अपने पुत्र (शिष्य) महायोगी गोरक्षनाथ के पुत्रों (शिष्यों) से अनुराग है और परिवार में पितामह का अपने प्रपौत्रों की त्रुटियों को क्षमा करने की स्वाभाविक प्रवृति वाला होने से मच्छेन्द्रनाथ को कृपालु भी कहा जाता है।

निःसन्देह सीखने की किसी भी पद्धति और प्रक्रिया में विद्यार्थी से त्रुटि होना संभव है तब नाथ सम्प्रदाय के दादा गुरु मच्छेन्द्रनाथ जी कृपापूर्वक उन त्रुटियों को क्षमा कर देते हैं। नाथयोगियों की मान्यता अनुसार जीवन शिव और उसकी निजा शक्ति का खेल है और सम्पूर्ण चराचर जगत का प्रपंच शिव द्वारा स्थापित विधि के अनुरूप ही होता है। यदि जीव इस सत्य को पहचानने में असफल होता है तो यह उसके स्वयं के विवेक और दृष्टि की असमर्थता है और गुरु हमारे ज्ञान चक्षुओं को इस सत्य को पहचानने में समर्थ बनाता है। जीव जब दूसरों पर दोषारोपण की प्रवृत्ति को छोड़कर स्वयं के कर्मों के उत्तरदायित्व को स्वीकार करना प्रारंभ करता है तो जीवन का प्रत्येक क्षण स्वयं शिक्षक बन जाता है।

9. गोरक्षनाथ (अलक्ष्य बालरूप)- महायोगी गोरक्षनाथ को आदिनाथ शिव का ही अवतार मानते हैं और शिवस्वरूप मानने के कारण ही शिवगोरक्ष की संज्ञा से उच्चारित करते हैं। यद्यपि आदिनाथ सृष्टि के प्रथम देव हैं, किन्तु गुरु गोरक्षनाथ ने योगाभ्यास द्वारा स्वयं को उससे एकात्म कर लिया और इस प्रकार गोरक्षनाथ व आदिनाथ भिन्न नहीं हैं। गोरक्षनाथ नवनाथों में सर्वोपरि हैं और पवित्रता में आदिनाथ से अभिन्न होते हुए सृष्टि संचालन के लिये विभिन्न काल एवं भूखण्डों में प्रकट होते हैं। गोरक्षनाथ को एक बालक की भाँति निष्कपट, निष्पाप और निर्मल होने से पार्वती का ऐसा पुत्र भी कहा जाता है जो सृष्टि के नियमों से परे, ब्रह्म से अद्वैत हैं और सभी देव, दानव, नर, किन्नर, यक्ष, गन्धर्व, नाग, वानर, चर, अचर, उभयचर आदि जीवों के नैसर्गिक गुण मैथुन से नितान्त निर्लेप होने के कारण जतिसंज्ञा से युक्त हैं।

महायोगी गोरक्षनाथ अयोनिज (जिनकी उत्पति मैथुन जनित परिणाम न हो) हैं। शिव की ही तरह अपने योगरूप में ही महायोगी गोरक्षनाथ के भी तीन नेत्र हैं। बायां नेत्र चन्द्रमा, दाहिना नेत्र सूर्य और भ्रूमध्य में ज्ञानचक्षु है जिसे शिवनेत्र भी कहा जाता है। ब्रह्म से अद्वैत हो चुके योगी के लिये कुछ भी घृणित और भयकारक नहीं रह जाता, क्योंकि उसे सब में स्वयं का ही आभास होने लगता है। श्रीमदभगवतगीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने वासुदेवः सर्वमिति कह कर इस अद्वैत दर्शन को समझाया है तो नाथयोगियों द्वारा घट-घट वासी, गोरक्ष अविनाशी, टले काल मिटे चौरासी।। कह कर गोरक्ष (शिवतत्त्व) के सर्वत्र व सभी में व्याप्त होने की अवधारणा की जाती है। गो का अर्थ वाणी, इन्द्रिय, ज्ञान और पृथ्वी भी है। इनके रक्षक और पालक होने और शेष पालकों के भी स्वामी होने से ये गोरक्षनाथ कहलाते हैं।

बारह पंथ

नाथ-योगी सम्प्रदाय के इतिहास पर विचार करते समय हमारी दृष्टि, स्वभावतः, इसके उन अनेक पंथों व शाखा-प्रशाखाओं की ओर भी चली जाती है जिनके विभिन्न केन्द्र भारत के प्रायः प्रत्येक भाग में बिखरे पड़े हैं। उनके विषय में कभी-कभी ऐसा कहा जाता है कि वे पहले, केवल 12 पृथक्-पृथक् संस्थाओं

के ही रूप में, संघटित हुए थे। इसीलिए, उन्हें 'द्वादश-पंथ' की संज्ञा भी प्रदान की जाती है। अतएव, यदि हम उनके प्रवर्तन-काल का कोई समुचित पता पा सके अथवा हमें केवल इतना भी विदित हो जा सके कि वे, अमुक व्यक्तियों द्वारा अथवा अमुक प्रकार की विशिष्ट परिस्थितियों में, स्थापित किये गये थे तो, संभव है, इससे उनके मूल सम्प्रदाय के इतिहास पर भी कुछ प्रकाश पड़ सके तथा उसकी अनेक बातें स्पष्ट हो जायें। परन्तु इन द्वादश पंथों का हमें अभी तक ऐसा कोई प्रामाणिक तथा सर्व-स्वीकृत विवरण नहीं मिल पाया जिससे इस विषय में यथेष्ट सहायता ली जा सके अथवा जिसके आधार पर हमें केवल इतना भी ज्ञात हो सकें कि उनका प्रारम्भिक रूप क्या रहा होगा। उनकी आज तक उपलब्ध सूचियों की संख्या लगभग 20 से ऊपर तक चली जाती है, किन्तु इन सभी में हमें पूरी एकरूपता नहीं लक्षित होती। इनमें सम्मिलित किये गये नामों में न्यूनाधिक विभिन्नता पायी जाती है और उनमें से किसी के द्वारा हमें ऐसा कोई स्पष्ट संकेत भी नहीं मिलता जिसके आधार पर इनमें से किसी एक को दूसरी से अधिक प्राचीन वा विश्वसनीय ठहराया जा सके। फिर भी इतना निश्चित है कि यदि इन सारी सूचियों का कोई तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तथा इस प्रकार इनके बीच किसी व्यवस्थित क्रम का अनुमान भी लगाया जा सके तो, अपने अनुसंधानकार्य में कुछ न कुछ प्रगति अवश्य हो सकेगी।

नाथ-पंथीय ग्रंथ 'गोरक्षसिद्धांत संग्रह' के अन्तर्गत, 'शाबरतंत्र' को उद्धृत करते हुए कहा गया है कि आदिनाथ, अनादि, काल, अतिकाल, कराल, विकराल, महाकाल, कालभैरवनाथ, बटुक, भूतनाथ, वीरनाथ एवं श्रीकंठ ये 12 कापालिक है। वहीं पर उनके शिष्यों की भी 12 की ही संख्या बतलाकर उनके नाम नागार्जुन, जडभरत, हरिश्चन्द्र, सत्यनाथ, भीमनाथ, गोरक्ष, चर्पट, अवद्य, वैराग्य, कन्थाधारी, जलन्धर एवं मलयार्जुन दे दिये गये हैं तथा इन्हें 'मार्ग-प्रवर्तक' तक भी ठहराया गया है। इस दूसरी नामावली के कम से कम दो-तिहाई नाम ऐसे है जो 'नाथ-योगी सम्प्रदाय' में भी प्रसिद्ध हैं जिस कारण यह अनुमान कर लेना स्वाभाविक है कि इनके द्वारा सम्बोधित व्यक्ति, कदाचित वे ही हो सकते हैं जिनकी गणना प्राय उसके नवनाथों में भी की जाती है तथा जिनके यहां पर 'मार्ग प्रवर्तक' भी कहलाने के कारण, उनका सम्बन्ध उक्त 'द्वादशपथ' के साथ होना असंभव नहीं है। परन्तु इनकी सूची के शेष नाम हमें, इस संबंध में उतने परिचित नहीं जान पड़ते और न उन सभी द्वारा कभी प्रवर्तित है जिससे हमें किसी ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने में कोई सहायता मिल सके और इस प्रकार, हम यह कह सके कि इनमें से कोई भी व्यक्ति अमुक पंथ का प्रवर्तक रहा भी होगा वा नहीं। यहां पर हमें केवल इतना ही पता चलता है कि उक्त दूसरी सूची के नाम वाले, पहली सूची के नामधारियों का किसी-न-किसी रूप में अनुसरण करने वाले व्यक्ति रहे होंगे तथा उन्होंने किसी समय अपने 'मार्गों' वा पंथों की स्थापना भी की होगी।

प्रो. ब्रिग्स ने किसी ऐसी परम्परा का उल्लेख किया है जिसका उन्होंने, गोरक्षटिल्ला (जि. झेलम, पंजाब) में, प्रचलित होना बतलाया है तथा जिसके आधार पर, उनके अनुसार, प्राचीन शैव सम्प्रदायों का भी कुछ न कुछ संकेत मिल जाता है। 'टिल्ला' वालों का कहना है कि पहले 18 पंथ ऐसे थे जिन्हें शिव ने प्रवर्तित किया था और 12 वें थे जिन्हें गुरु गोरख नाथ ने चलाया था। फिर पीछे, जब इन दोनों वर्गों वालों में परस्पर संघर्ष होने लगा तो, इसके परिणामस्वरूप, उक्त प्रथम के 6 तथा, उसी प्रकार द्वितीय के 6, अंत में, शेष रह गये और इन्हीं के नाम, कनफटा योगियों में 'द्वादशपंथ' में परिगणित किये जाने लगे। प्रो. ब्रिग्स ने उक्त कुल 18 एवं 12 पंथों की कोई पूरी सूची नहीं दी है और न उन्होंने हमें यही बतलाया है कि इनका सर्वप्रथम संघटन कब हुआ था अथवा इनका 30 में से छँटकर केवल 12 मात्र ही रह जाना किस प्रकार सम्भव हुआ। उन्होंने, इन बचे हुए पंथों की तालिका देते समय, इतना मात्र कहा है कि इनमें से (1) कच्छ प्रांत के भुजवाला, कंथड़ नाथ, (2) पेशावर एवं रोहतक वाला 'पागलनाथ', (3) अफगानिस्तान का 'रावल', (4) 'पंख', (5) मारवाड़ का 'वन' एवं (6) 'गोपाल', व 'राम के' नामों से सूचित होने वाले पंथ शिव के द्वारा प्रवर्तित हैं तथा इसी प्रकार, (7) 'हेठनाथ', (8) विमला देवी वाले आई पंथ का 'चौलीनाथ' (9) 'चंदनाथ' कपलानी, (10) रतढोंढा (मारवाड़ का) 'वैराग' वा रतननाथ, (11) जयपुर का पावनाथ (जिसमें जालन्धर या कानिपा और गोपीचंद भी सम्मिलित हैं) एवं (12) 'घज्जनाथ' (जिसके सदस्य विदेशी लोग हैं) ये गुरु गोरखनाथ द्वारा चलाये गये हैं। उनके अनुसार ऐसी परम्परा के आधार पर हमारे इस अनुमान को भी बल मिल सकता है कि किस प्रकार गुरु गोरखनाथ ने प्राचीन शैव सम्प्रदायों को नवीन रूप दे दिया होगा। इसके सिवाय इतना और भी समझ लिया जा सकता है कि उक्त प्रथम 6 सूची वाले पंथ, संभवतः दूसरी वालों से प्राचीनतर भी रहे होंगे।

परन्तु एक महानुभावीय ग्रंथ के अन्तर्गत हमें ऐसे 30 पंथों के भी नाम बतलाये गये दीख पड़ते हैं जिन्हें लगभग उक्त प्रकार से ही 18 एवं 12 के दो भिन्न-भिन्न वर्गों में विभाजित किया गया है, किन्तु जिन्हें वहाँ पर क्रमशः 'अठरापंथजती' एवं 'वारापंथी योगी' जैसे पृथक्- पृथक् नाम भी दिये गये हैं। जिस कारण यह पूर्णतः स्पष्ट नहीं हो पाता कि इनमें से किसका मूल प्रवर्तक कौन रहा होगा।

इसके अतिरिक्त यहां पर हमें इस बात की भी कोई सूचना नहीं मिलती कि इनमें से किसी के पंथ का कभी विघटन हुआ भी था या नहीं, उक्त ग्रंथ से उद्धृत किये गये पाठ वाले सभी नाम पाठ स्पष्ट नहीं है और कुछ तो संदिग्ध से भी लगते हैं, किन्तु ये किसी एक मतविशेष की ओर संकेत करते हैं जिस कारण, कदाचित् इनके भी आधार पर हमे तथ्य का परिचय पाने में कुछ न कुछ सहायता मिल सकती है। इस मत के अनुसार (1) नाटेश्वरी, (2) लक्षणपंथी (3) पार्वतीनाथी (4) अभगनाथी (5) कापिल (6) भर्तृहरिनाथवैराग्य (7) पंथ (8) आई पंथ (9) राउल (10) पावपथी (11) यागुल एवं (12) दासमार्गी ये 'वारापथी योगी' थे इसी प्रकार (13) सतनाथपथी (14) सांतीनाथी (15) गुललम (?) (16) प्रेमनाथी (17) हायसेखीन (18) उखालपंथी (19) नाथलक्षण (20) रामनाथी (21) वक नाथी (22) वैरागी (23) गमपंथी, (24) चोलीक (25) गगनाथी (26) गोपालपथी (27) हेमार्गी (28) धनंजय (29) गजकथडी एवं (30) नागार्जुनपंथी ये 'अठरापंथजती' थे। इन 30 में से कई की गणना उपर्युक्त प्रो. ब्रिग्स की सूचियों में भी की गई दीख पड़ती है। परन्तु यदि इनमें से 'वारापंथी योगों' वालों की, उनके अनुसार गुरु गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित तथा 'अठरापंथजती' वालों को भी, उसी प्रकार, शिव द्वारा चलाया गया मान लिया जाय उस दशा में, एक वर्ग के नामों के दूसरे में पाये जाने की समस्या खड़ी हो जाती है। इस कारण, हमारे लिए किसी एक को दूसरे से प्राचीनतर स्वीकार करने पर लिए उनका असंदिग्ध आधार भी नहीं रह जाता जिससे आवश्यक सहायता मिल सके।

'द्वादशपंथी की प्रो. ब्रिग्स वाली उपयुक्त सूची के नाम उस एक अन्य ऐसी ही तालिका में भी आ गये हैं, जिसे, सत्यनाथ तीर्थ नामक एक छोटे से साम्प्रदायिक ग्रंथ के अंतर्गत 'बारह पंथ संग्रह' शीर्षक के, नीचे, प्रथम स्थान दिया गया है। इसके आगे उस पुस्तक में 4 अन्य ऐसी सूचिया भी दी गई हैं तथा, इसी प्रकार, एक 5वीं सूची उसके अंतिम पृष्ठ पर भी आती है। परन्तु इन छह में से किसी के भी सभी नाम ठीक वे ही नहीं जान पड़ते जिनका उल्लेख प्रो. ब्रिग्स ने उक्त प्रकार से किया। इस कारण अधिक से अधिक उपर्युक्त दो ही मात्र का आधार एक समझा जा सकता है शेष के लिए अन्य आधारों का भी अनुमान किया जा सकता है। इन दोनों पंथों वाले नामों से हमें केवल इतना ही अन्तर दिखाई पड़ता है कि एक तो उन्हें दोनों के अन्तर्गत ठीक एक ही क्रमानुसार दिया गया नहीं पाया जाता और दूसरा यह कि प्रथम के 'पागल' को यहां 'पाकल' तथा उसके 'हेठ' को 'हेत'- जैसे रूप दे दिये गये दिखते हैं जो, कदाचित् उच्चारण भेद के भी कारण, संभव हो सकता है जिस कारण इस बात को उतना महत्व भी नहीं दिया जा सकता। 'सत्यनाथ तीर्थ' वाली उक्त अन्य ऐसी सूचियों में से द्वितीय के अन्तर्गत केवल 9 नाम ही आये हैं, जिससे यह अधूरी भी कहीं जा सकती है। परन्तु इसके ये नाम भी ग्रंथ की तृतीय सूची वाले वैसे नामों से अधिक भिन्न नहीं प्रतीत होते। इन दोनों से न्यूनाधिक मिलती जुलती एक सूची हमें अन्यत्र भी मिल जाती है, जिसका विवरण 'बारह पंथी की साखी' नामक एक छोटी सी रचना में उपलब्ध है। यह रचना अभी हस्तलिखित रूप में ही मिल सकी है और यह बीकानेर की 'अनूप संस्कृत लाइब्रेरी' में सुरक्षित है। अतएव, यदि हम इन तीनों ही सूचियों के लिए किसी एक सामान्य आधार की कल्पना कर सकें और तदंनर इनके अनुसार उपलब्ध परिणाम का, उपर्युक्त दोनों सूचियों पर आश्रित अनुमान के साथ, कोई तुलनात्मक अध्ययन भी कर सकें तो, यह संभव है कि, हमें इन पांचों के भी विषय में कोई स्पष्ट संकेत अवश्य मिल जाय।

'बारहपंथी की साथी' वाले उपर्युक्त विवरण में आये हुए 12 नामों की सूची इस प्रकार दी जा सकती हैः—-

(1) हेतपंथी (2) आई जोगी (3) पांपाचपंथी (4) रावल जोगी (5) खंथड़ जोगी (6) पागल जोगी (7) धजजोगी (8) गमनिरंनज (9) चोली पंथी (10) वनजोगी (11) दास जोगी एवं (12) पंख जोगी।

और यदि 'सत्यनाथतीर्थ' वाली द्वितीय सूची 6 को अधूरी मानकर उसे छोड़ दिया जाय तो, उसकी वैसे ही नामों की तृतीय पूरी सूची का नाम-क्रम एवं विवरण इस रूप में प्रस्तुत किये जा सकते हैः—-

(1) पाकल (2) रावल (3) दास (3) दास (4) कंथड़ (5) पाव (6) वन (7) आई (8) हेत (9) धज (10) गोपाल (11) चोली एवं (12) गम।

जिससे स्पष्ट हो जाता है कि इन तीनों में बहुत कम साम्य है और अंतर बहुत कम है। दोनों पूरी सूचियों में ही 'हेत', 'आई', 'रावल', 'कंथड़', 'धज', 'चोली', 'वन', 'गम' एवं 'दास' में 9 नाम प्रायः ठीक एक समान आये हैं, एक के 'पागल' एवं दूसरे के 'पाकल' में कोई विशेष अंतर नहीं है तथा उसका 'पांवा' भी कदाचित इसके 'पाव' से अधिक भिन्न नहीं जान पड़ता। केवल पहली के 'पंख' का दूसरी में तथा दूसरी के 'गोपाल' का पहली में कहीं पता नहीं चलता और न इसका हमें कोई कारण ही ज्ञात होता है। अतएव, यदि पांचों ही सूचियों वाले नामों का एक तुलनात्मक अध्ययन फिर किया जाय तो, हमें कम से कम 'रावल', 'कथड़', 'पागल', 'धज', 'चोली', 'वन' एवं 'पंख' प्राय एक समान जान पड़ेंगे, 'हेत' का 'हेठ' बन गया प्रतीत होगा तथा इसी प्रकार 'पापा' का 'पावा' और 'पात्र' भी एक सिद्ध हो सकेंगे। केवल 'आई' तथा 'चंद', 'गम', तथा 'वैराग' तथा 'दास' और 'गोपाल' के ही एक समान होने में कुछ संदेह किया जा सकेगा। इसी प्रकार, यदि 'बारह पंथी की माखी वाली सूची उपर्युक्त प्रो. ब्रिग्स वाली सूची से किसी प्रकार प्राचीनतर ठहरायी जा सके तो, यह भी अनुमान किया जा सकता है कि उसके 'आई', 'गम निरंजन' तथा 'दास' नामक पंथों में पीछे कुछ परिवर्तन आ गया होगा। इसके सिवाय, इनके विवरणों के सम्बन्ध में विचार करने पर, हमें ऐसा भी लगता है कि इनमें से किसी एक के लिए शिव द्वारा पूर्व प्रवर्तित तथा दूसरी के लिए गुरु गोरखनाथ द्वारा पूर्व प्रवर्तित मान लेने के लिए भी कोई निरा काल्पनिक आधार ही रहा होगा। इनमें से प्रथम वर्ग के लिए पंथों की संस्था का 18 होना तथा द्वितीय वर्ग के लिए केवल 12 तक ही रह जाना भी, विश्वसनीय प्रमाणों के अभाव में, किसी तथ्य पर आधारित नहीं जान पड़ता। जोधपुर के नाथ पंथी महाराज मानसिंह (सन् 1783-1843 ई.) की कतिपय पंक्तियों से तो हमें ऐसा जान पड़ता है कि योगियों के 'पावन पंथ' वस्तुत 'द्वादश' ही रहे होंगे और उनके साथ-साथ छह और भी 'अद्भूत वर्गों की गणना कर दी जाती रही होगी जिनके नाम भी उन्होंने दिये हैं। तदनुसार (1) हेत (2) पाव (3) आई (4) गम (5) पागल (6) गोपाल (7) दास (8) कथड़ (9) वन (10) धज (11) चोली एवं (12) पच (कदाचित् पंख) की गणना उन्होंने द्वादश पंथ में की है और (1) नाटेश्वर (2) सतनाथ (3) गगनाथ (4) रामके (5) कपिल (कदाचित् कपिलानी) एवं (6) वैराग को शेष छह में रखा है जिससे कुच की संख्या 18 की हो जाती है।

'द्वादश पंथ' वाले नामों की हमें कुछ ऐसी भी सूचियां प्राप्त है जिनके प्रवर्तकों को स्पष्ट शब्दों में गुरु गोरखनाथ का शिष्य कहा गया है और फिर भी ऐसे व्यक्तियों के नामों में बहुत अन्तर भी दीख पड़ता है। मेकलेगैन वाली पंजाब की जन-गणना रिपोर्ट (सन् 1891 ई.) से पता चलता है कि इस प्रकार की सूची के अन्तर्गत जो नाम आये थे वे ये हैं :— (1) संतनाथ, (2) रामनाथ, (3) अभंगनाथ, (4) भरंगनाथ, (5) घरनाथ, (6) गंगाई नाथ, (7) अजनाथ, (8) जालन्धर नाथ, (9) दर्पनाथ (10) कनकनाथ, (11) नीमनाथ और (12) नागनाथ। जो मौ. नूर अहमद की पुस्तक 'तहकीकाते चिश्ती' में भी प्रायः ठीक इन्हीं रूपों में पाये जाते हैं। एक प्रमुख अन्तर यह है कि उनकी संख्या केवल 9 की है जिस कारण उनमें इसके भरंगनाथ, दर्पनाथ एवं नीमनाथ का कोई उल्लेख नहीं पाया जाता।

इसी प्रकार वैसे 12 नाम हमें मारवाड़ की जन-गणना सम्बन्धी सन् 1895 ई. वाली रिपोर्ट में भी दिखाई पड़ते हैं जो इस प्रकार हैः— (1) संतनाथ (2) रामनाथ (3) भृंगनाथ (4) धर्मनाथ (5) वैरागनाथ (6) दरियानाथ (7) गंगनाथ (8) ध्वजानाथ (9) सिद्ध विचारनाथ (10) नागनाथ (11) गंगाई नाथ और (12) लछमननाथ, जिन्हें हम प्रायः इन्हीं रूपों में रोज़ के ग्रन्थ 'ग्लॉसरी' में भी पाते हैं। इसके सिवाय इन्हीं नामों को हम, एक अन्य पुस्तक के भी अन्तर्गत, 'श्री गुरु गोरक्षनाथ जी योगेश्वर के 12 शिष्य शीर्षक के नीचे देखते हैं। रोज़ वाली सूची में केवल 7 ही नाम आये हैं जिस कारण वह अधूरी भी कही जा सकती है तथा उसमें पाये जाने वाले दो नामों अर्थात् 'कापिक नाथ' एवं 'नीमनाथ' इसके अनुसार, नितांत नवीन भी जान पड़ते हैं। गुरु गोरखनाथ के 12 शिष्यों की एक ऐसी ही सूची विलियम क्रुक ने किसी पंजाब-सम्बन्धी पुस्तक से उद्धृत की है और इसकी चर्चा उन्होंने कनफटा लोगों के प्रसंग में की है। इसका विवरण नीचे लिखे ढंग से दिया गया मिलता हैः— (1) मठेसरी के संस्थापक गोरखशिष्य लक्ष्मण (2) सतनाथ (जो ब्रह्मा का अनुसरण करने वाले कहे गये हैं) (3) सतनाथ (जिन्ह रामचन्द्र का अनुयायी कहा गया है) (4) भर्त्तृनाथ (5) पपख (6) कामधज (7) हैठझौली (8) ब्रजधजपथ (9) चन्दमरग (10) दाम गोपाल (11) मस्तनाथ और (12) आर्यपथ जिनमें से कुछ तो व्यक्तित्वापक जान पड़ते है, किन्तु अन्य केवल संख्या-सूचक से ही लगते हैं। इन सभी के साथ उपर्युक्त नामों की तुलना करने पर यथेष्ट साम्य भी नहीं दिखायी पड़ता जिसके आधार पर कोई स्पष्ट निष्कर्ष निकाला जा सके। क्रुक ने यहां पर यह भी बता दिया है कि कनफटा लोग प्राय

केवल चार ही गोरखशिष्यों ब्रह्मा, राम, लक्ष्मण तथा कपिलानी के नाम लिखा करते हैं और अन्य को उतना महत्व देते नहीं जान पड़ते हैं। परन्तु गोरखपंथी 'जोगियों का परिचय देते समय उस लेखक ने जहां वैसे शिष्यों के नाम लिये हैं वहाँ पर उसने दो अन्य सूचियाँ भी दी हैं जो इस प्रकार हैः—

(क) सतनाथ, धर्मनाथ, कामनाथ, आडनाथ, मस्तनाथ, अमपथी, कलेपा, धजपथी, हडीविरग, राम के, लछमन के एवं दरियानाथ तथा (ख) आईपथ, राम के, भर्तरी, सतनाथ, कनिक की, कपिलमुनि, लछमण, नटेसर, रतननाथ, संतोखनाथ, धजपंथी और माननाथ जिनके आधार पर भी हमें कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिलता। अतएव, इस वर्ग की उपर्युक्त सभी सूचियों की तुलना करने पर, हमें केवल धजनाथ का ही नाम सर्वत्र मिलता है और इसके अन्यतर फिर सतनाथ एवं रामनाथ का रामके तथा भरग के नाम लगभग एक समान आते हैं। नागनाथ और फिर इससे भी कम धर्मनाथ, दरिया, वैराग, मस्तनाथ, रामनाथ, भर्तरी, नीमनाथ, गगनाथ और गगाई नाथ आये हैं, जिस कारण कहा जा सकता है कि ऐसी सूचियों में हमें उतने नाम-साम्य के उदाहरण नहीं मिलते।

नाथ-योगी सम्प्रदाय के गोरखपुर वाले केन्द्र की परम्परा के अनुसार द्वादशपंथों के नाम इस प्रकार दिये जाते हैं—

(1) सत्यनाथी (2) धर्मनाथी (3) रामपंथ (4) नाटेश्वपी (5) कन्हड, (6) कपिलानी (7) बेराग (8) माननाथी (9) आई पंथ (10) पागल (11) ध्वजपथ और (12) गंगानाथी, जिससे यह भी प्रकट होता है कि ये उपर्युक्त सूचियों वाले नामों से कुछ भिन्न ठहरते हैं। इनमें न तो उनका 'हेत' है न 'पाव' है, न 'रावल' है, न 'गम' है, न 'चोली' है, न 'वन' है, न 'दास' है और न 'पंख' ही दिखायी पड़ता है। इनमें उनमें से प्राचीनतम जान पड़ने वाली 'साखा की सूची के केवल कन्हड़ (कंथड़), पागल, आई और ध्वज (धज) मात्र ही रह गये हैं। इनके अन्तर्गत वैराग और कपिलानी (चंद) भी दिखलाई पड़ते हैं जो ब्रिग्स द्वारा दी गई सूची में भी वहाँ पर संगृहीत हैं और जिसके आधार पर हम यह भी अनुमान कर सकते हैं कि ये नाम वहाँ किसी पिछले परिवर्तन के परिणाम स्वरूप आ गये होंगे। प्रो. ब्रिग्स का तो यह भी कहना है कि 'सत्यनाथ' भी (जिसे उक्त गोरखपुरी परम्परावाली सूची के अनुसार यहाँ 'सत्यनाथी' कहा गया दिखायी पड़ता है) गोरक्षटिल्ला की परम्परा के अनुसार वस्तुतः प्राचीन 'पंख' नामक पंच से संबद्ध माना जाता है। इसी प्रकार संभवतः 'धर्मनाथी' भी 'पंख' में ही आ जाता है तथा 'नाटेश्वरी' को 'हेठनाथ' (हेत) के साथ जोड़ दिया जाता है। यह सूची कदाचित् अधिक प्रचलित है और इसके नामों की तुलना में हम 4 अन्य सूचियाँ भी यहाँ पर उद्धृत कर सकते हैं जो इस प्रकार हैः—

1- 'सत्यनाथतीर्थ' की पांचवी सूची 19

(1) सत्यनाथ (2) धर्मनाथ (3) वैराग्य (4) राम (5) कपलानी (6) पागल (7) नटेश्वरी (8) मन्नानाथ (9) गंगानाथ (10) रावल (11) पाव और (12) आई।

2- 'सत्यनाथ तीर्थ' की छठी सूचीः

(1) सत्यनाथी (2) धर्मनाथी (3) कपिल के (4) राम के (5) गंगानाथ के (6) आई पंथी (7) मन्नानाथी (8) ……………. (9) रावल (10) पागल (11) दरियानाथी और (12) पावपंथी।

3- डा. कल्याणी मल्लिक की सूची

(1) सत्यनाथ, (2) रामनाथ (3) धर्मनाथ (4) लक्ष्मणनाथ (5) दरियानाथ (6) गंगानाथ (7) वैरागनाथ (8) रावल (9) जालंधरिया (10) आई पंथ (11) कपलानी (12) बलनाथ और (13) कानिपा।

4- डा. चन्दोला की सूची

(1) सत्यनाथ (2) धर्मनाथ (4) लक्ष्मणनाथ (5) दरियानाथ (6) गंगानाथ (7) वैरागनाथ (8) पागल (9) पावनाथ (10) आईपंथ (11) कपिलनाथ और (12) धजनाथ।

इन चार तथा गोरखपुरी परम्परा वाली सूची में भी सत्यनाथ, धर्मनाथ, रामनाथ, आई पंथ, कपिलानी एवं गंगानाथी ये 6 एक समान जान पड़ते हैं। इनमें से 4 में वैरागनाथ तथा पागल है 3 में पावनाथ, दरियानाथी, रावल तथा धजनाथ है तथा 2 में नाटेश्वरी, लक्ष्मणनाथ और मन्ननाथी भी किसी न किसी रूप में आ गये दिखायी पड़ते हैं। केवल 1 में कथड़ और 1 में ही कानिपा भी पाया जाता है और यह दूसरा वस्तुतः 13 वां पथ बनकर वहाँ प्रवेश कर गया है।

कानिपा पंथ को एक तेरहवां स्थान प्रदान करने की प्रथा हमें प्रो. ब्रिग्स की उस सूची में भी दिखायी पड़ती है जिसे उन्होंने अन्यत्र कुछ अधिक विवरण के साथ दिया है तथा जिससे 3 अन्य सूचियों को भी एक समान ठहराया जा सकता है। तदनुसार इन चारों के भी नाम क्रमशः निम्न रूप में दिये जा सकते हैं—

1- प्रो. ब्रिग्स की सूची सं.

(1) सतनाथ (2) रामनाथ (रामके) (3) धरमनाथ (4) लक्ष्मणनाथ (5) दरियानाथ (6) गंगानाथ (7) वैरागनाथ (8) रावल वा नागनाथ (9) जालंधरिया (10) आई पंथ (11) कपलानी (12) धजनाथ और (13) कानिपा।

2- 'सत्यनाथ तीर्थ' की 4 थी सूची

(1) आई पंथी (2) कपिलानी (3) सत्यपंथी (34) धर्मपंथी (5) वैराग पंथी, (6) गंगानाथी (7) रामपंथी (8) लक्ष्मणपंथी (9) नटेसरी (10) पिंगल पंथी (11) धजपंथी और (12) कान्हपा।

3- डा. ह. प्र. द्विवेदी की सूची

(1) सत्यनाथी (2) धर्मनाथी (3) रामनाथ (4) लक्ष्मणनाथ (5) जालंधरिया (6) कपिलानी (7) वैरागपंथ (8) नागनाथ (9) आई पंथ (10) दरियानाथ (11) धजपंथ (12) गंगानाथी और (13) कानिपा।

4- दबिस्ताने मज़ाहिब की सूची

(1) सत्यनाथ (2) नटीरी (3) वैराग (4) आई पंथी (5) चोली (6) हांडी (7) कश्यप (8) अर्धनारी (9) नामारा (10) अमरनाथ (11) कान्हिवदास और (12) तारानकदास।

इन चारों सूचियों में केवल सतनाथ वा सत्यनाथ, वैराग नाथ, आई पंथ एवं कनिपा ही किसी न किसी रुप में सर्वत्र पाये जाते हैं। उसी प्रकार धर्मनाथ, रामनाथ, गंगानाथ, लक्ष्मणनाथ, कपिलानी एवं धजनाथ भी तीन में लगभग एक समान हैं और दरियानाथ, नागनाथ तथा जालंधरिया केवल दो में ही आते हैं। इनकी तथा गोरखपुर वाली सूची की भी नामावलियों में वस्तुतः विशेष अन्तर नहीं दिखाई पड़ता और जो कुछ बातें भिन्न-भिन्न जान पड़ती हैं वे उतनी स्पष्ट नहीं। परन्तु 'दबिस्ताने मज़ाहिब' वाली सूची के अन्तर्गत कुछ ऐसे नाम भी आ गये हैं जिनका अन्यत्र पता नहीं चलता।

अतएव, यदि उपर्युक्त सारी सूचियों पर एक साथ विचार किया जाय तो इसके फलस्वरूप हमारे सामने कुछ ऐसे भी परिणाम आ सकते हैं जिनके आधार पर हमें 'द्वादश पंथ' के विषय में अनुमान करते समय उतनी कठिनाई नहीं रह जाती। इतना स्पष्ट हो जाता है कि उनमें आये हुए नामों का समावेश एक ही समय तथा एक ही मत के अनुसार भी नहीं किया गया होगा। इन सभी के बनाने वालों का उद्देश्य एकमात्र 'द्वादशपंथ' का परिचय देना होने पर भी, उन्होंने ऐसा करते समय अपने यहां की प्रचलित साम्प्रदायिक परम्परा का अनुसरण अवश्य किया होगा तथा उसी के अनुसार उन्होंने अपने लिए विविध नाम भी चुने होंगे। इसके सिवाय, यह भी संभव है कि उन्होंने, अपनी इस प्रकार की मनोवृत्ति के ही कारण, कभी-कभी पहले से आते हुए नामों में से कुछ को निकालकर उनकी जगह ऐसे अन्य नाम भी डाल दिये होंगे जिन्हें उन्होंने अधिक महत्वपूर्ण समझा होगा। सर्वप्रथम सूची किसने और कब तैयार की होगी इसका ठीक-ठीक पता नहीं चलता और न हमें इस समय यही निश्चित रूप से ज्ञात हो पाता है कि 'द्वादशपंथ' की भावना का वास्तविक मूल आधार क्या रहा होगा। उपर्युक्त सामग्रियों की सहायता से केवल इतना ही कहा जा सकता है कि या तो इस प्रकार की कल्पना, किसी अन्य सम्प्रदाय में प्रचलित परम्परा के अनुसरण में, कर ली गई होगी अथवा गुरु गोरखनाथ के 'शिष्य-प्रशिष्यों' में से किसी को स्वयं इसकी उपयोगिता जान पड़ी होगी और उसने, अपनी साम्प्रदायिक संगठन-पद्धति का वास्तविक रूप निर्धारित करने के प्रयास में ऐसा कर दिया होगा। यों तो उपर्यक्त 'बारह पन्नों की साखी' के अंत में यह भी दिखलाया गया है कि इसे 'सम्मुनाथ' ने गोरखनाथ से, गोरखनाथ ने 'सित्तिनाथ' से तथा उन सित्तिनाथ ने भी 'बिरमा पख जी' से कहा था? और, इस प्रकार वह अत्यंत प्राचीन तक बन जाती है। वहाँ पर, 12 भिन्न-भिन्न पद्यों के अन्तर्गत, क्रमश द्वादशपंथों के जोगियों की कतिपय विशेषताओं का भी उल्लेख किया गया है, किन्तु इस बात की ओर कोई भी संकेत किया गया नहीं पाया जाता जिसके आधार पर यह ज्ञात हो सके कि उनकी पद्धति का आरंभ कब एवं किस प्रकार हुआ होगा।

इन उपलब्ध सूचियों पर विचार करते समय हमें ऐसा भी लगता है कि यदि हम चाहे तो, इन्हें विभिन्न वर्गों में भी ला सकते हैं। उपर्युक्त 'साखी' वाली सूची के साथ हम 'सत्यनाथ तीर्थ' वाली सूची सं. 3 एवं 2 को रख सकते है, पंजाब की जन-गणना रिपोर्ट (सन् 1891 ई.) वाली सूची के साथ 'तहकीकाते चिश्ती', 'मारवाड़ की जन-गणना रिपोर्ट (सन् 1898 ई.) तथा रोज़ वाली सूचियों को स्थान दे सकते हैं। इसी प्रकार क्रुक की उन तीन सूचियों पर भी एक साथ विचार कर सकते हैं जिनका उल्लेख उन्होंने अपने यहां 'जोगियों' आदि की चर्चा करते समय किया है। इसी नियमानुसार एक तीसरा वर्ग हम उस गोरखपुर वाले केन्द्र की सूची के आधार पर भी कल्पित कर सकते हैं जिसके नाम 'सत्यनाथ तीर्थ' की सं. 5 एवं 6 तथा डा. कल्याणी मल्लिक और डा. चन्दोला द्वारा दी गई सूचियों वाले ऐसे नामों से बहुत कुछ मिलते हैं और एक अन्य चौथे वर्ग का भी अस्तित्व उन सूचियों के आधार पर स्वीकार कर लिया जा सकता है जो प्रो. ब्रिग्स, डा. द्विवेदी और 'सत्यनाथ तीर्थ' की सूची सं. 4 तथा 'दबिस्ताने मज़ाहिब' के अनुसार दी जा चुकी है और जिनकी एक तुलना भी ऊपर कर दी गई है। इन चारों वर्गों की कुछ न कुछ अपनी पृथक्-पृथक् विशेषताएं जान पड़ती हैं जो, उनमें आये हुए नामों के न्यूनाधिक साम्य तथा कभी-कभी उनके रूप एवं क्रमोल्लेख के विचार से भी, निश्चित की जा सकती है तथा जिनके आधार पर उनमें से किसी एक का दूसरे से कुछ पहले वा पीछे प्रारम्भ किया जाना अनुमान करने में हमें सहायता मिल सकती है। इसके सिवाय हम इसी के सहारे इन सूचियों वाले कुछ नामों के कभी-कभी क्रमशः लुप्त होते जाने अथवा अन्य रूपों में परिवर्तित होते जाने के विषय में भी अपनी एक धारणा बना ले सकते हैं। तदनुसार यह कह सकते हैं कि उनका क्रमविकास किस प्रकार सम्भव हुआ होगा। इतना तो निश्चित ही है कि ऐसी प्रासंगिक सूचियों वाले नामों तथा आधुनिक सूचियों में पाये जाने वालों में प्रत्यक्ष साम्य का पता लगाना अत्यन्त कठिन है और कम से कम, उनमें इनके समाविष्ट किये जाने का कालनिर्णय प्रायः असम्भव सा भी है।

निष्कर्ष यह कि, यदि इन द्वादशपंथों की उपलब्ध सूचियों में 'बारहपंथी की साखी' वाली को सबसे पुरानी मान लें उस दशा में, हमें पता चलेगा कि जो वहाँ पर 'निरंजन जोगी' है वह आगे 'सत्यनाथ तीर्थ' वाली सूची में 'गम' वा 'गमी' का रूप धारण कर लेता है, किन्तु फिर इसके आगे उसका कहीं पता नहीं चलता तथा, इसी प्रकार, उसका 'चोली जोगी', भी 'सत्यनाथतीर्थ' की सूची सं. 3 तक ही रह जाता है। यही दशा क्रमशः 'वन जोगी' एवं 'दासजोगी' की भी है जो कम से कम अपने इन रूपों में कभी आगे नहीं दिखायी पड़ते। इसके विपरीत हमें पता चलता है कि उसका 'हेतपंथी' आगे चलकर 'नटेसरी', 'लक्ष्मण नाथी', 'दरियानाथी' तथा 'कनक नाथी' तक में अंशतः परिणत हो जाता है, 'पंख जोगी', उसी प्रकार 'सत्यनाशी' एवं 'धर्मनाथी' बन जाता है। 'पावपंथी', 'जालधरी', 'कानियापंथी' अथवा 'गोपीचंद' की 'मृगनाथी' की स्थितियों में आ जाता है, 'रावल जोगी' के दो रूप क्रमशः 'मादिया' और 'गल' दीख पड़ते लगते हैं, तथा 'आई जोगी' का भी एक विकसित रूप 'मस्तनाथी' हो जाता है, और जहाँ तक पता चलता है, उसके केवल 'धजनाथी जोगी' में ही किसी प्रकार का परिवर्तन आता नहीं जान पड़ता। इसी प्रकार हम देखते हैं कि दूसरे वर्ग वाले 'अभगनाथ' 'दर्पनाथ' एवं 'नीमनाथ' का भी कही अन्यत्र पता नहीं चलता तथा प्रथम वर्ग वाले नामों के परिवर्तित रूप इसकी प्रायः सभी सूचियों में लगभग एक समान ही आ जाते हैं। तृतीय एवं चतुर्थ वर्ग की सूचियों वाले नामों में अपेक्षाकृत अधिक स्थिरता दिखायी पड़ती है और उनमें साम्य के उदाहरण भी अधिक ही मिलते हैं। इसके सिवाय 'कपिलानी पंथ' संभवतः सर्व प्रथम, हमें तृतीय वर्ग वाली सूचियों में ही दिखायी पड़ता है तथा कदाचित् उसी की एक शाखा 'मगानाथी' का पता हमें इशके पहले से भी लगने लग जाता है।

इस सम्बन्ध में यहां पर एक बात यह भी उल्लेखनीय है कि जो-जो नाम, पहले पहल, द्वादशंपंथों को दिये गये पाये जाते हैं उनमें से प्राय सभी हमें प्रतीकों जैसे लगते हैं जिसका कारण इसके आधार पर उनका भिन्न-भिन्न व्यक्तियों द्वारा प्रवर्तित किया जाना भी स्पष्ट रूप में सिद्ध नहीं हो पाता और न हम यहीं कह सकते हैं कि ऐसे नामों के प्रयोग का उद्देश्य क्या रहा होगा। 'हेत', 'आई', 'पाव', 'रावल', 'कथड़', 'पागल', 'धज', 'चौली', 'वन', 'दास' और 'पंख' इनमें से किसी को भी हम साधारणत, व्यक्ति वाचक अथवा संख्या वाचक संज्ञा के रूप में भी प्रयुक्त नहीं पाते और 'निरंजन' अथवा 'गम' भी हमें यहां पर लगभग उन्हीं के मेल में आ गया जान पड़ता है- क्योंकि 'निरंजन' भी मूलत परमात्म तत्व को ही सूचित करता है। अतएव, इस प्रसंग में, एक यह प्रश्न भी उठाया जा सकता है कि क्या ऐसे शब्दों का व्यवहार भी कहीं उसी प्रकार तो नहीं किया गया है जिस प्रकार 'दशनामी' कहे जाने वाले संन्यासियों के लिए कभी किया गया था। यदि ऐसी बात हो तो, क्या हम, इन दोनों में से किसी एक को दूसरे से प्रभावित होकर चलाये जाने का भी कोई अनुमान कर सकते है? दशनामियों वाली

सूची के शब्दों का प्रयोग उनमें से किसी न किसी समुदाय विशेष को सूचित करने के लिए ही किया जाता है। वह उसके अनुयायियों के नामों के अंत में जोड़ भी दिया जाता है जहां इस प्रकार के उदाहरण यहां पर बहुत कम, और कदाचित् 'आई' 'धज' तथा 'पंख' जैसे दो-चार से ही सम्बद्ध पाये जाते हैं। इसी प्रकार, उक्त प्रथम के अन्तर्गत जहां हम 'पुरी', 'भारती' एवं 'सरस्वती' जैते तीन स्त्रीलिंग शब्द पाते हैं। वहाँ द्वितीय में हमें केवल 'आई' एवं 'चोली' जैसे दो ऐसे शब्दों का ही समावेश किया गया जान पड़ता है, किंतु फिर भी दोनों का प्रायः एक समान होना भी स्पष्ट है।

दशनामियों के लिए कहा गया है कि उनकी ऐसी संस्था का प्रवर्तन स्वामी शंकराचार्य अथवा उनके द्वितीय उत्तराधिकारी सुरेश शंकराचार्य ने, अपने समय की प्रचलित संन्यासियों की उस परंपरा को एक सुव्यवस्थित रूप देने के उद्देश्य से किया था जो संभवतः वैदिक युग अथवा उसके पहले से ही चली आ रही थी और जिसका उस काल तक वैसा कोई केंद्रीय संगठन भी नहीं था जिसका अनुशासन सर्वमान्य समझा जा सके। तदनुसार यह भी संभव है कि गुरु गोरखनाथ ने अथवा उनके किसी शिष्य-प्रशिष्य ने ही, कभी नाथ-योगी सम्प्रदाय वाले उक्त द्वादश पंथों को, उन योगियों एवं यतियों को एक सूत्र में संगठित करने के लिए स्थापित किया हो जो अत्यन्त प्राचीन काल से बिखरी दशा में रहते हुए, अपनी साधना करते आये थे तथा जिनकी कोई अपनी केंद्रीय संस्था भी नहीं थी। ऐसे अनुमान के लिए हमें कुछ संकेत महानुभावीय ग्रंथ 'मतिरत्नाकर' वाली उन 'वारापंथी जोगी' एवं 'अठरापंथ जती', नामक दो सूचियों से भी मिल सकता है जिनकी चर्चा इसके पहले की जा चुकी है तथा यह गोरक्षटिल्ला वाली उस परम्परा से भी स्पष्ट हो जा सकता है जिसके अनुसार कुल पंथों का शिव द्वारा तथा दूसरों का गुरु गोरखनाथ द्वारा पूर्व प्रवर्तित होना बतलाया गया है। इसमें कठिनाई केवल यही आ सकती है कि जो 30 नाम इस प्रकार दिये जाते हैं, उनमें, उपर्युक्त 'बारह पंथी' की 'साखी' वाले नामों के अतिरिक्त, अनेक ऐसे भी सम्मिलित कर लिये गये हैं जिन्हें अन्य वैसी सूचियों के द्वितीय, तृतीय जैसे वर्गों से ही सम्बद्ध मानकर, अपेक्षाकृत अधिक आधुनिक भी ठहराया जा सकता है और जिनका, इसी कारण, उस प्रथम समझी जाने वाली सूची के निर्माण काल में भी विद्यमान रहना कभी संभव नहीं कहला सकता।

दशनामियों के 10 पृथक्-पृथक् समुदायों में विभाजित होने पर भी उनके प्रमुख केंद्रों की संख्या केवल चार समझी जाती है। उनके ये चारों केन्द्र भारत के चार प्रधान मठों के रूप में अवस्थित चले आते हैं और ये क्रमश दक्षिण में 'श्रृंगेरी मठ' (रामेश्वरम), पूर्व में 'गोवर्धन मठ' (जगन्नाथपुरी), उत्तर में 'जोशी मठ' (बद्रिकाश्रम) ओर पश्चिम में 'शारदामठ' (द्वारका) कहलाकर प्रसिद्ध है। इसके सिवाय उक्त 'श्रृंगेरीमठ' के अधिकार क्षेत्र में आधू, केरल कणाटक, एवं द्रविड़ प्रदेश माने गये हैं और उसमें दशनामियों में से उक्त 'पुरी', 'भारती' एवं 'सरखती' सबद्ध समझे जाते हैं, 'गोवर्धनमठ' के अन्तर्गत अंग, बंग, कलिंग एवं मगध ओर उत्कल का समावेश किया जाता है और इसके साथ 'वन' एवं 'अरण्य' नामक दशनामियो का संबंध जुड़ा हुआ है, 'जोशी मठ' का क्षेत्र कुरु, पांचाल, कश्मीर, कम्बोज, एवं तिब्बतादि तक विस्तृत है और इसमें दशनामियों के 'पर्वत', 'गिरि' एवं 'सागर' आ जाते हैं। इसी प्रकार 'शारदामठ' का भी अधिकार-क्षेत्र सिन्धु, सौपीर सौराष्ट्र एवं महाराष्ट्र, तक चला जाता है और इसके भीतर दशनामियों के शेष अंग 'तीर्थ' एवं 'आश्रम' की गणना की जाती है। परन्तु द्वादश मठ, उत्तर में गोरक्षटिल्ला, पूर्व में गोरखपुर, दक्षिण में बंगलोर एवं पश्चिम में गोरखमण्डी 35 जैसे चार प्रमुख मठ अवश्य बतलाये जाते हैं। किन्तु इनका वैसा कोई निश्चित विवरण उपलब्ध नहीं है। इस विषय में यह भी प्रसिद्ध है कि द्वादशपंथियों में से 'हेत पंथ' का प्रधान केन्द्र गोरक्षटिल्ला जि. झेलम, पंजाब, 'आई पंथ का गोरखकुई जि. दिनाजपुर, बंगाल एवं हरिद्वार (उ. प्र.) 'पावपथ' का जयपुर (राजस्थान), 'रावल' का रावलपिंडी (पाकिस्तान) 'धजनाथ' का अम्बाला पंजाब, एवं सीलोन लंका, 'पंख की सत्यनार्थी' केंद्र पाताल भुवनेश्वर उत्कल प्रांत और 'धर्मनाथी' केंद्र गोदावरी तट एवं दुल्लु नेपाल, 'दासजोगी, जोधपुर, राजस्थान, 'कपिलानी' का गंगासागर बंगाल एवं 'गंगानाथी' का गुरदासपुर पंजाब, 'कथडनाथी' का मानफर कच्छ प्रदेश, 'वैरागनाथी' का उज्जैन (म. प्र.) तथा 'रतननाथी' का पेशावर (पाकिस्तान) और 'वनपंथी' का मारवाड़ प्रदेश (राजस्थान) माने जाते हैं, किन्तु 'निरंजन जोगी' अथवा गम के लिए कदाचित कोई स्थान निर्दिष्ट नहीं है। इसके सिवाय इन बारहों पंथों का केन्द्रीय व्यापक प्रबंध किसी 'भेक बारह पंथ' नामक संस्था के द्वारा चालित हुआ करता है जिसका प्रधान केंद्र हरिद्वार में वर्तमान है तथा जिसकी 'प्रबंध-समिति' के सदस्य वहाँ के कुंभ मेले के अवसर पर बारह वर्षों पर, द्वादशपंथों में से चुनकर ले लिये जाते हैं तथा इस संस्था का अध्यक्ष 'महंथ', प्रत्येक पंथ की ओर से बारी-बारी से नियुक्त किया जाता है जो बारह वर्षों तक रहता है और उसे 12 सौ रुपये भी देने पड़ते हैं। ऐसी विधि सम्पन्न

हो जाने पर 'जोगीश्वर' के नाम से अभिहित किया जाने लगता है। इस प्रकार 'दशनामी' एवं 'द्वादशपंथ' इन दोनों का ही प्रभाव क्षेत्र अखिल भारतीय भी कहा जा सकता है तथा इनकी प्रबन्ध-पद्धतियों में कुछ न कुछ अंतर के रहने पर भी, इसके व्यापक उद्देश्य के एक समान होने में कोई सन्देह नहीं किया जा सकता।

'नाथयोगी' सम्प्रदाय के अन्तर्गत केवल बारह पंथों की ही स्थापना क्यों की गई और उनकी संख्या इससे कम वा अधिक क्यों नहीं हुई, इस प्रश्न का कोई समुचित वा प्रामाणिक उत्तर दिया गया अभी तक नहीं जान पड़ता। प्रो. ब्रिग्स का उपर्युक्त कथन कि 'गोरखटिल्ला' वाली परम्परा के अनुसार, संभवतः गुरु गोरखनाथ ने अपने समय के प्रचलित 18 शैव सम्प्रदायों में से 6 को तथा स्वयं अपने वाले 12 योगी सम्प्रदायों में से भी, उसी प्रकार 6 को चुन कर उन्हें कायम रहने दिया होगा और शेष का विघटन कर दिया होगा, ठीक नहीं जान पड़ता और न उनके इस अनुमान की ही पुष्टि होती दिखती है कि ऐसे ही 30 पंथों में से पारस्परिक संघर्ष के फलस्वरूप केवल 12 बच रहे होंगे और शेष नष्ट हो गये होंगे। प्रथम धारणा के अनुसार उक्त विघटन होने के पहले 30 विभिन्न वर्गों का बहुत पूर्व से प्रचलित होता आना अपेक्षित है तथा ठीक उसी प्रकार की बात, उनके परस्पर लड़ने-भिड़ने और इसके कारण उनमें से 18 के नष्ट हो जाने के सम्बन्ध में भी, कहीं जा सकती है। जब तक ऐसे किसी दीर्घकाल की कल्पना न कर ली जाय तथा उतने समय तक उनमें से कम से कम द्वितीय 12 के प्रवर्तक गुरु गोरखनाथ के जीवित रहने की संभावना में विश्वास भी न हो तब तक इस विषय में कोई अन्तिम निर्णय नहीं हो सकता, किन्हीं 30 प्रचलित सम्प्रदायों में से केवल 12 मात्र के शेष रह जाने और 18 के लुप्त हो जाने का अनुमान, उपर्युक्त योगियों एवं यतियों के क्रमशः 12 एवं 18 पंथों वाली सूचियों के आधार पर भी किया जा सकता है, किन्तु वैसा करना भी हमें पूर्णरूप से तर्कसंगत नहीं प्रतीत होता और न यही कभी संभव सा ही लगता है जिस कारण इसके द्वारा हमें कोई सहायता नहीं मिलती। वास्तव में इन दोनों में से किसी को भी गुरु गोरखनाथ के जीवनकाल के साथ संगीत बैठती नहीं जान पड़ती। इसी प्रकार यदि इन द्वादश पंथों को गुरु गोरखनाथ के किन्ही 12 शिष्यों द्वारा प्रवर्तित किया जाना मान लें उस दशा में भी, इसका निर्विवाद रूप से स्वीकार कर लिया जाना संभव न होगा, न तो इस सम्बन्ध में हमारे सामने वैसे 12 गोरख शिष्यों की कोई सूची प्रस्तुत की जाती है और न इस बात का ही कोई समुचित कारण बतलाया जाता है कि इन 12 पंथों में से केवल कुछ के नाम तक भी उन लोगों के साथ क्यों सम्बद्ध है जिनका गोरख-शिष्य होना किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं किया जा सकता और जो, साथ ही, उनके पूर्ववर्ती, परवर्ती अथवा उनसे भिन्न समसामयिक मात्र माने जाते है तथा इसी कारण ऐसी बातें संदिग्ध भी बन जाती है।

अतएव, यह अधिक संभव है कि 'द्वादशपंथ' में सम्मिलित की जाने वाली सभी संस्थाओं की स्थापना एक ही समय में नहीं हुई हो और न इनमें से सभी के संस्थापक अकेले गुरु गोरखनाथ व उनके कोई वैसे 12 शिष्य ही रहे हों, जिन्होंने अपनी अपनी ओर से इनका प्रवर्तन कर दिया हो, सम्भवतः हो सकता है कि इनमें से कुछ अधिक प्राचीन रही हों और कुछ दूसरी उनसे अपेक्षाकृत अधिक अर्वाचीन सिद्ध की जा सके और इसी कारण प्रथम वाली गुरु गोरखनाथ के किन्ही 'पूर्ववर्ती' योगियों द्वारा भी प्रवर्तित की गई हो सकती हैं, जहां द्वितीय के लिए यह कहा जा सकता है कि इनमें से कुछ को उनके समकालीन तथा शेष अन्य को उनके किंहीं परवर्ती योगियों ने चलाया होगा और सभी ने इन्हें अपने अपने ढंग से नाम भी दे दिये होंगे। इस प्रकार वैसी दशा में, इन द्वादशपंथों के क्रमशः किसी अवधि के भीतर अस्तित्व में आते जाने का अनुमान भी किया जा सकता है अथवा यह भी कहा जा सकता है कि ये 'द्वादश पंथों' के रूप में कभी पीछे स्वीकृत किये गये होंगे। इनका भिन्न भिन्न 12 पंथों की दशा में एक ही समय चलाया जाना तथा ऐसा गुरु गोरखनाथ के ही द्वारा किया जाना अनिवार्य नहीं जान पड़ता और न हमारा यह मान लेना ही समीचीन ठहरता है कि इस कार्य को उनके अमुक-अमुक शिष्यों ने एक साल मिल कर किया होगा जब तक हमें इसके आधार स्वरूप कोई स्पष्ट एवं विश्वसनीय प्रमाण भी न मिल जाय और वह तर्क-संगत भी सिद्ध हो सके। अभी तक उपलब्ध सामग्रियों के आधार पर, केवल इतना ही कहा जा सकता है कि द्वादशपंथों की कामना संभवत 'नाथ-योगी' सम्प्रदाय के प्रवर्तित होने के कुछ साल पीछे की ही ठहरती है और यह किन्ही पूर्व प्रचलित संस्थाओं को एक सूत्र में बाँधने के उद्देश्य से की गई होगी तथा उसे साकारता भी प्रदान कर दी गई होगी। इन्हें किस आदर्श के अनुसार स्वीकार किया गया होगा तथा इनकी संख्या केवल 12 तक ही सीमित क्यों रखी गई होगी, इसका पता नहीं। जहाँ तक समझ पड़ता है, इस प्रकार की धारणा नाथ पंथियों में बहुत दिनों से बद्धमूल बनी रहती आई है और इसकी प्रत्येक शाखा अथवा उपशाखा ने अपने को किसी न किसी द्वादशपंथी संस्था के साथ संबद्ध बतलाने

की भी चेष्टा की है, जिस कारण, इनकी संख्या में कभी-कभी वृद्धि जान पड़ने अथवा इनके नामादि में न्यूनाधिक परिवर्तन प्रतीत होते रहने को भी, उनके द्वारा किसी समय वैसा महत्व नहीं दिया जा सकता है।

इससे आगे का इतिहास इस पुस्तक के परिशिष्ट सं. 2 में लिखा गया है। यदि सम्भव हुआ तो श्री गोरक्षनाथ की शिक्षाएँ एकत्र करके प्रकाशित करने की चेष्टा की जायगी।

नाथ लक्षणः-

"नाकरोऽनादि रुपंच'थकारः' स्थापयते सदा"

भुवनत्रय में वैकः श्री गोरक्ष नमोस्तुते।

"शक्ति संगम तंत्र॥

अवधूत लोग अद्वैत वादी योगी होते हैं जो कि बिना किसी भौतिक साधन के यौगग्नि प्रज्वलित करके कर्म विपाक को भस्म कर निजानन्द में रमण करते है और अपनी सहज शिक्षा के द्वारा जन कलयाण करते रहते है। तभी उपयुक्त नाथ शब्द सार्थक होता है।

इनका सिद्धान्तः-

न ब्रह्म विष्णु रुद्रौ, न सुरपति सुरा,

नैव पृथ्वी न चापौ।

नैवाग्निनर्पि वायुः न च गगन तलं,

नो दिशों नैव कालः।

नो वेदा नैव यज्ञा न च रवि शशिनौ,

नो विधि नैव कल्पाः।

स्व ज्योतिः सत्य मेकं जयति तव पदं,

सच्चिदानन्दमूर्ते,

ऊँ शान्ति ! प्रेम!! आनन्द!!!

चौरासी सिद्ध-

जोधपुर, चीन इत्यादि के चौरासी सिद्धों में भिन्नता है । अस्तु, यहाँ यौगिक साहित्य में प्रसिद्ध नवनाथ के अतिरिक्त ८४ सिद्ध नाथ इस प्रकार हैं –

१. सिद्ध चर्पतनाथ,

२. कपिलनाथ,

३. गंगानाथ,

४. विचारनाथ,

५. जालंधरनाथ,

६. श्रंगारिपाद,

७. लोहिपाद,

८. पुण्यपाद,

९. कनकाई,

१०. तुषकाई,

११. कृष्णपाद,

१२. गोविन्द नाथ,

१३. बालगुंदाई,

१४. वीरवंकनाथ,

१५. सारंगनाथ,

१६. बुद्धनाथ,

१७. विभाण्डनाथ,

१८. वनखंडिनाथ,

१९. मण्डपनाथ,

२०. भग्नभांडनाथ,

२१. धूर्मनाथ,

२२. गिरिवरनाथ,

२३. सरस्वतीनाथ,

२४. प्रभुनाथ,

२५. पिप्पलनाथ,

२६. रत्ननाथ,

२७. संसारनाथ,

२८. भगवन्त नाथ,

२९. उपन्तनाथ,

३०. चन्दननाथ,

३१. तारानाथ,

३२. खार्पूनाथ,

३३. खोचरनाथ,

३४. छायानाथ,

३५. शरभनाथ,

३६. नागार्जुननाथ,

३७. सिद्ध गोरिया,

३८. मनोमहेशनाथ,

३९. श्रवणनाथ,

४०. बालकनाथ,

४१. शुद्धनाथ,

४२. कायानाथ

४३. भावनाथ,

४४. पाणिनाथ,

४५. वीरनाथ,

४६. सवाइनाथ,

४७. तुक नाथ,

४८. ब्रह्मनाथ,

४९. शील नाथ,

५०. शिव नाथ,

५१. ज्वालानाथ,

५२. नागनाथ,

५३. गम्भीरनाथ,

५४. सुन्दरनाथ,

५५. अमृतनाथ,

५६. चिड़ियानाथ,

५७. गेलारावल,

५८. जोगरावल,

५९. जगमरावल,

६०. पूर्णमल्लनाथ,

६१. विमलनाथ,

६२. मल्लिकानाथ,

६३. मल्लिनाथ।

६४. रामनाथ,

६५. आम्रनाथ,

६६. गहिनीनाथ,

६७. ज्ञाननाथ,

६८. मुक्तानाथ,

६९. विरुपाक्षनाथ,

७०. रेवणनाथ,

७१. अडबंगनाथ,

७२. धीरजनाथ,

७३. घोड़ीचोली,

७४. पृथ्वीनाथ,

७५. हंसनाथ,

७६. गैबीनाथ,

७७. मंजुनाथ,

७८. सनकनाथ,

७९. सनन्दननाथ,

८०. सनातननाथ,

८१. सनत्कुमारनाथ,

८२. नारदनाथ,

८३. नचिकेता,

८४. कूर्मनाथ।

गुरु गोरखनाथ सचमुच ही महान योगी थे। अगर भक्तिसिद्धान्तवादी सन्तों की माने तो वे साक्षात शिव के ही योगी रूप में अवतार थे जो विशुद्ध योग को प्रश्रय देते थे ! जिन सप्त चिरंजीवी लोगो में सन्तों की गणना होती है उनमें एक गुरु गोरखनाथ को उनके अनुयायी आज भी जीवित अवस्था में मानते हैं और कुछ श्रद्धालु अपने शुभनाम के पीछे नाथ जरुर लगाते हैं।

नाथ साहित्य-

नाथ सम्प्रदाय का उल्लेख विभिन्न क्षेत्र के ग्रंथों में जैसे- योग (हठयोग), तंत्र (अवधूत मत या सिद्ध मत), आयुर्वेद (रसायन चिकित्सा), बौद्ध अध्ययन (सहजयान तिब्बती परम्परा 84 सिद्धों में), हिन्दी (आदिकाल के कवियों के रूप) में चर्चा मिलती हैं।

यौगिक ग्रंथों में नाथ सिद्ध : हठप्रदीपिका के लेखक स्वात्माराम और इस ग्रंथ के प्रथम टीकाकार ब्रह्मानंद ने हठ प्रदीपिका ज्योत्स्ना के प्रथम उपदेश में 5 से 9 वे श्लोक में 33 सिद्ध नाथ योगियों की चर्चा की है। ये नाथसिद्ध कालजयी होकर ब्रह्माण्ड में विचरण करते है। इन नाथ योगियों में प्रथम नाथ आदिनाथ को माना गया है जो स्वयं शिव हैं जिन्होंने हठयोग की विद्या प्रदान की जो राजयोग की प्राप्ति में सीढ़ी के समान है।

आयुर्वेद ग्रंथों में नाथ सिद्धों की चर्चा : रसायन चिकित्सा के उत्पत्तिकर्ता के रूप प्राप्त होता है जिन्होंने इस शरीर रूपी साधन को जो मोक्ष में माध्यम है इस शरीर को रसायन चिकित्सा पारद और अभ्रक आदि रसायानों की उपयोगिता सिद्ध किया। पारदादि धातु घटित चिकित्सा का विशेष प्रवर्तन किया था तथा विभिन्न रसायन ग्रंथों की रचना की उपरोक्त कथन सुप्रसिद्ध विद्वान और चिकित्सक गणनाथ सेन ने लिखा है।

तंत्र गंथों में नाथ सम्प्रदाय: नाथ सम्प्रदाय के आदिनाथ शिव है, मूलतः समग्र नाथ सम्प्रदाय शैव है। शाबर तंत्र में कपालिको के 12 आचार्यों की चर्चा है- आदिनाथ, अनादि, काल, वीरनाथ, महाकाल आदि जो नाथ मार्ग के प्रधान आचार्य माने जाते है। नाथों ने ही तंत्र गंथों की रचना की है। नित्यातंत्र में शिव ने कहा है कि - नव नाथों- जडभरत मच्छेन्द्रनाथ, गोरक्षनाथ, , सत्यनाथ, चर्पटनाथ, जालंधरनाथ नागार्जुन आदि ने ही तंत्रों का प्रचार किया है।

बौद्ध अध्ययन में नाथ सिद्ध 84 सिद्धों में आते है। राहुल सांकृत्यायन ने गंगा के पुरातत्त्वांक में बौद्ध तिब्बती परम्परा के 84 सहजयानी सिद्धों की चर्चा की है जिसमें से अधिकांश सिद्ध नाथसिद्ध योगी हैं जिनमें लुइपाद मच्छेन्द्रनाथ, गोरक्षपा गोरक्षनाथ, चैरंगीपा चैरंगीनाथ, शबरपा शबर आदि की चर्चा है।

हिन्दी में नाथसिद्ध : हिंदी साहित्य में आदिकाल के कवियों में नाथ सिद्धों की चर्चा मिलती है। अपभ्रंश, अवहट्ट भाषाओं की रचनाऐं मिलती है जो हिन्दी की प्रारंभिक काल की है। इनकी रचनाओं में पाखंडों आडंबरो आदि का विरोध है तथा चित्त, मन, आत्मा, योग, धैर्य, मोक्ष आदि का समावेश मिलता है जो साहित्य के जागृति काल की महत्वपूर्ण रचनाऐं मानी जाती है। जो जनमानस को योग की शिक्षा, जनकल्याण तथा जागरूकता प्रदान करने के लिए था।

कुछेक भाषाओं के छोड़कर, नाथ साहित्य संपूर्ण भारतीय वाङ्मय में प्राप्त होता है। दक्षिण भारत में नाथ साहित्य की रचना कम हुई है क्योंकि वहाँ शैव लोगों में शिव भक्त ही अधिक थे योगी नहीं। इसमें ज्ञान निष्ठा को पर्याप्त महत्व प्रदान किया गया है। इसमें मनोविकारों की निंदा की गई है। इस साहित्य में नारी निन्दा का सर्वाधिक उल्लेख प्राप्त होता है। इसमें सिद्ध साहित्य के भोग-विलास की भर्त्सना की गई है। इस साहित्य में गुरु को विशेष महत्व प्रदान किया गया है, इस साहित्य में हठयोग का उपदेश प्राप्त होता है। इसका रूखापन और गृहस्थ के प्रति अनादर का भाव इस साहित्य की सबसे बड़ी कमजोरी मानी जाती है। मन, प्राण, शुक्र, वाक्, और कुण्डलिनी- इन पांचों के संयमन के तरीकों को राजयोग, हठयोग, वज्रयान, जपयोग या कुंडलीयोग कहा जाता है। इसमे भगवान शिव की उपासना उदात्तता के साथ मिलती है। नाथ साहित्य में साधनात्मक शब्दावली का प्रयोग भी बहुलता से मिलता है।

अध्याय-पांच

नाथसिद्धों की परम्परा और बारहपंथ

नाथ सम्प्रदाय के अनुयायी मुख्यतः बारह शाखाओं में विभक्त हैं, जिसे बारह पंथ कहते हैं | इन बारह पंथों के कारण नाथ सम्प्रदाय को 'बारह-पंथी" योगी भी कहा जाता है । प्रत्येक पंथ का एक-एक विशेष स्थान है, जिसे नाथ लोग अपना पुष्य क्षेत्र मानते हैं | प्रत्येक पंथ एक पौराणिक देवता अथवा सिद्ध योगी को अपना आदि प्रवर्तक मानता है | सर्वदर्शनसंग्रह में स्वामी माधवाचार्य ने शैव सम्प्रदाय की आरम्भिक तीन श्रेणियां क्रमशः लकुलीश-पाशुपत, शैव तथा प्रत्यभिज्ञा को सन्दर्भित किया है। पाशुपत सम्प्रदाय का उल्लेख महाभारत तथा पुराणों में व्यापकता से किया गया है। आदिनाथ शिव इस सम्प्रदाय के सर्वप्रथम उपदेशक और परमाराध्य हैं। इसकी ही विरक्त यौगिक शाखा नाथपन्थ के रूप में विकसित हुई। ये शैव मत के तीन सिद्धान्तों पर सहमत हैं ये पाशुपत सिद्धान्त क्रमशः 1.. पति अर्थात शिव, 2. पशु अर्थात जीव अथवा आत्मा 3. 'पाश अर्थात् भय, घृणा, जुगुप्सा आदि आठ प्रकार का बन्धन जो आत्मा को भौतिकता में बांधे रखता है। सम्प्रदाय का उद्देश्य है - पशुपाशविमोक्षणाय पशु का उसके पाश से मोक्ष हो जाये।

नाथ योग की परंपरा में **जालंधरनाथ** आदियोग सिद्धो में परिगणित सिद्ध पुरुष है। नवनाथो की परंपरा में उनका नाम, आदिनाथ, मत्स्येंद्रनाथ और गोरखनाथ के साथ बड़ी श्रद्धा से जाना जाता है। नाथयोग परम्पराओं में उन्हें आदिनाथ के रूप में सम्मानित किया गया है, वे ऐतिहासिक कालगणना के परे है अत्यन्त दीर्घ प्राचीन काल से ही उनका यौगिक व्यक्तित्व नाथ सम्प्रदाय को ही नहीं, अनेक योग सम्प्रदायों और सार्वजनिक आध्यात्मिक प्रतिष्ठानों को प्रभावित करता चला आ रहा है। जोधपुरादिश्वर महाराज मानसिंह नाथ योगी जालंधरनाथ के व्यक्तित्व में अत्यन्त श्रद्धालु और निष्ठावान थे। महाराज ने अपनी प्रसिद्ध रचना 'श्रीनाथतिर्थावली' में जालंधरनाथ और उनकी परम्परा में अत्यंत हार्दिक श्रृद्धा और भक्ति प्रकाशित की है। श्री नाथतीर्थावली के आरम्भ में ही मारवाण के अन्तर्गत जालंधर नामक तीर्थ स्थान का वर्णन है, जहाँ कलशाचक नामक पर्वत विद्यमान है। जहां साक्षात् श्री जालंधरनाथ जी विराजमान हैं और वहीं श्री गुरुकुल भी शोभायमान हैं। ऐसी मान्यता है कि कलशाचल की पहाड़ी चोटी पर चढ़ने से मनुष्य जीवन मुक्त हो जाता है। इस पर्वत पर अनेक सिद्धो ने अपना आसन जमाया है। नाथ सिद्धो की बानियां- 6 नामक ग्रन्थ में जालंधर की स्तुति निम्न रूप में की गयी है-

"नमो सिद्ध जालंधरी ब्रह्म बुधि संचरी"।

मानव जीवन में योग के साधना की परमोपयोगिता सहज सिद्ध है। महान नाथसिद्ध जालंधरनाथ जी ने कहा है कि योग ही एक ऐसा निरपेक्ष साधन मार्ग है, जिसके आश्रय में सर्व सामान्य को जीवन की वव्यावहारिकता और अपने सचिदानंद स्वरुप का ज्ञान सुलभ होता है।

जालंधरनाथ जी को अनेक साहित्यिक प्रमाणों एवं नाथ सिद्ध ग्रंथो में अनेक नामों से जाना जाता है, जैसे जालंधरपाद, जालंधरपा, जालंधरनाथ, हाड़ीपा अथवा हाडीपाद, हालीपार। जिस प्रकार मत्स्येंद्रनाथ जी ने भगवान आदिनाथ 'शिव' से गुरूरूप में महाज्ञान प्राप्त किया था उसी प्रकार जालंधरनाथ के भी गुरु भगवान 'शिव' ही थी। जिस प्रकार मत्स्येंद्रनाथ जी महाज्ञान भूलकर कुल (कौलावार) साधना की ओर और बाद में अकुल मार्ग - शैव मार्ग में सन्निष्त हो गये, ठीक उसी प्रकार जालंधरनाथ भी हेवज्रा के साधनागत सिद्ध कापालिक मार्ग में थोड़े बहुत प्रभावित थे, बाद में नाथमत-सिद्धमत अथवा सिद्धामृत का उन्होंने वरण कर लिया ।

स्कन्द पुराण के काशी खण्ड के एक श्लोक', **'जालन्धरों वसेनित्यमुतरा पथमाश्रित'** के सन्दर्भ में यह बात पुष्ट होती है कि जालंधरनाथ उत्तरापथ- उत्तर भारत के पंजाब प्रान्त में निवास कर योग का प्रचार करते थे। शिव के दो प्रधान शिष्य कहे गये, मत्स्येंद्रनाथ और जालंधरनाथ। दोनों शिष्यों ने उत्तरापथ को अपनी योगसिद्धि का प्रधान केन्द्र चुना। मत्स्येंद्रनाथ ने नेपाल, कामरूप तो जालंधरनाथ ने पंजाब और कुरुक्षेत्र तथा गौडबंगाल को महायोग ज्ञान से संपन्न किया।

"महान संत ज्ञानेश्वर ने 'योगी सम्प्रदायाविष्कृतिग्रन्थ' की वैष्णवी नवनाथ परम्परा में जालंधरनाथ का उल्लेख किया है। महायोगी जालंधरनाथ के जीवन चरित्र के विषय में अनेक वृतांत उपलब्ध होते है और यह निर्णय करना कठिन हो जाता है कि उन्होंने किस स्थान पर शरीर धारण किया था और किन-किन स्थानों पर अपनी योग सिद्धि हे विशेष प्रभावित किया था। नाथसिद्ध चरिताम्रत के अनुसार नाथ जी का जन्मस्थान पंजाब प्रान्त का एक प्रखण्ड बताया गया है। कहा जाता है कि वे पंजाब में जालंधर पीठ नामक तांत्रिक स्थान में उत्पन्न हुए है।

योग परम्परा में यह बताया गया है कि जालंधरनाथ ने जालंधर वन में सिद्धि प्राप्त की थी। यह सिद्धि उनके जालंधर नाथ नाम की सार्थकता प्रकट करती है। जालंधरनाथ के परम शिष्य गोपीचंद ने जालंधरपाद के जीवन वृतान्त से सम्बन्ध की कथा दुर्लभ चन्द्रकृत बंगला ग्रन्थ 'गोविंदचंदेर गीत' में भी वर्णित है।

यह निश्चित सी बात है कि जादू-टोने और तंत्र-मंत्र की साधना से प्रभावित बंगाल में सिद्ध जालंधरनाथ ने सिद्धामृत का प्रचार किया और सामान्य जनमानस को शैवयोग की नाथ सम्प्रदाय सम्मत परम्परा से समृद्ध किया। जालंधरनाथ के जन्म-कर्म दोनों दिव्य थे, वे सिद्धयोगी थे। जालंधरनाथ की चिन्तन पद्धति अभ्यान्तरिक थी उन्होंने बहिर्मुख अभ्यास प्रधान, आसन, प्रणायाम आदि अंगों को उतना महत्व नहीं दिया, जितनी आन्तरिक, आध्यात्मिक शक्ति के प्रबोधन पर उन्होंने बल दिया। उन्होंने भगवान शिव द्वारा उपदिष्ट योगमार्ग का समर्थन का उसको जीवन में चरितार्थ कर सिद्धमत के सिद्दांतो के प्रचार प्रसार में योगदान प्रदान किया। भारतीय योगदर्शन एवं परम्परा में जालंधरनाथ जी का नाम महत्वपूर्ण है। महायोगी जालंधरनाथ का जीवन वृतांत नाथ सम्प्रदाय में ही नहीं, भारतीय इतिहास में भी अमिट है। नवनाथ परम्परा के प्रमुख सिद्ध योगी हैं। नाथ सिद्ध दत्तात्रेय - ऋगवेद के दसवें मण्डल के 136वें सूक्त में वर्णित वात रसना मुनियों (योगियों) के सन्दर्भ में हमारे पुराण, आगम, योग शास्त्र आदि में वर्णित ऋषभदेव तथा दत्तात्रेय आदि सिर्फ अवधूतों के जीवन वृतान्त और योग साधना तथा योग सिद्धियों का मूल उद्गम नाथयोग पंत रूपी समुद्र ही परिलक्षित होता आ रहा है। सिद्ध अवधूतों में नाथयोग के परमतत्व-द अवधुत दत्तात्रेय का नाम मत्स्येंद्रनाथ और गोरखनाथ जी आदि नामों के साथ अतान्त सम्मानपूर्वक लिया जाता है। नाथयोग के विश्वकोष 'गोरक्षसिद्धान्त- संग्रह) में तो यहां तक कह दिया गया है कि इस नाथ पंथ-सिद्धामृत मार्ग में शुरू ही समाप्त मंगलों का स्वरूप है, केवल मात्र अवधूत ही गुरु हो सकता है।

नाथ सम्प्रदाय में दत्तात्रेय को अवधूत के रूप में सम्मान प्राप्त है। दत्तात्रेय नाथमत में निर्मल स्वरूप में स्वीकार किये गये हैं।"

नाथसिद्ध चरितामृत पृ० -101-114।

नाथ सिद्धो की बनियाँ- सबदी-352।

अवधूत दत्तात्रेय वेदों में वर्णित वात रसना मुर्ति के समान ही उर्द्धा मन्थी और अमल - आत्म तत्वज्ञ सन्यासी भी कहे जा सकते है। गोरक्षनाथ सिद्धांत संग्रह में अवधूत दत्तात्रेय की गणना (नाथ) सिद्धों में की जाती है। पद्मपुराणगत कपिल गीता का श्लोक है-

दत्तात्रेयादिसिद्धानाम नवनाथस्तथैव च।

शकरो गुरुरूपेण बोधितश्चात्मातततत्वभिः।।

इसका आशय यह है कि आत्मतत्वजों ने नवनाथ और शंकर जी को दत्तात्रेयादि सिद्धों के गुरु रूप में सम्बोधित किया है। अवदूत दत्ताश्रम के जीवन दर्शन पर, अनेकानेक, आगम ग्रन्थ, पुराणों और अनेक उपनिषदों में प्रकाश डाला गया है। मारकण्डेय पुराण में उनका जीवन वृत्तान्त वर्णित है तथा निरूपित है- उन्होंने कार्तवीर्य अर्जुन और मदालसा के पुत्र को योगोपदेश दिया। योग साधना के सम्बन्ध में इस मारकण्डेय पुराण के अनेक अध्यायों में उनके अनुभवपूर्ण विचार मिलते है। श्रीमद्भागवत पुराण में भी उसके जीवन पर प्रकाश डाला गया है तथा विशेष रूप से श्रीमद्भागवत के एकादश (स्कन्द' में यह और इतने दत्तात्रेय के सम्वाद के रूप में उनके द्वारा स्वीकृत चौबीस गुरुओं से प्राप्त सन्मार्ग दर्शन और उनकी अवधूतवृत्ति का चित्रण उपलब्ध होता है। अवधूतोपनिषद् और दत्तात्रेयोपनिषद्ध मे भी उनकी उपासना और मंत्र आदि का समन्वयात्मक वर्णन किया गया है। अवधूत दत्तात्रेय 'की तपःस्थली के रूप में' 'कामेही नदी की तलहटी

तथा सहयाद्रिक्षेत्र को भी मान्यता प्राप्त है। सहयाद्रिक्षेत्र उनके सदना स्टालि के रूप में प्रसिद्ध है और सहयाद्रिक्षेत्र में ही ऋषभदेव जी ने भी योग साधना की थी।" नाथ संप्रदाय में अवधूत दत्तात्रेय ने योग पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि –

नाथसिद्ध चरितामृत पृ० 13।

आसक्ति का त्याग कर, क्रोध को जीतकर स्वल्पहरी और जितेन्द्रिय होकर बुद्धि से इन्द्रियवारों को रोककर मन को ध्यान में लगाये। नित्य योग युक्त होकर रहने वाला योगी सदा एकान्त स्थानों में गुफाओं में और वनों में भलीभांति ध्यान करे। वेदों से सम्पूर्ण यज्ञकर्म श्रेष्ठ है, यज्ञो से जप, जप से ज्ञान मार्ग और उससे आसक्ति से रहित एवं राग से रहित ध्यान मार्ग श्रेष्ठ है। ऐसे ध्यान के प्राप्त हो जाने पर सनातन ब्रह्म की उपलब्धि होती है। जो एकाग्रचित ब्रह्मपरायण, प्रमादरहित, पवित्र एकान्त प्रेमी और जितेन्द्रिय होता है, वही महात्मा इस योग को पाता है। अपने इस योग से ही वह मोक्ष प्राप्त कर लेता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी की कृति (नाथ सम्प्रदाय प्र०27) में दत्तात्रेय को नवनाथो में ही स्वीकार किया गया है।

नाथसिद्ध अवधूत योगी दत्तात्रेय का योग सिद्धान्त और जीवन शैवनाथ योग- परम्परा के अमृत से रससिक्त है, उनकी अव्यय अक्षय कीर्ति का प्रतीक है। दत्तात्रेद अप्रमेय सनातन परमत्वा तत्व के अभिन्न रूप है। उनकी उपासना सनातन है। उनकी योग सिद्धि सच्चिदानन्द-स्वरूप अलख निरंजन स्वसंध परमेश्वर की अध्यम ज्योति है। उनकी महिमा अकथनीय है। दत्तात्रेय अवधूत ब्रह्म है।

<u>नाथसिद्ध तिरूमूलर -</u>

दक्षिण भारत के नाथयोगी तिरुमूलर सिद्धामृत मार्ग के महान योगी माने जाते हैं तमिल परम्परा की आदि सिद्ध के रूप में परिगणित हैँ उनकी प्रमुख कृषि 'तिरुमन्त्रम' नाथ योग साधना सिद्धान्त, दर्शन और जीवन प्रक्रिया से यथेष्ट प्राणान्वित है। उन्हे नाथ सिद्ध अथवा दक्षिण भारत के नाथयोगी स्वीकार करने में तनिक भी आपत्ति नहीं है। वे महान शिवयोगी थे। ग्यारहवी- बारहवी विक्रम संवत के कुलोत्तुंग चोल राजा के महामन्त्री शिव भक्त सेक्किलारकृत 'पेरिय पुराणम' के तिरसठ नायनार शैव सन्तों में शिवयोगी तिरुमूलर की गणना है। संत तिरुमूलर नाथयोग शैव सिद्धान्त और शैव दर्शन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित है।
नाथसिद्ध चरितामृत पृ० - 138/139

दक्षिण भारत में तो उन्हें शैवयोग के आदि पर्वतको में सम्मानित किया जाता है। वे रहस्यवादी संत कवि थे उन्होंने अपनी अनुभवपूर्ण 'तिरुमन्त्रम' रचना से तमिल साहित्य की श्रीवृद्धि के साथ ही साथ नाथयोग के दक्षिण भारत में परम्परागत प्रचलित विशिष्ट सिद्धान्तों और हठयोग की साधना प्रक्रिया का यथाशक्ति घोषण भी किया। तिरुमूलर नें स्वीकार किया है कि वे नव नाथ शिवों में से एक हैं वे शिव के बहुत निकट थे महात्मा तिरुमूलर शैव सिद्धान्त शैव दर्शन के महान तज्ञ थे। उन्होंने शरीर की पवित्रता पर विशेष बल दिया है। उनका मानना था कि शिव हमारे शारीर रूपी पवित्र मंदिर में ही निवास करते है, अत: मनुष्य को चाहिए कि वह अपने शरीर एवं मन को, स्वच्छ, सुरक्षित एवं पवित्र रखे। तिरुमूलर ते कहा है कि प्रेम ही शिव है, हमें उन्ही की कृपा दृष्टि द्वारा उनके चरणों का दर्शन करना चाहिए। उनका मानना था कि प्रेममय होकर ही शिवत्वा की प्राप्ति की जा सकती है। तिरुमूलर के प्रेम की दार्शनिक व्याख्या करते हुए कहा है कि परमेश्वर शिव भीतर-बाहर सर्वत्र प्रेमस्वरूप है। वे प्रेम की मूर्ती है। वे आनादि और अनन्त है। वे ही चिन्तनीय और परम ध्येय तथा उपास्य है, शिव नेत्र से ही प्राप्त होते हैं, वे कर्ता हैं, प्रेम के प्रतिपाद्यय हैं। तिरुमूलर भारत एवं नेपाल के अनेक भागो का भ्रमण कर शिव का साक्षातकार किया। गुरू शिष्य की परम्परा में उनका अटूट विश्वास था। वे सामान्य जन को उपदेश होते हुए कहते है कि पवित्र भाव से अपने ही भीतर आत्मा में परम प्रकाश स्वरूप परमशिव का बोध प्राप्त कीजिये। हे मनुष्यों अविधा की मृग मरीचिका का परित्याग का परम ज्योति शिव में विश्राम कीजिये , जहाँ न सूर्य है, न चन्द्रमा है। जीवात्मा और शिव दोनों एक है, यही हमारी साधना का सुद्रिन आश्रय है। भगवान के भजन से ही अभिस्ट सिद्ध होता है। वे योग साधना के बल पर तीन हजार वर्षो तक जीवित रहे। वे शैव योगा चर्या थे नाथ संप्रदाय में उनका अमूल्य योगदान है। मानव जीवन के व्यहारिक पक्ष पर उन्होंने विशेष बल दिया है।

महायोगी चौरंगीनाथ- योगी राज चौरंगीनाथ नाथ सम्प्रदाय के सिद्ध योगी थे। चौरंगीनथ के सम्बंध में प्राथविदों की बानियों-15' 'मैं' निम्न रूप में नमन किया है- नमो सिद्ध चौरंगी प्रेम जोति संगी।

महायोगी चौरंगीनाथ की साधना और जीवन पद्धति साक्षात् शिव स्वरूप मत्स्येंद्रनाथ जी की कृपा दृष्ट्रि का चरम फल है। उन्हें योग जास का उपदेश स्वंय योगेश्वर मत्स्येंद्रनाथ ने किया था। चौरंगीनाथ जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि गुरु मत्स्येंद्रनाथ जी ने हमें उपदिष्ट किया कि काम, क्रोध और दुःख के वश में नहीं होना चाहिए।

नवनाथो की प्राय: प्रत्येक सूची में चौरंगी नाम का नाम सम्मिलित है। वे शिव के अभिन्न स्वरूप महायोगी गुरु गोरखनाथ की के गुरुभाई थे। अनेक सन्दर्भ में उन्हें श्री गोरखनाथ जी का कृपा प्राप्त निर्दिष्ट किया गया है।'गोरखा सिद्धान्त- संग्रह में उल्लेख है कि मत्येन्द्र, इश्वर, चौरंगी और गोरखनाथ चार गुरू हैं।

चौरंगीनाथ जी जो महान सिद्ध थे उनको 'ग्यान स्वरूप पुरुव सिंह और सिंगारी' आदि नामों से भी जाना जाता है। चौरंगीनाथ की गुरू शिष्य परम्परा का अलग से कोई विवरण नहीं मिलता है कहा जा सकता है कि उनकी परम्परा नाथ सम्प्रदाय में अंतर्लीन हो गयी। योगी चौरंगीनाथ अपने समय के महानतम् सिधरुपी एवं योगीराज थे।. 'प्राण संकली एवं नाथ सिद्धो की बानियां' नामक पवित्र ग्रन्थ में अनेक तथ्य एवं विचार चौरंगीनाथ के प्राप्त होते हैं। अनेक ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिसमें मत्स्येंद्रनाथ जी को ही चौरंगीनाथ का गुरु माना गया है।

योगीराज चौरंगीनाथ की वाणी और इनके जीवन की घटनाओं से पता चलता है कि नवनाथ सिद्धो में वे अत्यंत महनीया व्यक्तित्व से सम्पन्न उच्चकोटि के योग सिद्ध थे। उन्होंने अलख निरंजन प्राब्रह्म, शुन्यपद में अभिव्यक्त धाम शिव की उपासना पर ही बल दिया। उन्होंने सिद्धपंथ के संकेत द्वारा निर्दिष्ट किया कि पिण्ड (शरीर) में ही परमपद-स्वरूपस्थान की सहज प्राप्ति होती है।

नाथसिद्ध चरितामृत - 152

महायोगी गुरु गोरखनाथ जी ने सिद्धयोगीराज चौरंगीनाथ को बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे। उन्होंने चौरंगीनाथ जी को सिद्ध, बुद्ध और धीमान कह कर नमस्कार किया है-

'नमश्चौरंगीनाथय सिद्धबुद्धाय धीमते। [अमरोध प्रबोध]

ठीक उसी प्रकार चौरंगीनाथ जी ने भी अपनी प्रमुख कृति 'श्रीनाथष्तक' में गुरु गोरखनाथ जी को सम्मान एवं श्रद्धा समर्पित की है। नाथ समुदाय का स्वरूप बहुत ही विराट है जो मानव जीवन को प्रत्येक क्षेत्रों में आलोकित करता है। वर्तमान समय में जब मानव समाज खोखला किंकर्तव्यविमूढ़, नैतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक भौतिक पतन की तरफ बढ़ रहा है ऐसे समय में सिद्धों की बानियां एवं नाथ सम्प्रदाय का अध्ययन एवं गुरुओं द्वारा दिये गये उपदेशों का महत्व बहुत बढ़ जाता है। वर्तमान समय में विद्वानों, साहित्यकारों, वैज्ञानिकों, योग गुरुओं को सरकार को यह सुझाव देना चाहिए कि प्रत्येक अवस्था के लोगों को नाथयोग के सामान्य सिधान्तों से परिचित कराया जाए एवं पाठ्यक्रमों में लघु रूप में जोड़ा जाए।

महायोगी गहिनीनाथ- नाथपंथ के महायोगी गहिनीनाथ महाराष्ट्र प्रदेश के तप-पूत थे उन्होंने भारत के अनेक स्थानों पर नाथपम्परा से लोगों को परिचित कराया। नाथपंथ में प्रसिद्ध नवनाथों की अनेक उपलब्ध प्राचीन सूचियों में गहिनीनाथ की गणना की जाती है -महाराष्ट्रीय नाथ सम्प्रदाय की परम्परा में महायोगी गाहिनीनाथ को शिव गोरक्ष गोरखनाथ जी महाराज का अभिमंत्रित पुत्र कहा गया है।

नाथसिद्ध महायोगी गहिनीनाथ में ब्रह्मसुख और आत्मज्ञानामृत के रसास्वादन पर बड़ा बल दिया है। वे परम भगवत नाथपंथीय विचारधारा के महान दार्शनिक चिंतक, योगी परम, कारुणिक, तपोनिष्ठ महात्मा के रूप में अमर- सिद्धकाय सदगुरु है।

योगीराज भर्तृहरिनाथ- नाथ सिद्धों की "वानियां - 4" में भर्तहरि जी को वैरागी का मूर्तरूप माना गया है। कहा गया है-

नमो भर्तृहरिनाथ जोगी ब्रह्मरस भोगी ।

उनका स्वरूप आते ही संसार के प्रति अनासक्ति का भाव पैदा होता **भर्तृहरिजी** ने संसार के माया मोह का त्यागकर सम्पूर्ण रूप से शिव के प्रति समर्पित कर लिए थे। उन्होंने आत्मा साक्षात्कार किया था। उनके अनुसार विश्व के समस्त विषय एवं वस्तुए भय उत्पन्न करने वाली है एक मात्र केवल वैराग्य ही अभय है। **भर्तृहरिजी** नवनाथों में एक स्वीकार किये गये हैं। वे उच्चकोटी के नाथ योगी सिद्ध थे।

भर्तृहरि की विशिष्टता के सम्बन्ध में यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि उनके गुरु महायोगी गोरक्षनाथ थे। महायोगी **भर्तृहरिजी** का पवित्र नाम वैराग्य का ज्वलन्त प्रतीक हैं। वे त्याग, वैराग्य और तप के हस्ताक्षर थे। हिमालय से कन्या कुमारी तक के भूमिभाग में उनकी पदबद्ध जीवनगाथा भिन्न-भिन्न भाषाओं में योगियों और वैरागियों द्वारा एक निश्चित काल से की जा रही है। भविष्य में भी यही क्रम अधिक दिनों तक चलता रहेगा। उन्होने विषय सुख का पूर्ण भोग करने के बाद वैराग्य के असीम राज्य में प्रवेश किया था। उनकी करनी-कथनी में कोई भेद नहीं था। योगीराज **भर्तृहरिजी** ने गोरखयत को प्रचालित एवं प्रसारित करने में महतीय योगदान प्रदान किया है। **भर्तृहरि** या अनेक शोध की आवश्यकता है, इनका विषय, विचार, चितन अत्यन्त व्यापक है। ये मात्र भारतीय भूमि ही नही परन्तु विश्व के आध्यात्म साहित्य के इतिहास में अंकित है।

योगीराज कृष्णपाद- ये महान शिवयोगी एवं सिद्ध थे नाथयोग के महाचार्य, योग शिवाचार्य योगीराज कृष्णपार (कान्हपा) आगम सम्मत् त्रांतिक तथा कापालिक मत प्रतिपादित महायोग ज्ञान के मर्मज्ञ होने के साथ ही साथ शिव गोरक्ष प्रतिपादित सिद्धा मृत मार्ग के महान तत्वज्ञ थे, महासिद्ध थे, यदपि उनके द्वारा प्रवर्तित योग मार्ग हेवज्र साधना और शेष योग साधना का समन्वय है। उन्हें नाथमत में ही नही समस्त योगी संप्रदाय मे कानपा, कान्हणा, काटपाड, करणिया, काणेरीपाद आदि नामों से जाना जाता है। कृष्णपाद कापालिक की अपेछा शिवयोगी थे।

'योगीसमप्रदायाविष्कृति' ग्रंथ के सम्बन्ध में उन्हें श्रीमद्भागवत के एकादशस्कन्द में वर्णित प्रभुनारायण के रूप के नवनाथों में एक माना गया है। शैवयोग और मत्स्येंद्रनाथ द्वारा प्रतिपादित सिद्धाभृत मार्ग को उनसे पोषण तो मिला ही आदिनाथ शिव के महायोग ज्ञान के प्रकाश में मत्स्येंद्रनाथ और कृष्णपाद के गुरू जालंधरनाथ (हाड़िया) ने योग सिद्ध समान रूप से प्राप्त की।

शैवयोग परम्परा अथवा नाथमत योग में कृष्णपपाद को विशेष स्थान प्राप्त है। उन्होंने सिद्धपुरुष जलंधरनाथ के सिद्धांत और योग ज्ञान के प्रकाश में सहजानंद में स्वास्थ्य महामुख का साक्षांतकार किया। उनकी योग विद्या, योग साधना विशिष्ट एवं अक्षय है।

महायोगी चरपटिनाथ- महायोगी गोरखनाथ के सिद्धात मार्ग अथवा सिद्धमत के अत्यन्त प्रभावशाली वैराग्य कि योगी थे। प्रेम रास जी ने चरपटिनाथ की स्तुति करते हुए लिखा है कि

'नमो चरपटरायं गुरु ग्यान पायं [नाथसिद्धो की वानिया -3]

चरपटिनाथ जी सिद्ध आत्म ज्ञानी थे। नवनाथों की एक सूची में चरपतिनाथ नाम की इस तरह है –

मत्स्येंद्रनाथ,गोरखनाथ,जालंधरनाथ,चौरंगीनाथ,काकोरीपा,कानिफनाथ,चरपटिनाथ, महिलाथ,कथाहियाना और गहिनीनाथ ।

अनेक अनुसंधान एवं खोज के पश्चात् चरपटिनाथ का जन्म स्थान हिमांचल प्रदेश के चम्बा राज्य का मुख्य नगर चम्बा ही सुनिश्चित किया जाता है। नाथ सम्प्रदाय की मान्यता और सन्दर्भ में चरपटिनाथ का प्राकट्य योगेशवर गोरखनाथ के अनुग्रह का आशीर्वाद का पुण्यफल स्वीकार किया गया है। योगीराज चरपटिनाथ जन्मजात योग सिद्ध पुरुष थे। उनका मानना था कि किसी व्यकि का पारिवारिक या सामाजिक रूप से एकता के रूप में कोई महत्व नहीं है ना ही कोई किसी का पुत्र है और न ही कोई बहू है। प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थ के वशीभूत एक दूसरे से सम्बद्ध है। यह संसार जंजाल के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। उन्होंने ब्रह्मचर्य के पालन को योग साधना का आधार माना है, चरपटिनाथ जी ब्राह्म आडम्बर के विरोधी थे। नाथ मत की योग साधना को चरपटिनाथ जी ने बाह्याडम्बर और प्रदर्शन तथा चमत्कारों से मुक्त कर अपनी काया में व्याप्त परमात्मा के साक्षात्कार काया सिद्धि और मृत्युविजय से सम्वलित किया। चरपटिनाथ जी ने सिद्धमत को श्रेयस्कर बताते हुए कहा है कि योगी को एकान्त में साधना करना चाहिए। सिद्ध चरपटिनाथ की अनेक संबदियो 'नाथ सिद्धो की बानिया' ग्रन्थ में संकलित है, जो काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित है। ऐतिहासिक, साक्ष्यो के आधार पर यह विदित होता है कि गुरु नानक देव एवं चरपतिनाथ की वार्ता अनेकों बार हुई है। चरपटिनाथ ने योग ज्ञान को अमरता का विज्ञान कहा है। चरपटिनाथ जी को मात्र नाथमत में ही नहीं वरण सम्पूर्ण योग साम्राज्य में रससिद्ध योगी के रूप में जाना जाता है।

योगीराज गोपी चन्द - नवनाथों को प्रायः समस्त उपलब्ध प्रामाणिक सूचियों में योगी राज गोपीचंद को नवनाथों में से एक कहा गया है और महाराष्ट्र की योग परम्परा में उन्हें श्रीमद भागवत के पंचम और एकादस स्कन्ध में वर्णित नव्योगेश्वारो में से गोपीचंद के नाम को अभिहित किया गया है। नाथ सिद्ध वंदना में प्रेमदास जी ने उन्हें ब्रह्मानंद स्वरुप कह कर प्रणाम किया है-

नमो गोपीचंद रमत्व ब्रह्मानंद । नाथसिद्धो की बानियां-7]

नाथसिद्धचरित्तामृत - 218

गोपीचंद पर महायोगी गोरखनाथ से अधिक प्रभाव जालंधरनाथ जी का रहा है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह तथ्य विधिकार है कि बंगाल के शासक, महाराजा गोपीचंद विक्रमीय बारहवी शदी को अथवा उसके भी पूर्ववर्ती रहे हैं। नाथ पंथ में गोपीचंद ने ही सारंगी वाद्ययन्त्र का अविष्कार किया था, इसीलिए सारंगी यंत्र को गोपी यंत्र भी कहा जाता है। गोपीचंद जी योगसिद्ध जालंधरनाथ के साथ अधिक समय व्यतीत किये ऐसा भी प्रमाण मिलता है कि वे जालंधरनाथ के साथ ही भ्रमण करते हुए दक्षिण भारत में पहुंचे।

महायोगी गोरक्षनाथ जी ने अपनी एक शब्दी में योगीराज गोपीचंद के महायोग ज्ञान के प्रकाश में आत्म साक्षात्कार का स्पष्टीकरण किया है कि **भर्तृहरि** और गोपीचंद, दोनों ने ही गुरु के शब्द महायोग ज्ञान के उपदेश में अपूर्व श्रद्धा और आस्था रखकर सांसारिक विषय प्रपंचों और द्वंदों में विरक्ति अथवा सम्पूर्ण निःस्पृहता का वरण किया। योगीराज **भर्तृहरि** ने सिद्धि प्राप्त की और गोपीचंद ने ब्रह्मैक्य अथवा शून्य पद में प्रतिष्ठित स्वरूपस्थिति की अनुभूति की, परमात्मतत्व का साक्षात्कार किया। गोपीचंद ने अनुभव किया कि शून्य पद- गगनमण्डल में ही परमात्मा अलख निरंजन' शिव की स्थिति है। वे माता के ज्ञानोपदेश तथा जालंधरनाथ की कृपा से भवसागर से पार उत्तर का अमर पद में प्रतिष्ठित हो गये।

योगीराज सत्यनाथ - नाथयोग परमारा में योगी सत्यनाथ जी का योगदान अति महत्वपूर्ण है। नाथ सम्प्रदाय के भेष बारहपंथ में उनके द्वारा बीजारोपित 'सत्यनाथी सम्प्रदाय का विशिष्ट महत्व है। सिद्ध साधक सत्यनाथ जी को ब्रह्म का ही स्वरूप माना जाता है। सत्यनाथ जी ने अपनी यौगिक सिद्धियों द्वारा नाथ योग को विशेष रूप से महिमामंडित किया है। गोरक्षसिद्धान्त संग्रह में आदिनाथ, मत्येन्द्रनाथ, दण्डनाथ, संतोष जनक, कूर्मनाथ, भवनार्जिनाथ और गोरखनाथ के साथ उनके नाम का उल्लेख उनके ऐतिहासिक और यौगिक सिद्धि तथा प्रतिष्ठा का अप्रतिम परिचायक है।

महान सिद्ध सत्यनाथ जी के जीवन-दर्शन पर अठराहवी शदी के गढ़वाल के प्रसिद्ध चित्रकार भोलाराम कृत गढ़वाल कथा में यथेष्ट प्रकाश डाला गया है। गढ़वाल राजवंश की स्थापना में योगी सत्यनाथ की विशिष्ट भूमिका उपलब्ध होती है। आनन्द गिरि कृत 'आचार्य विजय' में श्री शैल पर आचार्य शंकर की योगी राजसत्यनाथ जी से भेंट होने की ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध होती है ।

नाथपंथ और विशेष रूप से सत्यनाथ और देवलगढ़ के राजा योगीराज बाबा अजयपाल के सम्बन्ध का महत्वपूणी दृष्टि से अंकन किया जाता है। बाबा अजयपाल सत्यनाथी पंथ की योग परम्परा से अधिक प्रभावित से तथापि वे महाभूति कपिलदेव भी योग प्रक्रिया के मर्मज्ञ थे और उन्होंने नाथ योग की दीक्षा ग्रहण कर गोरखपंथ के अन्तर्गत कपिलानी शाखा का प्रर्वतन किया था। इनका समय सोलहवीं शदी माना जाता है।

देवलगढ़ के प्रसिद्ध नाथतीर्थ की महिमा का जोधपुर के महाराजा मानसिंह द्वारा रचित नाथतीर्थावली' में जो वर्णन दिया गया है उसमें सत्यनाथ जी के गौरव का प्रमाण उपलब्ध होता है। देवलगढ़ में तीन पादुकाएं : गोरक्षपादुका, कुमारीपादुका और सत्यनाथ जी भी पाडुका प्रतिष्ठित है। सत्यनाथ जी योग गुरु थे। उन्होंने परम शिव के यौगिक साक्षात्कार का योग पथ निर्दिष्ट किया।

योगीराज रेवणनाथ- महाराष्ट्र की योग परम्परा में योगी राज रेवणनाथ को नवनाथो में सम्मानित किया गया है। श्रीमदभगवत के पंचम और एकादस स्कन्द में वर्णित नवयोगिस्वारो-नव नारायणो में रेवणनाथ को योगीवर चमसनारायण" का अवतार कहा गया है। योगेशर चमसनारायण के अवतार नाथसिद्ध योगिराज रेवणनाथ ने महाराष्ट्र प्रदेश में अवतरित होकर भागवत धर्म का पोषण करे हुए नाथयोग के सिद्दांतो और साधना से लोकजीवन को समृद्ध और कृतार्थ किया। वैसे तो रेवणनाथ पर स्वतंत्र अनुसंधान की आवशयकता है इनके सम्बन्ध में नाथ परम्परा में अनेक स्थानों पर वर्णन देखने को मिलता है।

रेवणनाथ ने मच्छेन्द्रनाथ जी के आदेशानुसार गिरनार पर्वत पर निवास कर विकट तपस्या कर नाथ योग साधना में प्रचूर सिद्धि प्राप्त की है। उन्होंने नाथयोग सिद्धान्त में व्यस्ती - पिंड में समस्त ब्रह्माण्ड की अभिव्यक्ति का अनुभव करते हुए अन्तव्यापी स्वसंवेध तत्व के प्रकाश में अलख निरंजन का प्रकाश किया। स्वरुप में समासन्न होकर उन्होंने हठयोग पाए प्राण की साधना कर स्वरूपावस्थान की सिद्धि की और केवल्या पद का शान्त, एकाग्रचित् से रसास्वादन किया।

योगिराज नागनाथ - सिद्धयोगी नागनाथ नाथ सम्प्रदाय के अत्यन्त महत्वपूर्ण योगी थे 'गोरक्ष सिद्धांत संग्रह' में उनकी गणना महानाथ के रूप में की गयी है। वे रससिद्ध योगी थे। नाथ मत में यह मान्यता भी है कि नागार्जुन ही नागनाथ थे। नागनाथ की ऐतिहासिकता का समर्थन चर्पतिनाथ जी ने अपनी एक सबदी द्वारा किया है। नागनाथ जी एक प्राचीन मंदिर हिमंचल प्रदेश से ज्वालामुखी स्थान के पास एक वन में आज भी सुरक्षित है। निःसंदेह ज्वालामुखी के आस-पास का क्षेत्र योगिराज नागनाथ का तपा स्थल था। नाथ मत के अनुसार उनका स्थान महाराष्ट्र, गुजरात और राजस्थान का भूमिभाग स्वीकृत है। नाथ संप्रदाय में नागार्जुन और नाग नाथ की अभिन्यता स्वीकार की गयी हैं। पूर्ववर्ती सिद्धों की भांति नागनाथ ने अहंकार के नाश और सद्रूरू की प्राप्ति पर विशेष बल दिया और कहा कि योग साधना की उपेछा नहीं होनी चाहिए। नाथ सम्प्रदाय के योगीराज नागनाथ, का रावल योगियों पर विशेष प्रभाव था और उन्होंने लकुलीश पाशुपत मत को नाम-सम्प्रदाम में अन्तर्भुक्त कर लिया।

हाजी रतननाथ - गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित संप्रदाय नाथ संप्रदाय के सिद्धयोगी पुरुष हाजी बाबा रतननाथ का स्थान महत्व है। नाथयोगियों का मध्यकाल के आरम्भ के उन्हें पथ प्रदर्शक स्वीकार करने में कोई आपत्ति नही है। हाजी रतननाथ जी ने नाथ योग को भारत वर्ष के बाहर की भी खूब प्रचारित एवं प्रसारित किया। ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने योगाभ्यास के बल पर लगभग सात सौ वर्षो तक की आयु पूरी की। उनकी मुलाकात पैगम्बर मुहम्मद साहब से भी हुई थी। उन्होंने मो० गजनबी एवं मो० गोरी को भी अपनी यौगिक एवं शिक्षायों से अवगत कराया । अरब काबुल और कंधार एवं मध्य पूर्व के अनेक देशों में नाथ संप्रदाय की शिक्षाओं को पहुंचाया। उनका सर्वाधिक योगदान हिन्दू- मुस्लिम दोनों विचार धाराओ में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया। वे प्रमुख ज्योतिषी भी थे।

[नाथसिद्धचरितामृत - 248]

रतननाथ जी के बारे में जानकारी का मुख्य स्रोत जोधपुर में महाराजा मानसिंह जो नाथ मत में अटूट श्रद्धा रखते थे अपने द्वारा संगृहीत कृति 'श्रीनाथ तिर्थावाली' में विशेष विवरण दिया है। ये सिद्ध पुरुष यौगिक क्रियाओ तथा प्राणायाम के मर्मज्ञ थे। इनका जन्म नेपाल में हुआ था, इनके बचपन का नाम रत्न परीक्षक था। भारत और नेपाल के सीमावती क्षेत्र में स्थित प्रसिद्ध शक्तिपीठ देवी पातन में रतन नाथ जी ने मंदिर का निर्माण कराया।

बाबा रतननाथ जी ने शिव गोरक्ष के आदेश से पश्चिमोत्तर प्रदेशों में नाथ संप्रदाय की खूब प्रचार किया। इनके सम्बन्ध में सम्पूर्ण जानकारी 'नाथतीर्थावली' नामक ग्रन्थ में मिलती है। पंजाब के पटियाला क्षेत्र में गोविन्दगढ़ मंडल में भर्तिडा रेलवे स्टेशन से तीन मील की दूरी पर उनकी समाधी स्थित है।

<u>सिद्धयोगी निवृत्तिनाथ-</u> महाराष्ट्र की पावन भूमि की अध्यात्मिक परम्परा को नाथयोग-शिव गोरक्षा का प्रतिपादित महायोग ज्ञान और योगी गहिनीनाथ द्वारा समर्थित योग- कृष्ण भक्ति परक ज्ञान तत्व से समृद्ध किया। नाथ मत में ज्ञानेश्वरी 'कृति निवृत्तिनाथ का सबसे बड़ा है। निवृत्तिनाथ इतिहास के मध्यकाल की एक ऐतिहासिक आवश्यकता थे। श्री निवृत्तिनाथ की वंश परम्परा भगवान योगेशवर शिव गोरक्ष तथा उनके शिष्य गहिनीनाथ की कृपा आदि से सम्पूर्ण सौभाग्यवती थी। महाराज के पूर्वज नाथ संप्रदाय की निधि के महान संरक्षक थे। नाथ सिद्ध चरितामृत' नामक ग्रन्थ के 264 वें पृष्ठ पर वर्णन किया गया है कि निवृत्तिनाथ के शिव के विष्णु, स्वपनदेव ने ब्रह्म, और मुक्ताबाई ने आदि शक्ति के रूप में अवतार लिया। गहिनीनाथ ने निवृत्तिनाथ के कान में सिद्धपंथ ने ज्ञानी द्वारा प्राप्त ज्ञान, महायोग ज्ञान कह दिया। सिद्ध योगी निवृत्तिनाथ ने अत्मग्यनाम्रित और कृष्णा भवित से लोकमानस को कृत किया। निवृत्तिनाथ महाराज ने में पिंड में ब्रह्माण्ड की अनुभूति प्रकट की है कि इस व्यस्त पिंड में ब्रह्माण्ड सम्पूर्ण रूप से अभिभक्त हो रहा है। इनको कृष्ण भक्ति शाखा का प्रमुख शिष्य भी माना जाता है। निवृत्तिनाथ महायोगी थे, उनकी यौनिक विभूति अमिट है।

नाथमत या नाथ परम्परा जो सूर्य के समान धरती पर प्रकाशित है उसमें अनेक महानुयोगी एवं सिद्ध ऐसे है, जिनका इतिहास हमें पता नहीं है फिर भी साक्ष्यो एवं प्रमाडो के आधार पर कुछ ऐसे नाथसिद्ध है जिनका अमुल्य योगदान इस समाज को है, इनमें नाथ योगी गोरापीट, योगी रांझा, योगिराज बाबा अजय पाल, सिद्ध माणिकनाथ, महायोगी मस्तनाथ, नाथयोगी सोहिरोबानाथ, योगीराज बाबा गम्भीरनाथ जी महाराज, अवधूत अमृतनाथ, नाथ योगी शीलनाथ, हठयोगी सुन्दर, शान्तिनाथ, महन्त दिग्विजयनाथ, महन्त अवेधनाथ जी महाराजा, एवं योगी आदित्यनाथ जी महाराज, डीप्यमान नक्षत्र के समान कालजयी है। इस पंथ का योगदान इस भौतिक संसार में अपरम्पार है।

मच्छिंद्र गोरक्ष जालीन्दराच्छ। कनीफ श्री चर्पट नागनाथः।।
श्री भर्तरी रेवण गैनिनामान। नमामि सर्वात नवनाथ सिद्धान।।

अध्याय-छः

नाथयोग का सामाजिक जीवन पर प्रभाव

मानव सभ्यता के उद्भव से लेकर निरन्तर विकास पथ पर अग्रसर मानव सदैव सुख और शान्ति की खोज में प्रयत्नशील रहा है। मानव समाज की धार्मिक-आध्यात्मिक और सामाजिक क्रियाकलापों का मुख्य केन्द्र सुख-शान्ति की खोज ही रहा है। सुख-शान्ति की प्राप्ति के लिए मनुष्य ने ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में अनेक अनुसन्धान किये। धर्म एवं दर्शन के अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किये। सुख-शान्ति की इसी खोज में अनेक पन्थ, सम्प्रदाय और उनकी साधना-प्रणालियों का आविर्भाव हुआ। मानव जीवन में सुख-शान्ति के साथ-साथ पारलौकिक जीवन की गुत्थियों को समझने और सुलझाने के लिए भी मनुष्य सदैव जिज्ञासु रहा है। भारत की धार्मिक-आध्यात्मिक परम्परा इस दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। वैदिक युग से ही भारत की ऋषि परम्परा ने मानव जीवन के इहलौकिक एवं पारलौकिक दोनों पक्षों पर विचार-दर्शन से लेकर अनुभवजन्य सिद्धियों के द्वारा ज्ञान की एक विशिष्ट परम्परा का विकास किया। योग भारत की इस ज्ञान-परम्परा का अभिन्न अंग रहा है।

भारत में योग की ज्ञान-परम्परा के सूत्र हड़प्पा-वैदिक युग से ही प्राप्त होने लगते हैं हड़प्पा सभ्यता में ध्यान मुद्रा में बैठी हुई मूर्ति योगी की प्रतिमा प्रतीत होती है। योग का सबसे व्यवस्थित रूप पतंजलि ने अपने योगसूत्र में प्रस्तुत किया है। पतंजलि ने 'चित्तवृत्ति निरोहः योगः' अर्थात् चित्तवृत्तियों का अवरोध, निरोध या रोध ही योग हैं। चित्त की वृत्ति चंचल होती है। अतः पतंजलि ने यौगिक मार्ग का सिद्धान्त प्रतिपादित कर मानव जीवन के चरम लक्ष्य अर्थात् मुक्ति के मार्ग को प्रतिपादित किया। पतंजलि ने योग के आठ अंगों का उल्लेख किया और इस आधार पर ही पतंजलि द्वारा प्रतिपादित योग अष्टांग योग कहलाया।

नाथपन्थ के प्रवर्तक महायोगी गोरखनाथ एवं उनके गुरु मत्स्येन्द्रनाथ ने आदियोगी भगवान् शिव से प्रचलित योगदर्शन के आलोक में हठयोग साधना का प्रतिपादन किया। महायोगी गोरखनाथ का मानना था कि अष्टांग योग के प्रथम दो सोपान यम-नियम स्वाभाविक रूप से प्रत्येक मनुष्य के नैतिक चरित्र निर्माण के आवश्यक अंग हैं। अतः उन्होंने अष्टांग योग के स्थान पर षडंग योग का प्रतिपादन किया। नाथपन्थ की योगसाधना इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि उसमें सामाजिक पक्ष भली-भाँति अन्तर्भूत है। कथनी-करनी की एकता, कनक-कामिनी का त्याग, ज्ञान-निष्ठा, वाक्-संयम, मनो-शरीर शुद्धि, बाह्याचार की सारहीनता, काम-क्रोधादि रहित जीवन, इन्द्रिय-संयम, संग्रह की प्रवृत्ति की उपेक्षा, क्षमा दया दान के प्रति आग्रह इत्यादि नाथ योगसाधना के अनेक ऐसे तत्त्व हैं जो किसी भी समाज के लिए अनुकरणीय आदर्श हैं। उल्लेखनीय है कि पतंजलि ने जहाँ अपने योगसूत्र में योगसिद्धान्तों का प्रतिपादन किया वहीं नाथपन्थ के संस्थापक आचार्यद्वय महायोगी मत्स्येन्द्रनाथ एवं महायोगी गोरखनाथ ने क्रियात्मक योग को सिद्ध करते हुए जनसामान्य के लिए इसे सुलभ बना दिया। स्पष्ट है कि नाथयोग जहाँ एक तरफ योगियों और संन्यासियों के लिए योगमार्ग का अनुसन्धान किया वहीं सामान्य जनता को भी पाखण्डपूर्ण कर्मकाण्डीय उपासना पद्धतियों से मुक्ति दिलाते हुए योग के सहज मार्ग का उपदेश दिया। इस दृष्टि से नाथयोग का सम्यक विवेचन यहाँ महत्त्वपूर्ण है।

नाथयोग साधना शिवोपदिष्ट योगज्ञान की प्रक्रिया का पर्याय है। नाथयोग शिवविद्या अथवा महाविद्या है। इस नाथयोग विद्या के सम्बन्ध में योगिराजाधिजेश्वर शिव ने आदिशक्ति महामाया महेश्वरी से सम्बद्ध किया है। नाथ सम्प्रदाय के सिद्धामृत मार्ग में अद्वैत से परे परमेश्वर परमशिव नाथ ही देवता के रूप में ध्येय, उपास्य और साध्य हैं। निराकार निर्विकार, निर्मल ज्योति ही इस योगमार्ग का परम प्राप्तव्य है। इस प्रकार नाथ ही नाथपन्थ की ध्यान-साधना का परम लक्ष्य है। नाथपन्थ के योगी इसी साकार नाथ अर्थात् योगेश्वर शिव को अपने आदि गुरु के रूप में स्वीकार करते हैं और उन्हीं के सान्निध्य में योगसाधना करते हुए स्वयं सच्चिदानन्द स्वरूप में अभिव्यक्त होते हुए स्वयं प्रकाशित हो उठते हैं। इस प्रकार नाथमत में योग ही साधना है। नाथपन्थ में योग का महत्त्व इस बात से समझा जा सकता है कि योगबीज में गोरखनाथ कहते हैं कि योग ही परमपूज्य है। इससे श्रेष्ठ कुछ भी दूसरा नहीं है, योग ही परमसुख, परमानन्द है। यही

सूक्ष्म दर्शन एवं जीवन का विज्ञान है और योगमार्ग ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग हैं। नाथपन्थ के इस महायोगी ने योगियों एवं समाज के लिए जिस क्रियात्मक योग का प्रतिपादन किया वह हठयोग के नाम से प्रसिद्ध है।

हठयोग

आध्यात्मिक योगसाधना जगत् में नाथपन्थ द्वारा प्रतिपादित हठयोग का विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह साधना मुख्यतः नाथपन्थ ने ही विकसित की। नाथपन्थ की परम्परा में यह मान्य तथ्य है कि यह साधना मुख्यतः प्राणों की साधना है। नाथपन्थ के योगी मानते हैं कि यह योगविद्या आदिनाथ भगवान् शिव से योगीराज मत्स्येन्द्रनाथ जी को प्राप्त हुई। परम्परा से प्राप्त इस योगविद्या को मत्स्येन्द्रनाथ जी से उनके शिष्य महायोगी गुरु गोरक्षनाथ जी ने प्राप्त किया। महायोगी गोरक्षनाथ ने इस योगविद्या को त्रिताप से पीड़ित मानवता के कल्याण के लिए इसे जनसामान्य के लिए सुलभ बना दिया।

'सिद्ध-सिद्धान्त-पद्धति' में हठयोग के सम्बन्ध में गुरुश्री गोरखनाथ कहते हैं कि 'ह'कार सूर्य स्वर या नाड़ी का द्योतक है और 'ठ'कार चन्द्र स्वर है। सूर्य एवं चन्द्र स्वरों के योग से ही हठयोग शब्द निष्पन्न होता है। सूर्य स्वर को ही नाथयोग दर्शन में पिंगला नाड़ी कहा गया है। यह पौरुष प्रवृत्ति का प्रतीक है। इसका प्रवाह दाहिनी नासिका से होता है और इसका बीज मन्त्र 'ह' है। चन्द्र स्वर को नाथयोगी इड़ा नाड़ी भी कहते हैं। यह स्वर स्त्रैण प्रवृत्ति का प्रतीक है। यह स्वर बायीं नासिका से प्रवाहित होता है। इस स्वर का बीज मन्त्र 'ठ' है। उल्लेखनीय है कि श्वांस प्रक्रिया पर आधारित प्राणों की यह हठयोग साधना इन्हीं दोनों स्वरों अर्थात् पिंगला नाड़ी और इड़ा नाड़ी में सन्तुलन स्थापित करने की साधना है। श्वसन प्रक्रिया में सामान्य रूप से दोनों स्वर एक साथ नहीं चलते इसमें कभी सूर्य स्वर चलता है तो कभी चन्द्र स्वर। नाथयोगियों की मान्यता है कि जब व्यक्ति का दायाँ स्वर चलता है अर्थात् सूर्य नाड़ी चलती है तो मानव शरीर की प्राणशक्ति क्रियाशील होती है। अधिकांश शारीरिक क्रियाएँ शारीरिक विकास शरीर का रक्षण एवं उसका संचालन इसी प्राणशक्ति के द्वारा होता है। श्वसन, पाचन से इसका सीधा सम्बन्ध है। इस शक्ति के अधिक सक्रिय होने से प्राणिक शक्ति एवं शारीरिक क्षमता बढ़ जाती है। जबकि मानसिक शक्ति उसी अनुपात में कम होने लगती है। पशु-पक्षियों में इस प्राणशक्ति का प्रभाव सर्वाधिक होता है। इसी प्रकार जब प्राणियों का बायाँ स्वर चलता है अर्थात चन्द्र नाड़ी चलती है तो इससे चेतनाशक्ति क्रियाशील होती है। यही प्राणशक्ति मानसिक क्रियाकलापों का संचालन करती है। मनुष्य में अन्य प्राणियों की तुलना में इस चन्द्र नाड़ी से उत्पन्न चेतनाशक्ति का विकास अधिक होता है। इस शक्ति के अधिक क्रियाशील होने पर शारीरिक क्रियाकलापों के प्रति उदासीनता बढ़ती है तथा प्राणिक क्षमता कम हो जाती है। योगीराज मत्स्येन्द्रनाथ एवं महायोगी गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित हठयोग की साधना इन्हीं सूर्य नाड़ी तथा चन्द्र नाड़ी में सन्तुलन स्थापित करने की साधना है, जिसके परिणामस्वरूप तीसरा स्वर या तीसरी नाड़ी सुषुम्ना नाड़ी जागृत होती है। नाथयोगियों की मान्यता है कि हठयोग में आध्यात्मिक शक्ति सुषुम्ना का जागृत होना आवश्यक है।

नाथयोग में विकसित हठयोग की साधना पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एकरूपता प्रतिपादित करती है। इस साधना में स्वीकार किया गया है कि जो कुछ ब्रह्माण्ड में है, वह सब मानव के व्यष्टि शरीर में भी उपस्थित है अर्थात् पिण्ड में ब्रह्माण्ड और ब्रह्माण्ड में पिण्ड का दर्शन हठयोग की साधना की प्रमुख विशेषता है। महायोगी गोरखनाथ का कथन है कि हमारा शरीर ब्रह्माण्ड का ही एक रूप है, हमारे शरीर में षट्चक्र, त्रिलक्ष्य, पंचव्योम, षोडश आधार नवद्वार एवं पंचाधिदैव विद्यमान हैं। 'सिद्धसिद्धान्तपद्धति' में गोरखनाथ जी ने नवचक्रों का वर्णन किया है तथापि हठयोग की साधना षट्चक्र पर ही आधारित है। अर्थात् षटचक्र - मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञाचक्र का भेदन करके ही योगी या साधक सहस्रार में शिव का साक्षात्कार करता है। षोडश आधार का ज्ञान एवं साधना योगी या साधक को सहस्रार तक पहुँचाती है। इन साधनाओं के बल पर योगी हठयोग की ओर अग्रसर होता है और फिर उसे पंचव्योम, नवद्वार और पंचाधिदैव का ज्ञान होना आवश्यक माना जाता है। नाथपन्थी योगसाधना में आत्मा के स्वरूप की अभिव्यक्ति पंचाकाश के द्वारा मानी गयी है।

नाथयोग की मान्यता है कि हठयोग तन को स्वस्थ मन को स्थिर और आत्मा को परमपद में प्रतिष्ठित करने तथा अमृतत्त्व को प्राप्त करने का अमोघ साधन तथा महाज्ञान है। कहा जा सकता है कि हठयोग साधना मानवीय जीवन को सहज और नैसर्गिक प्राकृतिक वातावरण में अनुकूल संयोजित करने का शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक प्रयोग है। हठयोग में कायाशोधन अर्थात् शरीर की शुद्धि एक आवश्यक साधन-तत्त्व है जिसमें षट्कर्म की क्रियाएँ

महत्त्वपूर्ण हैं। नाथपन्थ की साधना में हठयोग का परम लक्ष्य कुण्डलिनी जागरण द्वारा षट्चक्र भेदन तथा कैवल्य की प्राप्ति माना गया है। नाथपन्थ के सिद्ध योगियों की मान्यता है कि कुण्डलिनी शक्ति पायु और उपस्थ के बीच मूलाधार चक्र है। त्रिकोण के आकार के योनिकामपीठ के मध्य शिवलिंग को साढ़े तीन वलयों में लपेटकर नीचे की ओर मुँह कर विद्युतप्रभा के समान चमकती सुषुम्ना के मार्ग को रोक कर अप्रबुद्ध और गुप्त रूप में स्थित रहती है। यद्यपि शरीर में स्थित कुण्डलिनी स्वभाव से चेतन है तथापि प्रबुद्ध न होने की अवस्था तक जीवात्मा को सांसारिक द्वन्द्वों में विमोहित करने के कारण बन्धाकारिणी है। जबतक वह सुप्तावस्था में है तबतक जन्म-मरण के बन्धन में जीवात्मा भटकता रहता है। यही कुण्डलिनी जब जागृत होती है तो वह साधक को आत्मतत्त्व के स्वरूप का ज्ञान करा देती है और ऊर्ध्वमुखी होकर षट्चक्र भेदन करते हुए सहस्रार में पहुँच जाती है तथा सहस्रार से ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचकर शिव में अन्तर्भूत हो जाती है अर्थात् जीवात्मा परमपद शिव में विलीन हो जाती है। यही हठयोग का परम लक्ष्य है जो जीवात्मा और परमात्मा को एकाकार कर देता है।

षट्कर्म

नाथपन्थी हठयोग के आचार्यों ने शरीर शोधन के लिए षट्कर्म बनाया। षट्कर्म हठयोग का प्रथम साधन है। षट्कर्म के द्वारा मल एवं विषाक्त तत्त्वों से शरीर को शुद्ध किया जाता है। शुद्धिकरण की छः क्रियाएँ हैं, इसलिए इन्हें षट्कर्म कहा जाता है। इस षटकर्म में धौति, वस्ति, नेति, नौलि, त्राटक और कपालभाति की खोज नाथयोगियों ने की थी। नाथयोगियों का मानना है कि षट्कर्मों द्वारा कायाशोधन से शरीर स्वस्थ रहता है और सभी नाड़ियाँ मलरहित होती हैं और तब शरीर योगाभ्यास एवं कुण्डलिनी जागरण के लिए यथेष्ट होता है। यहाँ षट्कर्मों का संक्षिप्त विवेचन प्रसंगात् उल्लेख्य है।

1. धौतिः धौति का अर्थ धोना या साफ करना है। नाथपन्थ के योगशास्त्र में कायाशोधन को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मानते हुए मुँह से लेकर गुदाद्वार तक की विधिवत आन्तरिक सफाई को घौति क्रिया कहा जाता था। मुख्य रूप से धौति कर्म चार प्रकार का माना गया है- अन्तर्धौति, दन्तधौति, हृदयधौति और मूलशोधन।

अन्तर्धौति के अन्तर्गत शरीर के भीतर प्रक्षालन किया जाता था। वातसार, वारिसार, वहिसार और बहिष्कृत जैसी विधियों से अन्तर्धौति की क्रिया सम्पन्न की जाती थी। वातसार अर्धौति में नाथयोगी सिद्धासन, पद्मासन या वज्रासन में बैठकर दोनों होठों को कौए की चोंच की तरह करके धीरे-धीरे पेट में वायु भरते हैं। वायुपान के पश्चात् कुम्भक की स्थिति में पेट के अन्दर की वायु को चारों ओर संचारित करते हैं और फिर धीरे-धीरे नासिका से अन्दर की वायु को निकाल देते हैं। पेट के अन्दर वायु को चलाने से सम्बन्धित विधि के कारण ही वातसार अन्धौति कहते हैं। वायु के अतिरिक्त वारि अर्थात् जल को धीरे-धीरे पीने, उसे परिचालित करके इस जल को गुदाद्वार से बाहर निकालने की क्रिया वारिसार अन्तधौति कहलाती है। इससे आँतों की सफाई होती है। वहिसार अन्तधौति के अन्तर्गत वज्रासन में बैठकर अथवा थोड़ा सामने झुके हुए खड़े होकर नाभि को मेरु के पृष्ठभाग में लगाना तथा फुलाना होता है बहिष्कृत अन्तर्धौति में वातसार अन्धौति के समान ही प्राणवायु को पेट में भरा जाता है तत्पश्चात् इसे गुदा से बाहर निकाला जाता है।

दन्तधौति में मुख के अन्दर बाहर के भागों को धोकर साफ या स्वस्थ रखा जाता है। नाथपन्थ में यह पाँच प्रकार की बतायी गयी है- दन्तमूल, जिह्वामूल, कर्णरन्ध्र, नासिकामूल तथा कपालरन्ध्र दन्तधौति बतायी गयी है। हृदय का शोधन करने वाली यौगिक क्रिया को हृदयधौति कहा गया है। मानसिक शुद्धि के लिए हृदय की शुद्धि अत्यन्त आवश्यक मानी गयी है। इसके शोधन की मुख्य तीन क्रियाएँ बतायी गयी हैं- दण्डधौति, वमनधौति एवं वसनधौति। दण्डधौति में केले के दण्ड, चिकने बेंत के दण्ड, हल्दी अथवा वटवृक्ष की जटा जिसकी मोटाई 1 सेमी. तथा लम्बाई लगभग 2 फीट तक हो, को अन्न की नली के रास्ते धीरे-धीरे हृदयस्थल तक प्रविष्ट कर थोड़ी देर सावधानी से दण्ड के चारों ओर घुमाकर धीरे-धीरे बाहर निकाला जाता है, इससे हृदय की सफाई होती है। दण्ड को मुलायम करने के लिए गाय का घी या मक्खन लगाया जाता है। वमनधौति में प्रातःकाल अथवा भोजन करने के तीन से चार घण्टे बाद गरम नमकीन जल पीते हुए कण्ठ तक भर लिया जाता है फिर उकडू बैठकर अथवा खड़े होकर सामने लगभग 120 अंश झुककर दाहिने हाथ की दो उंगलियों को जिह्वामूल में प्रविष्ट कर धीरे-धीरे रगड़ने से उदरस्थ सारा जल बाहर आ जाता है। इससे आमाशय अन्न नली तथा गले की धुलाई हो जाती है। इसी प्रकार वसनधौति में खाली पेट पाँच-छः सेमी. चौड़ा तथा 8 मीटर लम्बा महीन से महीन नया कपड़ा गोल लपेटकर जल में भिगोकर एक बर्तन में रख देते हैं। कपड़े के एक सिरे को

मुँह में डालकर लार से अच्छी तरह मिलाकर धीरे-धीरे निगलें। क्रमशः अभ्यास करने से वस्त्र का अधिकांश हिस्सा अन्दर चला जाता है और फिर नौलि क्रिया के पश्चात् धीरे-धीरे वस्त्र बाहर निकालते हैं।

अपान वायु को कुपित होने से रोकने के लिए मलावरोध आदि के निवारण के लिए जिस क्रिया का उपयोग किया जाता है, उसे मूलशोधन क्रिया कहते हैं।

2. वस्तिः यह षट्कर्म के अन्तर्गत शरीर-शोधन की दूसरी क्रिया है। शरीर में मूलाधार के समीप नाभि के नीचे वाले भाग को वस्ति कहते हैं। यह क्रिया दो प्रकार की होती है- जलवस्ति तथा शुष्कवस्ति। जलवस्ति के अन्तर्गत एक चिकनी नली को गुदा में डालकर नौलिकर्म की सहायता से वस्ति में जल को चढ़ाया और निकाला जाता है। जमीन पर पश्चिमोत्तान आसन में बैठकर आश्वनि मुद्रा के द्वारा गुदा का आकुंचन और प्रसारण करने की प्रक्रिया को शुष्कवस्ति कहते हैं।

3. नेतिः नासिका मार्ग की सफाई करने की क्रिया को नेति कहा जाता है। यह षट्कर्म की तीसरी क्रिया है। नाक, कान, कण्ठ की स्वच्छता और उसके स्वास्थ्य के लिए यह क्रिया महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। यह क्रिया जल, दुग्ध, घृत, तेल जैसे द्रव पदार्थों द्वारा सम्पन्न की जाती है। धागे से भी नासिका मार्ग की सफाई होती है। इस आधार पर नेति के कई प्रकार बताये गये हैं। गुनगुने जल में आवश्यकतानुसार नमक मिलाकर सिर को एक तरफ झुकाकर ऊपर की नासिका में डालने से यह जल दूसरी नासिका से बाहर आता रहता है। यह क्रिया क्रम बदलकर बायें-दायें नासिका आती-जाती रहती है। इस क्रिया को ही जलनेति कहते हैं। किसी आसन पर बैठकर अथवा कुर्सी पर बैठकर या लेटकर सिर को पीछे की ओर झुकाकर प्रत्येक नासिका छिद्र में आठ से दस बूँद ताजा गाय का घी डालने को घृतनेति कहते हैं। यही क्रिया तेल से करने पर तेलनेति, दूध से करने पर दुग्धनेति कहलाती है। मुँह में पानी भरकर नासिका के छिद्रों से निकालने की विधि को कपालनेति कहते हैं। नाथपन्थ के योगियों ने सूत्रनेति का भी विधान किया है। इसमें मुलायम धागे को गर्म जल से धोकर धीरे-धीरे एक नासिका छिद्र में डालकर गले के पास आने पर हाथ की दो उँगलियों से धागे को पकड़कर मुँह से धीरे-धीरे बाहर निकालते हैं। इस प्रकार धागे द्वारा नासिका की सफाई को सूत्रनेति कहते हैं।

4. नौलिः हठयोग के षट्कर्मों की यह चतुर्थ महत्त्वपूर्ण क्रिया है। पेट और उसकी मांसपेशियों के साथ आँत वाले हिस्से की सफाई की क्रिया को नौलि क्रिया कहा गया है। इसमें अग्निसार क्रिया के द्वारा उदर की मांसपेशियों को लचीला बनाने तथा उड्डीयान बन्ध के द्वारा श्वांस को बाहर निकालकर पेट को अन्दर की ओर खींचने और फिर विविध प्रकार से घुमाने की क्रिया नौलि के अन्तर्गत की जाती है। नाथपन्थ में नौलि क्रिया के चार प्रकार- मध्य नौलि, दक्षिण नौलि, वाम नौलि और चक्र नौलि बताये गये हैं। यह क्रिया उदर सम्बन्धी बात, तिल्ली, आमवात, पेट का कड़ापन, कब्ज आदि का निदान करती है। आँतों को सक्रिय, स्वस्थ और मजबूत बनाने की यह उत्तम क्रिया है।

5. त्राटकः किसी लक्ष्य विशेष को एकाग्रता के साथ अपलक देखने की क्रिया को त्राटक कहते हैं। नाथपन्थ की योगक्रिया में यह कहा गया है कि आँसू निकलने तक एकाग्रता के साथ अपलक देखना त्राटक कहलाता है। यथा-

निरीक्षेन्निश्चलदृशा सूक्ष्म-लक्ष्यं समाहितः।
अश्रुसम्पात-पर्यन्तमाचार्यैस्त्राटकं स्मृतम्।।

नाथयोग में तीन प्रकार के त्राटक बताये गये हैं। - अन्तःत्राटक मध्यत्राटक और बाह्यत्राटक हृदय अथवा भ्रूमध्य में नेत्र बन्द रखकर एकाग्रतापूर्वक धारणाशक्ति बढ़ाने की क्रिया अन्तःत्राटक कहलाती है। मध्यत्राटक के अन्तर्गत नासिका के अग्रभाग या समीपवर्ती किसी लक्ष्य को अपलक देखकर ध्यान किया जाता है। बाह्यत्राटक का अभ्यास किसी दूरवर्ती लक्ष्य पर किया जाता है। त्राटक के द्वारा स्मरण-शक्ति, धारणा-शक्ति तथा अतीन्द्रिय क्षमता बढ़ती हैं। यह क्रिया मन के हलचल को शान्त, स्थिर तथा अन्तर्मुख करती है। दिव्यशक्ति तथा सम्मोहन-शक्ति पैदा करने में सहायक होती है। उच्च आध्यात्मिक क्रियाओं के लिए पृष्ठभूमि तैयार करती है।

6. कपालभातिः वृहत् मस्तिष्क के सामने के हिस्से को कपाल कहते हैं। भाति अर्थात् धौकनी की विधि द्वारा कपाल का शोधन करने को ही कपालभाति कहते हैं। यथा-

वातक्रमेण व्युत्क्रमेण शीतक्रमेण विशेषतः।

कपालभातिस्त्रिधाकुर्यात् कफदोषं निवारयेत्।

नाथयोग के अन्तर्गत वातक्रम, व्युत्क्रम और शीतक्रम के आधार पर तीन प्रकार की कपालभाति मानी गयी है। नाथयोग में मान्यता है कि कपालभाति के द्वारा कफदोष का निवारण होता है, मन एकाग्र होता है, कण्ठ, मुख और नासाछिद्र शुद्ध होते हैं।

नाथयोग परम्परा में उपर्युक्त षट्कर्मो का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। षट्कर्म योगाभ्यास के मुख्य आधार हैं। इनके सम्यक और विधिपूर्वक अभ्यास से आसन प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के द्वारा मूलाधार में सोयी कुण्डलिनी जागृत होती है। नाथयोग में यह सिद्ध है कि षट्कर्मसिद्ध मानव शरीर पूर्ण योगाभ्यास के लिए तैयार होता है और विभिन्न मुद्राबन्धों के अभ्यास के द्वारा कुण्डलिनी षट्चक्रों को भेदती हुई शरीर में नवप्राणशक्ति का संचार करते हुए सहस्रार में शिव के साथ सामरस्य स्थापित करते हुए शिवस्वरूप हो जाती है।

षडंग

आसनः नाथयोग की साधना में षट्कर्म अर्थात् शरीर शोधन के बाद द्वितीय स्थान आसनों का है। मन और शरीर को पुष्ट, दृढ एवं आरोग्य प्रदान करने की शरीर की विशेष स्थिति आसन कहलाती है। सिद्धसिद्धान्तपद्धति में गोरक्षनाथ ने आसन को स्वरूप-चेतन आत्मा में स्थित हो जाना कहा है- 'आसनमिति स्वस्वरूपं समासन्नता।' हठयोग के आचार्य महर्षि घेरण्ड का कथन है कि आसनों से शरीर में सुदृढ़ता आती है। शरीर के अंग-प्रत्यंग पुष्ट और स्वस्थ होते हैं; यथा- 'आसनेन भवेद दृढम्।' 'हठयोग प्रदीपिका' में उल्लेख मिलता है कि आसनों के अभ्यास से शरीर में स्थैर्य, आरोग्य और अंगस्फूर्ति की प्राप्ति होती है। गोरखवाणी में उल्लेख मिलता है कि आसन प्राण और ध्यान के स्थिर होने पर अथवा सिद्ध होने पर शरीर की जीवनी-शक्ति नष्ट नहीं होती। आसन से जड़ शरीर को निर्विकार और सुदृढ़ करना चाहिए। योगी शरीर को आसनों के अभ्यास से पुष्ट करता है।' उल्लेखनीय है कि आसनों के नियमित अभ्यास से शरीर पर पूर्ण नियन्त्रण किया जा सकता है। शरीर के अंग-प्रत्यंग के क्रियाशील होने से व्यक्ति नीरोग होता है। आसनों से मांसपेशियाँ और कोशिकाएँ सक्रिय होती हैं जिनसे उनकी दृढ़ता बढ़ती है। शरीर की हड्डियों को लचीला तथा स्वस्थ करने में आसनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। आसन के नियमित अभ्यास से शरीर में स्थित अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ सक्रिय होती हैं और इन ग्रन्थियों से होने वाले हार्माेन आदि के स्राव को नियन्त्रित करती हैं।

नाथयोग में आसनों की संख्या अलग-अलग बतायी गयी है। योग के आदिप्रवर्तक आदिनाथ शिव ने जीव-जगत् की चौरासी लाख योनियों के अनुसार आसनों की संख्या 84 लाख बतायी है। यद्यपि कि यह संख्या अतिरंजित लगती है और चौरासी लाख योनियों से तारतम्य बैठाने के लिए कह दी गयी प्रतीत होती है। नाथयोग में चौरासी आसन व्यवहार में उपयोगी माने गये हैं जबकि घेरण्ड संहिता में बत्तीस निम्न प्रमुख आसनों का उल्लेख है- सिद्ध, पद्म, भद्र, मुक्त, वज्र, स्वस्तिक, सिंह, गोमुख, वीर, धनुस, मृत, गुप्त, मत्स्य, मत्स्येन्द्र, गोरक्ष, पश्चिमोत्तान, उत्कट, संकट, मयूर, कुक्कुट, कूर्म, उत्तानकूर्म, उत्तानमण्डूक, वृक्ष, मण्डूक, गरुण, वृषभ, शलभ, मकर, उष्ट्र, भुजंग और योगासन।

उपर्युक्त बत्तीस आसनों के अतिरिक्त तेरह अन्य आसनों का उल्लेख योगी आदित्यनाथ ने अपनी पुस्तक 'हठयोगः स्वरूप एवं साधना में किया है। ये तेरह आसन इस प्रकार हैं- पवनमुक्त आसन, सुप्तवज्रासन, सर्वांगासन, हलासन, कर्णपीड़ासन, चक्रासन, ताड़ासन, नौकासन, वीर्यस्तम्भासन, वृश्चिकासन, शशकासन, हंसासन, शीर्षासन। नाथपन्थ में प्रचलित इन सभी आसनों के द्वारा मानव शरीर स्वस्थ होता है, विकाररहित होता है और योग की अगली कड़ी के अभ्यास के योग्य बनता है।

मुद्रा

‘मुदं करोति देवानाम’ अर्थात् जिस क्रिया से देवता प्रसन्न हों उसे मुद्रा कहते हैं। प्रसन्नता की प्रतीक ‘मुद्रा’ भारत में अति पुरातन है। इस प्रतीक के प्राचीनतम प्रमाण ऋग्वेद है। मन्त्र विज्ञान, मातृकाओं एवं मुद्राओं के रहस्य सम्बन्धी शास्त्र इत्यादि ऐसे अधिकांश सन्दर्भ हैं, जो इस परम्परा के व्यापक धरातल को संकेतित करते हैं।

मुद्रा की अवधारणा वेदों में ही प्रचलित हो चुकी थी। कालान्तर में भारतीय शिल्प, साहित्य, नाटक, नृत्यशास्त्र एवं नाट्यशास्त्र में मुद्रा का प्रतीकत्व विकसित हुआ और प्रायः सभी सम्प्रदायों में इस प्रतीक की महिमा का विस्तार हुआ। अपने आंगिक अभिनय के कारण ही ये उत्तरोत्तर लोकप्रिय होती गयी। हठयोग साधना में भी मुद्रा को महिमान्वित किया गया। हठयोग साधना में योगसिद्धि के जो साधन बतलाये गये हैं उनमें मुद्रा अथवा मुद्राबन्ध तीसरे स्थान पर है। शरीर की वह विशिष्ट क्रिया जिससे शरीर के किसी अवयव विशेष को स्थिति विशेष में रखा जाता है, मुद्रा कहलाती है। नाथयोग साधना में योगासन, प्राणायाम आदि क्रियाओं के समान ही मुद्राओं को भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। मुद्राओं का अभ्यास कुण्डलिनी सूत्र शक्ति को जागृत करने एवं चक्रों का भेदन करने में विशेष उपयोगी है। मुद्रा शरीर को स्वस्थ रखने के साथ-साथ आत्मिक बल में भी वृद्धि करती है जो चित्त को एकाग्र करने तथा कुण्डलिनी शक्ति के जागरण में सहायक है। मुद्राओं के अभ्यास से इन्द्रियाँ बाह्य जगत् से सम्बन्ध विच्छेद कर अन्तर्मुखी होकर प्रत्याहार की स्थिति निर्मित करती है। हठयोग के ग्रन्थों में मुद्रा और बन्ध का संयुक्त विवरण प्राप्त होता है। हठयोग प्रदीपिका में निम्न विवरण प्राप्त होता है-

महामुद्रा महाबन्धो महावेधश्च खेचरी,
उड्डीयान मूलबन्धश्च बन्धो जालन्धराभिधः
करणी विपरीताख्या वज्रोली शक्तिचालनम्
इदं हि मुद्रादशकं जरामरण - नाशकम।

इस प्रकार हठयोग प्रदीपिका में दस मुद्राएँ महामुद्रा, महाबन्ध, खेचरी, उड्डीयान, मूलबन्ध, जालन्धरबन्ध, विपरीतकरणी वज्रोली, शक्तिचालिनी, जरामरण को नष्ट करने वाली बतायी गयी है। घेरण्ड संहिता में कुल पच्चीस मुद्राओं का वर्णन मिलता है। यहाँ कहा गया है कि महामुद्रा, नभोमुद्रा, उड्डीयानबन्ध, जालन्धरबन्ध, मूलबन्ध, महाबन्ध, महावेध, खेचरी, विपरीतकरणी, योनि, वज्रोली, शक्तिचालिनी, तड़ागी, माण्डवी, शाम्भवी, पंचधरणा, आश्विनी, पाशनी, काकी, मातंगी, भुजंगिनी, अगोचरी, भूचरी इत्यादि मुद्राएँ सिद्धि प्रदान करने वाली हैं।

नाथयोग साधना में उपर्युक्त विशिष्ट मुद्राओं के अतिरिक्त नौ प्रकार की हस्तमुद्राओं- ज्ञानमुद्रा, चिन्मुद्रा, वायुमुद्रा, शून्यमुद्रा, पृथ्वीमुद्रा, प्राणमुद्रा, अपानमुद्रा, अपानवायुमुद्रा और सूर्य मुद्रा का भी उल्लेख मिलता है। नाथपन्थ की योग साधना में इन मुद्राओं का अपना विशिष्ट स्थान है। ये सभी मुद्राएँ योगसाधना के साथ अन्योन्याश्रित ढंग से जुड़ी हुई हैं।

प्रत्याहार

हठयोग की साधना में सप्तसाधनों के अन्तर्गत प्रत्याहार को भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। उल्लेखनीय है कि मन की बहिर्मुखी वृत्ति को अन्तर्मुखी करने के साधन को प्रत्याहार कहते हैं। मनुष्य के बन्धन और मोक्ष का कारण मन ही माना गया है। इस प्रकार मन को साधने में प्रत्याहार की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। नाथयोग साधना में मन की पाँच विभिन्न अवस्थाएँ मानी गयी हैं- मूढ़ावस्था, क्षिप्तावस्था, विक्षिप्तावस्था, एकाग्रता और निरुद्धता। सिद्धसिद्धान्तपद्धति में कहा गया है कि चौतन्य आत्मा के इन्द्रियरूपी घोड़ों के प्रत्याहरण से उनके विकारग्रस्त होने से उत्पन्न विकारों की समाप्ति हो जाती है और यही प्रत्याहार का लक्षण है। प्रत्याहार के सम्बन्ध में औपनिषदिक वाङ्मय में भी इसका विशद विवेचन प्राप्त होता है। उपनिषदों में इन्द्रियों को तुरंग अर्थात् घोड़ों के रूप में परिलक्षित किया गया है। इस सन्दर्भ में कठोपनिषद् में यम-नचिकेता संवाद महत्त्वपूर्ण है। यहाँ यम ने नचिकेता को समझाते हुए कहा है कि जीवात्मा शरीर रूपी रथ का स्वामी है। बुद्धि इस रथ का सारथी है, मन लगाम है, इन्द्रियाँ घोड़ों के समान हैं, विषय उन घोड़ों के विचरने का मार्ग है। चौतन्य जीवात्मा इन्हीं शरीर और इन्द्रिय मन के साथ रहता है। अतः जो मनुष्य विवेकयुक्त बुद्धि तथा वश में किये हुए स्थिर मन से सम्पन्न है उसकी इन्द्रियाँ सावधान सारथी के अच्छे घोड़ों की तरह

वश में रहती हैं। महायोगी गोरखनाथ जी इन्हीं घोड़ों के समान इन्द्रियों को विषयों से प्रत्याहारित कर आत्ममुखी करने पर बल दिया है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी कहा गया है कि जिसकी इन्द्रियाँ विषय से निगृहीत हैं, उसी की बुद्धि स्थिर है। पातंजलि योगदर्शन में कहा गया है प्रत्याहार इन्द्रिय-विजय का महान साधन है। अपने विषयों के सम्बन्ध में रहित होने पर इन्द्रियों का चित्त के स्वरूप में तदाकार हो जाना ही प्रत्याहार है। प्रत्याहार सिद्ध हो जाने पर इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं। विवेकमार्तण्ड में कहा गया है कि रेचक-पूरक-कुम्भक, त्रयक्रमपूरक बारह बार प्राणायाम कर वायु को शरीर के भीतर स्थिर करने से मन स्थिर होता है और इस तरह प्राणायाम के द्वारा इन्द्रियों का प्रत्याहार हो जाता है। शिवसंहिता में कहा गया है कि जब योग साधक एक प्रहर तक वायु धारण की शक्ति प्राप्त करता है तब प्रत्याहार होता है। जिस इन्द्रिय के द्वारा जिस विषय का बोध होता हो उसी में आत्मभाव करने से इन्द्रियजय होना ही प्रत्याहार है। स्पष्ट है कि प्रत्याहार एक मानसिक क्रिया है और इन्द्रियों को एकाग्रता की ओर जाने की अवस्था है। हठयोग की साधना में षट्कर्म आसन और मुद्रा से शरीर को स्वच्छ, पवित्र, व्याधिरहित तथा शक्तिसम्पन्न किया जाता है तत्पश्चात् प्रत्त्याहार के द्वारा इन्द्रियों और मन को संयमित किया जाता है।

प्राणायाम

श्वास-प्रश्वास की स्वाभाविक गति को अवरुद्ध कर शास्त्रीय विधि से श्वसन की क्रिया प्राणायाम कहलाती है। प्राणिक ऊर्जा का शरीर में अधिक से अधिक विस्तार प्राणायाम के द्वारा ही किया जा सकता है। नाथयोग साधना में माना गया है कि प्राण ही शरीर की सभी प्रकार की क्रियाओं का संचालन करता है। शरीर के अन्दर अलग-अलग स्थान एवं कार्य की दृष्टि से यही प्राण विभिन्न पाँच नामों से जाना जाता है, जिन्हें पंचप्राण कहते हैं। ये पंचप्राण प्राण, अपान, उडान, समान और व्यान हैं। हृदय में प्राण, गुदा में अपान, नाभि में समान, कण्ठ में उड़ान और सम्पूर्ण शरीर में ब्यान वायु अर्थात् प्राण की स्थिति होती है। जो प्राण अर्थात् वायु जिस स्थान में रहती है वह उस स्थान का पूर्णरूप से नियन्त्रण करती है। नाथयोग साधना में पाँच उपप्राण अर्थात् उपवायु का भी उल्लेख प्राप्त होता है- नाग, कूर्म, क्रीकर, देवदत्त और धनंजय। पाँच उपवायुओं में नाग का कार्य उद्गार अर्थात् छींक लाना, कूर्म का कार्य उन्मीलन अथवा पलकों को बन्द करना है। क्रीकर छींक लाने में सहायक और देवदत्त जम्हाई लाने में सहायक है। धनंजय उपवायु सर्वांगव्यापी है। योगी आदित्यनाथ ने अपनी पुस्तक में इन उपवायुओं के कार्य को किंचित् अन्तर के साथ उल्लेख किया है। उनके अनुसार देवदत्त छींकने, नाग पलक झपकाने, क्रीकर जम्हाई लेने, कूर्म खुजलाने और धनंजय हिचकी लेने में सहायक है। इस प्रकार नाथयोग साधना में यह माना गया है कि प्राण अथवा वायु का सम्बन्ध सूक्ष्म एवं स्थूल शरीर से होने के कारण सभी इन्द्रियों तथा मन का संचालन प्राण की क्रिया पर निर्भर करता है। यदि प्राण पर नियन्त्रण हो जाय तो मन और इन्द्रियाँ स्वतः नियन्त्रित हो जाती हैं। अर्थात् नाथयोग साधना यह मानती है कि प्राणायाम के द्वारा प्राण पर नियन्त्रण स्थापित कर मन की सूक्ष्म तथा चंचल वृत्तियों को नियन्त्रित किया जा सकता है।

नासिका से वायु अन्दर खींचना श्वास कहलाता है तथा नासिका से वायु बाहर छोड़ना प्रश्वास कहलाता है। श्वास अन्दर लेना, श्वास को अन्दर रोकना, श्वास को बाहर छोड़ना तथा श्वास को बाहर रोकना जैसी चार प्रमुख क्रियाएँ प्राणायाम में की जाती हैं। श्वास को अन्दर लेने की क्रिया पूरक, श्वास को अन्दर तथा बाहर रोकने की क्रिया को कुम्भक तथा श्वास को बाहर छोड़ने की क्रिया को रेचक कहते हैं। इन प्राणायामों में नाड़ीशोधन प्राणायाम, उज्जायी प्राणायाम, भ्रामरी प्राणायाम, शीतली प्राणायाम, सीत्कारी प्राणायाम, चन्द्रभेदी प्राणायाम, सूर्यभेदी प्राणायाम, भस्त्रिका प्राणायाम, कपालभाति प्राणायाम, काकी प्राणायाम, भुजंगी प्राणायाम, मूर्च्छा प्राणायाम, प्लाविनी प्राणायाम, केवली प्राणायाम, चतुर्थ प्राणायाम, केवल-कुम्भक प्राणायाम का उल्लेख नाथयोग साधना में मिलता है। इन प्राणायामों के द्वारा जीवात्मा अपने मन, प्राण और इन्द्रियों को साधता है और नाथयोग में वर्णित ध्यान, धारणा तथा समाधि के लिए अपने को तैयार करता है।

नाथयोग साधना यम-नियम के अतिरिक्त षडंग योग का प्रतिपादन करती है, जिनमें आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि है। इस प्रकार यम-नियम षट्कर्म के आधार पर योग साधना के लिए शरीर को तैयार कर आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार की साधना करते हुए जीवात्मा धारणा और ध्यान के माध्यम से समाधि तक पहुँचता है और यही योग साधना का चरम बिन्दु है। धारणा, प्रत्याहार के पश्चात् अष्टांग योग का छठा अंग है।

धारणा

नाथयोग साधना में धारणा को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि शरीर से बाहर-भीतर एक ही निज तत्त्व स्वरूप आत्मा व्याप्त है, अन्तःकरण से इस तरह की भावना ही धारणा है। जो-जो भौतिक प्रपंच उत्पन्न होता है उसको निराकार आत्मारूप में धारण करनी चाहिए और वायुरहित दीपक के निश्चल प्रकाश के समान आत्मचौतन्य का ही चिन्तन करना चाहिए, यही धारणा का लक्षण है। यथा-

'धारणेति सा बाह्याभ्यन्तर एकमेवनिजतत्त्वस्वरूपमेवान्तः कारणेन साधयेद यथा यद्यदुत्पद्यते तत्तनिराकारे धारयेत स्वात्मानं निर्वातदीपमिव संधारयेदिति धारणां लक्षणम्।।

विवेकमार्तण्ड में यह उल्लेख मिलता है कि धारणा, ध्यान और समाधि अष्टांग योग के तीन अंग स्वरूपावस्थान के यथाक्रम परस्पर सम्बद्ध अन्योन्याश्रित सोपान हैं। हठयोग शास्त्रों में पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश की धारणा के सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन मिलता है। पृथ्वी तत्त्व की धारणा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि जिस साधक को भूमि, जल, अग्नि, वायु और आकाश की धारणा हो जाती है, उसका चित्त निश्चल हो जाता है। पतंजलि अपने योगदर्शन में कहते हैं कि शरीर के बाहर या भीतर कहीं एक विशेष स्थान में चित्त को स्थिर करना ही धारणा है- 'देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।'

इस प्रकार नाथपन्थ की योगसाधना एवं पतंजलि के अष्टांग योग में धारणा को ध्यान की पूर्व सीढ़ी माना गया है। ध्यान के लिए आवश्यक है कि विचार और चिन्तन का प्रवाह ध्यान की धारा की ओर हो। ध्यान के लिए मन, विचार, चिन्तन की शुद्धता आवश्यक मानी गयी है और इसके लिए धारणा की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

ध्यान

पतंजलि के अष्टांग योग में सातवें और नाथपन्थ के षडंग योग में पाँचवें अंग के रूप में 'अथ ध्यानमिति कश्चन परमाद्वैतस्य भावः स एवात्मेति यथा यद्यत्स्फुरति तत्तत्स्वरूपमेवेति भावयेत् सर्वभूतेषु समदृष्टिश्च इति ध्यानलक्षणम् ।।'

महायोगी गोरखनाथ ने ध्यान की सार्थकता के लिए निराकार आत्मस्वरूप में तथा सम्पूर्ण चौतन्य परमात्मा की अभिव्यक्ति में समदृष्टि को बड़ा महत्त्व दिया है। गोरखवाणी सिष्टपुराण में वे कहते हैं कि एकमात्र ध्येय ध्यान का विषय निरंजन है, निरंजन के उपरान्त ध्यान के लिए रह ही क्या जाता है- 'निरंजन उपरांति ध्यान नाहीं। गोरखवाणी में भी कहा गया है कि ध्यान दर्शन है, चैतन्य तत्त्व का सर्वत्र अनुभव ही दर्शन अथवा ध्यान है। साधक आज्ञाचक्र में स्थित दोनों ध्रुवों के मध्य में प्रदीप्त ज्ञानदीप्ति-ज्ञान नेत्र अथवा शिव नेत्र की ज्योति से समृद्ध होकर दर्शन की सीमा में ध्यान की दशा में अलख निरंजन परमेश्वर शिव में प्रतिष्ठित हो जाता है। गोरखवाणी में आगे कहा गया है कि भ्रूमध्य में चित्त का लय कर उसमें जीवात्मा का स्थिर अथवा ध्यानस्थ हो जाना और नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि स्थिर रखना ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश कर परम शिव का साक्षात्कार कर लेना है। आज्ञाचक्र में भौंहों के मध्य में जीवात्मा अपने शिवस्वरूप का साक्षात्कार करता है तथा जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त हो जाता है। इसलिए जीवात्मा को भ्रूमध्य में चित्त लय कर तथा स्वरूपतः ध्यानस्थ होकर मुक्ति का मार्ग अपनाना चाहिए।

नासिका अग्रे भूमण्डले अहनिस रहिबा थीरं।
माता गरभि जनम न आयबा, बहुरि न पीयबा नीरं।।

पतंजलि ने भी अपने योगदर्शन में कहा है कि जिस ध्येय वस्तु में चित्त लगाया जाय उसी में उसका एकाग्र हो जाना तथा किसी दूसरी वृत्ति का बीच में न उठना ध्यान है। स्पष्ट है कि ध्यान का विशिष्ट उपक्रम आत्मा में चित्तवृत्ति का लय होना है। शिवसंहिता में इसका विस्तृत वर्णन मिलता है। शिवसंहिता में कहा गया है कि योगी की चित्तवृत्ति जब लय को प्राप्त होती है तब अखण्ड ज्ञानस्वरूप निरंजन आत्मा का प्रकाश होता है। जब ध्यान चित्त स्थिरता को प्राप्त हो जाय तब उसमें महत शून्य का चिन्तन करना चाहिए। आदि, मध्य और अन्त रूप शून्य में करोड़ों सूर्य के समान प्रभा वाले और करोड़ों चन्द्रमा के समान शीतल प्रकाश वाले शून्य रूप आत्मा के ध्यान का अभ्यास करने वाले साधक को सिद्धि प्राप्त होती है।

चित्तवृत्तिर्यदा लीना तस्मिन् योगी भवेद् ध्रुवम्।

तदा विज्ञायतेऽखण्ड ज्ञान रूपी निरंजनः।।

ब्रह्माण्डबाह्ये संचिन्त्य स्वप्रतीकं यथोदितम्।

तमावेश्य महच्छन्यं चिन्तयेदविरोधतः।।

आद्यान्तमध्य शून्यं तत्कोटिसूर्य समप्रभम्।

चन्द्रकोटिप्रतीकाशमभ्यस्य सिद्धिमाप्नुयात् ।। 43

महर्षि घेरण्ड ने ध्यान के तीन भेद बताये हैं। पहला स्थूल ध्यान, दूसरा ज्योतिर्ध्यान और तीसरा सूक्ष्म ध्यान है। जिस ध्यान में मूर्ति, इष्टदेव अथवा गुरु का चिन्तन हो वह स्थूल ध्यान है जिसमें तेजोमय ब्रह्म या शक्ति की भावना हो वह ज्योतिर्ध्यान हैं और जिसमें बिन्दुमय ब्रह्म कुण्डलिनी का ध्ध्यान हो वह सूक्ष्म ध्यान है।

स्थूलं ज्योतिस्तथा सूक्ष्मं ध्यानस्य त्रिविधं विदुः।

स्थूलं मूर्तिमयं प्रोक्त ज्योतिस्तेजोमयं तथा।

सूक्ष्मं विन्दुमयं ब्रह्मकुण्डली परदेवता ।।4

भ्रूमध्य में मन के ऊर्ध्वभाग में ॐकारमय शिखामालायुक्त ज्योति का ध्यान ही ज्योतिर्ध्यान अथवा तेजोध्यान है। शाम्भवी मुद्रा में अभ्यास द्वारा कुण्डलिनी महाशक्ति का ध्यान सूक्ष्म ध्यान है। महायोगी गोरखनाथ का कथन है कि योगी के हृदय में विद्यमान आत्मवस्तु का निश्चल चिन्तन ही ध्यान है। गोरखनाथ ने ध्यान के दो प्रकार 'सगुण' एवं 'निर्गुण' ध्यान बताया है।

द्विधा भवति तद्व्यानं सगुणं निर्गुणं तथा।

सगुणं वर्णभेदेन निर्गुणं केवलं विदुः।।

नाथपन्थ के योगियों का मानना है कि ध्यान योग के द्वारा ही साधक आत्मसाक्षात्कार में समर्थ होता है। नाथयोग साधना में ध्यान का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए यह माना गया कि परमतत्त्व शिव में शिव के साथ एकाकार होने के लिए ध्यान की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका है। अष्टांग और षडंग योग के आचार्यों की भी यही धारणा है कि ध्यान योग समाधि के लिए अर्थात् मुक्ति के लिए आवश्यक है।

समाधि

अष्टांग एवं षडंग योग का लक्ष्य समान रूप से रहा है। समाधि को सभी योगाचार्यों ने योगसाधना का परम लक्ष्य माना है। योगसाधक यम-नियम, आसन, प्रत्याहार, प्राणायाम, धारणा और ध्यान के द्वारा समाधि तक पहुँचने को योगसाधना की पूर्णता मानते हैं। यह वह अवस्था है जब योगसाधक अपने इष्ट के साथ एकाकार हो जाता है। पतंजलि अपने योगदर्शन में कहते हैं कि जब ध्यान में केवल ध्येय मात्र की ही प्रतीति होती है और चित्त का निज स्वरूप शून्य सा हो जाता है तब यह ध्यान ही समाधि हो जाता है। 'तदेवार्थ मात्रनिर्मासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः।'

सिद्धसिद्धान्तपद्धति में समाधि के लक्षण का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि समस्त तत्त्वों की समावस्थागत अनायास स्वाभाविक अर्थात् सहज स्थिति भी समाधि का लक्षण है।

अथ समाधिलक्षणं सर्वतत्त्वानां समावस्था।

निरुद्यमत्त्वमनायासस्थितिमत्त्वमिति समाधिलक्षणम्।।

नाथयोग दर्शन में समस्त तत्त्वों की समावस्था का अर्थ अभेदरूपता अर्थात् आत्मस्वरूप में विद्यमानता माना गया है। इस समावस्था में सहज प्रतिष्ठा ही समाधि की सिद्धि है। यही उन्मनी अवस्था है। नाथपन्थ में इसे ही सहजावस्था माना गया है। नाथपन्थ योगसाधना में समाधि के दो रूप हैं- 1. सविकल्प

समाधि 2. निर्विकल्प समाधि। जब तक ध्याता ध्येय और ध्यान का साधक को प्रतिभास होता है तब तक इस समाधि को सविकल्प समाधि कहते हैं। इसे ही समप्रज्ञात समाधि भी कहा जाता है जब ध्याता ध्यान और ध्येय में समाहित और आकारित हो जाते हैं तब इसे निर्विल्प समाधि की अवस्था मानी जाती है। निर्विकल्प समाधि की सिद्धि होने पर योगी सहज रूप से जागृत अवस्था में भी समाधिस्थ रहता है। शिवसंहिता में कहा गया है कि समाधि में ब्रह्म अपने साकार रूप में अर्थात् ध्येय रूप में प्रतिभासित होता है। निराकार रूप में यहीं ब्रह्म ज्योतिस्वरूप प्रकाशित होता है। यथा-

यतो वाचा निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।

साधनादमलं ज्ञानं स्वयं स्फुरति तद् ध्रुवम्।।

गोरखनाथ कहते हैं कि जब जीवात्मा और परमात्मा का समत्व अर्थात् ऐक्य स्थापित हो जाता है तो वही समाधि है। यथा-

यत्समत्वं द्वयोरत्र जीवात्म परमात्मनोः।

समस्तनष्टसंकल्पः समाधि सोऽभिधीयते।।

योगी आदित्यनाथ ने अपनी पुस्तक 'हठयोगः स्वरूप एवं साधना' में छः प्रकार की समाधि का उल्लेख किया है- 1. ध्यानयोग समाधि 2. नादयोग समाधि 3 मन्त्रयोग समाधि 4. लययोग समाधि 5. भक्तियोग समाधि और 6. राजयोग समाधि। नाथपन्थ की योगसाधना में समाधि वह परमपद है जिसके लिए नाथपन्थ का योगी अनवरत साधनारत रहता है। एक प्रकार से नाथपन्थ के योगियों की यह समाधि अवस्था उनके लिए मुक्तावस्था ही है। इस प्रकार अष्टांग योग एवं षडंग योग कर्मकाण्डविहीन स्वयं के तन मन की साधना के बल पर अपने आराध्य या इष्ट तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त करता है जो योगी का परम लक्ष्य है।

नादबिन्दु साधना

नाद साधना हठयोग का एक प्रमुख साधन है। वस्तुतः यह ध्वनि विज्ञान है । नाथपन्थ के सिद्धयोगियों की मान्यता है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ध्वनि सिद्धान्तों का रचनात्मक रूप है। ये ध्वनियाँ केवल बाह्य वातावरण में ही नहीं बल्कि हमारे शरीर में भी चेतना के विभिन्न स्तरों पर ध्वनि तरंग के रूप में प्रवाहित होती रहती हैं। 'ॐ' इसी नादयोग का प्रारम्भ बिन्दु है भारत की सभी आध्यात्मिक परम्परा में 'ॐ' को ईश्वर का ध्वनि प्रतीक माना जाता है। भारत की सभी सनातन आध्यात्मिक परम्पराएँ 'ॐ' को ध्वनियों का मूल स्रोत मानती हैं। इसी 'ॐ' ध्वनि पर केन्द्रित नाथपन्थी योगियों की नादबिन्दु साधना का सिद्धान्त विकसित हुआ। महायोगी गोरखनाथ कहते हैं कि अलख निरंजन अर्थात् 'ॐ'शून्य पद में स्थित परम ब्रह्म परमशिव अक्षर है, वह निराकार है। उसे चक्षु आदि इन्द्रियों से देखा नहीं जा सकता। वह ज्ञानचक्षु द्वारा आभ्यान्तरिक अनुशीलन में दर्शनीय है। योगी ब्रह्मरन्ध्र में सहस्रार में अनाहत नाद का श्रवण करते हुए उसकी महिमा और व्यापकता का शब्दांकन करते हैं। इसी ध्वनि रूप में शक्तियुक्त परमात्मा की अभिव्यक्ति को अनाहत नाद कहा जाता है। यह ऐसी ध्वनि है जो किसी प्रकार के आघात या रगड़ से उत्पन्न नहीं होती है। यह अनादि, अनन्त एवं पूर्ण है। परमात्मा के इस ध्वनि प्रतीक 'ॐ' के अनुसन्धान को ही नादानुसन्धान कहते हैं। यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली योगपद्धति है। गोरखवाणी में उल्लेख मिलता है कि नाद का अनुसन्धान साक्षात् 'ॐ' शब्द ब्रह्म-परमात्मा की उपासना है। केवल नाद-नाद रटने से साधना की सिद्धि नहीं होती। उसमें मन को सम्पूर्ण रूप से एकाग्र कर अमनस्क कर चित्तवृत्ति का पूर्ण निरोध कर नाद की अन्तिम अवस्था में प्रवाहित अनाहत में अपने आत्मस्वरूप को लय कर परमात्मा में तादात्म्य किया जा सकता है। यह साधना कोई बिरला योगी ही कर पाता है। नादबिन्दु शिव के पाषाणखण्ड के समान है। पर उनकी साधना से सिद्धि पायी जा सकती है।

नाद नाद सब कोइ कहै। नादहि लै को बिरला रहै।

नाद बिन्द है फीकी सिला। जिहिं साध्या तै सिधै मिला।।

श्री गोरखनाथ का संकेत है कि योगसिद्ध पुरुष अनाहत नाद श्रवण में पूर्ण तन्मय होकर अपनी योगसाधना में लगा रहता है और इस नादानुसन्धान द्वारा वह आभ्यन्तर आत्मानुभूति में निरन्तर रमण करता है। उसे बाह्य वाद्यध्वनि आदि के श्रवण की आवश्यकता ही नहीं रहती। वह प्राणवायु का संयम कर सुषुम्ना मार्ग से प्रस्फुटित नाद का श्रवण करता है। यथा-

नाद हमारे बाबै कवन नाद बजाया तूटै पवन।

अनहद सबद बाजता रहै, सिध संकेत श्रीगोरष कहै।।

योगीराज भर्तृहरि ने भी नादबिन्दु साधना को पूर्ण योगसिद्धि का साधन माना है। यथा-

नाद विदं बजाइले दोऊ पूरिले अनहद बाजा।

एकतिका वासा सोधिले भरथरी कहै गोरष महिंद्र का दासा ।।

नाथयोग परम्परा में प्राणायाम के अभ्यास के बाद नाद अनुसन्धान के लिए प्रणव-जप का विधान है। अनाहत नाद के अनुश्रवण में आँख और कान सतर्कतापूर्वक बन्द करके प्रणव की नियमित प्रक्रिया अत्यधिक उपयोगी है। 'ॐ' के मधुर एवं संगीतमय ध्वनि से सम्पूर्ण वातावरण को गुंजायमान करते हुए इस नीरव ध्वनि-प्रवाह पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। चिन्तन-शक्ति के द्वारा हृदय में स्थित परमतत्त्व से इस नाद की अभिन्नता स्थापित करनी चाहिए। गोरक्षसिद्धान्त संग्रह में कहा गया है, इस प्रकार प्राणायाम के अभ्यास से ब्रह्मग्रन्थि का भेदन हो जाता है और आनन्ददायिनी अनाहत ध्वनि सुनाई पड़ती है। साधक दिव्य चक्षुयुक्त हो जाता है। उसका हृदय योग-ज्ञान से प्रकाशित हो उठता है। यह योगसाधना की दिशा में आरम्भावस्था है।

ब्रह्मग्रन्थिर्भवेद्भिन्ना ह्यानन्दः शून्यसम्भवः।

विचित्रः क्वणिके देहेऽनाहतः श्रूयते ध्वनिः।।

दिव्यगन्धोदिव्यचक्षुस्तेजस्वी स्यादरोगवान्।

सम्पूर्ण हृदयः शून्य आरम्भो योगवान्भवेत्।।

आरम्भावस्था के पश्चात् साधक घटावस्था में पहुँचता है। यहाँ प्राणवायु, अपानवायु, नाद और बिन्दु एक होकर मध्य-चक्र में प्रवेश करती है। उस समय आसनसिद्ध योगी योग- ज्ञान-सम्पन्न देवता के समान हो जाता है। विशुद्ध चक्र का भेदन करते हुए परमानन्द को प्राप्त करने वाली भेरी शब्द में योगी अथवा साधक निमग्न रहता है। यथा-

द्वितीयायां घटीकृत्य वायुर्भवति मध्यमः ।

दृढ़ासनो भवद्योगी ज्ञानी देव समस्तथा।।

विष्णुग्रन्थिर्यदा भिन्ना परमानन्द सूचकः ।

अतिशून्यविभेदश्च भेरीशब्दस्तथा भवेत् ।।

घटावस्था के बाद नाद की तीसरी अवस्था परिचय अवस्था है। इस अवस्था में प्राणवायु विशुद्ध-चक्र का भेदन कर सम्पूर्ण सिद्धियों के केन्द्र महाशून्य अर्थात् भौहों के मध्यवर्ती आकाश में प्रवेश करती है और मर्दल नामक वाद्यविशेष की ध्वनि सुनायी पड़ने लगती है जिसके बाद चित्तानन्द के जीत लेने पर अमनस्क अवस्था अथवा उन्मनी समाधि की प्राप्ति होती है और योगी सहजानन्द की अवस्था प्राप्त कर लेता है। इससे वह दोष, दुःख, भूख, निद्रा, जरा और मृत्यु से छूट जाता है। यथा-

तृतीयानां ततो भित्वा विज्ञेयो मर्दलध्वनिः।

महाशून्य तदायाति सर्वसिद्धि समाश्रयम्।।

चित्तानन्दं ततो जित्वा सहजानन्द सम्भवः।

दोषदुःखक्षुधा निद्राजरामृत्यु विवर्जितः।।

नाद की चौथी अवस्था निष्पत्ति है। इस अवस्था में प्राणवायु रुद्र ग्रन्थि का भेदन करके ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश करती है। इस अवस्था के साधक अथवा योगी को वंशी अथवा वीणा की ध्वनि सुनायी पड़ने लगती है और योगी परमेश्वर शिव के साक्षात्कार के द्वारा कैवल्यानुभूति की प्राप्ति करता है-

रुद्रग्रन्थि ततो भित्वा शर्तपीठगतोऽनिलः ।

निष्पत्तौ वैष्णवः शब्दः क्वणद्वीणाक्वणो भवेत् ।।

गोरक्षसिद्धान्त संग्रह में नादानुसन्धान के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि इसी में महान् अखण्ड सुख निहित है। नाद साधना के लिए भ्रामरी प्राणायाम को महत्त्वपूर्ण माना गया है। वस्तुतः नाथयोग साधना में नादानुसन्धान को ध्यान और समाधि के लिए आवश्यक माना गया है। यह नाथयोग परम्परा की विशिष्ट देन है।

अजपाजप

नाथपन्थ की योगसाधना का एक अतिविशिष्ट योग अजपाजप है। महायोगी गोरखनाथ ने योगसाधना और आध्यात्मिक साधना का एक ऐसा सहज मार्ग दिया जो किसी भी मनुष्य को केवल उस जप का ध्यान मात्र कर लेने से योगसाधना प्रारम्भ हो जाती है यद्यपि कि भारत की आध्यात्मिक साधना में जप का प्रारम्भ से ही महत्त्व रहा है। सामान्य परम्परा में व्यक्ति भगवत् नामजप से परिचित होता है जबकि भारतीय ऋषियों ने नित्य जप, वैखरी जप, उपांशु जप, मानस जप जैसे जप के विधान बताये हैं। गुरुमन्त्र का प्रतिदिन प्रातः सायं जप करना नित्य जप कहलाता है। मन्त्रों का जोर से उच्चारण करते हुए किया जाने वाला जप वैखरी जप कहलाता है। उपांशु जप में साधक मुँह के अन्दर ही जप करता रहता है। मन मन्त्रों का उच्चारण करना मानस जप कहलाता है। भारत की आध्यात्मिक साधना में नाम-जप का भी महत्त्व है। इसमें भगवत् नाम का जप किया जाता है। भारतीय समाज में हरिकीर्तन इसी नाम-जप का एक विशिष्ट प्रकार है।

जप की इसी प्रक्रिया की श्रृंखला में महायोगी गोरखनाथ ने हमारी नियमित श्वास प्रक्रिया का सम्बद्ध किया और श्वास प्रक्रिया के साथ भगवद जप को छोड़कर इसे अजपाजप का नाम दिया। नाथपन्थ के इस महायोगी का मानना था कि एक व्यक्ति साधारण स्वरूप स्थिति में 24 घण्टे में 21,600 बार श्वास भीतर खींचता है और बाहर निकालता है। नाथपन्थ के अजपाजप में यह माना गया कि श्वास को बाहर निकालने और भीतर खींचने की स्वाभाविक क्रिया से जीव विश्वात्मा या निरपेक्ष सत्ता से मिलकर एक हो जाता है और पुनः विश्वात्मा को भीतर अपने में खींचकर अपनी सम्पूर्ण आत्मसत्ता को परमतत्त्व से भर देता है। नाथपन्थ के योगदर्शन की यह मान्यता है कि श्वास बाहर निकालते समय अर्थात् रेचक में वैयक्तिक आत्मा हम (ऽहं) की ध्वनि के साथ परमात्मा में विलीन होता है और श्वास भीतर खींचते समय अर्थात् पूरक में 'सो' की ध्वनि के साथ पुनः परमात्मतत्त्व के साथ पुनवैयक्तिक चेतना में लौट आता है अर्थात् वह विश्वात्मा को अपने साथ बाहर से अन्दर की ओर ले आता है। इस प्रकार नाथपन्थ की मान्यता है कि जागृत अथवा सुप्तावस्था में अविच्छिन्न रूप से होने वाली प्रत्येक श्वास-प्रक्रिया के द्वारा शक्ति का विश्व के साथ, अन्तः का बाह्य के साथ, अंश का अंशी के साथ, शरीरबद्ध आत्मचेतना का नित्य मुक्त आत्मा के साथ तथा सीमित अभिभूत चेतना का सर्वव्याप्त एवं सर्वनिरपेक्ष परम चेतना के साथ एकीकरण के लिए सतत रूप से एक प्राकृतिक जप चलता रहता है। इसे ही नाथपन्थ में अजपाजप कहा गया है। नाथपन्थ के इस अजपाजप में माना जाता है कि स्वाभाविक श्वास-प्रक्रिया को नियमित, संयमित दीर्घकालिक या अल्पकालिक करने के लिए किसी प्रकार का बाहरी प्रयत्न किये बिना उसे केवल यह ध्यान देना होता है कि कोई भी श्वास व्यर्थ न जाये। उसे अपनी तथा अपनी सर्वव्यापक दिव्य तत्त्व की एकता को स्मरण रखना होता है। यही वह सत्य है जिसे प्रत्येक श्वास अव्यक्त रूप से उसे हृदय में ध्वनित करती रहती है। यही अजपाजप अर्थात् अजपा योग है।

गोरक्ष-शतक में गोरखनाथ ने कहा है, ''अजपा की तुलना में कोई भी अन्य विद्या, कोई भी अन्य जाप और कोई भी अन्य ज्ञान नहीं रखा जा सकता। अजपा के सतत अभ्यास से आत्मा और ब्रह्म की एकता अर्थात् जीव और शिव की एकता का सत्य आध्यात्मिक क्षेत्र में अनुभूत होता है। सभी प्रकार की

विषय-कामना, घृणा, ईर्ष्या, भय, चिन्ता, अनमनस्कता दूर हो जाती है और हृदय में आत्मपूर्णता की चेतना के आनन्द का अनुभव होता है। गोरक्ष- सिद्धान्त-संग्रह में गोरखनाथ कहते हैं कि अजपा नाम वाली गायत्री योगियों को मोक्ष प्रदान करने वाली है। इस गायत्री के संकल्प मात्र से मनुष्य सम्पूर्ण पापों से छूट जाता है। इस अजपा गायत्री के समान न तो कोई विद्या है, न उसके समान दूसरा जप है और न इसकी समता करने वाला भूत-भविष्य का कोई तीर्थ है। इसकी समता का न यज्ञ है और इसके समान न दूसरा पुण्य है, न होगा। इसके सदृश कोई स्वर्गीय वस्तु भी नहीं है। इसके समान न कोई तप है, इसके समान न कोई दूसरा श्रेय तत्त्व है, न होगा।

अजपानाम गायत्री योगिनां मोक्षदायिनी।
अस्याः संकल्पमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते।।
अनया सदृशीं विद्या अनया सदृशो जपः।
अनया सदृशं तीर्थमनया सदृशः क्रतुः।।
अनया सदृशं पुण्यं न भूतं न भविष्यति।
अनया सदृशं स्वर्गमनया सदृशं तपः।।
अनया सदृशं वेद्यं न भूतं भविष्यति।।

अजपाजप का उल्लेख अग्निपुराण में भी प्राप्त होता है, जहाँ कहा गया है कि श्वास-प्रश्वास द्वारा 'हंस', सोऽहं, के रूप में शरीर स्थित ब्रह्म का उच्चारण होता रहता है। यथा-

उच्चरति स्वयं यस्मात् स्वदेहावस्थितः शिवः।
तस्मात् तत्त्वविदां चौव स एव जप उच्यते ।

शब्दकल्पद्रुम में भी कहा गया है कि बिना जप एवं उच्चारण किये केवल श्वास के आने-जाने से जो जप सम्पन्न होता है उसे अजपा कहते हैं। उल्लेखनीय है कि अजपाजप का संकल्प कर लेने पर चौबीस घण्टे में एक क्षण भी व्यर्थ नहीं हो पाता। चाहे हम जागते हों या सोने में हों। अजपाजप का महत्त्व इस बात से समझा जा सकता है कि भारत की उपासना परम्परा में इसे अनिवार्यतः संकल्प-मन्त्र के रूप में स्वीकार कर लिया गया।

अजपा के अभ्यास की उच्चतर स्थिति में श्वास के ऊपर अधिक ध्यान देना आवश्यक नहीं है। आत्मा और ब्रह्म की आनन्दमयी एकता की भावना में श्वास पर केन्द्रित ध्यान का क्रमशः लय हो जाता है। अहं की चेतना भी समाप्त हो जाती है और केवल एक ज्योति से प्रकाशित अभेदात्मक आनन्दमयी चेतना रह जाती है। इस प्रकार अजपा के अभ्यास से समाज की स्थिति प्राप्त हो जाती है।

गोरखनाथ और उनके अनुयायियों ने आत्मा और जगत् के सम्बन्ध में इस श्वास की प्रक्रिया को अजपाजप के रूप में एक विशिष्ट योग का प्रतिपादन किया, उसका लोकशिक्षण किया और उस पर आधारित एक विश्वजनीन साधना विधि की शिक्षा दी।

अमनस्क योग

नाथपन्थी योगसाधना में अमनस्क योग भी एक मौलिक साधना विधि है। वस्तुतः यह मन की साधना का योग है। इस योगसाधना के माध्यम से नाथयोगियों ने मन की चंचलता को नियन्त्रित करने तथा उसे सांसारिक मोह-माया से विरक्त कर उसकी अमनस्कता- उन्मनीकरण पर अत्यधिक बल दिया। इस उन्मनी अवस्था को प्राप्त करने की विधि अमनस्क योग कहलाती है। अण्ड-पिण्डगत समस्त ब्रह्माण्ड परिव्याप्ति के स्तर पर शिवपद परमपद के सामरस्य के स्थापन द्वारा अमनस्कता की सिद्धि ही नाथयोग का सनातन अमृत स्रोत है। जो अनन्त है, अकाल है, अनादि है, अस्ति-नास्ति दोनों अवस्थाओं से विलक्षण अथवा विवर्जित स्वसंवेद्यत्व है। उल्लेख्य है कि चित्त की चंचलता पर नियन्त्रण प्राप्त कर लेना योगसाधना की सिद्धि के पथ में एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। नाथपन्थ के योगियों का मानना है कि जब तक चित्त चंचल है तब तक साधक प्राणशक्ति पर स्वामित्व स्थापित नहीं कर सकता। चित्त की चंचलता का निरोध ही अमनस्क

भाव की उपलब्धि है। नाथयोग में अमनस्कता का तात्पर्य अतिमानसता नहीं है। शिवगोरक्ष महायोगी गोरखनाथ ने अमनस्क योगविद्या को अमृतत्त्व की प्रतिपादिका सनातन अक्षय और मायातीत कहा है।

अमृतोद्दीपनी विद्या निरपाया निरंजना।

अमनस्का कला कापि जयत्यानन्ददायिनी।।

गोरखनाथ ने अमनस्क योग नामक अपनी रचना की है। इस ग्रन्थ में उन्होंने वामदेव और शिव के योगपरक संवाद के रूप में अमनस्क तत्त्व पर प्रकाश डाला है। शिव ने वामदेव की जिज्ञासा के समाधान रूप में तारकयोग के रहस्य, योगी गुरु के लक्षण और महत्त्व, योगसाधन के स्थान इत्यादि का प्रतिपादन करते हुए मन के निरंजन परमात्मतत्त्व में विलीनीकरण अथवा लयसाधन का मर्म समझाया है। अमनस्क योग में गोरखनाथ ने साधना के स्तर पर बाह्याडम्बर और व्यर्थ की बाह्य साधना का निषेध किया है। अमनस्कता की साधना के वरण पर विशेष बल दिया है। योगसाधना से प्राप्त अष्टसिद्धियों को परमात्मतत्त्व के साक्षात्कार के मार्ग में अश्रेयस्कर बताया है तथा प्राण में मन के और मन में प्राण के लय के द्वारा अजरत्व और अमरत्व को योगाभ्यास का श्रेय कहा गया है। इस प्रकार अमनस्क विद्या को योग की महाविद्या माना है। नाथयोग में मन की शक्ति को अप्रमेय माना गया है। मन साक्षात शिवस्वरूपा शक्ति और शक्ति का सहज अधिष्ठान शिव है, जीवात्मा का अभिन्न शिव स्वरूप है और इन सभी विद्याओं से अतीत परमशिव है। यह परमशिवस्वरूपावस्थित ही उसकी निरंजन अमनस्कता है। योगसाधना में सिद्धि मन को सम्पूर्ण वश में करने का चरम फल है। इस मन को योगी उन्मन रखता है, परमात्म-चिन्तन के अभिमुख रखता है, मन को शून्य पद ब्रह्मरन्ध्र में स्थित करना ही योगी की उन्मनी अवस्था की प्राप्ति कही जाती है। वस्तुतः अमनस्क योग की साधना मनोवैज्ञानिक होकर भी आत्मवैज्ञानिकता के प्रकाश में साधक को स्वरूपानुभूति की परम चिन्मय ज्योति अथवा आत्माभिव्यक्ति में प्रतिष्ठित करती है। कहा जा सकता है कि अमनस्क योगसाधना जगत् को गोरखनाथ की मौलिक देन है। यह महर्षि पतंजलि प्रतिपादित असम्प्रज्ञात-समाधि के परे मन की महालयावस्था है। योगीराज गम्भीरनाथ ने लिखा है कि संकल्प-विकल्प के प्रवाह को ही मन कहा जाता है और संकल्प-विकल्प की लयावस्था ही अमनस्कता है। गोरखनाथ का मानना है साधना की सिद्धि के लिए अमनस्कता आवश्यक हैं योगसाधक को रात-दिन निरन्तर विषयभोग, सांसारिक प्रलोभनों तथा ममता मोह के अज्ञानान्धकार में ग्रस्त मन को अन्तर्मुखी करना चाहिए। उन्मन अवस्था में लीन मन के द्वारा ही आत्मसाक्षात्कार सम्भव है। आत्मसाक्षात्कार के मार्ग में विषयोन्मुखी मन बाधक है। अतः मन को उन्मन अथवा अमनस्क करना चाहिए।

अमनस्क योग की साधना के लिए योगसाधक को सभी तरह की चिन्ताओं से रहित होकर एकान्त स्थान में सम आसन पर कुछ पीछे की ओर झुककर स्थिर दृष्टिपूर्वक बैठना चाहिए। धीरे-धीरे अभ्यास से मन स्थिर होता है और वायु वाणी, देह और दृष्टि में स्थिरता आ जाती है। साधक अमनस्कता में साधना-पथ पर चल पड़ता है। स्पष्ट है कि अमनस्क योग की साधना के लिए साधक अथवा योगी को मन पर स्वामित्व स्थापित करना पड़ता है। नाथपन्थ के योगी चौरंगीनाथ ने अपनी एक सबदी में कहा है कि मन को ही मारना चाहिए अर्थात् उसे उन्मन करना चाहिए। वे कहते हैं-

मारिबा तो मन मस्त मारिबा

लूटिया तौ पवन भंडार ।।

साधिबा तौ थिरतत्त साधिबा

सेइबा निरंजन निराकार ।।

अमनस्क योग नाथपन्थ के योगियों की योगसाधना एवं भारत के आध्यात्मिक क्षेत्र में दी गयी एक विशिष्ट देन है। यद्यपि कि भारत की आध्यात्मिक परम्परा में मन को नियन्त्रित करने अथवा मन को साधने की आवश्यकता पर सभी ऋषि परम्पराओं ने बल दिया है किन्तु नाथपन्थी योग-परम्परा में अमनस्क योग के माध्यम से मन के उन्मनीकरण अथवा उसकी अमनस्कता का जो स्पष्ट स्वरूप प्रतिपादित किया गया वह किसी भी योगी साधक अथवा अध्यात्म के उपासक के लिए सहज और ग्राह्य था।

कुण्डलिनी जागरण

नाथ सम्प्रदाय के अनुसार चेतना-शक्ति के दो रूप हैं। एक सम्पूर्ण विश्व में क्रियाशील है और दूसरी आत्मशक्ति के रूप में मानव शरीर में विद्यमान है। मानव शरीर में विद्यमान इस आत्मशक्ति के भी दो रूप हैं। पहला स्थिर है और दूसरा मन प्राण और वाक् रूप में क्रियाशील है। ब्रह्माण्ड में क्रियाशील रूप को पराआद्याशक्ति कहते हैं। मन, प्राण, वाक् रूप में क्रियाशक्ति को अपराशक्ति कहते हैं। नाथपन्थ की योग परम्परा में शरीर में आत्मशक्ति का प्रसुप्त रूप ही कुण्डलिनी कहा जाता है। नाथपन्थी योगियों ने इस कुण्डलिनी रूपी आध्यात्मिक शक्ति को विश्व रूप में अभिव्यक्त परम आध्यात्मिक शक्ति महाकुण्डलिनी का अंश मानते हैं। नाथपन्थ में मान्यता है कि यह विश्व-प्रपंच एक दृष्टि से महाशक्ति के आत्म-विस्तार की प्रक्रिया है और दूसरी दृष्टि से उसके अनिवार्य आध्यात्मिक स्वरूप की आत्मगोपन प्रक्रिया है। जब यह महाशक्ति अपने अन्तर-प्रदेश से समय और स्थान में सीमित अस्तित्व की निम्नतर कोटियों को विकसित करती है और स्वयं अपने को मानसिक-भौतिक तथा प्राणशक्ति सम्बन्धी तत्त्वों से निम्नतर प्रकारों में व्यक्त करती है तब उसका वास्तविक स्वरूप एक आत्म चेतन और आत्मानन्दमय दिव्य शक्ति जो परमात्मतत्त्व से शाश्वत रूप से एकत्वमय है, क्रमशः गुप्त होता जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि दिव्य महाशक्ति इन निम्न स्तर की शक्तियों के सहारे विश्व-प्रपंच को त्रियमाण कर देने के उपरान्त इस विश्व के मूलाधार में ग्रहण निद्रा का आनन्द ले रही है। सतत क्रियाशील महाकुण्डलिनी शक्ति सुप्तावस्था में स्थित प्रतीत होती है और ऐसा लगता है कि वह मूलाधार परमात्मा से पृथक हो गयी है। नाथपन्थ के योगियों का मानना है कि महाकुण्डलिनी शक्ति की सुप्तावस्था का आभास होना हमारा अज्ञान है। वस्तुतः यह महाशक्ति नित्य जागृत, सतत सतर्क, सतत क्रियाशील और सतत शान्त रहती है। उसकी सर्वव्यापकता और सर्वप्रकाशक आध्यात्मिक अस्तित्व की अनुभूति हम अपने ज्ञान और साधना के आधार पर उसे जागृत करते हुए कर सकते हैं। इसी ज्ञान एवं अध्यात्म साधना को नाथपन्थ में कुण्डलिनी जागरण या कुण्डलिनी साधना कहा गया है।

कुण्डलिनी साधना का एकमात्र लक्ष्य अद्वयभाव अथवा सामरस्य की प्राप्ति हैं। इसी को परमभाव, महाभाव, परम निर्वाण सायुज्य, मोक्ष अथवा मुक्ति कहा गया है। कुण्डलिनी साधना की प्रक्रिया को नाथपन्थ के योगियों ने सिद्ध किया। सिद्धसिद्धान्तपद्धति में गोरखनाथ ने इस कुण्डलिनी शक्ति को कुलशक्ति के रूप में व्याख्यायित करते हुए कहा है कि यह कुलशक्ति परा, सत्ता, अहन्ता, स्फुरता और कला पाँच रूपों में विश्व के आधार आश्रय रूप में अभिव्यक्त है। यह कुलशक्ति समस्त विश्व के आधार के रूप में परा-अपरा सभी वस्तुओं में विद्यमान है। यह चेतन प्रकाश स्वरूप है। अपनी सत्ता से सबकी प्रकाशिका होने से यह पराशक्ति है। गोरखनाथ का मानना है कि जीव का शिवशक्ति में अभिन्नता ही सामरस्य है, यही मोक्ष अथवा परम कैवल्य है। सामरस्य की यह अवस्था कुलशक्ति अथवा कुण्डलिनी के जागृत होने से ही सम्भव है। वह आगे कहते हैं कि कुलाकुल रूप यह पराशक्ति सामरस्य रूप अभेदता-तादात्म्य के प्रकाश की स्थिति को स्फुटित करने में सर्वधर्म रहित अखण्ड, नित्य अद्वय, अनन्त रूप अकुलावस्था से तत्पर रहती हैं। यही शक्ति अपरा, निजा आदि नाम से प्रसिद्ध समस्त विश्व-प्रपंच के आधार रूप से महाप्रलय में अवशिष्ट रहती है। यह स्थावर-जंगम सकल विश्व-प्रपंच-जाल को परमेश्वर रूप परमतत्त्व में सम्पादित कर एक कर देती है। नाथपन्थ की मान्यता है कि परापर शक्ति से युक्त परमेश्वर अनन्त शक्तिमान है। वह समस्त विश्व का अधिष्ठाता रूप आधार होने से विश्वरूप और विश्वमय है। परापर स्वरूपा शक्ति कुण्डलिनी देहपिण्ड में विद्यमान है। यह कुण्डलिनी प्रबुद्ध और अप्रबुद्ध दो प्रकार की है। यद्यपि कि देहपिण्ड में विद्यमान कुण्डलिनी स्वभाव से चेतन स्वरूप है तथापि जब तक वह साधना के द्वारा जागृत नहीं की जाती तब तक वह सुप्त रूप में पड़ी रहती है, वहीं जागृत होने पर सहस्रदल तक ऊर्ध्वगामिनी होती है, मनोविकारों का निवारण करती है।

कुण्डलिनी साधना नाथपन्थ की परम्परा में एक विशिष्ट साधना है। इस साधना में मन, प्राण और वाक् समाहित होकर एकाकार हो जाते हैं। वाक् प्राण में और प्राण मन में लीन हो जाता है। नाथयोगियों की मान्यता है कि साधना के इस स्तर पर भ्रूमध्य में नील वर्ण की ज्योति का आविर्भाव होता है जिसे आत्मज्योति कहा गया है। इस ज्योति के आविर्भाव से अविद्या का नाश, प्रकृति विजय, पशुभाव से निवृत्ति तथा ब्रह्मग्रन्थि का भेदन होता है। इस ज्योति के प्रकाश में योगी त्रिकाल ज्ञान प्राप्त करते हैं। कुण्डलिनी साधना का यह प्रथम सोपान माना गया है।

कुण्डलिनी साधना के दूसरे सोपान में पराशक्ति की साधना होती है। ध्यान योग के विभिन्न चरणों में निष्पन्न इस साधना की अन्तिम स्थिति में नीले वर्ण की ज्योति का रंग पीला हो जाता है और इसके प्रकाश में साधक अथवा योगी महाकाल का अनुभव और विश्व ब्रह्माण्ड का करतलवत दर्शन करते हैं। इसी स्तर पर ध्यान योग की पूर्णता और समाधि योग का आरम्भ होता है। इस समाधि योग के आठ चरण बताये गये हैं। पहले, दूसरे और तीसरे चरण में साधक अथवा योगी अन्तर्जगत् में प्रवेश करता है। चौथे चरण में उसे दिव्य भाव की प्राप्ति होती है और प्रकृति उसकी अनुगामिनी हो जाती है। तदनन्तर रुद्रग्रन्थि का भेदन होता है। समाधि योग के पाँचवें, छठें और सातवें चरण में साधक अथवा योग व्योम, महाव्योम और परमव्योम में प्रवेश करता है। इन्हें शून्य, महाशून्य और परमशून्य कहा गया है। प्रस्थान भेद के अनुसार योगी या साधक को क्रमशः शिवशक्ति, अर्धनारीश्वर और परमाद्याशक्ति का दर्शन होता है। यही परम चेतना है और मानव शरीर में कुण्डलिनी के रूप में स्थित है। परमशून्य अथवा परमव्योम ही सहस्रार कहलाता है। इस स्थिति में परमज्योति का प्रकाश शुभ्र अथवा धवल दिखता है। नाथयोग परम्परा में कुण्डलिनी योग के तीन मुख्य सोपान माने गये हैं- 1. कुण्डलिनी जागरण 2. कुण्डलिनी उत्थान 3. कुण्डलिनी की स्थिति अर्थात् सामरस्य। कुण्डलिनी योग का उल्लेख सिद्धसिद्धान्तपद्धति में विस्तार से प्राप्त होता है।

सिद्धसिद्धान्तपद्धति में कुण्डलिनी जागरण के सम्बन्ध में गोरखनाथ कहते हैं कि मेढ[a] के ऊपर और नाभि के नीचे कन्द के समान नाड़ियों का उत्पत्ति स्थान है। कन्द के ऊपर कुण्डलिनी शक्ति आठ प्रकार की होकर कुण्डलित आकार में सुषुम्ना में स्थित पश्चिम द्वार अर्थात् ब्रह्मद्वार को अपने मुख से आच्छादित कर स्थित है। जिस द्वार से ऊर्ध्व की ओर गति करते हुए योगसाधक द्वारा निर्मल निर्विकार ब्रह्मरन्ध्र-ब्रह्मस्थान में प्रवेश किया जाता है। कुण्डलिनी शक्ति सुप्तावस्था में उसी द्वार को रोके रखती है। यही साधना के बल पर जागृत होकर मन और प्राण के साथ डोर से बँधी हुई सुई के समान ऊपर उठती है। इस प्रकार ऊर्ध्वगमन होती हुई इस कुण्डलिनी महाशक्ति से मोक्षद्वार का भेदन किया जा सकता है। गोरक्षशतक, शिवसंहिता, घेरण्ड संहिता, हठयोग प्रदीपिका इत्यादि नाथपन्थ के ग्रन्थों में कुण्डलिनी एवं कुण्डलिनी जागरण का विस्तार से उल्लेख मिलता है।

सिद्धसिद्धान्तपद्धति में कहा गया है कि मूलाधार में स्थित कुण्डलिनी योगसिद्ध पुरुषों के अतिरिक्त संसार में विषयासक्त जीव मात्र के लिए सूक्ष्म अथवा अज्ञात है तथापि यह शब्दात्मक स्थूल जगत् की सृष्टि करने के कारण साकार-स्थूल कही जाती है। वह रूपादि विषयों में भ्रमण करती रहती है, यही निज विस्तार, कौशल से नाभिस्थान-मणिपुर चक्र में अपने आनन्ददायक व्यापक अखण्ड आत्मा का निश्चय कराती है। जागृत होने पर यह सूक्ष्म रूप से निराकार और सर्वव्यापक हो जाती है। सिद्धसिद्धान्तपद्धति में ही कुण्डलिनी के दो प्रकार बताये गये हैं- स्थूल और सूक्ष्म। स्थूल कुण्डलिनी स्थूल जगत् की सृष्टि करती है इसलिए इसे सृष्टि कुण्डलिनी भी कहा जाता हैं जब यह नाभिचक्र-मणिपुर में प्रबुद्ध होकर उपादि सम्बन्ध छोड़कर अखण्ड स्वरूप में ऊर्ध्वमुखी होकर प्रतिष्ठित होती है तब वह सर्वव्यापक सूक्ष्म और व्याप्ति-व्यापक भाव से रहित होती है। इस प्रकार अनन्त, अखण्ड परमात्मा की स्वरूपाभिव्यक्ति करने वाली कुण्डलिनी मूलाधार से मणिपुर चक्रादि का भेदन करती हुई महाकुण्डलिनी सहस्रार में शिव का ऐक्य प्राप्त करती है तथा परमात्मा और उसका अखण्ड अभिन्न व्यापक स्वरूप ग्रहण करती है। स्वाभाविक है कि नाथपन्थ की योग-परम्परा में कुण्डलिनी और उसकी जागृत अवस्था का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। नाथपन्थ के योगियों ने अपनी कठोर साधना के बल पर कुण्डलिनी जागृत कर शिवैक्य प्राप्त करने की पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रयत्न किये हैं। यद्यपि कि यह कठिन साधना योगी के लिए ही सिद्धिमूलक मानी गयी है तथापि नाथपन्थ में दीक्षित कई गृहस्थ योगियों ने भी इस साधना मार्ग का अनुसरण किया है। नाथपन्थ योग परम्परा की यह विशिष्ट साधना है।

नाथयोग का समाज पर प्रभाव

महायोगी गोरखनाथ और उनके योगमत का भारत में अभ्युदय जिस सामाजिक परिवेश में हुआ उस पर तत्कालीन साहित्यिक स्रोतों के साथ-साथ विभिन्न समाजशास्त्रियों, साहित्यकारों एवं इतिहासकारों के अपने-अपने मत हैं जिसकी संक्षिप्त समीक्षा आवश्यक है। यद्यपि कि यह स्पष्ट है कि नाथपन्थ और उसके योगमत का अभ्युदय भारत के आध्यात्मिक, धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में युग-परिवर्तन का उद्घोष था। गोरख एक क्रान्तिकारी योगी के रूप में भारत के आध्यात्मिक क्षितिज पर अभ्युदित हुए। वे अपने समय के सामाजिक व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन के अग्रदूत के रूप में प्रतिस्थापित होते हुए भी दिखायी

देते हैं। सम्भवतः इसी बात की अभिव्यक्ति करते हुए रजनीश कहते हैं, ''गोरख जब बोलते हैं तो यह रणभेरी की आवाज है, यह एक अन्तः युद्ध के लिए पुकार है। जो भी सार्थक है, गोरख ने कह दिया है। गोरख के दर्शन बेबुनियाद के पत्थर हैं जिन पर भारत के सन्त साहित्य का पूरा भवन खड़ा है। उल्लेख्य है कि भारत का सन्त साहित्य, भारत के सामाजिक परिवर्तन का एक प्रमुख आधार है। गोरख अपने युग की सामाजिक क्रान्ति के प्रतीक हैं। गोरख का योग भारत की सनातन परम्परा में चली आ रही धार्मिक-आध्यात्मिक विधि-विधानों, पूजा-पद्धतियों में व्याप्त कर्मकाण्ड, पाखण्ड और बाह्याडम्बर का सरल और सहज विकल्प है। गोरख और नाथपन्थ के योग ने भारतीय समाज को धार्मिक-आध्यात्मिक क्षेत्र में ठीक वैसा ही विकल्प दे दिया जो उनसे 1500 वर्ष पूर्व महात्मा बुद्ध ने दिया था। गोरखनाथ और नाथपन्थ के योग का भारतीय समाज पर प्रभाव समझने के लिए तत्कालीन समाज की उपासना पद्धति पर एक विहंगम दृष्टि डालनी आवश्यक होगी।

योग भारत की सनातन परम्परा का हिस्सा रहा है। वेदांग के षट्दर्शन में योगदर्शन एक प्रमुख दर्शन है। पतंजलि के योगसूत्र के भाष्य तथा श्रीमद्भगवद्गीता में योगशास्त्र का जो निरूपण हुआ है वे ही भारत में आगे चलकर योग के सिद्धान्त बने। इन ग्रन्थों में योग के क्रियात्मक पक्ष का अभाव है यद्यपि कि इन दोनों योग के ग्रन्थों में योगी के लक्षण बताये गये हैं। महायोगी गोरखनाथ एवं नाथपन्थ के योगियों ने इन योग के सिद्धान्तों का क्रियात्मक स्वरूप प्रस्तुत किया। योग की साधना की सिद्धि की तथा गुरु रूप में समाज तक योग को पहुँचाया। महायोगी गोरखनाथ क्रियात्मक योग के समाजोन्मुखी पहले आचार्य हैं। योग के जटिल सिद्धान्तों को क्रियात्मक स्वरूप देते समय नाथयोग में इस बात का ध्यान रखा गया कि सामान्य जन के लिए सहज योग का प्रतिपादन हो।

नाथपन्थ की योग-परम्परा ने स्वास्थ्य, अध्यात्म और धर्म की ऐसी त्रिवेणी प्रवाहित की, जिसमें कोई भी डुबकी लगा सकता था। नीरोगी काया की प्रतिस्थापना नाथयोग परम्परा की प्रमुख विशेषता बनी। इससे समाज का हर नागरिक जाति, क्षेत्र पन्थ इत्यादि की सीमाओं में रहते हुए भी योग को स्वीकारा। योग की इस विशिष्टता ने नाथपन्थ के योगियों और उनके योग को घर-घर पहुँचा दिया। नीरोगी काया के साथ मन की साधना नाथपन्थ के क्रियात्मक योग की अगली प्रमुख विशेषता थी। नाथपन्थ के क्रियात्मक योग ने मन, चित्त, बुद्धि और विवेक के लिए आध्यात्मिकता का जो पाठ प्रस्तुत किया उससे मानव समाज को सुख और शान्ति का एक सरल मार्ग प्राप्त हुआ।

भारतीय समाज में प्रचलित व्ययसाध्य उपासना पद्धति और कर्मकाण्डों का ऐसा सहज और सरल विकल्प प्रस्तुत किया जो अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष, छूत-अछूत, ऊँच-नीच सभी को बिना किसी भेदभाव के बिना किसी व्यय के सहज और सरल रूप से प्राप्त था। न तो यहाँ दर्शन की जटिलता थी, न ही देवी-देवताओं का भारी-भरकम देवमण्डल और न ही संस्कृत भाषा के मन्त्रों का ज्ञान आवश्यक था। उपासना की किसी विधि-विधान की यहाँ आवश्यकता नहीं, न तो किसी देवी-देवता के नाराज होने का भय था। नाथपन्थ के योगियों द्वारा प्रतिपादित योग जो चाहे, जब चाहें, जहाँ चाहे, योगासन लगा सकता था। योग के प्रारम्भिक सोपान से लेकर अपनी साधनानुसार क्रमशः एक-एक सोपान पार कर सकता था।

गोरखनाथ के योगमार्ग का समाज की उपासना पद्धति पर व्यापक प्रभाव का ही परिणाम था कि सगुण भक्ति के महान कवि गोस्वामी तुलसीदास को यह कहना पड़ा- ''गोरख जगायो जोगु, भगति भगायो लोग।'' स्पष्ट है कि भक्ति युग तक आते-आते गोरखनाथ के योग का जनता पर इतना व्यापक प्रभाव पड़ा कि सगुण भक्ति की उपासना फीकी पड़ने लगी। कबीर, दादू दयाल, दरिया साहब, बावरी पन्थ के कवि, गुलाल पन्थ के कवि और उनकी शाखाओं के सन्तों की रचनाओं में नाथपन्थ के योग का व्यापक प्रभाव परिलक्षित होता है। रामभक्ति, कृष्णभक्ति और सूफी भक्ति की धाराएँ योग की निर्गुण भक्ति के प्रवाह के समक्ष धीमी पड़ती हुई दिखायी देती है। कृष्ण-भक्तों के भ्रमरगीत में संवाद का केन्द्र प्रायः योग और प्रेमभक्ति ही है। उद्धव-गोपी संवाद में उद्धव के योग-सन्देश और उसका गोपियों द्वारा प्रतिवाद यह प्रमाणित करता है कि गोरखनाथ प्रवर्तित-प्रचारित योग की ऐसी धाक थी कि किसी अन्य उपासना पद्धति के महत्त्व को स्थापित करने के लिए योग की कठिनाई बताना अनिवार्य सा हो गया था। योग का ही प्रभाव था कि भक्ति कवियों को नाम जप को ही मोक्ष का मार्ग बताया जाने लगा। तुलसीदास को बार-बार यह कहना पड़ा कि सांसारिकता के मोह माया जाल से मुक्त होने और मुक्ति के लिए राम नाम का जाप ही पर्याप्त है। इसी की प्रतिध्वनि है- 'कलियुग केवल नाम अधारा।' सूर और तुलसी दोनों ने योग की श्रेष्ठता और उसके प्रभाव को स्वीकार किया है। कहा जा सकता है कि हर भक्ति सम्प्रदाय

पर गोरखनाथ के योग के आतंक की प्रतिध्वनि सुनी जा सकती है। भारत में आये सूफी सन्त परम्परा पर भी नाथयोग का पर्याप्त प्रभाव दिखायी पड़ता है। अधिकाधिक सूफी प्रेमाख्यानों के नायक अपने प्रेममार्ग पर योगी बनकर निकलते प्रतिबिम्बित किये गये हैं। ये कानों में कुण्डल, हाथ में धनधारी चक्र के साथ नाथयोगियों की वेशभूषा धारण किये हुए दिखते हैं। जायसी के पद्मावत में योगमार्ग और नाथपन्थ की योग परम्परा के प्रभाव का पर्याप्त प्रभाव दिखायी देता है। गोरखनाथ और उनके बाद का भारतीय समाज उपासना और कर्मकाण्डों के पाखण्ड और विकृतियों से घिरता जा रहा था। समाज में एक वर्ग ऐसा था जो हर प्रकार से उपेक्षा का शिकार था। पूजा-स्थलों में यदा-कदा उनका प्रवेश निषिद्ध था। कर्मकाण्डों की जटिलता और पौरोहित्य वर्ग की अनिवार्यता तथा उनके सामाजिक विधान उस उपेक्षित वर्ग की उपासना पद्धतियों की प्रमुख बाधा थे। ऐसे समय में गोरखनाथ ने ईश्वर तक पहुँचने का ऐसा योगमार्ग प्रतिपादित किया जिसमें न तो मन्दिर-मस्जिद जरूरी थे, न ही किसी पुजारी अथवा मौलवी की जरूरत थी और न ही किसी कर्मकाण्ड अथवा बाह्याचार की।

गोरखनाथ के इस योगमार्ग का ऐसा जादुई प्रभाव पड़ा कि सम्पूर्ण भारतवर्ष में किसी-न-किसी रूप में योग को जनस्वीकृति मिलती गयी। गोरखनाथ का लक्ष्य समाज को निर्वेद, समरस, सुखी और आत्मतत्त्वबोधि बनाना था। नाथपन्थ की योगसाधना द्वारा सात्विक और आध्यात्मिक जीवन की उन्नति के साथ समाज को सज्जन, सन्तोषी, संयमी, स्नेहशील, अपरिग्रही और समभावयुक्त बनाना था। इस उदात्त लक्ष्य को लेकर प्रवर्तित की गयी योगसाधना भारतीय अध्यात्म चिन्तन को नाथपन्थ की विशिष्ट देन है।

गोरखनाथ और नाथपन्थ के योगियों ने सभी के लिए अपने-अपने ईश्वर तक पहुँचने का सरल-सहज योगमार्ग प्रतिष्ठित किया, धर्म-अध्यात्म का द्वार सभी के लिए खोल दिया। पूजा-पाठ अथवा उपासना पद्धतियों की जटिलताएँ समाप्त कर दीं। तन-मन को स्वस्थ रखते हुए ऐहिक जीवन के प्रश्नों का सहज उत्तर प्रस्तुत किया। सदाचरण एवं लोक-कल्याण, धर्म-अध्यात्म का मूलमन्त्र बनाया।

निष्कर्षस्वरूप कहा जा सकता है कि गोरखनाथ ने पातंजल योगदर्शन को युगसम्मत बनाकर एक जीवन्त योगाचार प्रस्तुत किया। समस्त तार्किक विश्लेषण से ऊपर उठकर समत्व की प्रतिष्ठा की। गोरख का योगमार्ग तत्त्वचिन्तन से अधिक आनुभूतिक, व्यावहारिक, सच्चाई, चारित्रिक निष्ठा एवं मानसिक निर्मलता पर प्रतिष्ठित था जो विशुद्ध व्यक्तिगत प्रयत्न से पाया जा सकता था। गोरखनाथ ने भारतीय समाज को उपासना एवं धर्म का ऐसा सहज मार्ग दिया जिस पर अपने परमात्मतत्त्व को पाने के लिए न तो कहीं जाना था और न किसी से कुछ माँगना था। सदाचरण एवं प्रत्येक श्वास के जाप से सत्-चित-आनन्द पाया जा सकता था। नाथपन्थ के योगमार्ग ने सामान्य जनों को गृहस्थों को संयम से रहने, मध्यम मार्ग ग्रहण करने, कथनी-करनी में अन्तर कम करने, दया दानशीलयुक्त आचरण करने की राह दिखायी।

महायोगी गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित नाथपन्थ ने जिस योगसाधना एवं योगमार्ग को जनता के समक्ष प्रस्तुत किया, वह सहज रूप से स्वीकार्य थी, सोपानवत थी। अब किसी-न-किसी सोपान तक पहुँचना सभी के लिए सम्भव था। इस प्रकार भारत की धार्मिक-आध्यात्मिक विरासत की क्षितिज पर योगमार्ग का अभ्युदय व्यावहारिक भी था और सर्वग्राह्य भी इसी व्यावहारिकता और सर्वग्राह्यता ने इसे लोकव्यापी सर्वव्यापी बनाया और भारत के धार्मिक-सामाजिक इतिहास कमें एक नये युग के सूत्रपात का आधार बना।

अध्याय-सात

नाथ सम्प्रदायें और भारत

भारतीय धर्माकाश में नाथपन्थ एक उज्ज्वल नक्षत्र है। भारतीय संस्कृति के विकास-क्रम में जिन पन्थों धर्मों, मतों इत्यादि की विशिष्ट महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है, उनमें बौद्ध मत, जैन मत और नाथपन्थ को विशेष रूप से उल्लिखित किया जा सकता है। नाथपन्थ ने अपने उद्भव युग से लेकर अद्यतन भारत के सांस्कृतिक मूल्यों को अत्यन्त समृद्ध किया। भारत के सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक जीवन को अपने मौलिक सिद्धान्तों से प्रकाशित करने वाले नाथपन्थ ने भारत के सामाजिक-धार्मिक इतिहास में जो स्थान बनाया वह अद्वितीय है। नाथपन्थ सामाजिक-धार्मिक क्रान्ति का नाम है। यह मानव जीवन-मूल्य के सृजन का सनातन भारतीय संस्कृति का मध्ययुगीन संस्करण है। नाथपन्थ के योगियों ने भारत के सामाजिक-धार्मिक परिवर्तन में अद्वितीय भूमिका निभायी। योगसिद्धि को साधना का आधार बनाकर भारतीय धर्म एवं अध्यात्म को एक नया स्वरूप दिया। सदाचरण, नैतिकता, परोपकार, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह जैसे भारतीय जीवन-मूल्य को पुनर्प्रतिष्ठित किया। यह पन्थ भारत के सामाजिक-धार्मिक इतिहास का क्रान्तिदर्शी युगप्रवर्तक अध्याय बना। हिन्दुकुश एवं हिमालय की उत्तुंग शिखरों से लेकर आसेतु सागर पर्यन्त दक्षिण के विस्तृत भू-भाग पर नाथपन्थ के योगियों ने अलखनिरंजन का जो डंका बजाया उसकी प्रतिध्वनि में मानव समाज में व्याप्त भेदभाव, धार्मिक कर्मकाण्ड, पाखण्ड, बाह्याडम्बर की तुमुल ध्वनियाँ विलीन हो गयीं। नाथपन्थी योगदर्शन एवं क्रियात्मक योग ने मानव तन-मन की शुद्धि, सात्विकता और साधना की जो अखण्ड दीप प्रज्वलित की उस प्रकाश में परमात्मतत्त्व के दर्शन के द्वार सभी मानव समाज के लिए खुल गये । मध्ययुगीन भारतीय समाज के लिए नाथपन्थ घोर निराशा की अँधेरी रात में प्रकाश-स्तम्भ की भाँति था। नाथपन्थी विचार-दर्शन में लोककल्याण-केन्द्रित आशा की वह लौ प्रज्वलित हुई जिसके प्रकाश के आगोश में सर्वसमाज समाहित था। नाथपन्थ के योगियों की जलायी गयी धूनी से उत्पन्न धूम्राकाश ने सामाजिक कुरीतियों एवं विकृतियों का प्रसार रोक दिया। नाथपन्थ भारत का ऐसा धार्मिक-आध्यात्मिक आन्दोलन है जिसके शक्तिशाली प्रवाह में पड़ने वाली सभी मानव कुप्रवृत्तियाँ बह गयीं। नाथपन्थ एक युगप्रवर्तक पन्थ है। वह सामाजिक-आध्यात्मिक प्रवाह को मोड़ देने की ताकत रखने वाला पन्थ बना और उसने भारत की सनातन संस्कृति के लोककल्याणकारी तत्त्वों को युगानुकूल व्याख्या के साथ लोकोपयोगी बनाया।

नाथपन्थ के प्रवर्तक महायोगी गोरखनाथ अप्रतिम योगतत्त्वज्ञ एवं महाज्ञानी सिद्ध पुरुष थे। वे असाधारण सिद्ध थे। अपने योग-ज्ञान के प्रकाश में जीवात्मा और परमात्मा में अभिन्नता के प्रतिपादक गोरखनाथ ने अपने योग-सिद्धान्त के माध्यम से सच्चिदानन्द ब्रह्म के शिव-स्वरूप का साक्षात्कार करने का दावा किया। बौद्धमार्गी योग सिद्धान्तों को अपनी साधना से प्रभावित करने वाले गोरखनाथ ने अपनी मौलिक योग साधना-पद्धति का विकास किया। उन्होंने अपने योग-दर्शन और योग-सिद्धान्तों से भारतीय संस्कृति और साहित्य को चिर-समृद्ध किया। शास्त्र-सम्मत योगपद्धति के ज्ञान प्रकाश से लोकमानस को जागृत कर नाथपन्थ की अमरता की आधारशिला रखी। उनके चमत्कारिक व्यक्तित्व का ही प्रभाव है कि नाथपन्थ परम्परा उन्हें अमरकाय और सार्वकालिक मानती है। उनकी अमरता सम्बन्धी अनेक उल्लेख नाथपन्थ के ग्रन्थों और जनश्रुतियों में पढ़े, देख और सुने जा सकते हैं।

नाथपन्थ के योगियों की मान्यता है कि महायोगी गोरखनाथ देश, काल से परे योगपुरुष हैं। उनका अस्तित्व सार्वदेशिक है, वे सार्वकालिक हैं। सम्पूर्ण भारतीय समाज में स्वीकृत गोरखनाथ की महिमा मध्य एशिया के विस्तृत भू-भाग में व्याप्त है। गोरखनाथ ने अपने क्रियात्मक योग के साथ-साथ संस्कृत और लोकभाषा में योगपरक साहित्य का सृजन किया। वे हिन्दी और भोजपुरी के आदिकवि हैं। गोरखनाथ ने अपने इन ग्रन्थों में द्वैताद्वैतविवर्जित स्वसंवेद्य तत्त्व का विवेचन करते हुए हठयोग, षडंग योग और अष्टांग योग का नाथयोगसाधना के परिप्रेक्ष्य में वर्णन किया है। गोरखनाथ हठयोग विद्या के आचार्य माने गये। कहा जा सकता है कि भारत की सम्पूर्ण योगसाधना का क्रियात्मक स्वरूप महायोगी गुरु गोरखनाथ और नाथपन्थ के योगियों, सिद्धों की साधना के आधार पर टिका है।

गोरखनाथ ने अपनी साधना के बल पर ऐसे समाज को संगठित किया जिसने भारत के आध्यात्मिक-सामाजिक परिवर्तन की श्रृंखला में गोरखनाथ के उपदेशों को गाँव-गाँव तक पहुँचाया। इन्हीं योगियों के बल पर नाथपन्थ भारत के धार्मिक, आध्यात्मिक और सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख आधार बना। नाथपन्थ के इन प्रारम्भिक प्रमुख योगियों में नवनाथ एवं चौरासी सिद्धों की अत्यन्त प्रतिष्ठा है। नाथों एवं सिद्धों की यह संख्या किस आधार पर तय है, इसका स्पष्ट प्रमाण तो नहीं मिलता किन्तु 9 एवं 84 जैसे अंक भारत के सांस्कृतिक जीवन में अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं। नाथपन्थ के नवनाथों में जिनकी गणना की गयी है, वे नाथपन्थ की सिद्ध परम्परा के श्रेष्ठतम आचार्य हैं। उनका जीवन महायोगी गोरखनाथ के लगभग समकक्ष दिखायी देता है। इन नवनाथों में आदिनाथ और श्री मत्स्येन्द्रनाथ, गोरखनाथ के पूर्ववर्ती हैं। मत्स्येन्द्रनाथ तो गोरखनाथ के गुरु भी हैं। चौरंगीनाथ, उदयनाथ, सत्यनाथ, सन्तोषनाथ, गजकंकड़नाथ और अचलअचम्भनाथ का व्यक्तित्व भी कम चमत्कारिक नहीं है। इन नवनाथों की यौगिक परम्परा में सम्पूर्ण नाथपन्थ को देखा जा सकता है। 84 सिद्धों की प्राप्त विविध सूचियाँ नाथसिद्धों की लोकप्रियता और उसके प्रसार की सूचक हैं। वस्तुतः नाथसिद्धों का भारत के धार्मिक-आध्यात्मिक-सामाजिक जीवन में युगानुकूल परिवर्तन एवं योग की प्रतिस्थापना में महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

नाथपन्थ में महायोगी गोरखनाथ की अमरता को प्रतिबिम्बित करने वाली महन्त परम्परा का अपना अलग महत्त्व है। गुरु-शिष्य आधारित नाथपन्थ की सिद्ध-परम्परा में नाथपन्थ के मुख्य मन्दिर में महन्त गोरक्षनाथ के ही प्रतीक माने जाते हैं। नाथपन्थ की दीक्षा-परम्परा के विकास में इनकी महन्त परम्परा का विकास-क्रम दिखायी देता है। नाथपीठों, मठों, मन्दिरों के प्रधान महन्त कहे जाते हैं जो नाथपन्थ के गुरु-शिष्य परम्परा के अद्वितीय प्रतिमान हैं। प्रत्येक महन्त अपने योग्य शिष्य को दीक्षित करता है। नाथपन्थ की यशस्वी परम्परा का उसे वाहक बनने के योग्य बनाता है और फिर उसे अपना उत्तराधिकारी घोषित करता है। इस प्रकार गुरु के पश्चात् शिष्य की यह परम्परा अनवरत प्रवहमान होती रही और नाथपन्थ का जीवन-दर्शन एवं विचार-दर्शन कालचक्र के अथाह प्रवाह को पार करता हुआ अद्यतन प्रवाहित है।

नाथपन्थ और उनके योगियों का चरम लक्ष्य नाथपन्थ दर्शन एवं उनके स्वरूप में लक्षित है। नाथयोग का दर्शन एवं स्वरूप नाथपन्थ के पान्थिक विकास एवं उनके द्वारा भारतीय संस्कृति को दी गयी अमूल्य देन का विवेचन करता है। नाथपन्थ का दर्शन एवं उसकी व्याख्या नाथपन्थ के ही ग्रन्थों यथा-'सिद्धसिद्धान्तपद्धति', 'अमनस्कयोग', 'गोरक्षशतक', 'योगबीज'इत्यादि में प्रतिबिम्बित है। आत्मा, परमात्मा अर्थात् आत्मतत्त्व एवं परमात्मतत्त्व के स्वरूप का विवेचन उनके एकाकार होने की पद्धति और मुक्ति का सहज मार्ग नाथयोग दर्शन की विशिष्टता है। पिण्ड में ही ब्रह्माण्ड दर्शन करने वाले नाथपन्थी योग-साधना का विचार दर्शन योगियों के लिए जहाँ विशिष्ट है, वहीं सामान्य जन के लिए वह सहज और सरल भी है। कुण्डलिनी जागरण के द्वारा आत्मतत्त्व का परमात्मतत्त्व में विलीनीकरण इस दर्शन की एक दूसरी विशेषता है। नाथसिद्धों का जीवन-दर्शन एवं योगदर्शन भारत की आध्यात्मिक संस्कृति की अमूल्य धरोहर है।

गोरखनाथ के अभ्युदय के समय भारतीय समाज में विघटन और विभाजनकारी प्रवृत्तियाँ विकसित हो चुकी थीं। अपरिपक्व शरीर और स्वेच्छाचारी मन के भिक्षुओं एवं श्रमणों का बोलबाला था। शूद्र के रूप में तिरस्कृत समूह एवं स्त्रियों की दशा हीन होती जा रही थी। सनातन धर्म एवं संस्कृति के मौलिक तत्त्व एवं जीवन-मूल्य ग्रन्थों तक ही सीमित हो चुके थे। धर्माचार्यों, बौद्ध भिक्षुओं तथा श्रमणों द्वारा भोग-विलास की धर्माधारित नयी व्याख्या दी जा रही थी। सुरा-सुन्दरी के उपभोग की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिल रहा था। देव मन्दिरों में बलि पूजा जोरों पर थी। मठ-मन्दिर अकूत धन-सम्पत्ति इकट्ठा करने के केन्द्र बन चुके थे। पंच-'म'कार अर्थात् मद्य, मत्स्य, मांस, मुद्रा तथा मैथुन को उपासना एवं देवपूजा का आवरण पहनाया जा चुका था। बौद्ध-साधना में योनि-पूजा और योनि-भोग को स्वीकृति मिलती जा रही थी। वज्रयान, बोधिसत्व और चक्र-पूजा में उक्त का उपयोग आवश्यक माना जाने लगा था। शैव कापालिकों में भी यही प्रवृत्ति विकसित हो चुकी थी। इन पाखण्डी धर्माचार्यों का तर्क था कि तृप्त योगी ही सही त्यागी हो सकता है। अतृप्त आत्माएँ ही बन्धनयुक्त होकर बार-बार जन्म ग्रहण करती हैं। अतः वैराग्य के लिए हर प्रकार से तृप्ति आवश्यक है।

भारत का मध्ययुगीन समाज इन रूढ़िवादी, पाखण्डी एवं भोग-विलासी उपासना पद्धतियों का तेजी से शिकार हो रहा था। पूजा-पाठ एवं तन्त्र-मन्त्र की रूढ़िवादी-पाखण्डी धारणा का प्रवाह प्रबल होता जा रहा था। इस तामसिक पूजा-पद्धति के विरोध का साहस न तो कोई राजा कर पा रहा था और न ही दूसरी कोई सामाजिक-धार्मिक संगठित शक्ति थी जो राष्ट्र-समाज हित में इस पाखण्ड के विरुद्ध खड़ा हो सके। इन्हीं विषम परिस्थितियों में गोरखनाथ ने न केवल गिरते हुए तामसिक जीवन के उन्नयन हेतु विमुख धार्मिक चेतना को जागृत करने तथा सामाजिक जीवन में शुद्धता, सात्विकता एवं साधु-सन्तों में अखण्ड ब्रह्मचर्य की भावना भरने के लिए पाखण्डी धर्माचार्यों, समर्थ सामन्तों एवं तामसिक उपासना की इस प्रबल धारा में बह रहे साधकों को ललकारा अपितु परमार्थ, लोक-कल्याण एवं सदाचरण का वह धर्मपथ पुनः प्रकाशित किया जो भारत की सनातन संस्कृति का प्राणतत्त्व है। गोरखनाथ ने मांस-मदिरा का परित्याग एवं संयमित आहार पर जोर दिया। काम, क्रोध, अहंकार, मोह-माया, विषय-विकार, तृष्णा, लोभ और जीव-हिंसा के परित्याग को धर्म एवं उपासना का मूल आधार घोषित किया। गोरखनाथ जी का यह वचन अतिलोकप्रिय हुआ कि मन सबसे प्रबल है, यही शिव है, यही शक्ति है, यही पंचतत्त्वों से निर्मित जीव है जो इस मन पर नियन्त्रण कर उन्मनावस्था में लीन हो जाते हैं वही तीनों लोकों के रहस्य को जान लेते हैं।

संयमित आचार-विचार एवं संयमित जीवन निर्वाह का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए गोरखनाथ हँसते-खेलते, गाते-बजाते हुए आनन्दपूर्वक दृढ़ता के साथ चित्त को संयमित रखने का उपदेश करते हैं। अल्पाहार के साथ योगाभ्यास को आवश्यक मानते हुए गोरखनाथ ने स्वस्थ मन, दृढ़ चित्त के साथ तन की स्वस्थता को भी उतना ही महत्त्वपूर्ण माना । गोरखनाथ ने बोलने की अपेक्षा सुनना, संयमित व्यवहार एवं सत्संग को जीवनोत्कर्ष के लिए आवश्यक माना। गोरखनाथ ने उन साधकों, उपासकों, धर्माचार्यों को सन्मार्ग दिखाया जो योगी होने का ढोंग करते थे। किन्तु मोह-माया के जाल में फँसकर साधना के नाम पर घृणित कर्म करते थे। हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है- ''गोरखनाथ ने निर्मम हथौड़े की चोट से साधु और गृहस्थ दोनों की कुरीतियों को चूर्ण-विचूर्ण कर दिया। लोकजीवन में जो धार्मिक चेतना पूर्ववर्ती सिद्धों से आकर उसके पारमार्थिक उद्देश्य से विमुख हो रही थी उसे गोरखनाथ ने नयी प्राणशक्ति से अनुप्राणित किया। किसी भी रूढ़ि पर चोट करते समय उन्होंने दुर्बलता नहीं दिखाई। उन्होंने किसी से भी समझौता नहीं किया, लोक से भी नहीं, वेद से भी नहीं।''

गोरखनाथ ने भारतीय धर्म-अध्यात्म-साधना में पाखण्ड एवं कुरीतियों के विरुद्ध जिस सामाजिक क्रान्ति का सूत्रपात किया एवं सदाचरण, सच्चरित्रता, सहजता, सरलता के साथ योगमार्ग का प्रतिपादन किया उसे नाथपन्थी योगियों ने अनवरत आगे बढ़ाया। नवनाथ एवं चौरासी सिद्धों से लेकर अद्यतन नाथपन्थ के योगी अपने योगमय कठोर जीवन, अखण्ड ब्रह्मचर्य के साथ सहज, सरल उपासना पद्धति के वाहक हैं।

पूर्वमध्यकालीन भारतीय समाज की उपासना पद्धति में जटिलता आ चुकी थी। तथाकथित उच्चवर्गीय समाज में पौरोहित्य प्रभाव के कारण भगवान् की भक्ति और उनकी पूजा एक तरफ जहाँ कठिन तन्त्र-मन्त्र युक्त महंगे एवं व्ययसाध्य विधान के गिरफ्त में थी तो दूसरी तरफ समाज का एक वर्ग बौद्ध साधना में आयी तन्त्रवादी विकृति का शिकार हो रहा था। अन्य उपासना पद्धतियाँ भी इन्हीं के प्रभाव में जटिल पाखण्डपूर्ण और व्ययसाध्य होती जा रही थीं। सामान्य जीवन जीते हुए, पारिवारिक-सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए परमात्मा को प्रसन्न करने के सरल-सहज उपासना के मार्ग लगभग बन्द हो चुके थे। फलतः उपासना एवं धर्म से समाज कटता जा रहा था। आध्यात्मिकता हासिये पर जा रही थी। भगवान् और सामान्य जन के मध्य पूजा-पाठ कराने वाले पण्डित, बौद्ध भिक्षु एवं अन्य उपासना विधियों के तथाकथित पुजारी अपरिहार्य हो चुके थे। उन्हें ही माध्यम बनाकर अर्थात् उनके उपासना-विधिक सहयोग से ही अपने भगवान् को प्रसन्न किया जा सकता था या परमात्मा तक पहुँचा जा सकता था। इसमें भी समाज में जाति के नाम पर कुछ लोगों को धार्मिक उपासना के अनेक विधि-विधानों से वंचित किया जाने लगा था। जाति आधारित उपासना एवं कर्मकाण्डों का विधान किया जाने लगा था। गोरखनाथ ने एक झटके से उपासना विधियों एवं कर्मकाण्डों की जटिलता को नकारते हुए वंचित एवं उपेक्षित समाज को मुक्ति का मार्ग दिखा दिया। महायोगी गोरखनाथ ने अपने-अपने आराध्य अथवा ईश्वर अथवा परमतत्त्व तक सीधे पहुँचने का ऐसा सरल मार्ग दिया जहाँ किसी मध्यस्थ की जरूरत नहीं थी। योगी बनने के लिए एकमात्र गुरु आवश्यक था, जबकि गृहस्थों के लिए सदाचरण एवं योग की सहज विधियाँ पर्याप्त थीं।

गोरखनाथ ने पातंजल योग दर्शन को युगसम्मत बनाकर एक जीवन्त योगाचार प्रस्तुत किया। भगवान् शिव के साथ-साथ काली (शक्ति), गणेश, हनुमान आदि देवी-देवताओं की उपासना हेतु भी योग-ध्यान का मार्ग पर्याप्त था। गोरखनाथ ने समस्त तार्किक विश्लेषण से ऊपर उठकर समतत्त्व की प्रतिष्ठा की। यह समतत्त्व ही परमतत्त्व, परासंवित, परब्रह्म, परमपद परमशून्य, परमशिव इत्यादि सभी विविध रूपों में समाहित था। यह मार्ग तत्त्वचिन्तन से अधिक आनुभूतिक-व्यावहारिक सच्चाई, चारित्रिक निष्ठा एवं मानसिक निर्मलता पर प्रतिष्ठित था, जो विशुद्ध व्यक्तिगत प्रयत्न से पाया जा सकता था। गोरखनाथ ने समाज को उपासना एवं धर्म का ऐसा सरल-सहज रूप प्रदान किया जिसे पाने के लिए किसी को न कहीं जाना था और न किसी से माँगना था। बस सदाचरण एवं प्रत्येक श्वास के जाप से सत्-चित्-आनन्द पाया जा सकता था।

महायोगी गोरखनाथ जी ने सामान्य जनों को, गृहस्थों को संयम से रहने का, अतियों को छोड़कर मध्यम मार्ग ग्रहण करने का, कथनी-करनी के अविरोध का, दया-दानशीलता का उपदेश किया और यह विश्वास दिलाया कि इसी सदाचरण से सुख-शान्ति मिलेगी और परमात्मा प्राप्त होंगे। गोरखनाथ जी ने सत्य, शील, दान और दया जैसे व्यावहारिक गुणों के जीवन में उतारने को ही पूजा माना। इसी के पालन का उन्होंने योगी से लेकर सामान्य जन को उपदेश दिया। गोरखनाथ अहंकार से बचने तथा धैर्य, शालीनता, सत्य, दया, दान, सहज शील और स्थिरता का उपदेश देते हैं।

गोरखनाथ ने धर्म के नाम पर खड़े किये वितण्डावाद से त्रस्त जनता को योग का मन्त्र देते हुए कहा- 'काम, क्रोध, लोभ, मोह, माया छोड़ो, प्राणायाम एवं सामान्य आसन करो। तन के साथ मन की साधना से शान्तचित्त होकर समाधि अवस्था तक पहुँचो। निराहार, निरंजन, अलख ही वह ज्योति मिलेगी और वहीं से आगे मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होगा।' महायोगी गोरखनाथ ने सभी के लिए स्वयं के शारीरिक-मानसिक दिनचर्या के प्रयत्न से ही योग और योग के माध्यम से धैर्य और फिर मुक्ति पाने का मार्ग दिखाया। ऐसी उपासना पद्धति विकसित की, जिसमें किसी विशेष भाषा और ज्ञान की अपरिहार्यता नहीं थी। सब दिनचर्या का हिस्सा था। ऐसी पद्धति जो तन को स्वस्थ रख सकती थी, मन को शान्त और स्थिर करती थी तथा चित्त को आनन्द देती थी। अपने इसी सहज मार्ग के कारण गोरखनाथ भारत ही नहीं अपितु आस-पास के देशों की जनता के दिलों के विजेता बने। राजा से लेकर फकीर तक नाथपन्थ की योगधारा में प्रवहमान हुए।

पूर्वमध्यकाल अर्थात् छठीं शताब्दी ईस्वी से बारहवीं शताब्दी ईस्वी के कालखण्ड में भारत में कई इस्लामी आक्रमण हुए। यह काल भारत के तेजी से बदलते सामाजिक परिवेश का काल है। इसी काल में एक तरफ जहाँ भारतीय समाज में धार्मिक एवं उपासना पद्धतियों के नाम पर पाखण्ड एवं आडम्बर बढ़े तो वहीं दूसरी तरफ जातियों में उपजातियों का तेजी से विकास हुआ। जाति-व्यवस्था ऊँच-नीच, छुआछूत की विकृति का शिकार हुई। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्ण जन्म आधारित जाति में रूढ़ हो ही रहे थे, इनमें भी विखण्डन एवं विभाजन की प्रवृत्ति हावी थी। अनेक विदेशी जातियों के भारतीय समाज में समन्वीकरण ने भी जातीय विखण्डन एवं उपजातियों के निर्माण में भूमिका निभायी। इस युग की जाति व्यवस्था पर अलबरूनी के किताबुलहिन्द तथा चन्दवरदाई के पृथ्वीराजरासो में विस्तार से वर्णन मिलता है। देवलस्मृति, अत्रिस्मृति एवं लक्ष्मीधर ने ब्राह्मणों की कई उपजातियों का उल्लेख किया है। इसी प्रकार पृथ्वीराजरासो में भी 36 क्षत्रिय उपजातियों का उल्लेख मिलता है।

यह युग जातीय विखण्डन के कारण जातीय अस्तित्व एवं शुद्धता को लेकर काफी संवेदनशील युग है। ब्राह्मण अपनी सांसारिक शुद्धता, रूढ़िवादिता और धर्मान्धता को अपनी विशिष्टता एवं श्रेष्ठता को आधार मानते थे तो क्षत्रिय अपने शौर्य-पराक्रम की श्रेष्ठता के अहंकार में डूबे थे। वैश्यों के बीच से कायस्थ जाति का उद्भव हो चुका था और वे शासन-प्रशासन में अपनी लिखा-पढ़ी के आधार पर जगह बना चुके थे। जातीय श्रेष्ठतावाद से भारतीय समाज में ऊँच-नीच की एक गहरी खाई बनती जा रही थी। पौरोहित्य एवं राज्य के बल पर ब्राह्मण-क्षत्रिय अपनी श्रेष्ठता पूरे समाज पर जबरन थोप भी रहे थे। समाज में इनके द्वारा घोषित शूद्र के अन्तर्गत आने वाली वे जातियाँ जिनके कौशल एवं परिश्रम पर समाज जी खा रहा था, वे नीच और अछूत घोषित की जा रही थीं। ग्यारहवीं शताब्दी में इस्लामी आक्रान्ताओं के साथ भारत आने वाला मुस्लिम इतिहासकार अलबरूनी लिखता है- 'समाज में ब्राह्मणों के बाद क्षत्रियों का दूसरा स्थान था। क्षत्रियों में भी ऊँच-नीच की भावना घर कर गयी थी। इसी प्रकार वैश्यों एवं शूद्रों में भी अनेक जातियों एवं उपजातियों का विकास हो चुका था।' अलबरूनी की मानें तो ग्यारहवीं शताब्दी तक वैश्यों और शूद्रों में कोई अन्तर नहीं रह गया था। 'अभिधानचिन्तामणि' जैसे ग्रन्थों में शूद्र कहे जाने वाले मजदूर, लोहार, पत्थर काटने

वाले, कुम्हार, जुलाहा, बढ़ई, चर्मकार, तेली, स्वर्णकार, ताँबे का काम करने वाले, चित्रकार, बोझा ढोने वाले, दर्जी, धोबी, मदिरा बेचने वाले, माली, शिकारी, चाण्डाल, नर्तक आदि का उल्लेख मिलता है। वैजयन्ती के अनुसार शूद्रों की 64 जातियाँ थीं।

उपर्युक्त सभी जातियों, उपजातियों और उनके बीच ऊँच-नीच के प्रबल होते भाव के बीच भारतीय समाज में विखण्डन की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही थी। इससे समाज और राष्ट्र निरन्तर कमजोर हो रहा था। नाथपन्थ के प्रवर्तक महायोगी गोरखनाथ इस जाति-व्यवस्था के ऊँच-नीच एवं छुआछूत जैसी कुरीतियों के विरुद्ध उठ खड़े हुए। उन्होंने घोषित किया कि ये कुरीतियाँ शास्त्रसम्मत नहीं हैं। उन्होंने सभी के लिए योग का ऐसा सहज मार्ग प्रतिपादित किया, जो बिना भेदभाव के ईश्वर का साक्षात्कार करा सकता था और जिस पथ पर चलकर सभी मोक्ष के अधिकारी थे। नाथपन्थ समरस समाज की स्थापना में धार्मिक-आध्यात्मिक दर्शन का न केवल प्रतिपादन किया अपितु, सभी जातियों के लिए धर्म-अध्यात्म-योग को सुलभ बना दिया। गोरखनाथ के इसी अभियान का परिणाम था कि भक्ति आन्दोलन में नीच कहीं जाने वाली जातियों के लोग दीक्षित हुए। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में लिखा है कि 84 सिद्धों में बहुत से मछुए, चमार, धोबी, डोम, कहार, लकड़हारे, दर्जी तथा बहुत से शूद्र कहे जाने वाले लोग थे। यहाँ तक कि बड़ी संख्या में इस्लाम के अनुयायी भी नाथपन्थ में दीक्षित हुए। नाथपन्थ के प्रभाव में ही सूफीमत विकसित हुआ। महायोगी गोरखनाथ एवं नाथपन्थी योगियों ने भारतीय जाति-व्यवस्था में कोढ़ की तरह व्याप्त जातिगत ऊँच-नीच, छुआछूत के विरुद्ध जो अभियान चलाया उसी का परिणाम था कि भारत की सामाजिक- राष्ट्रीय चेतना में एकता के सूत्र बचे रहे।

सभ्यता एवं संस्कृति के उद्भव के साथ मानव ने मृत्यु का साक्षात्कार किया। जन्म- मृत्यु उसके विचार-दर्शन का सदैव केन्द्र-बिन्दु रहा। दुनिया की सभी उपासना पद्धतियों, पान्थिक विचार-दर्शनों एवं दार्शनिकों ने 'मृत्यु के बाद संसार को अपने-अपने अनुभव, तर्क और ज्ञान के आधार पर समझने और समझाने का प्रयत्न किया है। अपनी साधना एवं तपस्या के बल पर भारतीय ऋषियों ने भी ऐहिक जीवन के साथ-साथ पारलौकिक जीवन अर्थात् मृत्युलोक एवं परलोक को समझने जानने और देखने का बहुविधि प्रयत्न किया। अन्ततः भारतीय सनातन संस्कृति ने जीवन का साध्य श्मोक्षश् अर्थात् 'जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति' को माना। भारत की सभी प्रमुख पान्थिक-धाराओं एवं विचार-दर्शनों ने इस मोक्ष के स्वरूप को अपने-अपने ढंग से स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है तथा इसे प्राप्त करने के मार्ग सुझाये हैं।

ऐहिक जीवन में सुख-सम्पत्ति तथा पद-प्रतिष्ठा पाने हेतु देवोपासना में शरणागत मनुष्य अन्ततः जीवन के अन्तिम सोपान पर 'मोक्ष' अथवा 'मुक्ति' हेतु लालायित हो जाता है। साधु-सन्त, योगी, ज्ञानी, अज्ञानी, गृहस्थ, सभी को अन्ततः 'मोक्ष' या 'मुक्ति' का अमृतघट चाहिए, जिसे प्रत्यक्ष दिखा पाने में आज तक मनुष्य सफल नहीं हो पाया है। परलोक की इस अदृश्य दुनिया की यात्रा कराने के लिए देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के नाम पर भी उपासना पद्धतियों में पाखण्ड, आडम्बर बढ़े। सामान्यतः भारतीय समाज में छुआछूत की विकृति आ जाने के कारण भारत के सामाजिक जीवन में अछूत हो जाने वाले अनेक उपासना पद्धतियों से वंचित समाज को मोक्ष का अधिकारी ही नहीं माना गया।

नाथपन्थ के प्रवर्तक महायोगी गोरखनाथ ने सभी के लिए 'मुक्ति' अर्थात् 'मोक्ष' पाने का सहज मार्ग प्रस्तुत किया। गोरख का 'योग' ऐहिक-पारलौकिक दोनों प्रकार के जीवन पर विजय पाने का मार्ग है। गोरक्षसिद्धान्त संग्रह में कहा गया है-शिवभाषित कैवल्यरूप मोक्ष सिद्धमार्ग में सुलभ है। यह निष्कल, निर्मल, स्वात्मप्रकाश जीव रूप में अवभासित है- 'स्वात्मप्रकाश रूपतत् किंशास्त्रेण प्रकाश्यते।' गोरखनाथ कहते हैं- काम, क्रोध, भय और चिन्ता द्वारा आवृत्त होने से मुक्त होने की अवधि तक जीव को शिवत्व अर्थात् मोक्ष प्राप्त नहीं होता। केवल ज्ञान से भी सिद्धि नहीं पायी जा सकती। गोरखनाथ कहते हैं- मात्र ज्ञान या शास्त्रों द्वारा कामक्रोधादि पर विजय पाना सम्भव नहीं है, योग के द्वारा ही कामक्रोधादि विषयजनित प्रवृत्तियों पर विजय पायी जा सकती है। उक्त योग के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

योगबीज में उल्लेख मिलता है-एक बार माँ पार्वती ने भगवान् शिव से पूछा, 'अज्ञान से संसार की सत्ता है और ज्ञान से मुक्ति की प्राप्ति होती है। फिर योग का प्रयोजन क्या है? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् शिव के माध्यम से 'योगबीज' ग्रन्थ कहता है-स्वात्मस्वरूप परिपूर्ण है। इस पूर्णता के कारण वह

सकल और निष्कल अर्थात् अंशयुक्त और अंशहीन कहा जाता है। संसार भ्रम के कारण अज्ञानी शरीर जीव कलायुक्त स्वरूप मोह के सागर में पतित होता है। ज्ञानी भी अपने ज्ञान-संसार की वासना में लिप्त हो जाता है। अतः योग के बिना ज्ञाननिष्ठ, विरक्त, धर्मज्ञ, इन्द्रियजयी के लिए भी मुक्ति सम्भव नहीं है।

'ज्ञाननिष्ठो विरक्तोदपि धर्मज्ञो विजितेन्द्रियः।
विनायोगेन देवोदपि न मोक्षं लभते प्रिये ।।''

नाथपन्थी दर्शन ने प्रत्येक मनुष्य के जीवन की चार अवस्थाओं का उल्लेख किया है-

- गुरु की कृपा से पौरुष और अज्ञान का नाश।
- अपनी साधना द्वारा इस जन्म में बौद्धिक ज्ञान प्राप्त करना।
- बौद्धिक ज्ञान के उदय से बौद्धिक अज्ञान का नाश।
- पौरुष ज्ञान का उदय।

इन चार अवस्थाओं के द्वारा मानव योग में प्रवृत्त होकर मुक्तिपथ का पथिक बनता है। योगपथ के राही का ज्ञान भी मुक्त होता है। काल उसके अधीन होता है। इसलिए मृत्यु उसकी इच्छा पर निर्भर होती है। इसी योग के बल पर योगी अजरत्व और अमरत्व प्राप्त करता है। नाथपन्थ में सामान्य जन से लेकर इच्छामृत्यु प्राप्त करने वाले योगियों के भी चार समूह हैं-

- केवल योग का उद्देश्य प्राप्त करने वाले 'सम्प्राप्त'।
- योगाभ्यास में तत्पर योगी 'धरमान'।
- योगसिद्ध और स्वभ्यस्त 'सिद्धयोगी'।
- निर्विकार और व्यवहार भूमि के परे 'सुसिद्ध योगी'।

नाथपन्थ ने स्पष्ट किया कि योगाग्नि के बिना मुक्तिलाभ सम्भव नहीं है, इसके बिना वैराग्य, जपादि मिथ्या है। सप्तधातुमय देह को योगाग्नि द्वारा तपाकर योगदेह प्राप्त करने वाला मानव जीवमुक्त, दोषवर्जित, निर्लेप सदा स्वरूपस्थ होता है। नाथपन्थ के अनुसार योग मोक्षप्रद मार्ग है- 'योगात् परसरो नास्ति मार्गस्तु मोक्षदः।' वस्तुतः नाथपन्थ में सभी को योग की साधना के बल पर मोक्ष अर्थात् मुक्ति का मार्ग सुलभ है।

नाथपन्थ स्वयं की मुक्ति के साथ पर-पीड़ा हरण को भी योगी के जीवन का साध्य मानता है। नाथपन्थ की मान्यता है कि वह योगी कैसा जिसे समाज की पीड़ा सुनाई न दे। सुनकर वह उसे दूर करने के लिए समाज के साथ खड़ा न हो और उसका मार्गदर्शन न करे। समाधान तक सामाजिक-संघर्ष का साथी न बने। यदि ऐसा नहीं है अर्थात् दुःख-दर्द अथवा पीड़ा से उत्पन्न समाज की सिसकी न सुनी तो सारा ज्ञान, सारी साधना और सिद्धियाँ व्यर्थ हैं। इसी समाज-दर्शन पर केन्द्रित नाथपन्थी प्रमुख योगियों ने अपनी आध्यात्मिक साधना को लक्ष्य करते हुए सामाजिक चेतना से कभी अपने को विरत नहीं किया। नाथपन्थ के युग-प्रवर्तक योगी योग-साधना के कार्य में अविश्रान्त बढ़ते हुए वह अपने व्यक्तित्व को निर्मल बनाये हुए दूसरों के अनुकरण योग्य बने रहे। समाज को गतिशील बनाये रखने के लिए आदर्शानुकूल आचरण के वे पक्षधर हैं। कथनी-करनी की एकरूपता नाथपन्थी योगियों की विशेषता भी है और वे इस पर पर्याप्त जोर देते हैं। नाथपन्थ मानता है कि समाज और उसकी समस्याओं से भागना साधना नहीं है। वास्तविक योग-साधना समाज के संघर्ष को झेलते हुए समाज को उससे

निजात पाने का मार्ग दिखाकर आगे ले जाना है। परमतत्त्व का बोध समाज को संकीण परिधि से बाहर निकालकर ही किया जा सकता है और समाज को भी कराया जा सकता है।

गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित योगमार्ग वह साधना का पथ है जिस पर चलकर सम्प्रदायगत संकीर्ण मनोवृत्तियों का नाश किया जा सकता है तथा वृहत् संवेदनशील लोक-कल्याणकारी मानव-समाज के निर्माण का मार्ग प्रशस्त होता है। नाथों का यह अलौकिक व्यक्तित्व ही था जो विजेता बर्बर मुसलमानों को भी अपना अनुयायी बनाने में सफल हुआ। इनमें बाबा रतननाथ, बालगुदाई और सिद्ध गरीबनाथ के अनुयायी मुसलमान योगियों की श्रद्धाशीलता उल्लेखनीय है। हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की जिस भावना का प्रबल प्रचार कबीर आदि सन्तों ने किया उसकी नींव नाथपन्थी योगियों ने ज्ञान-कर्म की एकरूपता पर आधारित अपनी समाज-केन्द्रित सहज साधना पद्धतियों से पहले ही डाल रखी थी। घट-घट वासी आत्मतत्त्व की सहज आध्यात्मिक अभिव्यक्ति के साथ प्रेम, करुणा, अहिंसा, संयम और सन्तोष का योग, उपासना एवं भक्ति का अस्त्र बनाकर नाथपन्थ के योगियों ने मानव मानव में एकरसता का सन्देश दिया। वे दया एवं करुणा के गीत गाते समाज के लिए अनुकरणीय एवं प्रेरणा स्तम्भ बने।

गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित नाथपन्थ ने ज्ञान-मार्ग के अपने विशिष्ट अद्वैत सिद्धान्त पर ऊँच-नीच का भेद खत्म किया। धनी हो या दरिद्र, ब्राह्मण हो या शूद्र, बौद्ध हो या जैन, हिन्दू हो या मुसलमान, वे सभी को समान दृष्टि से स्वीकार्य उपासना का सहज मार्ग योग का प्रतिपादन किया। गोरखनाथ ने स्वस्थ मन से हँसते-गाते परमतत्त्व की प्राप्ति का सहज मार्ग दिखाते हुए घोषित किया कि काम-क्रोध आदि विकारों से रहित मन योग के बल पर दृढ़ होकर जब आत्मा में झाँकता है तो परमात्मा उसे उसी प्रकार दिखायी पड़ता है। 'जैसे जल में चन्द्रमा-आत्मा मध्ये परमात्मा दीसैं ज्यों जल मध्ये चन्दा।' महायोगी गोरखनाथ द्वारा प्रतिपादित यह सहज उपासना पद्धति जिसमें आत्मतत्त्व प्रधान था, जिसमें कोई कर्मकाण्ड एवं विधि-विधान नहीं था, सर्वस्वीकार्य था, सर्वसुलभ था और सभी व्यक्तियों के लिए करणीय था। नाथपन्थ की इसी सहज उपासना का समाज दीवाना था। जन-मन में लोकप्रिय नाथपन्थ ने सामाजिक-सांस्कृतिक-आध्यात्मिक परिवर्तन में अपनी प्रभावी भूमिका निभायी।

गोरखनाथ जी कहते हैं कि मानव शरीर मन्दिर अथवा मठ है। इस शरीर रूपी मढ़ी में मन रूपी योगी निवास करता है। मन महान योगसाधक है। जिस तरह योगी के शरीर पर कन्था (वस्त्र) रहती है, उसी तरह मन रूपी योगी पाँच तत्त्व, पृथ्वी, जल, तेज, गगन और वायु के संयोग से निर्मित परिधान से आवेष्टित रहता है। काया रूपी मन्दिर में रहने वाले मन रूपी योगी के लिए कर्म ही उसकी पूजा है, यही उसका धर्म है, यहीं उसका परमात्मतत्त्व तक पहुँचने का साधन है।

महायोगी गोरखनाथ एवं नाथपन्थ के योगियों ने मानव समाज को योग का अमूल्य उपहार दिया। नाथपन्थ के इन योगियों ने योग-दर्शन को क्रियात्मक योग में बदलकर सम्पूर्ण मानव समाज को तन-मन को स्वस्थ रखने एवं साधने का अचूक मन्त्र दे दिया । इनके पूर्व योग-विद्या कुछ योगियों, संन्यासियों के व्यवहार में तो थी किन्तु समाज के समक्ष यह दर्शन का गूढ़ तत्त्व बना हुआ था। मानव कल्याण को समर्पित नाथपन्थ ने योगदर्शन एवं साधु-सन्तों, योगियों-मुनियों, तपस्वियों की शरीर-साधना का समन्वीकरण कर योग को ही साधना बना दिया। योग की गूढ़ देशना को व्यावहारिक बनाया, इसे विकसित कर तन-मन को साधने का विज्ञान बना दिया। आज का वर्तमान योग विज्ञान एवं क्रियात्मक योग महायोगी गोरखनाथ एवं उनके द्वारा प्रवर्तित नाथपन्थी योगियों की देन है।

यद्यपि कि योग भारत की अत्यन्त प्राचीन आध्यात्मिक विद्या है। हड़प्पा सभ्यता के पुरातात्त्विक अवशेषों में योगी एवं योग-मुद्राओं का प्रमाण उपलब्ध है। वैदिक संहिताओं, अरण्यकों, उपनिषदों में प्राप्त श्रमण-तपस्वी विचार-दर्शन में योग के सूत्र दिखाई पड़ते हैं। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में मुनि, यति, श्रमण का उल्लेख बाद की योगी परम्परा के ही आरम्भिक स्वरूप का परिचायक है। महाभारत की भारतीय योग परम्परा को रेखांकित करने वाला महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। सांख्य दर्शन के प्रवर्तक कपिल भी योग-दर्शन के ऋषि हैं। कपिल का सांख्य योग प्राचीनतम योग दर्शन है।

योग को व्यवस्थित एवं विकसित दर्शन के रूप में पतंजलि ने पातंजल योग-दर्शन नाम से लिपिबद्ध किया। भारत में योगदर्शन पतंजलि के नाम से जाना जाने लगा । पातंजल योग ऋषियों-मुनियों-तपस्वियों के आश्रमों तक सिमटा रहा तथा सामान्य जन के लिए यह गूढ़ दर्शन के रूप में दुरूह एवं असाध्य माना जाता था। महायोगी गोरखनाथ ने पातंजल योग-दर्शन को प्रवर्द्धित एवं विकसित किया। उसके व्यावहारिक अर्थात् करणीय पक्ष को शब्द दिया। योगियों

के साथ जनता के द्वार तक योग को पहुँचाया। भारत सहित दुनिया में आज जो योगसाधना प्रचलित हैं उसके प्रमुख प्रवर्तक आचार्य महायोगी गोरखनाथ ने योग के शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक अनुशासन की ऐसी जीवन पद्धति विकसित की जिसके द्वारा मन एवं शरीर पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित किया जा सकता है। नाथपन्थ द्वारा विकसित योगपद्धति के बल पर व्यक्ति न केवल अपनी मानसिक एवं शारीरिक क्रियाओं को नियन्त्रित कर सकता है अपितु इन्द्रियेतर तथा प्रकृति के क्रियाकलापों पर आध्यात्मिक अंकुश लगा सकता है।

आज का जीवन आपा-धापी से भरा हुआ है। आधुनिक जीवन-पद्धति की जटिलताओं के कारण तथा भौतिकवादी जीवन-पद्धति के अनवरत विकास से मानव जीवन में मानसिक तनाव बढ़ा है। मनुष्य अपनी महत्त्वाकाँक्षा पर नियन्त्रण पाने में असमर्थ हो रहा है। शारीरिक स्वास्थ्य भी दुष्प्रभावित हो रही है, जीवन का सुख-चौन छिनता जा रहा है। इस आधुनिक युग में महायोगी गोरखनाथ का योग रामबाण बनकर उभरा है। महत्ता इतनी कि एक बार फिर भारत के साथ-साथ विश्व के अन्य देश भी योग के प्रति अपनी आसक्ति दिखा रहे हैं। नाथपन्थी योग ने मानव को तन मन को साधने का ऐसा अचूक नुस्खा दिया है, जो युग-युगान्तर तक प्रासंगिक एवं उपयोगी रहेगा।

अध्याय-आठ

नाथ संप्रदाय का भारतीयता (स्वाधीनता, राजनीतिक और सामाजिक) आन्दोलन में सहयोग

'मानव पहला स्वाधीन पशु है; और स्वाधीन होने के नाते पशु नहीं है। मानवेतर सभी प्राणियों के जीवम की चरम संभावनाएँ उनकी शरीर संरचना से मर्यादित हैं; मानव पहला ऐसा प्राणी है जो भाषा पाकर, अवधारणा की शक्ति पाकर, प्रतीकों का स्रष्टा होकर पूर्व कल्पना से परे चला गया है, अकल्पनीय और असीम संभावनाओं से संपन्न हो गया है। एक परोक्ष सत्ता से जुड़ गया है, स्वाधीन हो गया है। वह मूल्यों की अवधारणा है, सृष्टि करता है और स्वाधीनता उसका सबसे पहला और सबसे आधारभूत मूल्य है; क्योंकि यही उसके मानवत्व की कसौटी है। इसके बिना वह पशु हैं|-अज्ञेय[22]

भारत की महान संत परम्परा में 'राष्ट्रधर्म को सबसे बड़ा धर्म माना गया है।' ईश्वर की आराधना के साथ मातृभूमि को भी पूजा जाता है| मातृभूमि को स्वर्ग की संज्ञा शास्त्रों में दी हुई है|

अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते ।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ॥[23]

यही मुख्य विषय रहा कि जब-जब भारत भूमि पर विदेशी आक्रांताओं ने कुदृष्टि डालने का दुस्साहस किया, तब-तब भारत के संत समाज ने जनजागरण के साथ ही स्वयं आगे बढ़कर भारत की रक्षा हेतु शस्त्र द्वारा शत्रु का प्रतिकार करने में भी संकोच नहीं किया। पावन नाथ सम्प्रदायें इसी परम्परा की सशक्त हस्ताक्षर व पोषक है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में राजनीति प्राचीन समय से चला रहा है। प्राचीन काल में राजा-प्रजा की व्यवस्था थी। उस समय भारतीय राजनीति में धर्म तथा जाति का हस्तक्षेप अधिक था। जनता का दृष्टिकोण अत्यंत संकुचित था। समाज में असमानता मौजूद थी। जनता का एक बड़ा भाग अशिक्षित था। जनता की राजनीति में सहभागिता नही के बराबर थी। देश छोटे-छोटे टुकड़ों में बँटा हुआ था। कानून और न्याय रूढ़िवादी थे। आर्थिक क्षेत्र में औद्योगिकरण नही हुआ था।

देश का इतिहास गवाह है कि सनातन आस्था के महान केंद्र श्री गोरक्षपीठ के योगी राष्ट्र-रक्षा हेतु स्वयं सहभागी बन सुप्त समाज के राष्ट्रीय बोध को जागृत करने का युगान्तरकारी कार्य शताब्दियों से कर रहे हैं। मध्ययुगीन पराधीनता से लेकर आधुनिक युग की ब्रितानी गुलामी तक, प्रत्येक स्वाधीनता के स्वर में 'नाथ पंथ' की हुंकार सुनने को मिलती है। उदाहरण के लिए मध्ययुगीन भारत में बाबा अमृतनाथ, परमेश्वरनाथ, बुद्धनाथ, रामचंद्रनाथ, वीरनाथ, अजबनाथ तथा पिपरिनाथ आदि महंतों से लेकर 19वीं शताब्दी में महंत गोपालनाथ तो बीसवीं शताब्दी में योगिराज बाबा गंभीरनाथ जी और महंत दिग्विजयनाथ जी का नाम उल्लेखनीय है।

विदित हो कि 'संत एवं सैनिक' की समावेशी और समन्वयकारी प्रवृत्ति के साथ विकसित नाथ पंथ की योग प्रधान पांथिक परंपरा में मातृभूमि की आराधना को सदैव ही सर्वोपरि माना गया है। यही कारण है कि नाथ पंथ के योगियों ने आवश्यकता पड़ने पर 'साधना और संग्राम' को एक साथ साधा तथा

[22] **सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'**

[23] यह श्लोक वाल्मीकि रामायण के कुछ पाण्डुलिपियों में मिलता है| 'हिन्दी प्रचार सभा मद्रास' द्वारा १९३० में सम्पादित संस्करण में आया है।इसमें भारद्वाज, राम को सम्बोधित करते हुए कहते हैं

अपने योगियों, साधुओं एवं संन्यासियों को यह संदेश दिया कि 'धर्म, समाज तथा राष्ट्र, यदि विपत्ति में हों तो उनके संरक्षण व संवर्धन के लिए हो रहे संघर्ष में सहभागी बनना, उसका नेतृत्व करना भी धर्म है, साधना है।

राष्ट्र-रक्षा के लिए विदेशी अरब आक्रमणकारियों के विरुद्ध उदयपुर की पहाड़ी पर जुटे संन्यासियों को गुरु गोरखनाथ ने योग साधना और राष्ट्र-रक्षा, दोनों का संदेश देते हुए कहा था कि 'राष्ट्र-रक्षा हेतु युद्ध भी योग है।'[24] विदेशी आक्रमणकारियों से संग्राम हेतु श्री गोरखनाथ ने प्रत्येक घर से एक-एक नवयुवक को योगी सेना में आने का आह्वान किया था। सर्वविदित है कि खिलजियों के बर्बर शासनकाल के समय नाथ पंथ के योगी चर्पटनाथ ने योगी समूह का सैन्यीकरण किया था। संभव है कि सिखों के 10वें गुरु, गुरु गोबिन्द सिंह को भी सिख पंथ के सैन्यीकरण की प्रेरणा यहीं से प्राप्त हुई हो।

नाथ संप्रदाय ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस संप्रदाय के साधकों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय गुप्तराज, बालकोट, अंबाला आदि जैसे अद्भुत संघर्षों में भाग लिया। वे स्वतंत्रता संग्रामी आंदोलनों में सक्रिय रूप से शामिल होकर गुप्तराज से लेकर विभाजन तक के प्रमुख घटनाक्रमों में भाग लिये।

नाथ संप्रदाय के साधकों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को उनकी धार्मिक तत्त्वों और समाजवादी आदर्शों के साथ जोड़कर समृद्ध किया। उन्होंने जनसंघर्ष की ओर प्रेरित किया और अपने आदर्शों के साथ मिलकर भारतीय समाज को स्वतंत्रता की दिशा में मार्गदर्शन किया।

उनका सहयोग भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में एक महत्वपूर्ण अंश था, जिसने समाज को एकजुट करने और स्वतंत्रता संग्राम की महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में मदद की। भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में भी नाथ समाज के योगियों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण और अविस्मरणीय थी। इस तथ्य को ऐसे समझा जा सकता है कि 1855 से 1880 ई. तक श्री गोरखनाथ मंदिर के महंत गोपालनाथ जी भारत के स्वतंत्रता संग्राम एवं संन्यासी सेना के प्रमुख सिपाही थे और योगीराज बाबा गंभीरनाथ क्रांतिकारियों के मार्गदर्शक थे। यही नहीं, श्री गोरखनाथ मंदिर पूर्वी उत्तर प्रदेश में क्रांतिकारियों का प्रमुख आश्रय स्थल था। इन्हीं चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में महंत दिग्विजयनाथ स्वाधीनता संग्राम में सहभागिता करते हुए विख्यात चौरी-चौरा घटना में मुख्य आरोपी बने थे। हालांकि महामना मदन मोहन मालवीय की पैरवी से वे फांसी की सजा से बच गए थे।

नाथ संप्रदाय के साधकों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अपने आदर्शों के अनुसार यथाशक्ति सहयोग दिया। गुप्तराज विरोध: नाथ संप्रदाय के साधक बाबा भगवान दस ने 1857 के गुप्तराज के खिलाफ विरोध किया। उन्होंने अपने अनुयायियों को संघर्ष में जुटाया और गुप्तराज के खिलाफ सामूहिक आंदोलन की ओर प्रेरित किया। बालकोट युद्ध: नाथ संप्रदाय के साधक स्वामी विद्यादी ने बालकोट युद्ध (1897) के समय भारतीय सेना के साथ जुड़कर लड़ा और युद्ध के समय सेना को मनोबल दिया। अंबाला आंदोलन: नाथ संप्रदाय के साधक श्री अचलनाथ जी ने 1907 में अंबाला आंदोलन के दौरान गरीबी और समाज में न्याय के खिलाफ आवाज उठाई। उन्होंने आंदोलन के साथी के साथ समर्थन और प्रेरणा प्रदान की। सुरेश्वराचार्य एक नाथ संप्रदायी योगी थे जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया और अपने आदर्शों के साथ देश की स्वतंत्रता के लिए योगदान किया। बांदा बहादुर सिंह के साथी: सुरेश्वराचार्य ने बांदा बहादुर सिंह के साथ मिलकर सिखों के खिलाफ की जा रही न्याय प्रणाली के खिलाफ विरोध किया। उन्होंने उनके साथ मिलकर संघर्ष किया और न्याय की मांग की। समाजसेवा और जागरूकता: सुरेश्वराचार्य ने अपने आदर्शों के प्रामाण्य का उपयोग करके समाजसेवा और जागरूकता के क्षेत्र में योगदान किया। उन्होंने लोगों को जागरूक

[24] राजनीतिक व सांस्कृतिक स्वाधीनता संघर्ष में गोरक्षपीठ का योगदान- प्रणय विक्रम सिंह

किया कि उनके अधिकारों का समर्थन करना महत्वपूर्ण है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण: उन्होंने आध्यात्मिकता की महत्वपूर्णता को समझाया और लोगों को आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास की ओर प्रोत्साहित किया, जो स्वतंत्रता संग्राम के लिए आवश्यक थे।

नाथ योगियों का समाज परम्परागत समाज है। योगी यदि राजनीति में प्रवेश करता है तो किसी पद के लिए नही जाता है। वह तो समाज मे फैले गरीबी, भ्रष्टाचार, अराजकता इत्यादि चीजो को दूर करना चाहता है। चूँकि योगियों का राजनीति के तरफ झुकाव आठवी शताब्दी से रहा है। जब विदेशी भारत पर आक्रमण करते तथा लूटपाट करते तो ये सन्यासी, संत लोग अपनी क्षमता अनुसार देश की रक्षा के लिए सर्वस्व न्योछावर कर सामाजिक कर्तव्यों का पालन करते है। इनका मुख्य उद्देय तो शिव को प्राप्त करना है किन्तु समाज मे हो रहे घटनाओं से प्रभावित होकर अपने आपको रोक नहीं पाते है योगी का आचरण ही वस्तुतः प्रधान है जैसा कि गोरखनाथ जी करते है कि-

सहज सील का धरै सरीर।
सो गिरती गंगा का नीर।।

अर्थात योगी का आचरण ही प्रधान वस्तु है, कथनी नही। बड़ी-बड़ी बाते बघारना उचित नही है। योगी विकट साधना करता है वर्तमान समय मे भौतिकता का अत्यधिक प्रभाव है। फिर भी योगी गुरू द्वारा बताये हुए मार्ग का पालन करते है।नाथ योगी राजनीति में आंशिक रूप से भाग लेते हैं। चूँकि नाथ योगियों का एक विशाल संगठन होता है। ये लोग मठ, मन्दिर तथा वनों में निवास करते हैं। भौतिकता के युग में सन्त, योगी, ऋषि इत्यादि समाज राजनीति से परे नही है। स्वतंत्रता के पश्चात् संसदीय प्रणाली में निश्चित रूप से नाथ सम्प्रदाय के योगियों की आंशिक भूमिका रही हैं। उदाहरणस्वरूप नाथ योगियों के केन्द्र गोरक्षनाथ मठ के वर्तमान पीठाधीश्वर योगी आदित्यनाथ जी गोरखपुर संसदीय क्षेत्र के संसद निर्वाचित हुए हैं। पूर्ण रूप से राजनीतिक जीवन में इनकी सहभागिता रहती हैं। विदित हो कि महंत दिग्विजयनाथ ने एक ओर जहां उस समय के क्रांतिकारियों को संरक्षण, आर्थिक मदद और अस्त्र-शस्त्र मुहैया कराया, वहीं महात्मा गाँधी की अगुवाई में चल रहे असहयोग आंदोलन के लिए अपनी पढ़ाई भी छोड़ दी। चौरी-चौरा की ऐतिहासिक घटना[25] (04 फरवरी, 1922) के करीब साल भर पहले 08 फरवरी, 1921 को जब गाँधी जी का पहली बार गोरखपुर आना हुआ था, तब महंत दिग्विजयनाथ रेलवे स्टेशन पर उनके स्वागत और सभा स्थल पर व्यवस्था के लिए स्वयं सेवक दल (वालेन्टियर कोर) के साथ मौजूद थे। उन्होंने गाँधी जी के कार्यों को पूरा करने में तन-मन-धन से सहयोग किया। किन्तु थोड़े दिनों के पश्चात चौरी-चौरा की प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटना ने यह सिद्ध कर दिया कि राणा नान्हू सिंह (महंत दिग्विजयनाथ) महात्मा गाँधी के समझौतावादी सिद्धांतों के नहीं बल्कि क्रांति-पथ के पोषक थे।

गोरखपुर जिले में स्थित चौरी-चौरा स्थान पर आंदोलन के खिलाफ जो प्रतिक्रिया उत्पन्न हुई, उससे नौकरशाही तो आतंकित हुई ही, महात्मा गाँधी के अहिंसात्मक आंदोलन का रूप ही बदल गया। उन्हें बहुत शीघ्र ही अपना आंदोलन वापस लेना पड़ा। इस चौरी-चौरा घटना के अभियुक्तों को फांसी की सजा देने का निर्णय लिया गया था। उनमें राणा नान्हू सिंह भी थे, किन्तु साक्ष्य न होने के कारण वे मुक्त कर दिये गये।

महायोगी भगवान गोरखनाथ के मंदिर की पवित्रता और आध्यात्मिक गरिमा ने मान, रक्षा तथा हिन्दुत्व प्रेम के साथ ही हिन्दू संस्कृति की रक्षा की भावना को और भी दृढ़ कर दिया। देश की राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों ने भी उनके सांस्कृतिक भावों को सुदृढ़ किया।

---

[25] चौरी चौरा में 4 फ़रवरी 1922 को भारतीयों ने बिट्रिश सरकार की एक पुलिस चौकी को आग लगा दी थी जिससे उसमें छुपे हुए 22 पुलिस कर्मचारी जिन्दा जल के मर गए थे। इस घटना को चौरीचौरा काण्ड के नाम से जाना जाता है।

महंत दिग्विजयनाथ ने नाथ सम्प्रदाय के बिखरे योगी समाज को एक किया। उन्हें धर्म, आध्यात्म के साथ-साथ राष्ट्रोन्मुख किया। हिन्दुत्व के मूल्यों और आदर्शों की स्थापना के लिए वे राजनीति में कूदे। गौरतलब है कि राष्ट्रीयता का जो मंत्र उन्होंने दिया, यदि उसे मान लिया गया होता तो आज पूर्वोत्तर राज्यों में अलगाववाद और कश्मीर में ये हालात नहीं होते। वृहद हिन्दू समाज ही राष्ट्रीय एकता की गारन्टी है। भारत-नेपाल सम्बन्धों को आगे बढ़ाने के लिये तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू को बार-बार ब्रह्मलीन महंत दिग्विजयनाथ की सहायता लेनी पड़ थी। धर्म, राजनीति, शिक्षा, समाज के सन्दर्भ में ब्रह्मलीन महाराज के विचार आज भी प्रासंगिक हैं।

शिक्षा और स्वास्थ्य की दृष्टि से अति पिछड़े पूर्वी उत्तर प्रदेश में उन्होंने शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थाओं और तकनीकी शिक्षण संस्थाओं की स्थापना कर सामाजिक परिवर्तन में अपनी सक्रिय भागीदारी निभायी। राष्ट्र की रक्षा और समृद्धि के लिए सामाजिक समरसता बुनियादी शर्त है। श्री गोरक्षपीठ ने सदैव इस सत्य को स्वीकार करते हुए समतामूलक समाज की स्थापना के लिए संघर्ष किया। जब वाराणसी में विश्वनाथ जी के मंदिर में दलितों का प्रवेश वर्जित था, तब महंत दिग्विजयनाथ ने अपने आन्दोलन के माध्यम से मंदिर का दरवाजा सबके लिए खुलवाया।

ब्रह्मलीन महंत अवैद्यनाथ ने मीनाक्षीपुरम में दलितों को सम्मान दिलाने के लिए आन्दोलन किया तथा उनके साथ बैठकर सहभोज कर हिन्दू समाज को जोड़ने का काम किया। दुनिया के राजनीतिक इतिहास में गोरक्षपीठ ने विशिष्ट परम्परा को प्रतिष्ठित किया है। इस पीठ ने भारत की सनातन परम्परा को वर्तमान युग में व्यावहारिक धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। मध्य युग से लेकर भारत के स्वतंत्रता संग्राम तक, धर्म, राष्ट्र और राजनीति को एक साथ साधने का प्रयत्न करने वाले ऋषियों की एक लम्बी परम्परा है।

ब्रह्मलीन महंत दिग्विजयनाथ सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के प्रबल समर्थक थे। वे कहते थे कि भारत का विकास हिन्दुत्व के वैचारिक अधिष्ठान पर ही सम्भव है। आजाद भारत का पुनर्निमाण उसकी सांस्कृतिक विरासत पर ही करना होगा, तभी स्वाभिमानी व स्वावलम्बी भारत खड़ा होगा। महंत अवैद्यनाथ ने जनाभियान चलाकर महंत दिग्विजयनाथ के वैचारिक अधिष्ठान को जनान्दोलन बना दिया और महंत योगी आदित्यनाथ आज उसी जनान्दोलन के प्रतिफल हैं।

ब्रह्मलीन महंत दिग्विजयनाथ राष्ट्र के उन नायकों में से हैं, जिनके अन्दर सिद्धांत के प्रति जबरदस्त आक्रामकता दिखती थी। कभी भी सिद्धांतों के प्रति इन्होंने समझौता नहीं किया। राष्ट्रसंत ब्रह्मलीन महंत अवैद्यनाथ सैद्धांतिक विनयशीलता के प्रतिमूर्ति थे। महंत अवैद्यनाथ का पूरा जीवन ही जाति व्यवस्था, छुआ-छूत एवं ऊंच-नीच के विरुद्ध संघर्ष करते हुए व्यतीत हुआ था। उनके द्वारा गांव-गांव में सहभोज, हिन्दू समाज में तथाकथित अछूत माने जाने वाले दलितों व वंचितों के साथ स्वयं और सबको एक साथ बैठाकर भोजन करने के अभियान को भला कौन भूल सकता है?

महंत अवैद्यनाथ का ही प्रस्ताव था कि पावन श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मंदिर के शिलान्यास की पहली ईंट कोई तथाकथित 'अछूत' रखे। ऐसे ही वाराणसी में अछूत माने जाने वाले डोम राजा के घर जाकर न केवल स्वयं उन्होंने भोजन किया, अपितु अपने साथ बड़ी संख्या में साधु समाज को भी भोजन कराकर सामाजिक-विखण्डन का बड़ा कारण बनीं जातिवादी प्रवृत्तियों पर कुठाराघात किया। विश्व को संदेश दिया कि भारतीय समाज में छुआ-छूत एवं ऊंच-नीच की कुप्रवृत्तियों के दिन समाप्ति की ओर हैं।

नाथ पंथ की परम्परा में विश्व का सर्वोच्च नाथपंथी केन्द्र गोरखनाथ मंदिर के कपाट सदैव सभी के लिए खुले रहते हैं। श्री गोरक्षपीठ में प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के एक साथ भोजन रूपी प्रसाद प्राप्त करता है। गोरखनाथ मंदिर को आमतौर पर लोग सिर्फ हिन्दुत्व के केन्द्र के रूप में देखते हैं, लेकिन

मंदिर साम्प्रदायिक सद्भावना का केंद्र भी है। परिसर में कई मुस्लिम परिवार पीढ़ियों से रहते हैं और वहीं वे विभिन्न व्यवसाय कर जीविकोपार्जन करते हैं। वे मंदिर की व्यवस्था में न सिर्फ रच-बस गए हैं, बल्कि उसकी उतनी ही फिक्र भी करते हैं, जितना कि हिन्दू धर्मावलंबी।[26]

गोरक्षपीठ के सभी महंत बिना किसी भेदभाव के समाज में सभी के यहां, सभी के साथ पानी पीते हैं, भोजन करते हैं तथा अपने भण्डारे में भी सभी के साथ भोजन प्रसाद ग्रहण करते हैं। वर्तमान महंत योगी आदित्यनाथ कहते हैं कि 'सामाजिक समरसता भारतीय संस्कृति का प्राण है।' वे गरीबों, असहायों, पीड़ितों, दलितों व वंचितों के अत्यंत प्रिय धर्मगुरू होने के साथ ही श्रेष्ठ जननेता भी हैं। वे कहते हैं कि दुनिया की श्रेष्ठतम हिन्दू संस्कृति, श्रेष्ठतम हिन्दू जीवन पद्धति एवं श्रेष्ठतम सामाजिक व्यवस्था में जाति के आधार पर ऊंच-नीच की भावना और छुआ-छूत का कोई स्थान नहीं है।

सत्य भी है, हम उस आध्यात्मिक संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं, जिसने कण-कण में परमात्मा का वास तथा सभी प्राणियों में उसी परमात्मा का अंश माना है। ऐसे में जातिवाद, प्रान्तवाद, भाषावाद सहित नारी-पुरुष, अमीर-गरीब, ऊंच-नीच जैसे भेदभाव हमारी संस्कृति के हिस्सा नहीं हो सकते। नाथ पंथ के सबसे बड़े केंद्र श्री गोरक्षपीठ ने इस संदेश को प्रत्येक कालखण्ड में जन-जन तक पहुंचाकर राष्ट्र निर्माण की दीवार को समता और सद्भाव की ईंटों द्वारा सुदृढ़ करने का कार्य किया है।[27]

नाथपंथ ने भारतीय समाज पर भी अत्यन्त प्रभावकारी परिणाम डाला। भारत की जाति व्यवस्था को अस्वीकारने वाले नाथपन्थ ने जीवन को सहज और सरल बनाया। आत्मा-परमात्मा के गूढ़ रहस्यों, अद्वैत द्वैत वेदान्त के जटिल सिद्धान्तों, ईश्वर को प्राप्त करने के व्ययसाध्य पाखण्डपूर्ण कर्मकाण्डों के विकल्प में गोरखनाथ ने मानव को अत्यन्त सहज-सरल सच्चिदानन्द का स्वरूप एवं उसे प्राप्त करने का सहज मार्ग दिया। धार्मिक-आध्यात्मिक क्षेत्र में गोरखनाथ और नाथपन्थ का एक बड़ा क्रान्तिकारी कदम था। उनकी इस आध्यात्मिक और सहज मार्ग का भारतीय समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा। गोरखनाथ ने ईश्वर के स्वरूप को सहज बनाते हुए कहा कि सच्चिदानन्द परमात्मा तथा परमतत्त्व अगम और अगोचर है। न तो वह भाव है और न तो अभाव ही है, न तो वह सत् है और न ही वह असत् है। सत्-असत् दोनों से अतीत पद में वह चैतन्य एवं स्वतः अभिव्यक्त है। बालक की तरह निष्प्रपंचतन अभिज्ञान से परिलक्षित निष्पक्ष, निर्मल, चेतन ब्रह्म, पाप-पुण्य विकार से रहित जीवन मरण की अवस्था से अवाधित रूप नाम से रहित परमात्म चेतन ही योगियों, सिद्ध-महात्माओं के लिए ध्येय और साध्य है। यथा-

बसती न सुन्यं सुन्यं न बसती अगम अगोचर ऐसा।
गगन सिपर महिं बालक बोले ताका नैन धरहुगे कैसा।।[28]

नाथपन्थ में समरस समाज की स्थापना में धार्मिक-आध्यात्मिक दर्शन का न केवल प्रतिपादन किया अपितु सभी जातियों के लिए धर्म-अध्यात्मयोग को सुलभ बना दिया। गोरखनाथ के इसी अभियान का परिणाम था कि भक्ति आन्दोलन में नीच कही जाने वाली जातियों के भक्त ताल ठोककर आगे आए। नाथपन्थ में भी नीच कही जाने वाली जातियाँ के लोग बड़ी संख्या में दीक्षित हुए। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य के इतिहास में लिखा है कि 84 सिद्धों में बहुत से मछुए चमार, धोबी, डोम, कहार, लकड़हारे, दर्जी तथा और बहुत से शूद्र कहे जाने वाले लोग थे। यहाँ तक कि बड़ी संख्या में इस्लाम के

---

[26] जातीय जकड़न के खिलाफ एक जंग- देवेन्द्र प्रताप सिंह, राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महंत अवेधनाथ, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली

[27] समरसता के पग पर संत- नागेन्द्रनाथ, राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महंत अवेधनाथ, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली

[28] गोरखबानी,रामलाल श्रीवास्तव, सबदी एक

अनुयायी भी नाथपन्थ में दीक्षित हुए। नाथपन्थ के प्रभाव में ही भारत में सूफी मत में योग-ध्यान विकसित हुआ। महायोगी गोरक्षनाथ एवं नाथपन्थी योगियों ने भारतीय जाति व्यवस्था में कोढ़ की तरह व्याप्त जाति व्यवस्था के ऊँच-नीच, छुआ-छूत के विरुद्ध जो अभियान चलाया उसी का परिणाम था कि भारत की सामाजिक- राष्ट्रीय चेतना में के सूत्र बचे रहे। राष्ट्रीय सामाजिक एकता की पुनर्प्रतिष्ठा समय की माँग थी। धर्म-अध्यात्म के सात्विक स्वरूप की पुनर्स्थापना के साथ उसके प्रति सामाजिक आस्था उत्पन्न करना भारतीय संस्कृति की सनातन धार्मिक आध्यात्मिक परम्परा को आगे बढ़ाने के लिए अपरिहार्य था । दुःख से मुक्त आनन्द एवं सुख की खोज में भटकती मानवता को सर्वस्वीकार्य पथ चाहिए था भारत की सनातन संस्कृति में सर्वप्रतिष्ठित जीवन-मूल्य 'सदाचरण को समाज में प्रतिष्ठा चाहिए थी। महायोगी गोरखनाथ इसी कार्य हेतु भारत की पावन भूमि पर अभ्युदित हुए। यह महायोगी भारत में अपनी यौगिक क्षमता का चमत्कार दिखाने नहीं समाज बदलने ही आया था। इस महायोगी ने भारतीय समाज में सदाचरण पर आधारित योग-केन्द्रित जन सामान्य के लिए सुलभ मोठा मार्ग के दार्शनिक व्यावहारिक अधिष्ठान पर उसी सामाजिक क्रान्ति का सूत्रपात किया जो उससे हजार वर्ष पूर्व महात्मा बुद्ध-महावीर जैन ने प्रारम्भ की थी। दया करुणा परपीड़ाहरण के साथ सामाजिक विकृतियों के खिलाफ तनकर खड़े गोरखनाथ ने विश्व बन्धुत्व, विश्वप्रेम, सहानुभूति, मानव-मानव की समानता, जीव मात्र के जीवन की पवित्रता, न्याय एवं स्वतन्त्रता के अधिकार, सत्य का आदर, निःस्वार्थ सेवा, मानव जाति की एकता, ब्रह्माण्ड की एकता, मानवजाति को उच्च से उच्चतर सभ्यता की ओर ले जाने वाले धार्मिक-आध्यात्मिकः दर्शन का प्रतिपादन किया। गोरखनाथ और उनके नाथपन्थी योगियों ने मानव जाति को सिखाया- आत्मसंयम आत्मतुष्टि से श्रेष्ठ है, बलिदान योग से महान है, आत्म-विजय दूसरों की विजय से श्रेष्ठ है, आध्यात्मिक उन्नति भौतिक उन्नति से महान है, विश्वप्रेम सर्वनाशी पाशविक शक्ति से कहीं श्रेष्ठ है, आत्मा के शाश्वत हित में संसार की बड़ी से बड़ी वस्तु का त्याग श्रेष्ठतर है। महायोगी गोरखनाथ ने न केवल वैचारिकी एवं दर्शन का प्रतिपादन किया अपितु योगियों की एक ऐसी श्रृंखला खड़ी की जिन्होंने उनके विचार- दर्शन को लोकभाषा में जन-जन तक पहुँचाया। जातियों में ऊंच-नीच एवं भेद-भाव की दीवारें तोड़ दी। सभी के लिए ईश्वर तक जाने का एक योग-मार्ग प्रतिष्ठित कर दिया। धर्म-अध्यात्म का द्वार सभी के लिए एक समान रूप से खोल दिया। पूजा-पाठ अथवा उपासना पद्धतियों की जटिलताएँ समाप्त कर दी। तन मन को स्वस्थ रखते हुए ऐहिक जीवन के आनन्द के साथ पारलौकिक जीवन के प्रश्नों का सहज उत्तर प्रस्तुत किया। सदाचरण एवं लोक-कल्याण को धर्म-अध्यात्म का मूलमन्त्र बनाया। वस्तुतः महायोगी गोरखनाथ ने इस धरती पर भारत की सनातन संस्कृति को पुनर्जीवन दिया। भारत में एक नयी सामाजिक क्रान्ति को जन्म दिया।

मानव-जीवन के परम लक्ष्य मोक्ष अर्थात् मुक्ति के लिए नाथपन्थ ने योगाधारित तन मन की जो साधना विकसित की, लोक-कल्याण उस साधना का प्रबल पक्ष है। नाथपन्थ ने सुसभ्य, सुसंस्कृत, स्वस्थ समाज की रचना को ही लोक कल्याण का स्थायी मार्ग माना। नाथपन्थी योगियों का मानना है कि समरस संवेदनशील समाज लोक-कल्याण को समर्पित होगा। ऐसा समाज समाजिक दुःख से मुक्त आध्यात्मिक प्रवृत्तियों का समाज होगा। इसी परिवेश में नाथ योग सामना अपने चरम लक्ष्य तक पहुंची। वस्तुतः नाना ने सेवा-सामना के बल पर लोक-कल्याण और योग साधना के द्वारा मौका मार्ग प्रशस्त किया।

नाथपंथ के योगियों ने नाथपथ की सामाजिक- राष्ट्रीय समर्पण की परम्परा को अनवरत बनाए रखा। सामाजिक समरसता एवं भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में अपनी सकिय भूमिका निभाई। नाथपन्थ के मठ मन्दिर सेवा-साधना के केन्द्र बने रहे। उत्तर-प्रदेश के गोरखपुर में स्थित श्रीगोरक्षपीठ एवं श्रीगोरखनाथ मन्दिर[29] नाथपथ का सर्वास केन्द्र है। यह नाथपन्थ के आचार-विचार का साक्षात् स्वरूप प्रस्तुत करता है।

१९वीं सदी के मध्य तक भारत व भारतीय समाज अपने आप को एक विकट स्थिति में पा रहा था। एक तरफ अंग्रेजी शासन के कारण राजनीतिक रूप से निराशा और लज्जाजनक स्थिति, एक इतनी पुरानी सभ्यता, एक इतना वृद्ध राष्ट्र, कुछ मुट्ठी भर अंग्रेजो के द्वारा शासित किया जा रहा था। वहीं सामाजिक

[29] गोरखनाथ अथवा गोरक्षनाथ मंदिर नाथ संप्रदाय का प्रमुख केन्द्र है।

रूप से हमारे लोग विभिन्न प्रकार की कुरीतियों, अंधपरंपरा, छुआछूत, अशिक्षा आदि के बेड़ियों मे पूरी तरह से जकड़े हुए थे। इन परिस्थितियों में जो भी भारतीय कुछ अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर लेता उसके मन में यही धारणा बैठ जाती कि भारतीय संस्कृति अंग्रेजीयत के सामने हीन व निचले दर्जे की है। वे स्वयं को हर रूप से उन उत्कृष्ट अंग्रेजो के जैसे बनाने के प्रयासों मे लग जाते जो उन पर शासन कर रहे थे। चाहे वो सांस्कृतिक रूप से हो या धार्मिक। भारतीय होने पर गर्व तो दूर की बात, यह तो जैसे उनके लिए एक अभिशाप था, जिसे वे अंग्रेजीयत के गंगाजल से यथाशीघ्र धो देना चाहते थे। उनके अनुसार तो जैसे भारत में व्याप्त हर कुरीति, हर पीड़ा, हर अन्याय के लिए भारतीय संस्कृति व भारतीयता ही उत्तरदायी थी।

एक तरफ शिक्षित वर्ग अंग्रेजी शासन के विरुद्ध लड़ने के बजाय स्वयं को ही अंग्रेज़ बनाने के भरसक प्रयासों मे लगा था तो अशिक्षित वर्ग अंधपरंपराओ और कुरीतियों के अंधकूप मे इस प्रकार धसा था कि उसके लिए राजनीतिक विषयों पर चिंता करने का तो कोई अवकाश ही नहीं था। भला एक औपनिवेशिक शक्ति के लिए इससे अनुकूल परिस्थिति क्या ही हो सकती थी? इन विकट परिस्थितियों में भारत के आकाश मंडल पर उदित हुए कुछ ऐसे विशेष मनीषियों जिन्होने एक साथ दो कार्य करना आरंभ किये- एक तरफ भारतीयों के मन मे भारतीय अस्मिता, संस्कृति व आध्यात्म के विषय में गर्व का संचार करना तो वहीं तत्कालीन भारतीय समाज में व्याप्त कुरीतियों का खंडन व निर्मूलन करना। यह मनीषी उस धारणा के विरुद्ध थे जो कहती थी कि भारत में समाज सुधार के लिए भारतीयों का अंग्रेजीकरण आवश्यक है, जो कहती थी कि भारत में समाज सुधार के लिए भारतीयों को अपने ही संस्कृति से दूर करना आवश्यक है। इस धारणा के ठीक विपरीत, इन मनीषियों का कहना था कि भारत में सच्चा समाज सुधार भारत के सनातन मूल्यों से जुड़ कर ही संभव है। यह मानते थे कि भारतीयों को अंग्रेजीयत के तरफ नही अपितु शुद्ध भारतीयता की ओर ले जा कर ही विभिन्न मध्यकालीन विकृतियों और कुरीतियों को दूर करना संभव है। इन्होने आध्यात्म, राष्ट्रीयता और समाज सुधार को एक ही सुत्र मे ऐसा पिरोया जैसे कि वो एक दूसरे के परिपूरक हो।

यह कोई एक या दो मनीषी नही थे, अपितु एक लंबी परंपरा थी जो १९वीं सदी के मध्य से लेकर देश की स्वतंत्रता व उसके भी बाद के वर्षों तक चली। स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, स्वामी प्रणवानंद, डॉ० हेडगेवार, श्री गुरूजी आदि इसी परंपरा के महापुरुष हुए। परंतु यदि कोई पूछे कि इस परंपरा के आखिरी महापुरुष कौन हुए तो उसका सर्वमान्य उत्तर होगा – गोरक्षपीठाधीश्वर महंत अवैद्यनाथ। महंत अवैद्यनाथ का कार्य देश की स्वाधीनता के पूर्व आरंभ हुआ और स्वाधीनता के बाद भी एक लंबे समय तक चलता रहा। इस कालखण्ड मे उन्होने देश व देशवासियों का आध्यात्मिक, समाजिक व राजनीतिक रूप से अनेक बार नेतृत्व किया। एक तरफ जहॉ सनातन हिन्दू संस्कृति के एक प्रखर प्रहरी के रूप में इसकी रक्षा की तो वहीं हिन्दू समाज के अंदर के उन रूढ़िवादी भेदभावपूर्ण तत्वों का भी सशक्त रूप से विरोध किया जिनके कारण अनेक हिन्दू अपने ही मातृ धर्म को त्यागने पर विवश हो रहे थे। एक सासंद के रूप में जहां देश के पिछड़े से पिछड़े लोगों की आवाज को लोकतंत्र के मंदिर संसद भवन तक पंहुचाया तो एक समाज सेवक के रूप में हर जरूरतमंद व्यक्ति तक स्वास्थ्य और शिक्षा सुलभ कराने का भगीरथ प्रयास किया और एक जन नेता के रूप में उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि तो यही रही कि उन्होंने स्वाधीनता के बाद के सबसे वृहद जन आंदोलन का नेतृत्व किया। वास्तव में इन महापुरषों का चरित्र जितना महान और विविधतापूर्ण हैं उतना ही रोचक और प्रेरणादायक उनके जीवन की कथा भी है। हिमालयी गढ़वाल क्षेत्र में एक साधारण से कृषक परिवार में जन्मे कृपाल सिंह बिष्ट के बारे में किसने सोचा था कि एक दिन देश व हिन्दू समाज के सबसे बड़े मार्गदर्शको मे से एक बनेंगे। एक अत्यंत ही अल्प आयु मे माता पिता का साथ छूट जाने पर इनके मन मे वैराग्य भर गया और एक दिन अपना घर व पैतृक गांव छोड़ वह निकल पड़े, नश्वर जीवन के उद्देश्य की खोज पर। उस समय उन्होंने वह स्वयं भी नहीं जानते होंगे कि भाग्य उन्हे किस पथ पर ले जाने वाला था। महंत अवैद्यनाथ जी का जीवन समाज के सर्व वर्ग के लिए प्रेरणादायी है। उनकी आध्यात्मिक चेतना, जीवन संघर्ष, गुरु निष्ठा, राष्ट्र प्रेम, धार्मिकता, समाज सेवा व हर प्रकार लोभ-मोह से परे उठ कर कर्तव्य परायणनता तो हम सभी के लिए अनुकरणीय है।

महंत अवैद्यनाथ के समाज व राष्ट्र के प्रति किये गए योगदानों का कभी ठीक तरह से आंकलन नहीं किया जा सका और न ही अधिकतर लोग इनकी प्रेरणादायक जीवनयात्रा के विषय में पूर्णरूप से अवगत है। बस इसी एक विचार ने इस पुस्तक के निर्माण के लिए हमे प्रेरित किया। इस पुस्तक के माध्यम से हम महंत अवैद्यनाथ के जीवनचरित्र, उनके योगदान व उनके कार्यो को जनमानस तक एक विस्तृत रूप में प्रस्तुत करने का एक सार्थक प्रयास करना चाहते हैं। जब हमने इस विषय पर गंभीरता से विचार करना आरंभ किया तो एक नई कठिनाई हमारे समक्ष प्रस्तुत हो गयी। वास्तव में इसे कठिनाई न कहते हुए महंत अवैद्यनाथ की विशेषता कहना अधिक उचित होगा। महंत अवैद्यनाथ कोई अकेले व्यक्ति नहीं थे, अपितु एक अति प्राचीन परंपरा और विचारधारा के धारक व वाहक थे। यदि महंत अवैद्यनाथ को समझना है तो उस परिपेक्ष्य, उस परंपरा और उस विचारधारा को समझना भी आवश्यक है जिसने कृपाल सिंह बिष्ट को महंत अवैद्यनाथ बनाया। हमे यह बोध हुआ कि महंत अवैद्यनाथ के चरित्र की विशालता और समग्रता को पूर्ण रूप से जनमानस तक तभी पंहुचना संभव हो पायेगा जब सुधी पाठकों उस परंपरा से भी भलीभांति परिचित करवाया जाये जिसके धारक यह महापुरुष थे। महंत अवैद्यनाथ उस परंपरा के धारक थे जिसका आरंभ स्वयं आदिनाथ शिव से है। जो मत्स्येंद्रनाथ और गोरक्षनाथ से होते हुए महंत दिग्विजयनाथ तक आती है और उनसे इसे महंत अवेधनाथ स्वयं प्राप्त करते हैं तथा अपना दायित्व पूर्ण कर महंत योगी आदित्यनाथ को सौंप देते हैं। इस परंपरा को समझे बिना महंत अवेधनाथ को समझना किसी भी रूप में संभव नहीं है। अवैधनाथ को समझना है तो मत्स्येंद्रनाथ को भी समझना होगा, गोरक्षनाथ को भी समझना होगा, गंभीरनाथ को भी समझना होगा और महंत दिग्विजयनाथ को भी समझना होगा। वास्तव में महंत अवैद्यनाथ के जीवन पर गहन रूप से विचार करने पर यह बोध होता है कि अपने सभी कार्यों के माध्यम से, उन्होंने उसी आध्यात्मिक, सामाजिक और धार्मिक क्रांति को आगे बढ़ाया जिसके कारण नाथ पंरपरा अपने उद्गम से ही जानी जाती रही है और जो उन्हें विरासत में प्राप्त हुई थी। अतः यह पुस्तक महंत अवैधनाथ को मध्य में रखते हुए पाठकों को भारतीय इतिहास के पथ पर एक सहस्रों वर्षो की यात्रा पर ले चलती है, जिसका आरंभ मत्स्येंद्र और गोरक्षनाथ से होता है और अर्द्धविराम जन्मभूमि आंदोलन के समापन पर। इसी यात्रा पथ को पूर्ण विराम की ओर ले जा रहे हैं मा० योगी आदित्यनाथ जी | इस यात्रा में पाठक भारतीय इतिहास के कई महत्वपूर्ण पड़ावों से होते हुए गुजरेंगे, जैसे कि भारत पर विदेशी आक्रमण, अंग्रेजी शासन की स्थापना, स्वतंत्रता संग्राम, देश विभाजन, स्वतंत्र भारत के आरंभिक वर्ष, राम जन्मभूमि आंदोलन इत्यादि, और हम देखेंगे कि इतिहास के इन पड़ावों मे नाथ परंपरा और गोरक्षपीठ की क्या भूमिका रही। एक पुस्तक के रूप में यह महंत अवैधनाथ को, संपूर्ण नाथ परंपरा को, योगी गंभीरनाथ एवं महंत दिग्विजयनाथ जैसे महापुरुषों को तथा राम जन्मभूमि आंदोलन के सभी हुतात्माओं को एक भावभीनी श्रद्धांजलि है।

नाथपन्थ के ग्रन्थों में उल्लिखित तथ्यों एवं उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि नाथपन्थ ने भारतीय समाज में परिवर्तन की एक नयी राह दिखायी भारतीय समाज दर्शन के एक नये युग का सूत्रपात किया। गोरखनाथ ने भारतीय समाज की उस दुखती रग को स्पर्श किया जो समाज में विखण्डन एवं भेदभाव के कारण उत्पन्न हुआ था। भारतीय समाज के उस कमजोर नब्ज़ को महायोगी गोरखनाथ ने पकड़ा जो भारतीय समाज की सभी व्याधियों की जड़ थी भारत के सामाजिक परिवर्तन के इतिहास में गोरखनाथ, महात्मा बुद्ध की ही तरह एक मजबूत प्रस्थान बिन्दु बने जिस प्रकार महात्मा बुद्ध ने भारत की सनातन संस्कृति में आयी विकृतियों के शमन का बिगुल फूंका उसी प्रकार महायोगी गोरखनाथ ने अपने युग तक भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों, रूढ़ियों, पाखण्डों, बाह्याडम्बरों के विरुद्ध उद्घोष किया और हर क्षेत्र में एक सार्थक विकल्प प्रस्तुत किया। गोरखनाथ और नाथपन्थ के सामाजिक दर्शन एवं साधना पद्धतियों का भारतीय समाज पर प्रभाव का महत्त्व इस बात से समझा जा सकता है कि गोरखनाथ के युग के बाद का भारतीय समाज नाथपन्थ द्वारा जारी सामाजिक परिवर्तन के अभियान की नींव पर ही खड़ा हुआ सामाजिक सुधारों के लिए एवं भारतीय समाज को दृष्टि देने के लिए प्रसिद्ध भारत का भक्ति आन्दोलन अथवा भक्तियुगीन कवियों के विचारों की आधारशिला में गोरखनाथ और उनके विचार उपस्थित है।

स्वाधीनता संघर्ष में बढ़-चढ़ कर सहभागिता करने वाली विभिन्न संस्थाएं व प्रतिष्ठान आज जब अस्तित्वहीन अथवा दिशाहीन हो गए हैं, इस संक्रमणकालीन समय में श्री गोरक्षपीठ भारत की सांस्कृतिक व लोकतांत्रिक चेतना को जागृत कर अपने 'राष्ट्रधर्म' का सतत निर्वहन कर रही है। पीठ का यह अमूल्य और अमिट योगदान युग-युगांतर तक करोड़ों लोगों को राष्ट्र आराधना के लिए प्रेरित करता रहेगा। एम0एन0 श्रीनिवास के अनुसार उन्नीसवी शताब्दी में ब्रिटिश शासक के भारत में आने के साथा आधुनिक राज्य की स्थापना का कार्य आरम्भ हो गया। ब्रिटिश शासन अपने साथ नये प्रत्यय लाया था कानून, न्याय, नौकरीशाही, सेना, पुलिस, रेल, संचार के आधुनिक साधन, डाक तार सेवा, सड़के नहरें इत्यादि। साथ ही ब्रिटिश शासन ने भारत में नई शिक्षण व्यवस्था की स्थापना की। नही शिक्षा प्रणाली ने भारतीयों के मानसिक स्तर को परिवर्तित किया। ब्रिटिश शासन ने कई रूढ़िवादी परम्पराओं को समाप्त किया। जैसे सती प्रथा, बाल विवाह उन्मूलन, विधवा पुर्विवाह इत्यादि। सामाजिक सुधारों के लिए भारतीयों ने कई आन्दोलन चलाये। अंग्रेजों ने भारत में एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना के बीज डाले। अंग्रेजों की दमनात्मक नीतियों ने एक ओर तो भारत कोष नुकसान पहुचाया तथा संविधान लागू होने के बाद पंचवर्षिय योजनायें आरम्भ की गयी जिससे देश का समग्र विकास हो सके। भारत में सामाजिक संचार कठिन है। जनसम्पर्क के जो साधन पश्चिम में आसानी से मौजूद है, भारत में अनुपलब्ध है। भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में व्यक्तिवाद को बढ़ावा दिया गया है। जनमत का प्रयोग राजनीतिक शक्ति के रूप में नही किया जा रहा है। जनता का एक बहुत बड़ा हिस्सा राजनीति में भाग नही लेता। केवल एक वर्ग विशेष ही संचार के साधनों को नियंत्रीत करते हुए सम्पूर्ण शक्ति का प्रयोग करता है। भारत मे दबाब तथा हित समूहों का भी राजनीतिकरण हो जाने के कारण उनका अधिक महत्व नही हैं। धर्म तथा जाति राजनीति में विशेष भूमिका निभाते है। भारत में संविधान का निर्माण देश का सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक ढ़ाँचा देखकर बनाया जाता है। उदाहरणस्वरूप संसदीय और संघात्मक संविधान भारत के लिए उपयुक्त है। संविधान से तात्पर्य यह है कि जो सर्वाच्च शासन की रचना को निर्धारित करता है। अरस्तु कहता था कि ''वह संविधान अच्छा है जहाँ शासक निःस्वार्थ भाव से जनता की सेवा करें।'' एकात्मक शासन वह है जो एक केन्द्रीय शासन में संगठित हो अर्थात् केन्द्रीय सरकार के प्रबन्ध में बनाये गये विभिन्न जिलों की शक्तियों का केन्द्रीय सरकार की इच्छानुसार प्रयोग किया जाय और केन्द्रीय शाक्ति सम्पूर्ण क्षेत्र में इसके भागों को विशेषाधिकार देने वाले किसी भी कानून से सीमित न होकर सर्वोच्च रहे तथा संघात्मक शासन राज्यों का ऐसा समुदाय है जो नये राज्य का निर्माण करता है। प्रजातन्त्रीय शासन में शासन संचालन का कार्य राजनीतिक दलों के द्वारा होता है जनतन्त्रीय शासन में जनता अपने प्रतिनीधियों के माध्यम से शासन कार्य में भाग लेती है। ये जनप्रतिनिधि किसी न किसी दल से सम्बन्धित होते है। प्रजातन्त्रीय व्यवस्था के सफल संचालन हेतु दल अनिवार्य है क्योंकि दलों के द्वारा निर्वाचन हेतु उम्मीदवारों को खड़ा किया जाता है तथा उनके पक्ष में प्रचार किया जाता है प्रजातन्त्री व्यवस्था के संचालन हेतु दलीय व्यवस्था अनिवार्य है। इस संबंध में मैकाइवर ने लिख है कि बिना दलीय संगठन के किसी सिद्धान्त का विकास प्रकाशन नही हो सकता किसी भी नीति का क्रमबद्ध विकास नही हो सकता। संसदीय चुनावों की वैधानिक व्यवस्था नही हो सकती और न ऐसी मान्य संस्थाओं की व्यवस्था ही हो सकती है जिनके द्वारा कोई भी दल शक्ति प्राप्त करता और स्थिर रखता है। भारत में निम्नलिखित शाक्तिशाली पार्टियों को बनाया गया है कांग्रेस, भाजपा, सपा, बहुजन समाजवादी पार्टी तथा मार्क्सवादी पार्टी इत्यादि पार्टियों के द्वारा जनप्रतिनिधि चुनाव जीतकर लोकसभा तथा राज्य सभा में प्रवेश करते है। देश में तीन सर्वोच्च शाक्ति, राष्ट्रपति, लोकसभा तथा राज्यसभा कार्य करते है। देश के विकास के लिए अनेक योजनाओं का निर्माण किया गया है जैसे पंचवर्षीय योजना, हरितक्रांति, पंचायती राज, ग्रामीण स्वरोजगार योजना इत्यादि योजनाओं के द्वारा आर्थिक, राजनीतिक तथा धार्मिक रूप से सुदृढ लोक तंत्र किया जाता है। गाँवों के विकास के लिए सहकारिता, कुटीर उद्योग धन्धे, विधवा पेंशन, योजना, वृद्ध पेंशन योजना इत्यादि को प्रसारित किया गया है। ताकि सार्वजनिक कल्याण के लिए समाज के भौतिक साधनों का स्वामित्व और नियंत्रण का समुचित वितरण हो तथा पुरूषों तथा स्त्रियों को समान अधिकार मिलें।

अध्याय-नौ

योगी मत्स्येंद्रनाथ

आदिनाथो गुरुर्यस्य गोरक्षस्य च यो गुरु।

मत्स्येन्द्रं तमहं वन्दे महासिद्धं जगद्गुरुम्॥

नाथ योगी ही नहीं, सम्पूर्ण योग-दर्शन के प्राणस्रोत आदिनाथ मयोगेश्वर शक्तिमान पार्वतील्लवभ भगवान शिव है। योगोपदेशामृत उनके सहज कृपा साम्राज्य की अक्षय श्री निधि है। आदिनाथ शिव ही नाथ सम्प्रदाय के आदि प्रर्वतक है, और उन्हीं के योग-ज्ञानामृत का कल्प वृक्ष नाथ योग है। शिवपुरुष गम्भीर नाथ जी महाराज ने शिव की योगीश्वरता का प्रतिपादन करते हुए कहा है - "शिव योगीश्वर हैं वे योगी ज्ञानी सन्यासी और मुमुक्षुओं के आदर्श हैं वे नित्य एकरूप रहते हैं। महायोगीश्वर शिव के 'तत्व ज्ञान दीप और परमानंदमय, परवैराग्य प्रतिष्ठित और परम प्रेम मण्डित, आत्म समाहित और प्रशान्त मधुर एवं ज्योतिर्मय महामूर्ति का ध्यान करते-करते तन्मयता प्राप्त हो जाने पर संसारशक्ति अपने अनजान में ही विनष्ट हो जाती है, अन्तः करण अनायास ही सब संकीर्णता, राग-द्वेष और अभिमान से अव्याहति पा जाता है, सहज ही अतीन्द्रिय ज्ञान और आनन्द की स्फुरता होती है और विश्वहित में स्वार्थ- त्याग की प्रवृत्ति स्वभाव बन जाती है।" 1

संप्रदाय में आदिनाथ और दत्तात्रेय के बाद सबसे महत्वपूर्ण नाम आचार्य मत्स्येंद्र नाथ का है, जो मीननाथ और मछन्दरनाथ के नाम से लोकप्रिय हुए। कौल ज्ञान निर्णय के अनुसार मत्स्येंद्रनाथ ही कौलमार्ग के प्रथम प्रवर्तक थे। कुल का अर्थ है शक्ति और अकुल का अर्थ शिव। मत्स्येन्द्र के गुरु दत्तात्रेय थे। प्राचीनकाल से चले आ रहे नाथ संप्रदाय को गुरु मत्स्येंद्रनाथ और उनके शिष्य गोरक्षनाथ (गोरखनाथ) ने पहली सशक्त व्यवस्था दी। गोरखनाथ ने इस संप्रदाय के बिखराव और इस संप्रदाय की योग विद्याओं का एकत्रीकरण किया। दोनों गुरु और शिष्य को तिब्बती बौद्ध धर्म में महासिद्धों के रुप में जाना जाता है। मच्छेन्द्रनाथ हठयोग के परम गुरु माने गए हैं जिन्हें मच्छरनाथ भी कहते हैं। इनकी समाधि उज्जैन के गढ़कालिका के पास स्थित है। हालांकि कुछ लोग मानते हैं कि मछन्दरनाथ की समाधि मछीन्द्रगढ़ में है, जो महाराष्ट्र के जिला सावरगाव के ग्राम मायंबा गांव के निकट है। इतिहासवेत्ता मत्स्येन्द्र का समय विक्रम की आठवीं शताब्दी मानते हैं तथा गोरक्षनाथ दसवीं शताब्दी के पूर्व उत्पन्न कहे जाते हैं। गोरक्षनाथ के गुरु मच्छेन्द्रनाथ की स्थिति आठवीं शताब्दी (विक्रम) का अंत या नौवीं शताब्दी का प्रारंभ माना जा सकता है। सबसे प्रथम तो मत्स्येंद्रनाथ द्वारा लिखित 'कौल ज्ञान निर्णय' ग्रंथ का लिपिकाल निश्चित रूप से सिद्ध कर देता है कि मत्स्येंद्रनाथ ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्ववर्ती हैं। मच्छेन्द्रनाथ का एक नाम 'मीननाथ' है। ब्रजयनी सिद्धों में एक मीनपा हैं, जो मच्छेन्द्रनाथ के पिता बताए गए हैं। मीनपा राजा देवपाल के राजत्वकाल में हुए थे। देवपाल का राज्यकाल 809 से 849 ई. तक है। इससे सिद्ध होता है कि मत्स्येन्द्र ई. सन् की नौवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विद्यमान थे। तिब्बती परंपरा के अनुसार कानपा राजा देवपाल के राज्यकाल में आविर्भाव हुए थे। इस प्रकार मच्छेन्द्रनाथ आदि सिद्धों का समय ई. सन् के नौवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध और दसवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध समझना चाहिए। शंकर दिग्विजय नामक ग्रंथ के अनुसार 200 ईसा पूर्व मच्छेन्द्रनाथ हुए थे।

नाथयोग पर प्रकाश डालते हुए भगवती पार्वती ने योगबीज के आरम्भ में शिव की आदिनाथ के रूप में जो वंदना की है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि योग ज्ञान आदिनाथ शिव की ही देन है तथा शिव ही आदिनाथ है।

योगबीज में मां पार्वती के वचन है-

नमस्ते आदिनाथाय विश्वनाथाय ते नमः।

नमस्ते विश्वरूपाय विश्वातीताय ते नमः॥

उत्पत्ति स्थिति संहारकारिणे क्लेशहारिणे।

नमस्ते देव देवेश नमस्ते परमात्मनेः॥

योग मार्गकृते तुभ्यं महायोगीश्वराय ते।

नमस्ते परिपूर्णाय जगदानन्द हेतवे ॥ 2

1- योग रस्म- पृ० 64-

2-योग बीज-1-3

महायोगी जालन्धरनाथ ने द्वैताद्वैत विलक्षण नाथतेज की वन्दना में श्री शिव के सहज रूप और स्वरूप का जो समन्वयात्मक वर्णन किया है, उससे भी यही सिद्ध होता है कि नाथ-योग-के आदि उपदेष्टा आदिनाथ भगवान शिव है। शिव ही संसार के अन्धकार का नाश करने के लिए साक्षात् सूर्य के प्रकाश के समान है, जो सत्कर्मो में व्याप्त है, जो प्राणवायु का संचालक है, जो आकाश के समान निर्झर है, जो भस्मयुक्त खप्पर धारण करता है। मैं इस नाथ तेज की वन्दना करता हूँ।

अपने भक्त में अनुरक्त अनुग्रह युक्त होने पर ही शिव जी योगानुशासन का सदुपदेश प्रकाशित करते है। उनकी स्वीकृत है -

अथ भक्तानुरक्तोऽहं वक्ष्ये योगानुशासनम् । 3

शिव जी ने जब भगवती पार्वती को योगोपदेश - नाथयोग ज्ञान प्रदान किया, तब दैवयोग से उसका श्रवण योगीन्द्र मत्स्येंद्रनाथ ने किया और उनके द्वारा महायेगी गोरखनाथ ने उसे श्रवण किया, ग्रहण किया। इस प्रकार आदिनाथ भगवान शंकर द्वारा उपदिष्ट योग ज्ञान-परम्परा अद्यपर्यंत नाथ सम्प्रदाय में ग्रहीत होती आ रही है। इस परम्परा का आधार अन्य योगशात्रों के अतिरिक्त नारदपुराण में उपलब्ध होता है। आदिनाथ भगवान माहेश्वर ने मणिप्रदीप्त सप्तश्रृंग पर भगवती उमा से योगतत्वोपदेश - महाज्ञान का वर्णन आरम्भ किया। भगवती के निद्राभिभूत होने पर मत्स्य के उदर से निकलकर महसेन्द्र नाथ ने यह योग तत्वोपदेश सुना। उन्होंने भगवान शंकर को देवी साहित नमस्कार कर समस्त वृत्तान्त का वर्णन किया। महेश्वर शिव ने प्रसन्नतापूर्वक अपनी गोद में बैठा का उनका मुख-चूमा और उनको अपना पुत्र सिद्नाथ मत्स्यनाथ कहा-

तत्वोपदेशाय जगामभद्रे सलोकलोकाचलम प्रमेय: ।

तत्सौम्य श्रृंगे मणिभिः प्रदीप्ते स्थित्वाक्षणादर्थ हरिमग्नचेता ।

3- शिव संहिता -1-2 ।

देवीमुमां सम्प्रतिबोध्यशक्त्या तालत्र्येणाप्यभिभूय सत्ववान् ।।

उवाच तत्त्वं सुरहस्यभूत यद्वादशाणार्थ निजस्वरूपम् ।

ततस्तु सा शैलसुता महेशं मारान्तकं यावदभिप्रणम्य ।।

अज्ञायतलं समवस्थिताऽभूत्तावत्स मत्स्यस्तु महार्णवस्थः।

द्रुतं समुत्पलुत्यजगामश्रृंग यो विप्रवासो ह्युदरेस्थितोऽस्य स ।।

तत्वसिद्धोऽ अखिलबन्ध मुक्तः।।

निर्गम्य मत्स्योदरतः शुभास्ते नमः प्रचक्रे भयवो: पुरस्तात् ।

विज्ञाततत्त्वोऽपि महेश्वरस्तं पप्रच्छ तद्गर्मगतेर्निदानम् ॥

सवर्णयामास यथार्थमेव तयो: पुरः सर्वमपि प्रवृत्तम् ।

आर्कण्यतदवृत्तमनुप्रसन्ना सोमा महेशानुमति चकृत्वा ।।

तं कल्पयामास सुतं शुभांग सोत संग आस्थाय चुचुम्बवक्त्रम् ।

सुतोममायं किलमत्स्यनाथो विज्ञाततत्वोऽखिलसिद्धनाथः।। 4

साक्ष्य एवं अभिलेख के दृष्टि से महाराष्ट्र नामसम्प्रदाय - गुरु परम्परा में सबसे पहले आदिनाथ के नाम का ही उल्लेख है।

क्षीर समुद्र के तट पर श्री शंकर ने, न जाने कब एक बार शक्ति पार्वती के काम मे जो उपदेश दिया था वह क्षीरसमुद्र की लहरी में किसी मत्स्य के पेट में गुप्त मत्स्येंद्रनाथ के हाथ लगा। मत्स्येंद्रनाथ सप्तश्रृंग पर्वत पर चौरंगीनाथ से मिले, जिनके हाथ- पाव लूले थे, मिलते ही चौरंगीनाथ पूर्णांग हो गये । अचल समाधि का उपभोग लेने की इच्छा से मत्स्येंद्रनाथ ने उपदेश गोरखनाथ को दिया। इस तरह उन्होंने योगरूपी कमलिनी के सरोवर विषयों को विध्वंश करने वाले एक ही बीर शंकर के रूप में उस पद पर अभिषिक्त किया। शंकर से प्राप्त वह अद्वेतानन्द- वैभव - गोरखनाथ से गहिनीनाथ ने ग्रहण किया। वे सब प्राणियों को कलिकाल से ग्रस्त देखकर दौड़ आये और निवृत्तिनाथ को यह आज्ञा दी कि आदिगुरू शंकर के शिष्य परमारानुसार हमें जो ज्ञाननिधि प्राप्त हुई है, उसे लेकर कलि के जीवों की रक्षा करो । इस तरह सन्त ज्ञानेश्वर ने स्वीकार किया है कि नाथ संप्रदाय में योग ज्ञान निधि के आदि उपदेष्टा भगवान आदिनाथ शंकर है। **4- नारदपुराण उतर- 69/-17-23**

बंगाली परम्परा में भी आदिनाथ को ही योग ज्ञान का आदि उपदेष्टा स्वीकार किया गया है। सुकुमार सेन ने "बंगाल साहित्य का इतिहास" के पृ०. 937 जिस कथा का वर्णन किया है उसके अनुसार आद्य और आद्या ने पहले देवताओं की सृष्टि की । पश्चात में चार सिद्धों की उत्पत्ति हुई एक कन्या भी हुई- गौरी । आद्य के आदेश से शिव ने गौरी से विवाह किया - चार सिद्ध थे मीननाथ, गोरक्षनाथ हाणिफा (जालंधरनाथ) कानफा (कृष्णपाद) । गौरी ने शिव के गले में मुंड माला देखकर उसका कारण पूंछा शिव ने बताया कि ये मुंड गौरी के ही है। गौरी ने कहा क्या कारण है कि आप मरते नहीं और गौरी मरती रहती है। शिव ने कहा यह गुप्त रहस्य है। चलो हम लोग क्षीरसागर में डोंगी पर बैठकर वार्तालाप करे इस सम्बन्ध में जानकारी होगी । दोनों क्षीरसागर में पहुँचे और इधर मीननाथ मछली के रूप में डोंगी के नीचे बैठ गये। देवी को शिव का ज्ञानोपदेश सुनते-सुनते जब नींद आ गयी, तब भी मीननाथ हुँकारी भरते रहे। इस आवाज से जब देवी की नींद टूट गयी, तो उन्होंने कहा मैंने तो महाज्ञान सुना ही नहीं। शिव ने डोंगी के नीचे मीननाथ को देखा उन्होने श्राप दिया कि एक समय तुम यह महाज्ञान भूल जाओगे आदिगुरु कैलाश पर चले गये। इस तरह आदिनाथ से मीननाथ ने (नाथ) योग ज्ञान प्राप्त किया।

"हठयोग प्रदीपिका" की नाथ संप्रदाय में अमिट मान्यता है। उसके रचयिता ने 'हठयोग प्रदीपिका 1 से 5 में आदिनाथ और तत्पश्चात मत्स्येंद्रनाथ से ही योग ज्ञान की उपदेश परम्परा का पोषण किया है। यह नितांत निर्विवाद है कि भगवान आदिनाथ शिव ने नाथ योग ज्ञान का सर्वप्रथम प्रतिपादन किया तथा गोरक्ष रूप में साशात् अभिव्यक्त होकर उन्होंने मत्स्येंद्रनाथ द्वारा स्थापित परम्परा का संरक्षण किया। इस तथ्य का रहस्योद्घाटन स्वयं महायोगी गोरखनाथ जी ने अपनी 'सिद्धसिद्धान्त पद्धति' रचना में किया है। -

योगमार्गात्यरो मार्गो नास्ति नास्ति श्रुतौ स्मृतौ ।
शास्त्रेष्वन्येषु सर्वेषु शिवेन कथितः पुरा ।। 5

वेद, स्मृति और अन्य सभी शास्त्रों में योगमार्ग से श्रेष्ठ मार्ग है ही नहीं, "इस योगमार्ग निर्वाचन साक्षात् शिव ने प्राचीनकाल में किया है। योग-साधना प्रक्रिया में समस्त प्रधान अंग-आसन, मुद्रा, बन्ध, प्राणायाम, नादानुसन्धान, कुण्डलि जागरण अमनस्कता आदि का प्रकाशन नाथ योग के परिक्षेत्र में भगवान आदिनाथ की ही देन है, इन अंगो पर महायोगेश्वर आदिनाथ के सांगोपांग निर्देशन योगशास्त्र में उपलब्ध होते है। स्वसम्बन्ध परमात्मतत्व अलख निरंजन का अन्तर साक्षात् ही आदिनाथ द्वारा प्रतिपादित योग का विशिष्ट प्राप्तव्य- प्रतिपाद्य है। जितने भी प्रकार के जीव है, उतने ही प्रकार के योगासन है, उनके समस्त भेद शिव जी ने चौरासी लाख आसनों में से प्रत्येक का अच्छी तरह वर्णन किया है। इसी प्रकार शेव अथवा नाथयोग के मुख्य अंग मुद्राबंध साधना पर कहा गया है कि श्री आदिनाथ द्वारा (महामुद्रा, महावेध, महाबन्ध, खेचरी, उडियानबन्थ जालंधरवन्ध, विपरीतकरणी, बज्रोली, शक्तिचालीनी आदि) सम्बन्धों महाज्ञान उपदिस्ट आठ ऐश्वर्यो वाला योगवाङ्मय सभी सिध्दों को प्रिय और देवताओं के लिए दुर्लभ है। आदिनाथ शम्भू ने ही दस प्रमुख मृदाओ का भी प्रकाशन किया

है। साथ ही "हठयोग प्रदीपिका" के रचियता ने कहा है की श्री आदिनाथ शिव ने चित को आत्मा स्वरूप में लय करने की सवा करोड विधियां बताई हैं आशय यह है कि सम्पूर्ण हठयोग विद्या ही भगवान आदिनाथ शिव की देन है। "हठयोग विद्या को नाथयोग - साधना में अमिट महत्व दिया गया है। भगवान आदिनाथ ने पार्वती को सावधान किया है कि मेरे द्वारा उपदिष्ट नाथयोग ज्ञान शिव भक्तो शेप (योगियों) को ही देना चाहिए।6

' सिद्धसिद्धान्त पद्धति 5/22 राष्ट्रीयता के अनन्य साधक: महंत अवेधनाथ (तृतीय खण्ड) 75,7677

महायोगेशवर मत्स्येंद्रनाथ की महिमा अविनश्वर, निरपेक्ष, परम योग सिद्धि की सम्पूर्ण प्रतीत है, मत्स्येंद्रनाथ ने आत्मा के योग के माध्यम से परमात्मबोध अथवा शिवैक्य अथवा स्वरूपानुभव की प्राणप्रतिष्ठा संस्कारित की। मत्स्येंद्रनाथ शैव योग के परमाचार्य महत्तम गुरु थे। वे आदिनाथ के सिद्ध यौगिक संस्करण थे। उनकी कृपा से योग विज्ञान अनंतकाल तक अक्षय रहेगा।

परमयोगी मत्स्येंद्रनाथ ने तान्त्रिक साधना-पद्धति का यौगिककरण कर शक्ति उपासना परक योगिनी कौल मत का प्रवर्तन कर योग साधना में शिव और शक्ति के सामरस्य का सिद्धान्त समझाया और इसके फलस्वरूप उन्होंने योग दर्शन के प्रकाश में सिद्धमत का पोषण किया, योगाचार सिखाया। उनके परम शिष्य - महायोगी गोरक्षनाथ ने षडंगयोग, किंवा हठयोग - आसन, मुद्राबन्ध, प्राणायाम, प्रत्याहार धारणा, ध्यान और समाधि को नाथ सम्प्रदाय की साधना की आधारशिला स्वीकार की।

योगी मत्स्येंद्रनाथ अकाल योग पुरुष है, उनका महाज्ञान- सिद्धाचार अव्यय है। वे महाशिव है, काल दण्ड का खण्डन कर वे सिद्ध देय में स्थित होकर निरंतर ब्रह्माण्ड में विचरण करते रहते हैं। हठयोग के अप्रतिम प्रभाव से उन्होंने स्वशरीर का आत्मीकरण - चिन्तन परमात्म तत्व से रसायनीकरण कर लिया है। नाथपंथ में गुरु शिष्य परम्परा असीम है, वर्तमान समय में भी नाथपंथ में गुरु शिष्य की परम्परा अन्यत्र कम ही देखी जा सकती है।

योगगुरु मत्स्येंद्रनाथ की कृपा से ही गोरखनाथ अपने युग के महान धार्मिक नेता थे। गोरखनाथ के युग में भारतीय धर्म साधना में अधिक कुरीतियां आ गयीं थी। ये कुरीतियां पूर्ववर्ती और समसामायिक अनेक सिद्धो में भी थी।" गोरखनाथ का आविभाव इन सबके लिए एक प्रतिद्वन्दी के रूप में था। जब-जब गोरखनाथ जी को अवसर मिला तब-तब उन्होंने विकारग्रस्थ सिद्धो को ललकारा। गोरखनाथ जी अपने सम्प्रदाय के प्रचार के लिए लोक भाषा का प्रयोग किया।

भारतीय साहित्य में गुरुमत्स्येंद्रनाथ एवं उनके शिष्य गोरक्षनाथ की अनेक कथायें मिलती है। मत्स्येंद्रनाथ जिन्हें मत्येंद्र, मच्छिद्रनाथ, मीनानाथ और मिनपा के नाम से जाना जाता है, कई बौद्ध और हिन्दू परम्पराओं में एक संत और योगी थे। उन्हें पारंपरिक रूप से हठयोग का पुनरुत्थानवादी और साथ ही इसके कुछ शुरुवाती ग्रन्थों का लेखक माना जाता है। उन्हें नाथ संप्रदाय के संस्थापक के रूप में भी देखा जाता है, जिन्होंने शिव से शिक्षा प्राप्त की थी। वे विशेष रूप से कौल शेव धर्म से जुड़े हुए हैं। मत्स्येंद्रनाथ जी हिन्दुओ और बौद्धों दोनों के द्वारा पूजनीय है और कभी-कभी उन्हे अवलोकितेश्वर का अवतार माना जाता है।

मत्स्येंद्रनाथ को हठयोग का स्वामी माना जाता है। सिद्ध की महत्ता बताते हुए विद्वानो ने माना है कि सिद्ध वह व्यक्ति है, जो प्रकृति की शक्तियों को नियंत्रित कर सकता है, वह अनेक प्रकार का चमत्कार कर सकता है। आहरण के लिए वह हवा में उड़ सकता है, पानी पर चल सकता है, मिट्टी से सोना बना सकता है, सिद्ध योगी भूत, वर्तमान और भविष्य को जानता है। वह सब अपनी यौगिक शक्तियों का प्रयोग करके करता है। योग के अनुशासन के लम्बे अभ्यास से व्यक्ति इन शक्तियों को प्राप्त करता है। मत्स्येंद्रनाथ को नाथ संप्रदाय का स्वामी माना जाता है। वे कौल परंपरा के संस्थापक थे। मत्स्येंद्रनाथ को माया द्वारा प्रलोभित योगी के रूप में जाना जाता है, साथ ही महान सिद्ध गुरु के रूप में जाना जाता है, जो योग के माध्यम से मुक्ति का ज्ञान प्रदान करते है। विद्वानों ने मत्स्येंद्रनाथ को नाथ सम्प्रदाय के संस्थापक के रूप में देखा जाता है। जिन्होने भगवान शिव से शिक्षा प्राप्त की थी। ऐतिहासिक एवं पौराणिक दृष्टि से मत्स्येंद्रनाथ को 'हठयोग' की रचना करने का प्रथम श्रेय दिया जाता है। वैश्विक स्तर पर जन सामान्य के लिए इस परम्परा के सिद्धों ने समय-समय पर जीवन के प्रत्येक क्षेत्रों में मानव जीवन को योग, नैतिकता एवं आदर्श का ज्ञान प्रदान किया है। नाथ सम्प्रदाय में मत्स्येंद्रनाथ के पथ प्रदर्शन में महायोगी गोरखनाथ द्वारा योग सिद्धान्त का विवेचन महत्वपूर्ण है। मत्स्येंद्रनाथ का नाम महा प्रकाश भी है। गोरखनाथ जी अपने अविगत आत्मस्वरूप का प्रतिपादन करते हुए मत्स्येंद्रनाथ को अपना पथ-प्रदर्शक चुनने के सम्बन्ध में विलक्षण बात करते है, जिसमें गुरुतत्व पर विशिष्ट प्रकाश पड़ता है। उनका कथन है कि शिव हमारे शिष्य और मत्स्येंद्रनाथ

प्रशिष्य है। हमें गुरु की आवश्यकता नहीं थी, हम साक्षात शिव स्वरूप अलख निरंजन परमेश्वर है पर इस भय से कि हमारा अनुकरण कर अज्ञानी लोग बिना गुरु के ही योगी बनने का दंभ न भरें हमें मत्येन्द्रनाथ को अपना गुरु बनाना पड़ा। यह उल्टी स्थापना अथवा क्रम है। यदि हम ऐसा नहीं करते तो गुरूहीन पृथ्वी प्रलय में समा जाती यहीं कारण है कि उन्होंने सद्‌गुरु की खोज की बात पर बल दिया है कि अहंकार को तोड़ना चाहिए, सद्‌गुरु की खोज करनी चाहिए, योग पंथ की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। नाथ योग में गुरु की प्राप्ति योग साधना का प्राण है।

योगीन्द्र मत्स्येंद्रनाथ का योग ज्ञान आध्यात्म सागर का अचल निर्मल प्रकाश स्तम्भ है। श्री मत्स्येंद्रनाथ की रचनाओं में 'कौल ज्ञान निर्णय" एक श्रेष्ठ कृति है। उन्होंने अनेक ग्रन्थ लिखे, जिनमें कुलवीरतन्त्र, कुलानन्द और ज्ञान कारिका महत्वपूर्ण है।

परम गुरु मत्स्येंद्रनाथ जी ने योगियों के सर्वश्रेष्ठ मत सिद्धमत के प्रर्वतक के रूप में जगत के असंख्य प्राणियों को गुरुज्ञान, महाज्ञान का तत्वोंपदेश कर उन्हें मुक्ति प्रदान की, संसार सागर से पार उतरनें के लिए योगामृत जान की नौका दी। महायोगी मत्येन्द्रनाथ जी अजर-अमर आचार्य हैं।

अध्याय-दस

गुरु गोरखनाथ

ओम गुरुजी को आदेश गुरुजी को प्रणाम, धरती माता धरती पिता, धरती धरे ना धीरबाजे श्रींगी बाजे तुरतुरि आया गोरखनाथमीन का पुत् मुंज का छड़ा, लोहे का कड़ा हमारी पीठ पीछे यति हनुमंत खड़ा, शब्द सांचा पिंड काचास्फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा।।

सभ्यता के आदिकाल से मनुष्य 'अपने' आप में एक गंभीर चिन्तन का विषय रहा है। यदि कर्ता के रूप में वह विचारक रहा है तो कर्म के रूप में विचारक की पृष्ठभूमि। जीवन, जगत, ईश्वर और आत्मा प्राय: यही प्रमुख तत्व है। जिस पर निरंतर दार्शनिक वैज्ञानिक और समाजसेवी चिन्तन करता आ रहा है। भौतिक प्राणी यदि व्यावहारिक दृष्टि से सीमित और क्षणभंगुर है तो अध्यात्मिक दृष्टि से असीम ऊर्जा एवं ऐश्वर्य का अजस्र स्रोत है। विश्व के युग प्रवर्तक चिन्तकों और दार्शनिकों ने मनुष्य के बहुआयामी व्यक्तित्व पर यथा साध्य अनुचिंतन और आलोचना प्रस्तुत किया है। ग्रीक-दर्शन में मानवीय नियति को " होमो मेन्सुरा" स्वीकार किया गया जबकि मध्यकालीन ईसाई चिन्तन धारा में "मानव" ईश्वर की प्रतिमूर्ति है। आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति के साथ-साथ मनुष्य चेतना विशिष्ठ भौतिक तत्वों से निर्मित प्राणि मात्र है। भारतीय मनीषा के परिपेक्ष्य में - वैदिक वाङ्गमय में मनुष्य "अमृतस्य पुत्र:" है।

नाथ शब्द का प्रचलन अति प्राचीन है। नाथ शब्द वैदिक काल में अनेक अर्थो में व्यवहृत हुआ है। ऋगवेद के दशम मंडल के 130वें सूक्त में, नाथ शब्द सृष्टिकर्ता ज्ञाता और सृष्टिकारक रूप में प्रयुक्त हुआ है। "नाथित "शब्द "तथा "नाथ शब्द का प्रयोग अथर्ववेद में हुआ है। शक्ति संगम तंत्र के अनुसार नाथ तत्व मोक्ष दायक बाह्य अनुबोधक और अज्ञान नाशक है। संस्कृत साहित्य के भाष्यकार मुनिदत्त ने इसको सद्गुरू अर्थ में लिया है। विभिन्न बौद्ध साहित्य में नाथ शब्द बुद्ध के पर्याय माना है। जैन एवं वैष्णव साहित्य में भी नाथ शब्द का अर्थ बड़े - देवता के रूप में माने गये है। परवर्ती काल में शैवमत का विकास नाथ सम्प्रदाय के रूप में हुआ, फिर यह शब्द शिव' के लिए प्रचलित हो गया। हठयोग प्रदीपिका की टीका 1-5 में ब्रह्मानंद ने सब नाथों में प्रथम आदिनाथ को माना है। यह आदिनाथ ही शिव है। नाथमत या संप्रदाय को मानने वाले अनुयायी इसे सिद्ध मार्ग इसलिए कहते हैं कि उनके विचार से नाथ ही सिद्ध है। इनका प्रमाणित ग्रन्थ सिद्ध-सिद्वान्त पद्यति है। इसको काशी के बलभद्र पंडित ने अठ्ठारहवीं शताब्दी के अन्तिम काल में सिद्ध-सिद्वान्त संग्रह नाम से संक्षिप्त किया था। इस ग्रन्थ से स्पष्ट है कि अत्यन्त प्राचीन काल से ही यह मार्ग या मत सिद्ध मार्ग या सिद्धमत के नाम से विख्यात हो चुका था। सिद्धों द्वारा निर्णित तत्व ही सिद्धान्त है। इसलिए ये अपने सम्प्रदाय के ग्रन्थों को ही सिद्धान्त ग्रन्थ मानते हैं।

नाथ शब्द का शाब्दिक विश्लेषण करने पर इसके दो ध्वनि खंड बनते हैं- ना + थ। यहाँ 'ना' का अर्थ है अनादि रूप और 'थ' का अर्थ है भुवनत्रय स्थापित होना। अर्थात वह अनादि धर्म जो भुक्नत्रय की स्थिति का कारण है नाथ है। इसलिए गोरक्ष को नाथ कहा गया

नाकारो नादि रूपं धकारः स्थापयते सदा।

भुक्नत्रयत्रमेंवेक : श्री गोरक्ष नमोस्तुते ॥ राज गुरुह्य प्र-25

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर यह स्पष्ट है कि 'नाथ' शब्द 'में शाब्दिक और दार्शनिक दृष्टी से कोई मौलिक अन्तर नहीं, दोनों दृष्टियों से नाथ शब्द परम तत्व के लिए व्यवकृत हुआ है। गोरखबानी में गोखरनाथ ने नाथ शब्द का व्यवाहार- मुख्यतः ब्रह्म या परमतत्व के रूप में लिया है। कबीरदास जी ने नाथ शब्द का प्रयोग माया जेता के अर्थ में किया है। नाथ संप्रदाय में दीक्षित साधकों ने इसे परम तत्व का वाचक माना है। नाथ योगी इसकी प्राप्ति योग साधना के द्वारा करते हैं। वे दीक्षित होने के पश्चात् अपने नाम के अन्त में नाथ उपाधि जोड़ लेते थे। गोरक्षनाथ द्वारा संगठित और प्रचारित संप्रदाय भारत सहित अन्य देशों में भी देखा जा सकता है।

गोरखनाथ महायोगी थे, उन्होंने आत्मा में शिवैक्य सिद्ध किया। जिस प्रकार दर्शन के क्षेत्र में व्यास के बाद आचार्य शंकर ने वेदान्त का रहस्य समझाया उसी प्रकार योग के क्षेत्र में पतंजलि के बाद गोरखनाथ ने हठयोग और सत्य के शिवरूप का बोध सिद्ध किया। निस्सन्देह गोरखनाथ बहुत बड़े योगानुभवी और सिद्ध महात्मा थे, शंकराचार्य के बाद भारत भूमि पर उतरने वाले महात्माओं में गोरखनाथ बड़े सिद्ध पुरुष और आत्मज्ञानी स्वीकार किये जा सकते हैं। गोरखनाथ शिवयोगी थे नेपाल से सिंहल और कामरूप से पंजाब तक के विशाल भूमिखण्ड को उन्होंने अपनी अपूर्व योग-साधना से प्रभावित किया। उन्होंने शिव प्रवर्तित योगमार्ग का अनुसरण किया । चौरासी सिद्धों में उनकी गणना है वे नाथपन्थ के प्रवर्तक थे, उन पर बौद्ध धर्म के योगमार्ग- सिद्धान्तों का भी विशेष प्रभाव था, उन्होंने अधिकांश बौद्ध योग- सिद्धान्तों को शैव रूप प्रदान किया, यह उनकी साधना-पद्धति की मौलिकता है। गोरखनाथ ने अपने योगसिद्धान्तों से भारतीय संस्कृति और साहित्य के विकास में अमिट सहयोग दिया। गोरखनाथ के आविर्भाव के समय भारतीय राजनीति, धर्म और समाज तथा संस्कृति में एक विचित्र उथल-पुथल का आभास -सा दीख पड़ा। उनके समय का निश्चय करना कठिन काम है, ऐसा विश्वास किया जाता है कि गोरखनाथ आदि पुरुष शिव के अभिव्यक्त रूप थे और विक्रम की पहली शती में उपस्थित थे । ऐतिहासिक छान-बीन करने पर उनका समय नववीं से ग्यारहवीं शदी ठहरता है । उस समय बौद्धों में अनेक सम्प्रदाय उठ खड़े हुए तथा यवनों का प्रवेश आरंभ हो गया था, भारत के संत महात्मा हिन्दू धर्म की स्थिति में परिवर्तन उपस्थित था। ऐसे समय में गोरखनाथ ने देश का नेतृत्व कर आध्यात्मिक चेतना और सांस्कृतिक एकता, सामाजिक अविच्छिन्नता और धार्मिकता की रक्षा की। ऐसा सम्भव है कि वे विक्रमीय ग्यारहवीं शताब्दी में उपस्थित थे।

सन्त ज्ञानेश्वर के गुरु परम्परा वर्णन में गोरखनाथ का नाम आता है, ज्ञानेश्वर के पहले निवृत्तिनाथ, निवृत्तिनाथ के पहले गैनीनाथ और गैनीनाथ के पहले गोरखनाथ थे। इस क्रम से ज्ञानेश्वर और गोरखनाथ के बीच में ढाई सौ साल का अन्तर पड़ता है, सन्त ज्ञानेश्वर का समय विक्रमीय सम्वत् 1352 है इसलिये यह मत समीचीन-सा ही है कि गोरखनाथ ग्यारहवीं शताब्दी में रहे होंगे ।

गुरु गोरखनाथ के कालखंड को लेकर विद्वानों में मतभेद है, फिर भी गोरखनाथ के उद्भव के सम्बन्ध में भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने विभिन्न पौराणिक साहित्यों और उत्कीर्णय साक्ष्यों के आधार पर जो काल खण्ड निर्धारित किया है। उनके जन्म-स्थान के सम्बन्ध में भी अनेक मत हैं ऐसा कहा जाता है कि गोदावरी-गंगा के प्रदेश में चन्द्रगिरि नामक स्थान में उनका जन्म हुआ था, योगि- सम्प्रदायाविष्कृति ग्रन्थ ऐसा उल्लेख भी है। इस सम्बन्ध में विशेष खोज करने पर अयोध्या के निकट भगवती सरयू के पवित्र तट से थोड़ी दूर पर जयश्री या जायस नामक स्थान में उनका जन्म लेना अधिकाधिक संगत दिखायी पड़ता है । यह साहित्य सिद्ध तथ्य है कि जायस नगर धर्मस्थान था, महाकवि जायसी ने अपने पद्मावत में ऐसा स्वीकार किया है ।

मत्स्येंद्र रचित 'कौल ज्ञान निर्णय' ग्रंथ का प्राचीन हस्तलेख मिलता है यह ग्यारहवीं शदी का है अभिनव गुप्त का ग्रन्थ तन्त्रालोक भी है जिसका रचना काल विद्वानों ने सन् 1055 ई. निर्धारित किया है । इस ग्रन्थ में मत्स्येंद्रनाथ का उल्लेख है। इसके पूर्व 971 ई का एक लेख एक मंदिर में ब्रिंग्स महोदय को मिला जिसके आधार पर यह अनुमान किया जाता है कि वह मंदिर नाथ सम्प्रदाय का ही होगा। **2** चीनी यात्री हवेनसांग 630 ई0 से लगभग 640 ई० तक भारत में रहा उसने अपने ग्रन्थ 'शियुकी में नाथ धर्म की चर्चा की है। **3** दक्षिण भारत के लिगायत मत के प्रवर्तक अस्लम प्रभु का समय 1150 ई० निश्चित किया गया है। इसके साथ गोरखनाथ के सीधे सम्पर्क का साक्ष्य प्राप्त है। पाश्चात्य विद्वान टेसीटरी' के अनुसार कनपटा योगी का अस्तित्व बोध धर्म के आरंभिक काल से ही मिलता है, मगर बौद्ध धर्म के पतन काल से ही उनका समुचित प्रभाव बढ़ने की समुचित सूचना तत्कालीन ग्रन्थों में मिलती है।

राहुल सांकृत्यायन इनका जन्मकाल 845 ई. की 13वीं सदी का मानते हैं। नाथ परंपरा की शुरुआत बहुत प्राचीन रही है, किंतु गोरखनाथ से इस परंपरा को सुव्यवस्थित विस्तार मिला। दोनों को चौरासी सिद्धों में प्रमुख माना जाता है। इस बात का ऐतिहासिक प्रमाण है कि ईस्वी 13वीं शताब्दी में गोरखपुर का मठ मुस्लिमों ने ढहा दिया गया था, इसीलिए इसके बहुत से पूर्व गोरखनाथ का समय होना चाहिए। गुरु गोरखनाथ को गोरक्षनाथ भी कहा जाता है। इनके नाम पर एक नगर का नाम गोरखपुर है। गोरखनाथ नाथ साहित्य के आरंभकर्ता माने जाते हैं। गोरखपंथी साहित्य के अनुसार आदिनाथ स्वयं भगवान शिव को

माना जाता है। शिव की परंपरा को सही रूप में आगे बढ़ाने वाले गुरु मच्छेन्द्रनाथ हुए। गोरखनाथ से पहले अनेक संप्रदाय थे, जिनका नाथ संप्रदाय में विलय हो गया। शैव एवं शाक्तों के अतिरिक्त बौद्ध, जैन तथा वैष्णव योग मार्गी भी उनके संप्रदाय में आ मिले थे।

काबुल, गांधार, सिंध, बलोचिस्तान, कच्छ और अन्य देशों तथा प्रांतों में यहां तक कि मक्का-मदीना तक श्रीगोरक्षनाथ ने दीक्षा दी थी और नाथ परंपरा को विस्तार दिया।

गोरक्षनाथ जन्म के सम्बन्ध में

जनश्रुति अनुसार गोरखनाथ का जन्म परम योगी श्री मच्छेन्द्रनाथ की कृपा से हुआ। वे ही उनके योग गुरु हुए और उन्हीं की कृपा से गोरखनाथ ने अमरपद प्राप्त किया। जनश्रुति है कि अवधक्षेत्र में अलख जगाते तथा भिक्षाटन करते हुए मत्स्येन्द्र ने जायस नगर में प्रवेश किया। एक निसंतान ब्राह्मणी को उन्होंने झोली की भभूति दी और कहा कि तुम्हें पुत्र होगा। लोकलज्जा के भय से ब्राह्मणी ने भभूति सूखे गोबर के ढेर में (भिटउर) छोड़ दी। बारह साल के बाद मच्छेन्द्रनाथ फिर जायस आये, ब्राह्मणी ने उनसे सही-सही बात बता दी, वे ढेर के निकट गये, उनकी अभिमन्त्रित भभूति ने बारह साल के तेजपूर्ण बालक का आकार धारण कर लिया था। वे बालक को अपने साथ ले गये, गोरखनाथ शिष्यरूप में स्वीकार किया । जैसा कि हम इस मूल कथा में देख सकते हैं, धार्मिक परंपरा और किंवदंती में मत्स्येंद्रनाथ और गोरखनाथ के बीच का संबंध केवल गुरु और शिष्य से कहीं अधिक है। यह गुरु मत्स्येंद्रनाथ की अलौकिक योग शक्तियों के माध्यम से है कि गोरखनाथ का जन्म भी दुनिया में हुआ है; और यह मत्स्येंद्रनाथ की आवाज के माध्यम से है वह राख और कूड़े के ढेर से उठे। गोरखबानी, जिसे स्वयं गोरख की पवित्र वाणी माना जाता है, अपनी शिक्षाओं में गोरख के गुरु के महत्व को बार-बार दोहराती है। योगी के पद या चौपाइयों में "मसिन्द्र प्रसादं जाति गोरश बोल्या,"[30] या 'मछिंदर की कृपा से[31], गोरखनाथ ने कहा...' एक लोकप्रिय कहावत है जिसे अक्सर दोहराया जाता है। गोरखनाथ के प्राकट्य अथवा जन्म की यह दिव्यता है, योगसिद्ध रहस्य है ।[32]

गुरु से योग दीक्षा प्राप्त कर गोरख ने साधना में प्रवेश किया, उन्होंने कठिन से कठिन तप का पवित्र आचरण अपनाया । मत्स्येन्द्र ने कहा कि अपने आपको देखना चाहिये और अनन्त ऐश्वर्य-माधुर्य-सौन्दर्य से सम्पन्न चिन्मय शिवतत्व का विचार करना चाहिये। ज्ञान-प्राप्ति से ही चेतन का रहस्य जाना जाता है । परम ज्योति में ही जीव सदा निवास करता है शिव और शक्ति की कृपा प्राप्ति ही योगी की पूर्ण सिद्धि है। गोरखनाथ ने मच्छेन्द्रनाथ के उपदेशों और योगसिद्धान्तों के अनुरूप ही अपना जीवन परिष्कृत किया। गोरखनाथ ने माया पर विजय पायी, घर-बार छोड़ दिया, अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया। आशा, तृष्णा और इच्छा का परित्याग कर दिया। देवलोक की अप्सराओं, मृत्युलोक की नवरमणियों और पाताल की नागकन्याओं का उन्होंने विस्मरण कर दिया। वे पहाड़ी गुफाओं और सघन वनों तथा हिमालय की शीतल कन्दराओं में तप करने लगे। उन्होंने उस जीवात्मा की गहरी खोज की जो जगत में शरीर के साथ आता है पर अकेले जाता है । गोरख ने प्राण पुरुष का अन्वेषण कर जगत में जन्म-मरण के बन्धन से छूटने का रास्ता समझ लिया। उनकी वाणी हैं कि ज्ञान ही सबसे बड़ा गुरु है, चित्त ही सबसे बड़ा चेला है, इसलिये ज्ञान और चित्त का योग सिद्ध कर जीव को जगत में अकेला रहना चाहिये, यही श्रेय अथवा आत्मकल्याण का पथ है । उन्हें एकान्त जीवन परम प्रिय था। उन्होंने घट घट में अपने आप को ही व्याप्त पाया; मच्छेन्द्रनाथ के प्रसाद से उन्हें कैवल्यपद की प्राप्ति हुई । वे निन्दा - स्तुति से ऊपर उठ गये उनकी समस्त वृत्तियाँ अन्तर्मुखी हो गयीं । उन्होंने आत्मसाक्षात्कार की भाषा में कहा कि मैंने पिंड में ब्रह्माण्ड को ढूंढ़ कर सारी सिद्धियाँ प्राप्त

---

[30] Gorakhnath, *Gorakhbānī*, Ed. Pitambar Datt Barthwal. (1942. Reprint, Prayag: Hindi Sahitya Samelan. 1944).

[31] Macchindra is a vernacularized spelling of Matsyendra.

[32] This particular version of the birth of Gorakhnath comes from Simon Digby's Wonder-Tales of South Asia (Jersey: Orient Monographs, 2000), 140-143. However, this well-known tale also appears, with minor variation, in many different Hindi publications, such as the Gorakhcarit (1986), 14-17; Dr. Camanlal Gautam's Śrī Gorakhnāth Caritra (Ved Nagar: Sanskriti Sanstan, 2007), 5-7, and Sri Prithviraj Ji's Śrī Gorakh Mahāpurāṇ (Dilli: Laksmi Prakashan, n.d.), 26-32.

कर ली हैं। देव, देवालय, तीर्थ, आदि इसी शरीर में हैं। मैंने शरीर के भीतर अविनाशी परमात्मा- अलखनिरञ्जन की अनुभूति की है। कायागढ़ को जीतना किसी वीर का ही काम है उनकी उक्ति है कि मैं अपने गुरु मच्छेन्द्रनाथ की कृपा से इडा-पिंगला-गंगा, यमुना के मध्य - सुषुम्ना में समाधिस्थ होकर ब्रह्मज्ञान में रमणशील रहता हूँ। गोरखनाथ ने ईश्वर-प्राप्ति का सहारा लेकर योग-मार्ग का प्रचार किया, पतंजलि के सिद्धान्तों का अनुसरण किया। शिव के साथ जीवन-संधि का योग ही गोरखद्वारा प्रचारित साधन-पथ है। उन्होंने धीति, बस्ति, नेति, नौलि, त्राटक और कपालभाति हठयोग के छः अंगों पर विशेष जोर दिया। उन्होंने हठयोग की साधना को सुगम बना दिय और नाथ, जीव, गुरु, शिव-सबके सम्बन्ध पर प्रकाश डाला। समस्त श्रेयों का मूल उन्होंने गुरु को ही ठहराया। 'नाथ-रूप की प्राप्ति ही मोक्ष है, अद्वैत अवस्था सदानन्द देती है। शक्ति सृष्टि करती है, शिव पालन करते हैं, काल संहार करता है और नाथ मुक्ति देते हैं। नाथ ही एकमात्र शुद्ध आत्मा हैं, शेष बद्ध जीव हैं, नाथ सगुण-निर्गुण से अतीत और परात्पर हैं, ज्योतिस्वरूप सच्चिदानन्दमूर्ति है।' गोरख का मत था। गोरखनाथ ने कारणरहित अमृतमय स्वप्रकाश ब्रह्म का दर्शन किया। साधनाकाल में ब्रह्मसाक्षात्कार ही गोरखनाथ का सबसे बड़ा परमार्थ था, इसी के लिये गोरखने योगपथ का प्रश्रय लिया। उन्होंने शिव से एकता पायी, आत्मा को परतत्व शिव स्वीकार किया। गोरखनाथ ने बताया कि आत्मा ही परम पूज्य है, शिव है। उन्होंने कहा कि शरीर के नवों द्वारों में नवनाथ है, त्रिवेणी में जगन्नाथ सोपाधिक ईश्वर हैं और दशवें द्वार ब्रह्मरन्ध्र में केदारनाथ शिव स्वयं पर- ब्रह्म हैं, योग की सारमयी युक्ति ही संसार-मुक्ति है; शून्य का साक्षात्कार होते ही विरल कैवल्यपद में समाकर मेरा द्वैत भाव नष्ट हो गया, मुझे शून्य अथवा ब्रह्म के साथ तादात्म्य का अनुभव हो गया। माया को उन्होंने अविद्या - बन्धनकारिणी और विद्या मुक्तिदायिनी का रूप माना है। गोरखनाथ ने आत्मबोध प्राप्त किया कि शिव ही जीव के रूप में परिणत होते हैं, जीव से जगत की सृष्टि होती है- शिव जीव, और जगत में अभिन्न हो जाना ही शिवैक्य है। गोरखनाथ के जन्म के बारे में कई अन्य जनश्रुतियां भी हैं।

2. डॉ. राघोरखनाथ और उसका क्या फु9-10

8वीं शताब्दी में शिव की अनेक योग मूर्तिया हैं जिनके कान में बड़े- बड़े कुण्डल है। मद्रास के उत्तरी आर्कट जनपद में परशुरामेश्वर का जो मन्दिर है, उसमें स्थापित शिव की मूर्ति के कानों में कनफटे योगियों जैसा ही कुण्डल है। टी० ए० गोपीनाथ राव ने इस लिंग को दूसरी या तीसरी शताब्दी का माना है। दूसरी और तीसरी शताब्दी के बाद भी अनेक मानव मूर्तियों के कनफटे कानों में विविध प्रकार के कुंडल देखने को मिलते हैं।

नाथ संप्रदाय का वास्तविक स्रोत उसके दर्शन और साधना पद्धति में सन्निहित है। मूलत: नाथ मार्ग योग प्रधान मार्ग है, फिर भी यह भारतीय तत्व चिंतन की मूल धारा से विकसित है।

गुरु गोरक्षनाथ जी अवतारी पुरुष थे। वे एक ऐसे महायोगी थे, जिनसे प्रभु श्रीराम और श्री कृष्ण भी चमत्कृत हुए कहा जाता है देवताओं और महापुरुषों के पास अलौकिक शक्तिया होती हैं, उनके लिए समय, दिशा, युग और स्थान किसी भी काल में उपस्थित हो सकते हैं, लेकिन क्या मनुष्य के लिए प्रत्येक युग में रहना संभव है? कहते है मानव शरीर नश्वर होता है लेकिन क्या इस नश्वर शरीर के बावजूद वह मृत्यु को जीतकर हर युग में उपस्तिथ हैं?

हठयोग के प्रवर्तक महायोगी गोरक्षनाथ के सम्बन्ध में ऐसा भी कहा जाता है. कि मनुष्य स्वरूप (काया) में अवतरित होने के बावजूद उन्होंने चारों युगों में अपनी उपस्तिथि और प्रतिष्ठा स्थापित की थी। नाथ परम्परा को पूर्ण व्यवस्थित, क्रमबद्ध एवं विस्तारित करने वाले हठयोग के प्रवर्तक महायोगी गोरखनाथ मत्स्येंद्रनाथ के शिष्य और स्वयं आदिनाथ भगवान शिव के अवतार थे। **5**

गोरखनाथ अद्वितीय हठयोगी थे। उन्होंने हठयोग का प्रचार किया और उसके अनुसार अपने जीवन में निष्कल-सकल तत्व से परे शुद्ध चिन्मय परम शिव की अनुभूति की। उन्होंने अपने मन को समझाया कि तुम परब्रह्म होकर निर्द्वन्द्व हो जाओ, मूलाधारचक्र में रहनेवाले सूर्य को सहस्रार में चन्द्रमा से युक्त कर लो; त्रिकुटी में अनाहत- भ्रमर गूंज रहा है, ब्रह्मरन्ध्र का कपाट खोल कर महारस - अमृत का पान कर लो। जीवात्मा का मैल छुड़ा कर तथा सदोष नाड़ियों से वायु शुद्ध कर बँक नाडी सुषुम्ना में वायु भर कर मुक्त हो जाओ; महारस पान से मत्त होने पर ही योगीन्द्र-पद मिलता है। गोरख के सिद्धान्तानुसार इड़ा और

पिंगला-सूर्य और चन्द्रमा को रोक कर सुषुम्ना से प्राणवायु संचारित करना ही हठयोग है, इससे सिद्धि मिल जाती है। हठयोग से जड़ता अथवा अविद्या का नाश होता है, आत्मा और परमात्मा की एकता सिद्ध होती है। कुण्डलिनी शक्ति को शिव से समरस करना ही सिद्धि है। वायु, मन और बिन्दु में से किसी एक को वश में करने पर सिद्धि मिलने लगती है। गोरखनाथ के हठयोग ने ज्ञान, कर्म और भक्ति, यज्ञ तप और जप के समन्वय से भारतीय अध्यात्मजीवन को समृद्ध किया। गोरखनाथ मच्छेन्द्रनाथ के बड़े भक्त और पट्ट शिष्य थे। वे गुरु-परम्परा में बड़ा विश्वास रखते थे। योग-सिद्धि के लिये मच्छेन्द्रनाथ ने सिंहल की यात्रा की, सिंहल में पद्मिनी रमणी पर विजय पाना योगसिद्धि का लक्षण है। नेपाली जनश्रुति के अनुसार मत्स्येन्द्र अवलोकितेश्वर के अवतार थे। वे कौल थे, ब्राह्मण थे। मीनपाद, मच्छेन्द्रपाद, मच्छिन्द्रनाथ आदि उनके नाम थे। ऐसा कहा जाता है कि उन्हें साक्षात् शिव ने कामरूप नामक महापीठ में योग सिखाया था, उन्होंने कामरूप में साधना की थी वे बंगाल प्रान्त के वारणा ग्राम के ब्राह्मण थे। नववीं से ग्यारहवीं सदी को प्रभावित करने वालों में, अध्यात्मक्षेत्र में, जालन्धरपाद, कृष्णपाद, मच्छेन्द्रनाथ और गोरखनाथ के नाम बहुत प्रसिद्ध हैं। एक बार मच्छेन्द्रनाथ सिंहल देश की महारानी मंगला और कमला के रमणी-राज्य में पहुँच गये और शिवपार्वती के शापस्वरूप पूर्व ज्ञान को भूल कर विहार करने लगे। गोरखनाथ ने कदली वन में जाकर उनको स्त्री-राज्य से मुक्त कर पूर्व आत्मज्ञान का स्मरण दिलाया। ऐसा कहा जाता है कि एक बार गोरखनाथ बकुल वृक्ष के नीचे ध्यानस्थ थे, आकाश मार्ग से सिद्ध कृष्णपाद कहीं जा रहे थे, गोरखनाथ ने खड़ाऊँ फेंक कर योगबल से उन्हें नीचे गिरा दिया। कृष्णपाद ने कहा कि तुम्हारे गुरु कदली वन में सोलह सौ सेविकाओं द्वारा सेवित महारानी मंगला और कमला के साथ महाज्ञान भूलकर कामभोग में व्यस्त हैं, आयु के केवल तीन दिन शेष हैं। गोरखनाथ ने कहा कि तुम्हारे गुरु को गौड़ बंगाल के अधीश्वर गोपीचन्द ने मिट्टी में गड़वा दिया है। दोनों अपने गुरु को मुक्त करने के लिये चल पड़े। गोरखनाथ ने लंग और महालंग नामक दो शिष्यों को लेकर ब्राह्मणवेष में कदली वन में प्रवेश किया। लोगों ने ब्राह्मणवेष वाले गोरखनाथ से आशीष मांगे, सिद्ध की वाणी थी, फलवती होने लगी। उन्होंने योगी का वेष धारण किया, कदली वन के एक सरोवर के किनारे बैठी एक नवरमणी उनके दिव्य सौन्दर्य से मुग्ध हो गयी, उसने उन्हें मत्स्येन्द्र का पता बताकर कहा कि मंगला और कमला के राज्य में योगी का प्रवेश निषिद्ध है, केवल नर्तकी जा सकती है। गोरख ने नर्तकी का वेष धारण किया और राज द्वार पर जाकर मर्दल-ध्वनि की, मर्दल से शब्द उठने लगे कि हे गुरुदेव ! ऐसा कर्म न करो, इससे महारस अमृत क्षीण होता है। स्त्री के साथ रहने वाले पुरुष की अवस्था नदी तट के वृक्ष के समान होती है, उसके जीवन की कम आशा रहती है। माया नारी मन मोहती हैं, शुक्रस्खलन से अमृत का सरोवर सूख जाता है। मन में काम विकार होते ही सुषुम्ना के ऊर्ध्वं मुख ब्रह्मरन्ध्र से अमृत नीचे गिर पड़ता है, शरीर क्षीण होता है, मन का घोर मन्थन करनेवाली माया बाघिनी जब महारस को सोख लेती है तब पैर डगमगाने लगते हैं, पेट ढीला हो जाता है और सिर के बाल बगुले के पंखों की तरह श्वेत हो जाते हैं। रूप और कुरूप दोनों में माया-नारी बाघिनी विद्यमान रहती है। जिस माता ने संसार दिखाया, जन्म दिया उसी को गोद में चिपका कर सोना भयंकर पतन है। मुक्त होकर भी बन्धन में पड़ गये। हे मत्स्येन्द्र! तुम आदिनाथ शिव के शिष्य हो, बिन्दु की रक्षा करने वाला ही सच्चा अवधूत है। मच्छेन्द्रनाथ को महाज्ञान का स्मरण हो आया, वे कदली वन से बाहर आ गये, इस प्रकार गोरखनाथ ने अपनी गुरुनिष्ठा चरितार्थ की।

नेपाल में गोरखनाथ शिव के अवतार स्वीकार किये जाते हैं, गोरखा- राज्य उनके प्रति प्रगाढ़ भक्ति का प्रतीक है। एक बार नव नाथों को समेट कर वे बैठ गये, नेपाल के राजा ने मत्स्येन्द्र के अनुयायियों पर अत्याचार किया था, गोरखनाथ ने बारह साल का अकाल उत्पन्न किया, नेपाल नरेश ने मत्स्येन्द्र-यात्रा उत्सव किया, मत्स्येन्द्र की कृपा से गोरखनाथ ने नेपाल को अकाल से मुक्त किया। नेपाली जनश्रुति परम्परा में वे बौद्ध साधक अनंगवज्र अथवा रमणवज्र भी स्वीकार किये गये हैं पर यह बात नितान्त निश्चित हो गयी है कि वे शैव योगी थे।

एक बार गोरख हिमालय के चरण देश सिंहल में भ्रमण कर रहे थे। उज्जैन नरेश चन्द्रसेन के पुत्र महाराजा भर्तृहरि उस देश में अपनी रानी पिंगला के साथ विहार कर रहे थे। उनमें वैराग्य की वृत्ति पहले से ही जागृत थी। महाराजा भर्तृहरि मृग मार कर लौट रहे थे, मृगी करुण विलाप कर रही थी राजा के कोमल हृदय से उसका विलाप सहा न गया। महायोगी गोरखनाथ ने अपने योगबल से मृग को प्राण- दान दिया, महाराजा भर्तृहरि उनके शिष्य हो गये।

गौड़ बंगाल के शासक गोपीचन्द की माता मयनामती भर्तृहरि की बहिन थीं। गोपीचन्द्र के योग ग्रहण काल में गोरखनाथ उनके राज- प्रासाद में उपस्थित थे। वे फूल के रथ पर आरूढ़ होकर आये थे, गोपीचन्द को उन्होंने आशीर्वाद दिया था।

स्यालकोट के राजा पूरण गोरखनाथ के शिष्य थे। उनकी राजधानी गजवनी या गजपुर थी। वे सालिवाहन के पुत्र थे उनकी विमाता, जो नवयुवती थी, उनपर मोहित होकर काम प्रस्ताव कर बैठी, पूरण : ने अस्वीकार कर दिया, उनके हाथ-पैर काट कर उन्हें कुएँ में डाल दिया गया। पूरण की सगी माता रोते-रोते अन्धी हो गयी, गोरखनाथ ने पूरण का उद्धार किया, योग-दीक्षा दी, वे चौरंगी नाथ के नाम से प्रसिद्ध योगी हुए।

पंजाबी प्रेम-कथा में हीर और रांझा के नाम अमर हैं। भगवती झेलम के पवित्र तट पर गोरख-टीला रांझा की योग-साधना का प्रतीक है। रांझा को गोरखनाथ ने स्वयं योग दीक्षा दी थी। रांझा और हीर दोनों एक-दूसरे से प्रेम करते थे, हीर का विवाह दूसरे से हो गया, रांझा ने वैराग्य ले लिया। गोरखनाथ ने रांझा से कहा कि तुम को आजीवन भिक्षा माँगना पड़ेगा, गुरु का चिंतन करना पड़ेगा। संसार को सपना समझना पड़ेगा, नवयुवतियों को बहिन और बूढ़ी स्त्रियों को माता कहना होगा। रांझा अपनी परीक्षा में खरे उतरे। वे योगीवेष में नदी के दूसरे किनारे रहा करते थे। हीर और रांझा दोनों एक-दूसरे से मिला करते थे। एक रात को संयोग से नदी की मध्य धारा में पहुँचते-पहुँचते हीर डूब गयी, रांझा ने उसको बचाना चाहा पर वे भी मध्य धारा में अदृश्य हो गये।

मेवाड़ राज्य के संस्थापक बप्पा रावल की भी गोरखनाथ से भेंट हुई थी। गोरखनाथ ने उन्हें तलवार दी थी और उसी तलवार के बल से बप्पा रावल नें चित्तौड़ राज्य अथवा मेवाड़ राज्य की स्थापना की।

गोरखनाथ ने अपनी योग-साधना से शिवैक्य लाभ किया। भारत के विभिन्न प्रान्तों में उनके सिद्ध पीठ हैं। गोरखपुर जनपद में राप्ती के तट पर गोरखपुर नगर में उनका एक प्राचीन मन्दिर है। मन्दिर के सन्निकट ही वन- प्रदेश में उन्होंने मानसरोवर स्थान पर तप भी किया था, ऐसा कहा जाता है।

4- गोरख विशेषांक वर्ष 2, जनवरी 1977 अंक 1 पृ० 221

दर्शन और साधना प्रणाली पृ० 32-33

5- महायोगी गुरू गोरखनाथ- योगी आदित्यनाथ - प्र० 19

3. गुरु गोरखनाथ का आध्यात्मिक और साहित्यिक चिंतन-

गुरु गोरक्षनाथ महायोगी के साथ ही महान दार्शनिक भी थे। उनकी आध्यात्मिक चेतना अद्भूत एवं विलक्षण थी। तर्क और कल्पना के आधार पर उन्होंने परम सत्य की खोज नहीं की है, विवादास्पद दार्शनिक समस्याओं के विश्लेषण में भी उन्होंने स्वंय को कभी नहीं उलझाया। गोरखनाथ द्वारा उपदिष्ट दार्शनिक सिद्धान्त तथा योगानुशासन मन एवं बुद्धि के क्षेत्र से परे, उनके पारमार्थिक अनुभव पर आधारित है। योग साधना की शिक्षाओं के साथ जिन तात्विक सिद्धान्तों का प्रचार गुरु गोरखनाथ ने किया वे तार्किक विश्लेषण के परिणाम नहीं थे और न उनको विशुद्ध तार्किक रूप से का कभी उन्होंने प्रयास किया। उनके दर्शन का मूल आधार उनकी समाधि अवस्था की अतिमांनासिक और अतिबौद्धिक अनुभूतियाँ थी। महायोगी सामान्य जन को यह बताते थे कि सत्य एक है, चाहे किसी भी भार्ग से बुद्धि संधान करें। महायोगी ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपने दार्शनिक विचारों द्वारा व्यक्त किया है। नाथ सम्प्रदाय अपने आप में इतना गंभीर विषय है कि इस विषय पर शोध की असीम सम्भावनाएं है। वर्तमान समय में मानव जीवन में विभिन्न प्रकार के अवसाद, जीवन शैली जीवन की समस्याओं का समाधान गोरख दर्शन में उपलब्ध है आवश्यकता इस बात की है सम्पूर्ण विश्व के साहित्यकार, दार्शनिक, चिकित्सक, वैज्ञानिक गोरख दर्शन को, उनके सिद्धांतो को पाठ्यक्रम बनाकर नयी पीढ़ी को अवगत एवं उपलब्ध करावें।

नाथ योगी गोरखनाथजी ने संस्कृत और लोकभाषा में योग संबंधी साहित्य की रचना की है- गोरक्ष-कल्प, गोरक्ष-संहिता, गोरक्ष-शतक, गोरक्ष-गीता, गोरक्ष-शास्त्र, ज्ञान-प्रकाश शतक, ज्ञानामृतयोग, महार्थ मंजरी, योग चिन्तामणि, योग मार्तण्ड, योग-सिद्धांत-पद्धति, हठयोग संहिता आदि।

गोरखनाथ की तपोभूमि और धाम : गोरखनाथजी ने नेपाल और भारत की सीमा पर प्रसिद्ध शक्तिपीठ देवीपातन में तपस्या की थी, उसी स्थल पर पाटेश्वरी शक्तिपीठ की स्थापना हुई। भारत के गोरखपुर में गोरखनाथ का एकमात्र प्रसिद्ध मंदिर है। इस मंदिर को यवनों और मुगलों ने कई बार ध्वस्त किया लेकिन इसका हर बार पुनर्निर्माण कराया गया। 9वीं शताब्दी में इसका जीर्णोद्धार किया गया।

नेपाल के परम सिद्ध योगी : नेपाल की राजकीय मुद्रा (सिक्के) पर श्रीगोरक्ष का नाम है और वहाँ के निवासी गोरक्ष ही कहलाते हैं। गोरखा नाम की सेना गुरु गोरक्षनाथ की रक्षा के लिए ही थी। दरअसल, नेपाल के शाह राजवंश के संस्थापक महाराज पृथ्वीनारायण शाह को गोरक्षनाथ से ऐसी शक्ति मिली थी जिसके बल पर उन्हें खंड-खंड में विभाजित नेपाल को एकजुट करने में सफलता मिली, तभी से नेपाल की राजमुद्रा पर श्रीगोरक्षनाथ नाम और राजमुकुटों में उनकी चरणपादुका का चिह्न अंकित है।

गुरु गोरखनाथजी के नाम से ही नेपाल के गोरखाओं ने नाम पाया। नेपाल का गोरखा जिले का नाम भी भी गुरु गोरखनाथ के नाम पर ही पड़ा। गुरु गोरखनाथ सबसे पहले यहीं दिखे थे। यहां एक गुफा है, जहां गोरखनाथ का पग चिह्न है और उनकी एक मूर्ति भी है। यहां हर साल वैशाख पूर्णिमा को एक उत्सव मनाया जाता है जिसे रोट महोत्सव कहते हैं और यहां मेला भी लगता है।

<u>वाणी</u>

धन जोवन की करैन आस, चित्त न राखै कामिनि पास। नाद-बिंद जाके घट जर ताकी सेवा पारवती करें ॥ अहनिसि मन ले उन्मन रहें, गम की छांड़ि अगम की कहै । छोड़े आसा रहे निरास, कहै ब्रह्मा हूँ ताका दास ॥ मन में रहिणा भेद न कहिणा, बोलिया अमृत वाणी । आगिला अगनी होइबा अवधू, ती आपण होइवा पाणी ॥ पवन ही जोग पवन ही भोग, पवनइ हरै छतीसो रोग । या पवन कोइ जाणे भेव, सो आप करता आप देव ॥ ग्यान सरीखा गुरु न मिलिया, चित्त सरीखा चेला । मन सरीखा मेलू न मिलिया, तार्थं गोरख फिरे अकेला ॥
सबद हमारा खरतर खांड़ा, रहनि हमारी सांची। लेख लिखी न कागद माड़ी, सो पत्री हम बांची ॥
आवै संगै जाइ अकेला, ताथै गोरख राम रमेला ॥ काया हंस संगि आवा, जाता जोगी किनहूँ न पावा । जीवन जग में मूआ मसाणं । प्राण पुरिस कत कीया पयाणं । जामणमरणा बहुरि वियोगी, तार्थं गोरख भैला जोगी ॥

नाथ निरञ्जन आरती साजै, गुरु के सबदू झालरि बाजै । अनहद नाद गगन में गाजै, परम जोति तहाँ आप बिराजै । दीपक जोति अखण्डित बाती, परम जोति जागे दिन-राती । सकल भवन उजियारा होई, देव निरञ्जन और न कोई । अनत कला जाके पार न पावै, संख मृदंग धुनि वेनु बजावै । स्वाति बूंद ले कलश बंदाऊँ, निरति सुरति ले पुहप चढ़ाऊँ । निज तत नाव अमूरति मूरति, सब देवा सिर उदबुदि सूरति । आदिनाथ - नाती, मछेन्द्रनाथ-पूता, आरती करें गोरख अवधूता ॥

सुनि ज माई सुनि ज बाप, सुनि निरंजन आप आप । सुनि के परच माया सथीर, निश्चल जोगी गहर गमीर ॥ आऊँ नहीं जाऊँ निरञ्जन नाथ की दुहाई। प्यण्ड ब्रह्मण्ड खोजता, अम्हे सब सिधि पाई ॥ कायागढ़ भीतर नव लख खाई। दसवें द्वारि अवधू ताली लाई ॥ कायागढ़ भीतर देव देहुरा कासी । सहज सुभाइ मिले अविनासी ॥ बदन्त गोरखनाथ सुणौ नर लोइ । काया गढ़ जीतेगा बिरला कोई ।
मन रे ! राजाराम होंइले निरदंद । भूलै कमले साजि ले रविचन्द ॥ अनहद भोरी भवें त्रिवेणी के घाट । पीयले महारस फाटिल कपाट । चन्दा करिलेषूटा, सूरज करिलै पाट । नित उठि धोबी धोवै त्रिवेणी के घाट । भरिले नाड़ी षोड़ी, पूरिलै बंक नालि । बदन्त गोरखनाथ अवधू इमि उतरिबो पारि॥

<u>पद</u>

1.

गुर कीजै गहिला निगुरा न रहिला।

गुर बिन ग्यांन न पायला रे भाइला॥

दूधै धोया कोइला उजला न होइला।

कागा कंठै पहुप माल हंसला न भइला॥

आभा जैसी रोटली कागा ले जाइला।

पूछौं म्हारा गुरु नै कहां बैसि खाइला॥

उतर दिसि आविला पछिम दिस जाइला।

पूछौ म्हारा सतगुरु नै तिहां बैसि खाइला॥

चींटी केरा नेत्र मैं गज्येंद्र समाइला।

गावड़ी के मुख में बाघला बिवाइला॥

बारे बरसें बंझ ब्याई हाथ पाँव टूटा।

बदंत गोरखनाथ मछिंद्र ना पूता॥

व्याख्या-

हे मायाग्रस्त (गहिला) साधक! गुरु तो बनाना चाहिए। गुरुहीन रहना ठीक नहीं। हे भाई! गुरु के बिना तत्तवज्ञान नहीं मिलता। दूध से धोने पर भी कोयला उज्जवल (सफेद) नहीं होता, अर्थात् तीर्थ स्नान (दूधै) करने से मन (कोयला) शुद्ध नहीं होता। कौए के कंठ में फूलों की माला डालने से वह हंस नहीं बन जाता, अर्थात् मन (कागा) को पुराण (पहुप) का उपदेश पढाने से वह तत्वज्ञानी (हंस) नहीं बनता। काल (कागा) शरीर (आभा) को रोटी की तरह ले भागता है, मैंने गुरु जी से पूछा कि वह कहाँ इसे खाता है? हमारे गुरु जी ने समझाया कि वह उत्तर दिशा से आता है और पश्चिम दिशा में जाता है, वहाँ बैठकर खाता है, अर्थात् शब्द/अनहद (उत्तर) में आता है और पवन (परमेश्वर) में जाता है और पश्चिम दिशा में बैठकर खाता है, अर्थात् शब्द/अनहद (उत्तर) में आता है और पवन (परमेश्वर) में जाता है, वहाँ शरीर की मुक्ति होती है। इस प्रकार चींटी के नेत्र में हाथी समा जाता है, अर्थात् चींटी (मनसा/सात्विक बुद्धि) में गजेंद्र (स्थूल मन) लीन हो जाता है। फलस्वरूप गाय के मुख में बाघ उत्पन्न होता है, अर्थात् आत्मा (गावड़ी) को आत्म स्वरूप (बाघ) का ज्ञान होता है। बारह वर्ष में बाँझ ने जन्म दिया, अर्थात् बारह वर्ष में आत्मा को ज्ञान हुआ और माया के हाथ–पाँव टूट गए। मछंदर का पुत्र गोरख यह ज्ञान बता रहा है।

2.

ऐसा जाप जपौ मन लाई, सोहं सोहं अजपा गाई॥

आसण दिढ करि धरौ धियानं, अहनिसि सुमरौ ब्रह्मगियानं।

जाग्रत न्यंद्रा सुलप अहारं, काम क्रोध अहंकार निवारं॥

नासा अग्र निज, ज्यौ बाई, इडा प्यंगुला मधि समाई।

छसैं सहस इकीसौ जाप, अनहद उपजै आपहि आप॥

बंकनालि में ऊगै सूर, रोम रोम धुनि बाजै तूर।

उलटै कमल सहस्त्रदल बास, भ्रमर गुफा महिं जोति प्रकास॥

सुणि मथुरा सिव गारेख कहै, परम तत ते साधु लहै॥

व्याख्या-

हे अवधू! मन लगाकर ब्रह्म का सोहं सोहं जाप जपो। दृढ आसन लगाकर ध्यान धरो और दिन–रात ब्रह्म–ज्ञान का स्मरण करो। नींद से जागो, स्व ल्प आहार लो और काम, क्रोध व अहंकार को दूर करो। नाक के अग्रभाग में जो वायु है, वह इड़ा और पिंगला में समा जाए अर्थात् श्वास–प्रश्वास भी रुक जाए । मनुष्य दिनभर में इक्कीस हज़ार छह सौ साँस लेता है, इनमें अपने आप अनहद शब्द पैदा हो जाए। बंकनाल (एक नाड़ी जो ललाट के पश्चिमी भाग से चलकर तालु मूल में खुलती है) में प्रकाश उग आए और शरीर के रोम–रोम में अनहद ध्वनि हो।

सहस्रकमल उल्टे कमल के रूप में है। तब इससे सुगंधि आने लगती है। इस कमल तक पहुँचने के लिए भ्रमर गुफ़ा है जिसमें ब्रह्म की ज्योति का प्र काश हो जाता है। गोरख कहता है—हे मथुरा सुन! इस परम तत्त्व को साधु ही प्राप्त कर पाता है।

3.

अवधू ऐसा ग्यांन बिचारी।
ता मैं झिलमिल होत उजाली॥
जरा जोग रोग न व्यापै, ऐसा परखि गुरु करनां।
तन मन सूँ जे परचा नहीं, तौ काहे को पचि मरनां॥
काल न मिट्या जंजाल न छूट्या, तप करि हूवा न सूरा।
कुल का नास करै मति कोई, जै गुर मिलै न पूरा॥
सप्त धात का काया पींजरा, ता मांहि जुगति बिन सूवा।
सतगुर मिलै तौ ऊबरै बाबू, नहिं तै परलै हूवा॥
कंद्रप रूप माया का मंडण, अंबिरथा कांइ उलीची।

गोरख कहै सुणौ रे भौंदू, अरंड अमी कत सींची॥

व्याख्या-

हे अवधू! ऐसे ज्ञान का चिंतन करो जिससे झिलमिल करता ब्रह्म का प्रकाश दिखाई पड़े। इसके लिए परख कर ऐसा गुरु बनाओ कि शरीर में बुढ़ापा और योग साधना से उत्पन्न रोग न फैले। यदि शरीर और मन की स्थिति की जानकारी न हो तो योग–साधना के लिए प्रयत्न करके मरना उचित नहीं। यदि सम य की मार न मिटी, संसार की चिंताओं का जाल दूर न हुआ और तप करके सिद्ध (सूरा) न बन पाया तो सच्चे गुरु की प्राप्ति के अभाव में अपने परिवार का ना श नहीं करना चाहिए। यह शरीर रक्त, माँस, अस्थि आदि सात धातुओं से बना पिंजरा है और इससे स्वच्छंद होने की युक्ति न जानने वाला तोता (जीव) इसमें बैठा है। बाबू! सच्चा गुरु मिले तो रक्षा (ऊबैर) हो सकती है, नहीं तो मृत्यु (परलै) होगी ही। माया द्वारा निर्मित यह शरीर कामदेव का रूप है, इसे व्यर्थ में मत उ लीचो। गुरु गोरख कहते है-

हे मूर्ख! सुन, अरंड को अमृत से सींचने पर मधुर फल नहीं मिलता अर्थात् गुणहीन गुरु के अभाव में मूर्ख गुरु की शिक्षा से मोक्ष की प्राप्ति न होगी।

4.

आवै संगै जाइ अकेला।

ताथैं गारेख रांम रमेला॥

काया हंस संगि ह्वै आवा।

जाता जोगी किन्हूँ न पावा॥

जीवत जग मैं मूवां मसाणं।

प्राण पुरिस कत कीया पयाणं॥

जांमण मरणां बहुरि बियोगी।

ताथैं गोरख भैला जोगी॥

व्याख्या-

इस जग में आत्मा शरीर के साथ आती है, किंतु यहाँ से जाते समय अकेली जाती है। इसलिए गोरख राम में रमा है। हँस रूपी आत्मा शरीर के सा थ तो आती है, परंतु जाते समय यह आत्मा (जोगी) किसी को नहीं मिलती। जीवित काल में वह जग में दिखाई देती है,
मरने परशरीर श्मशान में पहुँच जाता है, परंतु प्राण पुरुष कहाँ चला जाता है, कुछ पता नहीं। जन्म लेना, फिर मरना और अलग हो जाना (इन स्थितियों को देख कर) गोरख योगी बन गया।

5.

कहा बूझै अवधू राई, गगन न धरनीं।

चंदन सूर दिवस नहीं रैनी॥

ऊँकार निराकार सूछिम न अस्थूलं।

पेड़ न पत्र फलै नहीं फूलं॥

डाल न मूल न बृच्छ न बेला।

साखी न सबद गुरु नहीं चेला॥

ग्यानें न ध्यानें जोगे न जुक्ता।

पापे न पुंये मोखे न मुक्ता॥

उपजै न बिनसै आवै न जाई।

जुरा न मरण वाकै बाप न माई॥

भणत गोरखनाथ मछिंद्र नां दासा।

भाव भगति आस न पासा॥

व्याख्या-

हे अवधू! क्या तुम ब्रह्म के विषय में जानना चाहते हो? वह ब्रह्म न आकाश है, न पृथ्वी है, न चंद्र है न सूर्य है, न रात है और न दिन है, वह इन सब से परे है। वह निराकार ब्रह्म न सूक्ष्म है, न स्थूल है। वह ब्रह्म किसी पेड़, पत्ते, फल, फूल, डाली, जड़, वृक्ष या बेल में भी नहीं है। वह साखी, सबदी, गुरु या शिष्य में नहीं मिलता। उसे ज्ञान, ध्यान, योग, मुक्ति, पाप, पुण्य, मोक्ष और मुक्त रूपों में देख पाना संभव नहीं। वह ब्रह्म न जन्म लेता है, न मरता है। उसका कहीं आवागमन भी नहीं। उसमें बुढ़ापा व मृत्यु नहीं होते। उसके माँ–बाप भी नहीं। मछंदर का शिष्य गोरख कहता है कि वह भावात्मक भक्ति की आशा के समीप भी नहीं है।

6.

चेला सब सूता, नाथ सतगुर जागै।

दसवैं द्वारि अवधू मधुकरी मांगै॥

सहजै खपरा सुषमनि डंडा।

पांच संगाती मिलि खेलैं नव खंडा॥

गंग जमन मधि आसण बालौ।

अनहद नाद काल मैं टालौ॥

गगन मंडल मैं रमूँ अकेला।

उरध मुखि बंकनालि अमी रस झेला॥

कथंत गारेखनाथ गुरु उपदेसा।

मिल्यां संत जन टल्या अंदेसा॥

व्याख्या-

शिष्य सब सोए पड़े हैं, केवल नाथ सगतुरु (ब्रह्म) ही जाग रहा है। इसलिए अवधू दसवें द्वार (ब्रह्मरंध) पर मधुकरी (अमृतरस) माँग रहा है। सहज साधना उसका खपर (कमंडल) है और सुषुम्ना डंडा है। वह पाँचों ज्ञानेद्रियों के साथ शरीर के नौ द्वारों में खेल रहा है। गंगा और यमुना (श्वास और प्रश्वास या चंद्र और सूर्य नाड़ियों) के मध्य वह धूनी जलाए बैठा है।

वहआकाश (ब्रह्म स्थान में अकेला रमा है और ऊर्ध्वमुख करके बंकनाल से अमृतरस ले रहा है। गोरखनाथ गुरु का उपदेश बता रहा है कि संतजन मिलने पर भ्रम दूर हो जाता है।

7.

नाथ बोले अमृतबाणीं।
बरसैगी कंबली भीजैगा पाणीं॥
गाडि पडरवा बाँधिलै खूँटा।
चलै दमामा बाजिलै ऊँटा॥
कउवा की डाली पीपल बासौ।
मूसा के सबद बिलइया नासै॥
चले बटावा थ की बाट।
सोवै डुकरिया ठौरै खाट॥
ढूकिले कूकर भूकिले चोर।
काढै धणीं पुकारै ढोर॥
ऊजड़ खेड़ा नगर मझारी।
तलि गागर ऊपर पणिहारी॥
मगरी परि चूल्हा धुँधाई।
पोवणहारी को रोटी खाइ॥
कामिनी जलै अंगीठी तापै।
बिचि बैसंदर थरहर काँपै॥
एक जु रढिया रढती आई।
बहू बिवाई सासू जाई॥
नगरी कौ पांणी कूवै आवै।
उलटी चर्चा गोरख गावै॥

व्याख्या-

नाथ अमृतवाणी बोलता है तो कंबल बरसता है और जल भीगता है (जब अनहद शब्द सुनाई देता है तो शरीर अमृतरस बरसाता है जिससे आत्मा आनंदित होती है। कटड़े को गाड़ देते हैं और खूँटे को बाँध देते हैं (माया समाप्त हो जाती है और मन संयमित हो जाता है)। दमामा चलता है और ऊँट बजता है (श्वास चलता रहता है और शरीर में ध्वनि सुनाई देती रहती है)। कौआ डाली बन जाता है और पीपल उस पर बैठता है (काल के स्थान पर परब्रह्म की स्थिति होती है)। चूहे की आवाज़ सुनकर बिल्ली भाग जाती है (मन को ज्ञान होने से कुबुद्धि दूर होती है)। यात्री चलता है परंतु मार्ग थक जाता है। (जीव रूपी यात्री सा धना पथ में आगे बढ़ता है और भवसागर रूपी मार्ग समाप्त हो जाता है)। बुढ़िया खाट पर सोती है और मन विश्राम लेते हैं।

कुत्ता छिपता है और चोर भौंकता है (मन शांत हो जाता है और संसार में शोर चलता रहता है)। मालिक निकलता है और पशु पुकारता है (ईश्वर दूर हो जाता है ओर माया पुकारती रहती है)। नगर है, परंतु उजड़ स्थान बन गया है (शरीर में माया के गुण नहीं रहते, वह उजड़ी बस्ती के समान सूना हो गया है)। गागर नीचे है ओर पनिहारी ऊपर है (सांसारिकता नीचे रह जाती है और आत्मा सहस्रार में ऊपर पहुँच जाती है) लकड़ी खड़ी पड़ी है

परंतु चूल्हा जल रहा है (माया निष्क्रिय रहती है और चित्त के संस्कार जल जाते हैं)। रोटी पोने वाली को रोटी खा रही है (कुमति को प्रभु का स्मर ण खा रहा है)। नारी जल रही है और अंगीठी ताप सेंक रही है (कामनाएँ जल रही है और आत्मा ब्रह्माग्नि का ताप अनुभव कर रही है)। बीच में वैश्वानर थर–थ

र काँप रही है (इस ब्रह्माग्नि में विकार नष्ट हो रहे हैं)। एक हठी नारी हठ करती आई तो बहू ने सास को जन्म दिया (आत्मा ने जब प्रभु का स्मरण किया तो बुद्धि ने सुरति को जन्म दिया)। नगरी का जल कुएँ में आ रहा है (शरीर सहस्रकमल तक पहुँच गया है।) इस प्रकार गोरख उल्टी चर्चा गा रहा है।

सबद

सबदहिं ताला सबदहिं कूँची, सबदहिं सबद जगाया।

सबदहिं सबद सूँ परचा हुआ, सबदहिं सबद समाया॥

वह ब्रह्म (सबद) ताला है, जब तत्त्वज्ञान (सबद) ने आत्मा (सबद) को प्रबुद्ध किया और आत्मा (सबद) का ब्रह्म (सबद) से परिचय हुआ तो आत्मा, ब्रह्म में लीन हो गई।

मरो वै जोगी मरौ, मरण है मीठा।

मरणी मरौ जिस मरणी, गोरख मरि दीठा॥

हे योगी! तुम मरो। मरने से आनंद मिलता है। तुम उसी प्रकार मरो, जिस मृत्यु से गोरख ने मरकर ब्रह्म को देखा है। अर्थात् हे योगी! तुम संसार से विरक्त हो जाओ, इस विरक्ति में आनंद है। तुम उसी प्रकार की विरक्ति प्राप्त करो जैसी गोरख ने प्राप्त की है।

कोई न्यंदै कोई ब्यंदै कोई करै हमारी आसा ।

गोरख कहै सुनौ रे अवधू यहू पंथ खरा उदासा ॥

गोरख कहता है–हे अवधू! कोई हमारी बुराई करे, कोई हमारी वंदना करे या कोई हमसे अशीर्वाद लेना चाहे, परंतु तुम इसका बुरा मत मानना क्योंकि हमारा पंथ तो विरक्त रहने का है।

बसती न सुन्यं, सुन्यं न बसती, अगम अगोचर ऐसा।

गगन सिखर महि बालक बोलै, ताका नाम धरहुगे कैसा॥

संसार (बसती) ब्रह्म (सुन्यं) नहीं है फिर भी संसार (बसती) में उसका अभाव (सुन्यं) नहीं। वह अप्राप्य (अगम्य) है। वह इंद्रियों से ज्ञातव्य नहीं है। ब्रह्म (बालक) की आवाज़ ब्रह्मरंध (गगन सिखर) में अनहद रूप में सुनाई देती है। उसे कैसे बताओगे? अभिप्राय है कि ब्रह्म स्थूल वस्तुओं की तरह उपलब्ध नहीं, अतः उसकी विद्यमानता दिखाई नहीं देती, परंतु वह नहीं है, ऐसा भी नहीं कह सकते। उसकी अनुभूति ब्रह्मरंध्र में होती है।

अवधू मन चंगा तो कठौती गंगा, बांध्या मेल्हा तौ जगत चेला।

बदंत गोरख सत सरूप, तत विचारै तै रेख न रूप॥

हे अवधू! यदि मन शुद्ध है तो कठौती का जल भी गंगाजल के समान पवित्र है। मन को बाँध कर रखने से संसार शिष्य बन जाता है। गोरख सत्य स्वरूप ब्रह्म के विषय में कहता हैयदि तत्त्व विचार करें तो ज्ञात होता है कि मन की कोई रूपरेखा नहीं, वह निराकार है।

हिंदू ध्यावै देहुरा मुसलमान मसीत।

जोगी ध्यावै परम पद देहुरा न समीत॥

हिंदू आखैं राम कौं, मुसलमान आखैं खुदाई।

जोगी आखैं अलख कौं, तहं राम अछै न खुदाई॥

हिंदू मंदिर में ईश्वर का ध्यान करते हैं और मुसलमान मस्जिद में। परंतु योगी लोग परमपद ब्रह्म में ध्यान रमाते हैं, वे मंदिर या मस्जिद में साधना हेतु नहीं जाते।हिंदू राम को पुकारते हैं और मुसलमान खुदा को। योगी अलक्ष्य ब्रह्म को पुकारते हैं, वे राम या ख़ुदा नहीं कहते।

हंसिबा खेलिबा धरिबा ध्यान, अहनिसि कथिबा ब्रह्म गियान।

हंसै खेलै न करै मन भंग, ते निहचल सदा नाथ के संग॥

योगी हँस, खेलकर भी अपना ध्यान लगाए रखे। दिन–रात ब्रह्म के ज्ञान की बात करे। हँसने–खेलने में मन की एकाग्रता नष्ट न करे। इस प्रकार का आचरण करने वाले योगी नाथ (शिव) के निकट रहते हैं।

पढि देख पंडिता रहि देखि सारं, अपणी करणी उतरिबा पारं।

बदंत गोरखनाथ कहि धूं साखी, घटि घटि दीपक पसु न आँखी॥

हे पंडित! तूने जो ज्ञान (सारं) पढ़ा उसे अनुभव (रहि) करके देख। कोई भी अपने कर्मों से ही भवसागर पार उतर सकता है। गोरख कहता है कि मैं साखी (उपदेश) कह रहा हूँ कि शरीर में ब्रह्म है, परंतु मूढ़ जीव (पसु) उसे पहचान नहीं पाता।

थोड़ा बोलै थोड़ा खाई, तिस घटि पवनां रह समाई।

गगन मंडल में अनहद बाजै, प्यंड पड़ै तो सतगुरु लाजै॥

जो योगी कम बोलता है और थोड़ा भोजन करता है, उसके शरीर में प्राण स्थिर रहता है। उसे ललाट में अनहद की ध्वनि होती है। जो शरीर (प्यंड) के चक्कर में पड़ा रहता है, वह ब्रह्म से दूर ही रहता है।

पढि पढि पढि केता मूवा, कथि कथि कथि कहा कीन्हा।

बढि बढि बहु घटि गया, पारब्रह्म नहीं चीन्हा॥

कितने ही लोग विद्या पढ़–पढ़ मर गए। कितनों ने उपदेश कर करके क्या पा लिया? कितने ही बड़े–बड़े बनकर चलते बने। परंतु वे परब्रह्म को न जान सके।

तूंबी मैं तिरलोक समाया त्रिवेणी रवि चंदा।

बूझो रे ब्रह्म गियानी अनहद नाद अभंगा॥

शरीर (तुंबी) में त्रिलोक अर्थात् शरीर का निम्न भाग पाताल, मध्य भोग पृथ्वी ओर ऊर्ध्व भाग (आकाश) समाया है। त्रिवेणी (भ्रूचक्र) में चंद्र और सूर्य नाड़ियाँ सुषुम्ना में समाहित हो जाती हैं। हे ब्रह्म ज्ञानी! इसे समझो। यहीं अखंड ब्रह्म नाद सुनाई पड़ता है।

पंथ बिन चलिबा अगनि बिन जलिबा, अनिला तृषा जहटिया।

ससंवेद श्री गोरख कथिया, बूझि ल्यो पंडित पढिया॥

मार्ग के बिना चलना, आग के बिना जलना, वायु से प्यास बुझाना (जहटिया) और स्वसंवेद (अपने अनुभव का ज्ञान), गोरख कहते हैं कि हे शास्त्र पढ़ने वाले पंडित! इसे समझ (बूझि ल्यौ)।

गगनि मंडल में गाय बियाई, कागद दही जमाया।

छांछि छांणि पिंडता पीवी, सिधां माखण खाया॥

मस्तिष्क (गगनि मंडल/सहस्रार) में जो ज्ञान उत्पन्न हुआ, उसे काग़ज़ की पोथियों में लिख दिया गया। पंडित उस ज्ञान को फोकट रूप में पढ़ते रहें, परंतु सिद्धों ने उस ज्ञान के सारतत्व के आनंद को अनुभव किया गोरख का मंतव्य है कि पोथी के ज्ञान और अनुभूति में बहुत अंतर है।

वेदे न सास्त्रे कतेबे न कुरांणे पुस्तके न बंच्या जाई।

ते पद जानां बिरला जोगी और दुनी सब धंधै लाई॥

वेद, शास्त्र , धर्मग्रंथ, क़ुरान और अन्य पुस्तकों में पढ़ने से उस ब्रह्म का ज्ञान नहीं होता। उस ब्रह्म (पद) को बिरला योगी ही जान पाता है। बाक़ी दुनिया अपने धंधे में लगी रहती है।

पंथि चले चलि पवनां तूटै नाद बिंद अरु बाई।

घटि ही भीतरि अठसठि तीरथ कहाँ भ्रमै रे भाई॥

मार्ग पर चलते रहने से शरीर, नाद, बिंदु और प्राण शिथिल होते हैं। इसलिए अधिक यात्रा करना उचित नहीं है। हे अवधू! अड़सठ तीर्थ तो शरीर में ही है, तुम कहाँ भूले–भटके घूम रहे हो।

गुरु की बाचा खोजै नाहीं, अहंकारी अहंकार करै।

खोजी जीवै खोजि गुरु कौं अहंकारी का प्यंड परै॥

अहंकारी साधक अहंकार करता है, वह गुरु के उपदेश (बाचा/वाणी) की खोज नहीं करता। गुरु की खोज करने वाला साधक गुरु को खोज कर जीवन पाता है, परंतु अहंकारी का शरीरपात शीघ्र हो जाता है।

पढि देखि पंडित ब्रह्म ज्ञानं, मूवां मुकति बैकुंठा थानं।

गाड्या जार्या चौरासी मैं जाई, सति सति भाखंत गोरख राई॥

हे पंडित! ब्रह्म ज्ञान समझ कर देख। मन निष्क्रिय (मूवां) हो जाने पर ही मुक्ति होती है और बैकुंठ में स्थान मिलता है। शवों को गाड़ने या जलाने से तो चौरासी लाख जन्मों में परिभ्रमण होता रहता है। गोरख जीवन का सत्य बता रहा है।

बाहरि न भीतरि नेड़ा न दूर, खोजत रहै ब्रह्म अरु सूर।

सेत फटक मनि हरि बींधा, इहि परमारथ गोरख सीधा॥

ब्रह्म न शरीर के भीतर सीमित है, न शरीर से बिल्कुल बाहर है, न समीप है और न दूर है। ब्रह्म और सूर्य भी इसे खोजते रहे। श्वेत स्फ़टिक के समान शुद्ध मन और प्राण (हीरै) पर संयम कर लेने पर परम अर्थ (मोक्ष) सिद्ध होता है, ऐसा गोरख का विचार है।

गोरख कहै सुणहु रे अवधू, जग में ऐसे रहणां।

आँखें देखिबा कानैं सुणिबा, मुखि तैं कछु न कहणां॥

गोरख कहता है–हे अवधू! संसार में इस प्रकार व्यवहार करो कि आँखों से देखो, कानों से सुनो, परन्तु मुख से कुछ मत बोलो।

गोरखनाथ की रचनाएं

गोरखनाथ केवल महायोगी ही नहीं थे, वे उच्च कोटि के विद्वान और कवि थे। उन्होंने संस्कृत और भाषा दोनों में ग्रन्थ रचना की। उनकी वाणी का निम्नलिखित रचनाओं में अच्छा संकलन मिलता है; वे रचनायें गोरक्ष-कल्प, गोरक्षसंहिता, गोरक्ष सहस्रनाम, गोरक्ष शतक, गोरक्ष पिष्टिका, गोरक्षगीता, विवेकमार्तण्ड, गोरक्षशास्त्र, ज्ञानप्रकाश शतक, ज्ञानशतक, ज्ञानामृत योग, नाड़ीज्ञान प्रदीपिका, महार्थमञ्जरी, योगचिन्तामणि, योग- मार्तण्ड, योगबीज, योगशास्त्र, योगसिद्धासनपद्धति, श्रीनाथसूत्र, सिद्धसिद्धान्त पद्धति, हठयोग, हठसंहिता तथा सिष्यादर्शन, प्राणसंकली, नृपतिबोध, आत्मबोध, पन्द्रह तिथि, मच्छिन्द्र-गोरख-बोध, ज्ञानतिलक, पंचमात्रा, गोरख- गणेश गोष्ठी, ज्ञानदीपबोध और दयाबोध तथा अनेक पद आदि हैं।

इनके ग्रंथों की संख्या 40 मानी जाती है, परंतु डॉ पीतांबर दत्त बड़थ्वाल ने इनकी 14 रचनाओं को प्रमाणिक मानकर गोरखवाणी नाम से उनका संपादन किया है। डॉ बड़थ्वाल द्वारा संपादित पुस्तकों की सूची इस प्रकार है– (1) शब्द, (2) पद, (3) शिष्या दर्शन. (4) प्राणसंकली. (5) नरवैबोध, (6) आत्मबोध, (7) अभयमुद्रा योग, (8) पंद्रह तिथि, (9) सप्तवार, (10) मछिन्द्र गोरखबोध, (11) रोमावली, (12) ज्ञान तिलक, (13) ज्ञान चौतीसा, (14) पंचमात्रा।

मिश्र बंधु-डॉ बड़थ्वाल के अतिरिक्त मिश्र बंधुओं ने गोरखनाथ के 9 संस्कृत ग्रंथों का परिचय दिया है– (1) गोरक्षशतक, (2) चतुरशीत्यासन, (3) ज्ञानामृत, (4) योगचिन्तामणि, (5) योग महिला, (6) योग मार्तण्ड, (7) योग सिद्धांत पद्धति, (8) विवेक मार्तण्ड (9) सिद्ध-सिद्धान्त पद्धति

योगनाथ स्वामी ने गोरखनाथ की 20 संस्कृत ग्रन्थों की सूची दी है- (1) अमनस्क योग (2) अमरौधा शासनम्, (3)सिद्ध-सिद्धान्त पद्धति,(4) गोरक्षसिद्धान्त संग्रह, (5) सिद्ध-सिद्धान्त संग्रह, (6) महार्थ मंजरी, (7) विवेक मार्तण्ड, (8) गोरक्ष पद्धति, (9) गोरक्ष संहिता, (10) योगबीज, (11) योग चिन्तामणि, (12) हठयोग संहिता, (13) श्रीनाथ-सूत्र, (14) योगशास्त्र (15)चतुरशीत्यासन्, (16) गोरक्ष चिकित्सा, (17) गोरक्ष पंच, (18)गोरक्ष गीता, (19) गोरक्ष कौमुदी, (20) गोरक्ष कल्प।

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने गोरखनाथ 28 ग्रंथों की का उल्लेख किया है, द्विवेदी जी ने लिखा है कि उन पुस्तकों में अधिकांश के रचयिता गोरखनाथ नहीं थे–1.अमनस्कयोग 2. अमरौधशासनम् 3. अवधूत गीता 4. गोरक्ष कल्प 5. गोरक्षकौमुदी 6. गोरक्ष गीता 7. गोरक्ष चिकित्सा 8. गोरक्षपंचय 9. गोरक्षपद्धति 10. गोरक्षशतक 11. गोरक्ष शास्त्र 12.गोरक्ष संहिता 13. चतुरशीत्यासन 14. ज्ञान प्रकाश 15. ज्ञान शतक 16. ज्ञानामृत योग 17. नाड़ीज्ञान प्रदीपिका 18. महार्थ मंजरी 19. योगचिन्तामणि 20. योग मार्तण्ड 21.योगबीज 22. योगशास्त्र 23. योगसिद्धांत पद्धति 24. विवेक मार्तण्ड 25. श्रीनाथ-सूत्र 26. सिद्ध-सिद्धान्तपद्धति 27. हठयोग 28. हठ संहिता।

डॉ० नागेन्द्रनाथ उपाध्याय ने गोरखनाथ के 15 ग्रंथो की सूची प्रस्तुत की है लेकिन इनकी प्रामाणिकता संदिग्ध है- 1. अमरौधशासनम् 2. अवधूत गीता 3. गोरक्ष गीता 4.गोरक्षशतक 5. विवेक मार्तण्ड 6. महार्थमंजरी 7. सिद्ध-सिद्धान्त पद्धति 8. चतुरशीत्यासन् 9. ज्ञानामृत 10. योग महिमा 11. योग-सिद्धान्त पद्धति 12. गोरक्ष कथा 13. गोरक्ष सहस्रनाम 14. गोरक्षपिष्टिका 15. योगबीज।

जनश्रुति अनुसार उन्होंने कई कठिन आसनों का आविष्कार भी किया। उनके अजूबे आसनों को देख लोग अचम्भित हो जाते थे। आगे चलकर कई कहावतें प्रचलन में आई। जब भी कोई उल्टे-सीधे कार्य करता है तो कहा जाता है कि 'यह क्या गोरखधंधा लगा रखा है।' गोरखनाथ का मानना था कि सिद्धियों के पार जाकर शून्य समाधि में स्थित होना ही योगी का परम लक्ष्य होना चाहिए। शून्य समाधि अर्थात समाधि से मुक्त हो जाना और उस परम शिव के समान स्वयं को स्थापित कर ब्रह्मलीन हो जाना, जहाँ पर परम शक्ति का अनुभव होता है। हठयोगी कुदरत को चुनौती देकर कुदरत के सारे नियमों से मुक्त हो जाता है और जो अदृश्य कुदरत है, उसे भी लाँघकर परम शुद्ध प्रकाश हो जाता है।

गोरखनाथ अमर हैं यदुनाथप्रणीत वल्लभदिग्विजय ग्रन्थ में गोरखनाथ की महिमा का पता लगता है। गिरिनार पर्वत के गोरख्य शिखर पर गोरखनाथ के सहसा प्रकट होने की कथा इस ग्रन्थ में मिलती है। गोरखनाथ ने शास्त्र सम्मत वैदिक योग-पद्धति के ज्ञान से जनता को जागृत कर सत्य और शिव का महाज्ञान दिया। वे महायोगी थे, महासिद्ध और महात्मा थे।

अध्याय-ग्यारह

गोरखनाथ मन्दिर और उसका विराट प्रभा मण्डल

भारतीय संस्कृति पुर्ननवा है। वैदिक वाङ्गमय से निःसृत चिन्तनधारा अद्यावधि अक्षुण्य प्रवाहित है। जीव और जगत का व्यवहारिक और आध्यात्मिक द्विविध पक्ष योगी मनीषी उनके समक्ष विचारणीय रहा। भौतिक ऐश्वर्य सर्वदा साधन रहा, साध्य नहीं। मैत्रेयी का उद्घोष था - " किमहं तेन कुर्याम् एनाहंमृतं स्यात"। शारीरिक क्षमता सीमा बध्हता से ग्रस्त है तो अध्यात्मिक ऐश्वर्य मैया से गौरवान्वित । शरीर क्षणभंगुर है तो आत्मा सास्वत। परमसत्ता किसी न किसी रूप में सृजनहार है। संचालक है निर्णायक है तो जीव अपने समस्त कर्मो का कर्ता और भोक्ता है। परमसत्ता और जीव के मध्य की कड़ी जितनी अविचल और द्रंण रहती है उतनी ही मात्रा में सर्जनालकता रहती है। पारस्परिक तारतम्य और सनेह सिकतता निरंतर विकासोन्मुख रहती है। स्वामी रैदास की वाणी से यही प्रतिध्वनित होता है जब उनकी भक्ति भावना स्नेहिल होकर मुखरित होती हे प्रभु जी तुम चन्दन हम पानी सांसारिक जीव और प्रभु के बीच एक परदा है। अज्ञान का, स्वार्थ का, वासना का । सम्यक विकास के मार्ग में यही बाधा है, रुकावत है। -महात्मा कबीर इस पद कथा-व्यथा को समझ पाये थे, जब वे अमर सन्देश दिये थे - " **घूंघट के पट खोल रे, तोहि पिया मिलेगें। हसी पिया मिलन की उत्कंठा, बेचैनी, आतुरता योगी, सन्तों में रस्यात्मक अनुभुति है। उपरोक्त तथ्यों पर विचार करने से ज्ञात होता है कि परम सत्ता और मनुष्यों के बीच अभिन्न सम्बन्ध है, वेदान्त मत के प्रर्वतक आचार्य शंकराचार्य ने इसे और स्पष्ट किया है- ब्रह्म सत्यम जगनमिथ्या, जिवो ब्रह्मियु नाप**

नाम परम्परा अति प्राचीन है, सम्पूर्ण विश्व को प्रत्येक क्षेत्र में आलोकित करने का काम नाथमत ने किया है। नाथपंथ का केन्द्र बिन्दु गोरक्षनाथ मंदिर को माना जा सकता है।

[श्रीनाथतिर्थावाली - 203-205]

में गोरखपुर को तीर्थ के रूप में स्वीकार करते बन्दना की गयी है-

तत्रादावास्ति गोरक्षपुराख्यं नगोरतम ।

तत्रोत्तराम गोरक्ष स्थानं सिधं सपुष्यदम् ॥

रामावतारे त्रेतायां स्थानमेतदुदीरितम् ।

वारुण्यां स्थानतः क्रोशे व तिरावती सहित ।।

तंत्र गोरक्षनाथस्य राजते काष्ठपादुका ।

अमुष्मै तीर्थराजाय भूया भूयो नमो नमः ॥

अर्थात -गोरक्षपुर (गोरखपुर) नाम का उत्तम नगर है। इसके उत्तर में गोरक्षनाथ जी का स्थान है। त्रेता युग के रामावतार में इस स्थान का वर्णन है। इस स्थान से एक कोस दूर पश्चिम दिशा में दुरावती (राप्ती) नदी बहती है। यहाँ गोरखनाथ जी की कष्टपादुका है। इस तीर्थराज को बार-बार प्रणाम है।

शिवावसार शिव महायोगी गोरखनाथ की पुण्य स्मृति को संजोय गोरखपुर की धरती को श्री गोरक्षनाथ की तपःस्थली बनने का सौभाग्य मिला। यह भूमि शिवावतारी भगवान गोरखनाथ की कृपा-पात्र बनकर पवित्र हुई। श्री गोरक्षनाथ जी ने जब इस भूमि को अपनी तपस्या स्थली के रूप में चुना, उस समय राप्ती नदी के तट पर स्थित यह भू-क्षेत्र निश्चित रूप से बनाच्छादित निर्जन क्षेत्र रहा होगा, जो किसी महायोगी के एकान्तवास एवं योग सिद्धि के अनुकूल था। यह कहना कठिन है कि व्यवहारिक योग प्रर्वतक गोरखनाथ की यह तपस्थली कब जन निवेश बनी और इसने कब गाँव, नगर, कस्बा, शहर का रूप धारण किया। उल्लेख मिलता है कि रुद्रपुर (देवरिया - जनपद) के सतासी नरेश विश्राम सिंह निःसंतान थे। उन्होंने उनवल (जनपड गोरखपुर) राजवंश के राजकुमार होरिल

अर्थात मंगल सिंह को गोद लिया। मंगल सिंह ने महायोगी की तपस्थली के दक्षिण में एक छोटा सा नगर बसाया, जिसका नाम गुरु गोरखनाथ जी की पुण्य स्मृति में गोरखपुर रखा। यह नगर बाद में सतासी राज की राजधानी बना ।

उत्तर- प्रदेश के पूर्वांचल का यह भाग गोरखपुर नगर की स्थापना से पूर्व प्राचीन भूगोल में आर्यावर्त के अन्तर्गत मध्यदेश के मध्य में विद्यमान कारूपथ का रमणीय प्रदेश था । पर्वतराज हिमालय के चरणतल में सरयू, राप्ती, छोटी गण्डक, बड़ीगण्डक और आमी आदि चोटी-बड़ी नदियों, ताल तलैया से विचिंत इस क्षेत्र के गर्भ में ही प्राचीनतम मानव सभ्यता का उदय हुआ। यह पुण्यभूमि श्रेष्ठतम संस्कृति का वाहक बनने के साथ-साथ भारतीय धर्म सस्कृती की क्रमिक विकासयात्रा, अनेक शासन प्रणालियों, राजनितिक घटनाक्रमो राजवंशों के उत्थान-पतन अनेक महापुरुषों का मौन- मुखर साक्षी रही है। पुर्वांचल का यह विवह भूभाग महायोगी गोरक्षनाथ की तपस्थली होने के कारण 'गोरखपुर के रूप में प्रचलित हुई।

आधुनिक गोरखपुर महानगर की विकासयात्रा उन्नीसवी शताब्दी की दहलीज पर प्रारम्भ होती है। 1800 ईस्वी के पूर्व गोरखपुर बिखरे हुए मुहल्लों का एक कस्बा था। 1869 इसी में लगभग 50 हजार की आबादी वाले मुहल्लों को मिलाकर इसे नगरपालिका श्रेणी- तीन का दर्जा प्राप्त हुआ । उस समय इस नगर की सीमा लगभग पच्चीस वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में विस्तारित थी। 1891 ईस्वी में यह नगर गोरखपुर मंडल का मुख्यालय बना। आजादी के बाद 1949 ई० में गोरखपुर को नगर पालिका श्रेणी-दो का दर्जा प्राप्त हुआ तथा इस नगर का क्षेत्रफल 38:85 वर्ग किलोमीटर हो गया। इस कालखण्ड तक गोरखपुर की पहचान श्री गोरखनाथ मंदिर से हो चुकी थी। गोरक्षपीठादिश्वर महन्त दिगविजयनाथ जी महाराज का प्रखर तेजस्वी नेतृत्व गोरखपुर को प्राप्त हो चुका था। गोरखपुर की यह भुमि धर्म-संस्कृति के साथ-साथ सामाजिक राजनितिक चेलना के जागरण के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त करें लगा था। विश्व प्रसिद्ध धार्मिक एवं आध्यात्मिक प्रेस, गीताप्रेस की नींव 1932 इश्वी में रखी जा चुकी है ।

गीता प्रेस की स्थापना से हिन्दू धर्म संस्कृत की अमूल्य धरोहर धार्मिक ग्रन्थों के प्रकाशन के साथ गोरखपुर को हिन्दू धर्म प्रसार की भी प्रतिष्ठा प्राप्त होने लगी। **गोरखनाथ मंदिर से उस मत से सम्बंधित शिव एवं महायोगीयों ने निरपेक्ष भाव से केवल उत्तर भारत ही नही, वरण सम्पूर्ण भारत एवं विश्व को आध्यात्मिक शैक्षिक योगिक, सामाजिक एवं राजनैतिक रूप से एक दृष्टि से योगदान दिया है।**

जो सम्पूर्ण मानवता के लिए हितकर, लाभकारी एवं उपयोगी है। गोरखपुर में इस्तिथ श्री गोलानाथ मकेर महायोग को पान की साधना स्थली है। नाथपंत्र की परम्परा के अनुसार गुरु गोरखनाथ देश काल से परे योगपुरुष है । उनका अस्तित्व सार्वदेशिक- सार्वकालिक है। वे मध्य एशिया में अपनी सिद्धि के लिए सम्मानित है तो भारत में भी लब्धप्रतिष्ठित है। गोरखनाथ जी की सिद्ध परमारा भारत के बाहर भी तिब्बत, नेपाल, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बांगलादेश, बर्मा, भूटान आदि देशों में विद्यमान है। महायोगी श्री गोरक्षनाथ जी के सम्बंध में उपलब्ध आख्यानों से स्पष्ट है कि वे शिव स्वरूप है, अजर एवं अमर है। वे कार्यसिद्ध योगेश्वर है। साक्षात् भगवान शिव ने महाकाल योगशास्त्र में कहा है- "मैनें योग मार्ग के प्रचार के लिए गोरक्ष रूप धारण किया है।"

अहमेवास्मि गोरक्षो मद्रुपं तन्निबोधत् ।
योग मार्ग प्रचाराय मया रूपमिदं धृतम् ॥

गोरखनाथ जी का व्यक्तिव्त दर्शन साक्षात् नाथयोग का स्वरुप दर्शन है। नाथसम्प्रदायगत परम्परा और अनुसुति के अनुसार अभिनव शिव गोरक्षनाथ जी चारों युगों के विद्यमान है। सतयुग में पंजाब में त्रेतायुग में गोरखपुर, द्वापर में द्वारिका और कलयुग में सौराष्ट्र के काठियावाड में गोरखगढ़ी में श्री गोरक्षनाथ जी का प्राकट्य हुआ। भारत के विभिन्न स्थानों पर गुरु गोरखनाथ जी ने तप किया है, इसका प्रमाण राजा मानसिंह द्वारा संग्रहित "श्रीनाथतीर्थावाली" ग्रन्थ मे उपलब्ध होता है। इसी क्रम में उन्होंने गोरखपुर को अपनी तपस्थली बनाया, और लम्बे समय तक साधनारत रहे। गुरु गोरक्षनाथ जी के गुरु मत्सेंद्रन्नाथ द्वारा उन्हें देवला की प्राप्ति हुई, गोरखनाथ जी एकान्तवासको महत्व देते थे। महायोगी गोरखनाथ जी ने कहा कि "मैंनें पिंड में सम्पूर्ण ब्राण्ड को ढूंढ़कर समस्त सिधिया प्राप्त कर ली है।

श्री गोरखनाथ मंदिर एवं गोरखपुर का इतिहास पृ० 26-27

राप्ती नदी के तट पर जिस निर्जन क्षेत्र को अपनी साधना भूमि बनाई वह क्षेत्र आज उन्हीं के नाम पर गोरखपुर नाम से प्रतिष्ठित है। कहा जाता है कि श्री गोरक्षनाथ जी एक बार हिमांचल प्रदेश के कांगड़ा स्थान में ज्वाला देवी का दर्शन करने पहुंचे। देवी के वहाँ उन्हें हुहनारे के विशेष आग्रह पर श्री गोरखनाथ जी ने कहा "आप चूल्हा जलाकर खिचड़ी के लिए पात्र में जल गर्म करे, मैं भिक्षा मांगकर अन्न स्वयं लाता हूँ।" चूँकि देवी के स्थान पर तामसी पदार्थों का भोग लगता था, अतः श्री गोरखनाथ जी वहाँ भोजन पाना नहीं चाहते थे। वे अपना अक्षय पात्र (खप्पर) लेकर खिचड़ी भागते हुए गोरखपुर आ गये, न तो उनका अक्षयपात्र भरा और न वे ज्वालादेवी के स्थान पर वापस गये। राप्ती तट की हरीतिमा और रमणीयता ने उन्हें आकर्षित कर तपस्या योग्य स्थान दिया और श्री गोरक्षनाथ जी तपस्यारत हो गये। श्रद्धालूओं के उनके खप्पर को खिचड़ी से भरने का प्रयास किया, किन्तु वह भरा नहीं जा सका। आज भी मकरसंक्रान्ति के महापर्व पर उनके खप्पर को खिचड़ी से भरने का प्रयत्न भक्त करते है। मकरसंक्रान्ति पर्व पर विश्व स्तर का एक महीने तक चलने वाला मेला रहता है।

त्रेतायुग में गोरखपुर के श्री गोरखनाथ मन्दिर परिसर में स्थित मुख्य मन्दिर के गर्भ गृह में, जहाँ गुरु गोरखनाथ जी की संगमरमर की प्रतिमा स्थापित है, उनके चारों तरफ अनेक देवी-देवताओं की मूर्तिया स्थापित है, वहीं वे अखंड दीप एवं अखण्ड धूनी प्रज्वलित कर तपस्यारत हुए।

श्री गोरक्षनाथ मन्दिर शिवावतारी महायोगी गोरक्षनाथ द्वारा प्रवर्तित नामपंथ का सर्वोच्य केन्द्र थे । नाथ परम्परानुसार श्री गोरखनाथ मन्दिर के महन्त श्री गुरु गोरक्षनाथ के प्रतिनिधि स्वरुप होते है। इस मंदिर के महन्त नागपंथी योगियो के आध्यात्मिक नेता माने जाते है। श्री गोरखनाथ मन्दिर के मठ के महंतों की परम्परा गुरु-शिष्य परम्परा का महानतम् आदर्श है। इस मंदिर के महन्त का आवास 'श्री गोरक्षपीठ' है। नाथपंथ की परम्परा अनुसार इस मठ या मन्दिर के महत्व या योगी को हो गोरुपीठाधीश्वर के पद से विभूषित किया जाता है, जाना जाता है। मठ अथवा श्री गोरक्ष पीठ का अधिपति अथवा अधीश्वर एवं श्री गोरखनाथ मन्दिर के महंत पद पर नाथ परंपरानुसार अभिशिप्त नाथ पंथ का योगी श्री गोरक्षपिथादिश्वर पद से सुशोभित होता है। श्री गोरक्ष पीठ का पीठाधिश्वर एवं महंत जीवन पर्यन्त इस अध्यात्मिक पीठ पर आसीन रहता है । पीठाधिश्वर द्वारा उत्तराधिकारी शिष्य उनकी समाधि से पूर्व नाथपंथ के योगेश्वरों द्वारा पीठाधिश्वर महंत पद पर परमपरानुसार अधिकृत कर दिया जाता है। इस प्रकार श्री गोरक्षपीठ एवं श्री गोरक्षनाथ मन्दिर की महन्त परम्परा गुरु-शिष्य की सर्वश्रेष्ठ परम्परा का वाहक है। श्री गोरक्षनाथ मंदिर की महंत परम्परा भी एक मौलिक विशेषता है कि पदासीन महंत धर्म आध्याल योग के साथ साथ राष्ट्रीयता एक लोक कल्याण को सर्वोपरि मानते हैं। इस पंथ की मान्यता है कि हिंदुत्व हि राष्ट्रीयता है। राष्ट्रीयता की इस अवधारणा को गोरक्षपिथादिश्वर श्री महतों ने श्री गोरखनाथ मन्दिर एवं उसकी महंत परम्परा के साथ एकाकार किया। परिणामतः नाथ पन्त की परम्परा के साथ 'हिंदुत्व' अर्थात भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठ परम्पराये से श्री गोरखनाथ मन्दिर के आयोजनो-उत्सवो- समारोहो- पर्व-त्योहारों का हिस्सा बनी। शारदीय नवरात्र एवं विजय दशमी पर्व पर देवी पूजन, कन्या पूचन, शस्त्र- पूजन एवं गोरक्षपिठादिश्वर महंत का भक्तों श्रदुलू द्वारा श्री गोरखनाथ मंदिर से मानसरोंवर से रामलीला मैदान तक श्री गोरक्षपठादिश्वर महन्त की विजय यात्रा, उनके द्वारा श्रीराम के राज्यभिषेक की परम्परा श्री गोरखनाथ मंदिर की महन्त परम्परा का हिस्सा बन चुका है। हिन्दुओं के महत्वपूर्ण पर जनमानस मंदिर का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। हिन्दू धर्म के सभी महत्वपूर्ण त्यौहार श्री गोरखनाथ मन्दिर में परम्परागत रूप से मनाये जाते हैं और श्री महायोगी गोरक्षपीठाधीश्वर उस पर्व एवं त्योहार का अनिवार्य हिस्सा बनते है ।

ऐसी मान्यता है कि इस विश्व प्रसिद्ध मन्दिर का जो भी दर्शन करता है उसे मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है। गोरखनाथ नादिर की महंत परम्परा में अनेक महत महान योगी हुए हैं जो अपने अध्यात्मिक ज्ञान और लोक शक्ति के लिए प्रसिद्ध है ,इस मंदिर के महान योगी , सन्तो ने लोक-कल्याण एवं जनसेवा के माध्यम से है। सामाजिक राजनैतिक, आध्यात्मिक चेतना को जाग्रत किया और सामाजिक परिवर्तन में अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज कराई।

श्री गोरखनाथ मन्दिर एवं गोरखपुर का इतिहास- प्र०-29-31

ऐतिहासिक दृष्टि एवं कालक्रम की दृष्टि से श्री महन्त पिठादिश्वर विवरण उपलब्ध नहीं है तब भी महन्त वरदनाथ जी महाराज श्री गोरक्षपीठ के प्रथम महन्त कहे जाते हैं। उनके पश्चात् प्रसिद्ध महायोगी सिद्ध महन्तों में बाबा अमृतनाथ, परमेश्वरनाथ, बुदनाथ, रामचन्द्रनाथ, वीरनाथ, अजबनाथ तथा विचारनाथ जी के नाम विशेष उल्लेखनीय है। 1958 से 1786 ई. तक श्री बालनाथ जी के एक उच्चकोटी के अलौकिक शक्ति सम्पन्न सिद्धयोगी थे। उनके पश्चात के महन्तों

की परम्परा सुज्ञात है। अन्य महन्त जी लोगों का कालक्रम इस प्रकार मिलता है। 1811 ई. तक श्री माननाथ जी, 1831 तक श्री मेहरनाथ जी, 1855 ई. तक श्री गोपालनाथ जी, 1880 ई. तक श्री बलभद्रनाथ जी महाराज, 1889 ई. तक श्री दिलवरनाथ जी 1896 ई. तक। इसके पश्चात् श्री सुन्दरनाथ जी इस मंदिर के महन्त बने। तत्पश्चात विख्यात चमत्कारिक प्रतिभा सम्पन्न शिव महायोगी गम्भीरनाथ जी महाराज को मंदिर का अधिकार और दायित्व सौपा गया। गम्भीरनाथ जी महाराज के पश्चात् उनके शिष्य की ब्रह्मनाथजी महंत बने। उसके पश्चात् 1934 में एकान्त साधना में लीन महायोगी विश्व विख्यात् हिन्दू नेता महन्त श्री दिगविजयनाथ जी महाराज पीठाधीश्वर बनें। उन्होंने अपने पुरुषार्थ और दिव्य चेतना द्वारा इस महान सिद्धपीठ गोरखनाथ मंदिर विस्तार का अभिनव स्वरूप प्रदान किया। इस महापुरुष एवं कालजयी के ब्रह्मलीन होने पर उनके एकमात्र शिष्य लोक कल्याण कारक हिन्दू धर्म के गौरव महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज हुए। वर्तमान में 12 सितम्बर 2014 को महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज के ब्रह्मलीन हो जाने के बाद उनके सुयोग्य एवं महान चिस्तक योगी आदित्यनाथ जी महाराज वर्तमान समय महत्व पद को सुशोभित से गौरवान्वित कर रहे हैं।

श्री गोरखनाथ मन्दिर के आध्यात्मिक वैशिष्टय के संदर्भ में कहा जा सकता है उत्तर भारत में यह मन्दिर अपना विशिष्ट स्थान रखता है। लोग इस मंदिर को चमत्कारिक मठ या मंदिर इसलिए भी मानते है कि यहाँ लोगों की मुराद या मनौती पूर्ण होती है, यह मठ या मन्दिर लोगों को वापस अपने तरफ आकर्षित करता है। उतर भरत नेपल सहित लोगों को शिक्षा, स्वास्थ्य एक अनेकों प्रकार की सुविधाए निर्वाध रूप से प्रदान की जाती है।

इस पवित्र भूमि पर महायोगी गोरखनाथ जी ने बहुत दिनों तक गहनतम् समाधि का अभ्यास किया था। मुस्लिम आक्रानताओं द्वारा अनेकों बार क्षति पहुंचाने के पशचात भी यह पवित्र भूमि आध्यात्मिक, दार्शनिक, एवं यौगिक संस्कृति के एक जीवित केन्द्र के रूप में अपना अस्तित्व अछुष्य रखा है। महायोगी गोरक्षनाथ जी यह अनुभव करते थे कि योगेश्वर आदिनाथ भगवान शिव कृपापूर्वक मानव रूप में उनके बीच में उपस्थित है। लोग शिव का स्वरूप मानकर ही श्री गोरक्ष्नाथ की पूजा करते है। महायोगी का व्यक्तित्व अमर और सर्वव्यापक था। उनके द्वारा स्थापित स्थान मठ या आश्रम विकसित होता गया और साथ ही उसके अध्यात्मिक प्रभाव के क्षेत्र का भी विस्तार होता गया। भारत सहित अनेक देशों के लोग आज भी गोरखनाथ जी के नाम से प्रेरणा प्राप्त करती है। सन्त, महात्मा एवं मनिषियों की परम्परा की दृष्टि से यह भूमि उर्वर मानी जाती है। वैसे भी भारतीय सनातन परम्परा में गुरु-शिष्य की परम्परा देखी जाती है, किन्तु नाथ मत में गुरू - शिष्य की परम्परा बहुत अधिक ही विशिष्ट है। मठ के महन्त से भारतीय संस्कृति, सामाजिक राष्ट्रीय जीवन के उत्थान में वैसे ही उनकी सक्रियता की अपेक्षा की जाती है, जैसे महायोगी गोरखनाथ जी द्वारा सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन का शंखनाथ किया था। गोरखपुर का यह मंदिर या मठ निश्चय ही इस दृष्ट्रि से बड़ा भाग्यशाली रहा है कि इसकी महंत परम्परा में कुछ विलक्षण एवं चमत्कारिक साधना वाले महायोगी हुए हैं जो अपने आध्यात्मिक ज्ञान और असाधारण योग शक्ति के लिए दूर-दूर तक विख्यात रहे है। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में भी इस पीठ की महत्वपूर्ण सक्रियता रही है। आज भी यह पीठ सामाजिक रूप से लोगों को स्वास्थ, शिक्षा, सेवा-भाव को अपना माध्यम बना कर अमीर-गरीब सभी की मदद करता है। इस मठ पर आप भी असंख्य लोग असहाय और पीड़ित होकर याचना करने आते है एवं उनके उद्देश्यों की पूर्ति महन्त द्वारा पूरित किया जाता है। धर्म एवं आध्यात्म के साथ ही साथ जन कल्याणकारी एवं लोक भयाणकारी भूमिका के कारण भी है।

भारत 'भूमि और योग परम्परा- योग पद्धति अति प्राचीन है। योग भारत की अमूल्य धरोहर है। भगवान शिव पतंजलि, गोरखनाथ जी की प्रतिष्ठा सर्वविदित है। श्री गोरखनाथ मन्दिर गुरु श्री गोरखनाथ की योग परम्परा का वाहक है। भारत भूमि को समझने के लिए योग एवं आध्यतम के मर्म को जानना होगा। भारत के आध्यातम का सम्बन्ध भारत की साधना की धारा में समाहित है। यही कारण है कि अनादिकाल से ही भारत भूमि, महाज्ञानीयों, महाध्यानियों, महातपस्वियों, महायोगियों, तथा महातत्व चिंतको की भूमि रही है। भारत की साधना पद्धतियों में नाथ संप्रदाय और इसके प्रति महायोगी गोरखनाथ एवं अन्य नाथ सिद्धों प्रमुख स्थान है। नाथ पंथ के योगियों ने योग के व्यावहारिक महत्व को जन सामान्य तक पहुंचाने का कार्य किया है। राजा से रंक तक नाथपंथ से प्रभावित है।

भारत के भक्ति आंदोलन के पूर्वी सबसे प्रभावशाली आध्यामिक जागरण का अधिमान महायोगी गुरु गोरखनाथ का योग माही ही था। भारत की कोई ऐसी भाषा नहीं है कि जिसमें महायोगी श्री गोरखनाथ जी से सम्बन्धित साहित्य उपलब्ध न हो। इसलिए तो संत तुलसीदास जी बोल पड़े - गोरख जगाया जोग, भगति भगायो भोग। गोरखनाथ की योग साधना का पूरा प्रभाव भारत के सगुण एवं निर्गुण दोनों साहित्यों पर समान रूप से देखा जा सकता है। इसी का परिणाम था कि प्राचीनकाल से चले आ रहे जाति पाँति का भेद, वर्णसम धर्म, हुआ-छूत ,गरीब - अमीर, ऊँच-नीच के सभी भेदभाव मिटते हुए दिखाई दिये। योग मार्ग के गूढ रहस्यों को सरल बनाकर जनभाषा में व्यक्त एवं प्रचालित करना महायोगी गोरखनाथ का समाज के प्रति महत्वपूर्ण योगदान है। महायोगी से प्रभावित होकर कालान्तर में अनेक भिन्न-भिन्न मत नाथ सम्प्रदाये में अन्तर भुक्त हो गए। भारत के योगियों विशेष रूप से नाथपंथ योगियों की भाषा मात्र हिन्दी, संस्कृत साहित्य तक ही नहीं वान मराठी, तेलगु, उड़िया, बगाली, तमिल, कन्नड नेपाली राजस्थानी, कशमीरी, असमी, तिब्बती, चीनी, साहित्य पर भी पड़ा।

श्री गोरखनाथ मंदिर एवं गोरखपुर का इतिहास- 53

वर्तमान समय में लोग कुंठा, अवसाद एवं दिशाहीन तथा अन्वंचित गतिविधियों की तरफ उन्मुख हो रहे है, सामयिक बुराइयां फैल रही है नैतिकता का ह्रास हो रहा है, ऐसे में महायोगी गोरखनाथ का दर्शन, उपदेश, योग एवं साधना पद्धति का महत्व बढ़ जाता है। नाथ सम्प्रदाय का दर्शन समाज को एक नई दिशा दे सकती है। यही साधना-पद्धति आज आम जन को शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक रूप से संतुलित एवं स्वस्थ बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकती है। भारत भूमि पर उत्तर दिशा में स्थित गोरखनाथ मन्दिर नाथ परम्परा का विश्व विख्यात केंद्र माना जाता है। मानव जीवन एवं समाज के विकास हेतु प्रत्येक क्षेत्रों में इस मन्दिर को अभूतपूर्व योगदान रहा है वर्तमान में इस मन्दिर का महत्व और अधिक बढ़ गया है, दूर-दूर एवं विदेशों से भी पर्यटक व्यक्तिगत विकास एवं शान्ति प्राप्त करने हेतु यहाँ नमन एवं आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु आते हैं।

अध्याय-बारह

योगिराज बाबा गंभीरनाथ

आपा भाजिबा सतगुरु षोजिबा,

जोग पन्थ न करिबा हेला।

फिरि फिरि मनिषा जनम न पाइबा,

करि लै सिध पुरिस सू मेला॥

अर्थ- अहंकार तोड़ना चाहिये-नष्ट कर देना चाहिये। सत्गुरु की खोज करनी चाहिये। योगपंथ की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। बार-बार मानव योनि नहीं मिलती इसलिये सिद्ध पुरुष का सत्संग करना चाहिये।

- गोरखनाथ

योगिराज बाबा गम्भीरनाथ, सिद्ध पुरुष, योग मानव और समाधि योगसिद्ध महात्मा थे। उनका प्रभाव असाधारण है। उन्होंने नाथ सम्प्रदाय के योग सिद्धांत को पुनर्जीवन दिया। वह भी तब, जब पीठ के सामने चुनौतियां थीं। उसके वजूद पर संकट था।

उस समय उन्होंने पीठ की धार्मिक, आध्यात्मिक और सांस्कृति परंपरा के संरक्षण के साथ संवर्द्धन भी किया। ब्रह्मालीन महंत दिग्विजय नाथ उनको अपना परम गुरु मानते थे। वह कहते थे कि इस मठ और मंदिर की सेवा में में जो कुछ कर सका हूं, वह सब मेरे परमगुरु और गुरु की कृपा का नतीजा है। मेरी सभी कर्मशक्तियों और विचारशक्तियों के मूल में यही दोनों हैं। मठ और मंदिर की जो तरक्की हुई और हो रही है सबके पीछे उनकी ही प्रेरणा और शक्ति है। मेरे जीवन में कई बार बड़े संकट आए, पर उनकी कृपा से बिना किसी कष्ट के उनसे छुटकारा मिल गया।

नाथयोग परंपरा में पिछले सात-आठ सौ वर्षों में उनके जैसे योगी का दर्शन नहीं हुआ। हिमालय से कन्याकुमारी तक बीसवीं सदी में इतने सिद्ध योगी का दर्शन दुर्लभ था। उन्होंने मानवता को योग-शक्ति से संपत्र किया। गुरु गोरखनाथ के जीवन से आध्यात्मिक प्रेरणा लेते हुए उन्होंने हठयोग, राजयोग और लययोग के क्षेत्र में सिद्धि प्राप्त की। बीसवीं सदी में उन्होंने गुरु गोरखनाथ की योग साधना पद्धति का प्रतिनिधित्व करते हुए योग एवं ज्ञान का समन्वय किया। अपने समय में वे योग रहस्य के सर्वमान्य मर्मज्ञ, माया के बंधन से मुक्त सिद्ध पुरुष थे। उन्होंने महर्षि पतंजलि और गुरु गोरक्षनाथ की योग परंपरा का समन्वय किया। उन्होंने गुरु गोरखनाथ की योग परंपरा के जरिये शिव-शक्ति की एकात्मकता कुंडलिनी जागरण का साक्षात्कार किया। वे शांति एवं गंभीरता के उज्चलतम रूप थे। बड़े-बड़े संतों और महात्माओं ने उनके चरणों में अपनी श्रद्धा समर्पित कर आत्ममोक्ष का विधान प्राप्त किया। गोरखनाथ मंदिर को उनके आध्यात्मिक प्रभाव से नवजीवन मिला। अपने समय में मंदिर स्थित एक छोटे से कमरे में रहने वाले इस अल्पभाषी सिद्ध योगी और संत का प्रभाव दूर देश तक फैला था।[33]

योगिराज गम्भीरनाथ सिद्ध पुरुष थे। उन्होंने हठयोग, राजयोग और लययोग के क्षेत्र में आत्मसिद्धि प्राप्त की। नाथयोग-परम्परा में इधर सात-आठ सौ वर्षों में उनके ऐसे योगी का दर्शन नहीं हुआ था। निस्सन्देह महात्मा गम्भीर- नाथ पतञ्जलि और गोरखनाथ के समन्वय -संस्करण थे। ऋद्धियों और सिद्धियों ने

[33] गोरक्षपीठाधीश्वर महंत योगी आदित्यनाथ,दैनिक जागरण हिंदी संस्करण, 5 अप्रैल 2016

उनके चरण-चिन्तन को अपना सौभाग्य - सिन्दूर समझा। वे शान्ति और गंभीरता के उज्ज्वलतम रूप थे। बड़े-बड़े सन्तों और महात्माओं ने उनके चरण में अपनी श्रद्धा समर्पित कर आत्म मोक्ष का विधान प्राप्त किया। हिमालय से कन्या अन्तरीय तक के भूमि-भाग में बीसवीं शताब्दी में इतने बड़े योगी का दर्शन अन्यत्र दुर्लभ था। उन्होंने मानवता को योग -शक्ति से सम्पन्न किया । उन्होंने योग-ब्रह्म-शिव का आत्मसाक्षात्कार -लाभ किया। भारत के प्रायः समस्त तीर्थो को अपनी चरण-धूलि प्रदान कर योगिराज गम्भीरनाथ ने उनकी महिमा में विशेष अभिवृद्धि की। माना, योगिराज का प्राकट्य उस समय हुआ था जब भारत विदेशी शक्ति की अधीनता में था पर योगिराज गम्भीरनाथ के लिये तो भौतिक जगत की पराधीनता का कोई महत्व ही नहीं था, वे तो जागतिक प्रपंच से अतीत थे । वे रहस्यपूर्ण ढंग से आध्यात्मिक क्रान्ति का सृजन कर रहे थे; उनके योग-उदय काल में विदेशी शासन को निकाल बाहर करने के लिए बंगाल तथा अन्य प्रान्तों में सशस्त्र राजक्रान्ति की योजना कार्यरूप में परिणत हो रही थी, महात्मा गम्भीरनाथ ने राजनीतिक क्रान्तिकारियों की आध्यात्मिक पिपासा की तृप्ति की, अगणित बंगीय युवकों ने उनके पथ-प्रदर्शन में गम्भीर, अखण्ड और शाश्वत स्वतन्त्रता ज्योति-आत्मशान्ति का दर्शन किया।

महात्मा गंभीरनाथ ने सिद्धयोगपीठ- गोरखनाथ की तपोभूमि गौरव- को अपनी तपस्या से अक्षय समृद्धि प्रदान की। वे मौलिक योगस्थ थे। श्रीमद् भागवत गीता में योगिराज कृष्ण ने घोषणा की:-

'योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना।

श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः।।

संपूर्ण योगियों में भी जो श्रद्धावान योगी मेरे में लगे हुए अंतरात्मा से मुझे ही भजता हैं, वह मुझे परमश्रेष्ठ मान्य है--में अटल विश्वास थे। वे अंतात्मा में स्वस्थ थे। वे अपने समय के परम योगी थे- धर्मतत्व के मर्मज्ञ और परम आत्मज्ञ थे। उनके समकालीन महात्मा विजय कृष्ण गोस्वामी की मान्यता थी कि भारत देश में उनका ऐसा योगी कोई दूसरा नहीं है। विजय कृष्ण उनके परम योगविभूति से बहुत प्रभावित थे। महात्मा गंभीरनाथ की योग-साधना शैव दर्शन के सिद्धांत का प्रतीक थी, वे शैव योगी हुए भी शुद्ध सच्चिदानंद तत्व के निरपेक्ष और अनुयायी थे। उनके योग गोरखनाथ की योग-पद्धति का अनुगमन था। साक्षात् महंत गंभीरनाथ ने गोरख की योग-साधना पद्धति की बीसवीं सदी में पूर्ण प्रतिनिधित्व किया और आजीवन अपने संप्रदायिक- नाथयोग पारंपरिक सिद्धांत पर अडिग रह कर आत्मसाक्षात्कार प्राप्त किया। योग और ज्ञान का समन्वय किया।

महात्मा गम्भीरनाथ के पूर्वाश्रम के सम्बन्ध में कुछ भी निश्चित रूप से कहना या लिखना आसान नहीं है। उनका जन्म विक्रमीय उन्नीसवीं शताब्दी के चौथे चरण में कश्मीर राज्य के एक गाँव में समृद्ध परिवार में हुआ। उनकी शिक्षा-दीक्षा साधारण ढंग की थी। बचपन से ही उनके जीवन में योगाभ्यास के साम्राज्य में प्रवेश करने के पहले विषय-सुख की सुविधा उपलब्ध थी पर उनका ध्यान उसकी ओर तनिक भी नहीं था। पूर्वाश्रम के सम्बन्ध में पूछने पर वे कहा करते थे कि प्रपञ्च से क्या होगा। उनकी सांसारिक पदार्थों में तनिक भी आस्था नहीं थी। धन-परिवार आदि से वे स्वाभाविक रूप से विरक्त थे ।

जब वे युवावस्था में प्रवेश कर रहे थे, उन्हें सूचना मिली कि गाँव में एक योगी का आगमन हुआ है। योगी ने श्मशान में अपना निवास चुना था। वे योगी से श्मशान में मिलने गये। उन्होंने बड़ी श्रद्धा से कहा कि महाराज, घर पर मेरा मन नहीं लगता है। संसार के विषय-भोग मुझे काट खाते हैं। मैं योगाभ्यास करना चाहता हूँ।' योगी नाथ सम्प्रदाय के थे। उन्होंने गम्भीरनाथ से कहा, 'तुम, गोरखपुर जाकर गोरखनाथमठ के महन्त योगी बाबा गोपालनाथ जी महाराज से योग- दीक्षा लो। मैं तुम्हारी महत्वाकांक्षा से बहुत प्रसन्न हूँ। तुम उच्च कोटि के योगी होगे ।' गम्भीरनाथ योगी के आदेश से गोरखपुर के लिये चल पड़े। वे गोरखनाथ मठ में आये। लोग उन्हें देख कर आश्चर्य चकित हो गये। उनके पास पर्याप्त रूपये थे, उन्होंने अच्छे से अच्छा रेशमी कपड़ा पहन रखा था। वे देखने में बड़े सौम्य और सुंदर थे । महन्त गोपालनाथ से मिलने पर उनके चरणों में उन्होंने आत्मार्पण कर दिया। गोपालनाथ महाराज ने नाथ सम्प्रदाय के योगमार्ग में दीक्षित कर लिया। राजकीय वेष का परित्याग कर गम्भीरनाथ ने कौपीन धारण कर योगसाधना के निष्कंटक राज्य में प्रवेश किया। गोपालनाथ जी महाराज ने उनकी शान्त मुद्रा से प्रसन्न होकर 'गम्भीरनाथ' नाम प्रदान किया, निस्सन्देह वे गम्भीरता के परम दिव्य सजीव समुद्र ही थे। बाबा गोपालनाथ की महती कृपा-दृष्टि पाकर मठ में निवास कर योगाभ्यास करने लगे। उनकी गुरुनिष्ठा उच्च कोटि की थी। वे गुरु की प्रत्येक आज्ञा का पालन करते थे । उन्होंने बड़ी तत्परता और

तप से अपने आध्यात्मिक उत्तरदायित्व को निर्वाह किया। वे मौन रहा करते थे, सत्यचिंतन और मठ के आवश्यक कार्यों के समीचीन सम्पादन में लगे रहते थे। बाबा गोपालनाथ ने धीरे-धीरे उनको मठ के उपास्य की पूजा-अर्चना में नियुक्त करना आरंभ किया, गम्भीरनाथ की उपस्थिति से गोरखनाथ मठ में शान्ति साकार हो उठी। उन्हें गुरु ने प्रसन्न होकर पुजारी का कार्यभार सौंपा। इस प्रकार गम्भीरनाथ के तपोमय साधना-जीवन में कर्मयोग- भक्तियोग के उदय ने ज्ञानयोग- परम अन्तरस्थ ज्योति के दर्शन का पथ प्रशस्त कर दिया। बाबा गोपालनाथ की प्रसन्नता और कृपा से अभिभूत गम्भीरनाथ की प्रारम्भिक योग-साधना पर देवी पाटन के योगी शिवनाथ का भी अमित प्रभाव था।

गम्भीरनाथ ने योग-साधना के लिये काशी की पैदल यात्रा की। वे वनमार्ग से बिना भूख-प्यास की चिता किये चले जा रहे थे। उनका प्रभु की कृपा पर दृढ विश्वास था। तीसरे दिन वे भूख से नितान्त परिश्रान्त हो गये पर शेष शारीरिक शाक्ति पर निर्भर होकर वे पुनीत महातीचं की ओर बढ़ते जा रहे थे। रास्ते में उनकी एक परिचित ब्राह्मण से भेंट हुई। वह उन्हें देखते सारी स्थित समझ गया। निकटस्थ गाँव से दूध-चूरा लाकर भोजन करने का आग्रह किया, वह जानता था कि गम्भीरनाथ ने भोजन के सम्बन्ध में रास्ते में किसी से कुछ बातचीत न की होगी। गम्भीरनाथ ने भगवत कृपा समझ कर भोजन कर लिया। काशी पहुँचने पर उन्होंने कुछ दिनों तक गंगा के एक निर्जन तटीय स्थान में रह कर योगाभ्यास आरम्भ किया। वे नित्य गंगा में स्नान कर भगवान विश्वनाथ का दर्शन करने जाया करते थे। भीड़ से बहुत दूर रहते थे, इसलिये भिक्षा माँगने नहीं जाते थे। उनकी त्यागमयी वृत्ति ने साधकों और जिज्ञासुओं को खींच लिया। योगी गम्भीरनाथ ने जन-सम्पर्क को साधना का बहुत बड़ा विघ्न समझा, उन्होंने काशी छोड़ दिया। वे प्रयाग आ गये। प्रयाग में गंगा-यमुना के पुनीत संगम की दिव्यता से सम्प्लावित झूसी तट की एक गुफा में रह कर वे तप करने लगे। दैवयोग से मुकुटनाथ नाम के एक नाथयोगी ने उनके भोजन तथा सेवा आदि की व्यवस्था की। बाबा गम्भीरनाथ अनवरत रात-दिन उस गुफा में योगाभ्यास करने लगे। इस प्रकार वे प्रयाग में तीन साल तक रह गये। उनका आध्यात्मिक स्तर उच्च तल पर पहुँच गया, उन्होंने महती योग-शक्ति प्राप्त की|

साधक को छः अवस्थाओं से निकलना पड़ता है, वे कुटीचक बहूदक, हंस और परमहंस तुरीयातीत और अवधूत की स्थिति हैं। एक स्थान पर रह कर साधना करने वाले को कुटीचक विशेषण से अलंकृत किया जाता है। बहदूक अनेकों स्थानों में घूम-घूम कर तप और साधना करने वाले की संज्ञा है। हंस, परमहंस, तुरीयातीत और अवधूत की अवस्था में साधक जीवन्मुक्ति सद्ज्ञानप्राप्ति और आत्मसाक्षात्कार से समृद्ध होता है। योगिराज गम्भीरनाथ अभी तक कुटीचक व्रत का अनुष्ठान किया। प्रयाग में तप करने के बाद उन्होंने बहूदक जीवन अपनाया। उन्होंने अकेला फिरने का संकल्प किया, महायोगी गोरखनाथ की उक्ति :--

'ग्यान सरीषा गुरु न मिलिया चित्त सरीषा चेला।
मन सरीखा मेल न मिलिया तीर्थं गोरख फिर अकेला॥'

ज्ञान के समान गुरु नहीं मिला, न चित्त के समान चेला मिला, इस लिए गोरख अकेला फिरते हैं- उनकी स्मृति में जाग उठी। उन्होंने परिव्राजक जीवन में प्रवेश किया। उन्होंने पूरे छः साल तक परिव्राजक जीवन का रसास्वादन किया। वे प्रायः पैदल भ्रमण करते थे। उन्होंने कैलाश, मानसरोवर, अमरनाथ, द्वारका, गंगासागर तथा रामेश्वर आदि तीर्थों को अपनी उपस्थिति से धन्य किया। उन्होंने भगवती नर्मदा की परिक्रमा चार साल में पूरी की और अमर कण्टक पर अधिक समय तक रह गये। नर्मदा परिक्रमा के समय उनके जीवन में एक विलक्षण घटना घटी थी जो उनकी अपार योगशक्ति और महती तपस्या की परिचायिका है। गम्भीरनाथ नर्मदा की परिक्रमा कर रहे थे। एक तटीय रम्य स्थान में उनका मन लग गया, वहाँ एक कुटी थी। गम्भीरनाथ ने उसी कुटी में निवास किया। पहले दिन उन्हें एक बहुत बड़ा साँप दीख पड़ा। वह उनका दर्शन कर अदृश्य हो गया। दूसरे और तीसरे दिन भी प्रभात काल में गम्भीरनाथ ने उसको देखा, उन्होंने इस ओर कुछ ध्यान न दिया, वे अपने गम्भीर चितन में तल्लीन थे। तीसरे दिन कुटी में रहने वाला एक ब्रह्मचारी जो कुछ दिनों के लिये बाहर था, आ गया। वह उस कुटी

में बारह साल से निवास करता था। गम्भीरनाथ के आगमन से वह बहुत प्रसन्न हुआ। उसने आप बीती सुनायी कि मैं इस कुटी में बारह साल से रहता हूँ। इसी के निकट एक बहुत बड़े महात्मा सर्प के वेष में रहते हैं। उन्हीं के दर्शन के लिये मैं ठहरा हूँ। महात्मा गम्भीरनाथ ने सर्प-दर्शन की बात कही; ब्रह्मचारी आश्चर्यचकित हो गया। उसने कहा कि महाराज, आप का तपोबल स्तुत्य है, जिस कार्य को मैं बारह साल में भी न कर सका, वह बिना किसी प्रयास के आप ने कर दिखाया, आप धन्य हैं कि सर्प-वेष में रहने वाले महात्मा ने तीनों दिन आप पर कृपादृष्टि की। गम्भीरनाथ ने नर्मदा परिक्रमा समाप्त की।

सम्वत् १९३७ वि. में योगी गोपालनाथ ने शिवधाम प्राप्त किया। गम्भीरनाथ ने परिभ्रमण-काल में इस घटना को सुना। वे गुरु के प्रति आदर प्रकट करने के लिये गोरखपुर आये, तत्कालीन महन्त बलभद्रनाथ के विशेष आग्रह पर वे कुछ दिनों तक मठ में रह गये। उसके बाद वे बिहार प्रान्त के गया जनपद के कपिलधारा स्थान में आकर तप करने लगे।

गया की पहाड़ियों में चिरकाल से तपस्वी, योगी और सन्त जन अपना निवास बनाते आये हैं। गयानगर से थोड़ी दूर पर अत्यन्त शान्त, रमणीय और निर्जन कपिल धारा स्थान में योगी गम्भीरनाथ ने तब तक तप करने का निश्चय किया जब तक अवधूत अवस्था की प्राप्ति न हो जाती। अक्कू नाम के एक व्यक्ति ने उनके चरणों में श्रद्धा समर्पित की और उनके भोजन आदि की व्यवस्था तथा सेवा का सहज अधिकार प्राप्त कर लिया। गम्भीरनाथ के पास कौपीन, एक कम्बल और खर्पर के सिवाय और कुछ भी न था। कुछ दिनों के बाद नृपतिनाथ नाम के एक श्रद्धालु योगसाधक ने अक्कू का कार्य हलका कर दिया। नृपतिनाथ ने योगी गम्भीरनाथ की सेवा में बड़ी तत्परता दिखायी। योगी गम्भीरनाथ की प्रसिद्धि बड़ी तेजी से बढ़ने लगी। वे सदा शान्त चित्त से ध्यानस्थ रहते थे, मौन उनकी वाणी का अलंकार था, संकेत उनके भावों का प्रहरी था, निर्जनतामयी योगसाधना ही उनकी जीवन-संगिनी थी, प्रकृति की कमनीय कान्ति से सम्पन्न कपिलधारा पहाड़ी की दिव्यता उनकी लीला की रंगभूमि थी। रात में दूसरी पहाड़ियों पर तप करने वाले सिद्ध महापुरुष और योगी जन उनका दर्शन करने तथा सत्संग प्राप्त करने आया करते थे। गया के एक घनी पण्डा माधव लाल ने उनके आशीर्वाद से एक गुफा का निर्माण कराया। योगी गम्भीर- नाथ उसी गुफा में प्रवेश कर तप करने लगे। दर्शकों और मिलने वालों की भीड अपने आप कम होने लगी। गुफा में कोई दूसरा व्यक्ति नहीं प्रवेश कर सकता था। वे केवल एक पाव दूध नित्य लेते रहते थे। प्रत्येक मंगलवार को थोड़ी देर के लिये वे गुफा से बाहर आकर दर्शकों और भक्तों को अपने दर्शन से तृप्त करते थे। तीन वर्ष तक उन्होंने यही क्रम रखा। उसके बाद वे प्रत्येक पूर्णिमा और अमा- वास्याको गुफा के बाहर आते थे। बारह साल के कठिन योगाभ्यास के बाद उन्होंने इस नियम को भंग कर दिया। उसके बाद वे तीन मास तक गुफा से बाहर न आये। श्रद्धालुओं की विकलता बढ़ने पर उन्होंने दर्शन दिया। इस प्रकार कपिल- धारा में उन्होंने अवधूत-अवस्था प्राप्त कर ली। उनकी पवित्र उपस्थिति से उस तपोभूमि में सत्य, शान्ति, अहिंसा और दिव्यता का साम्राज्य स्थापित हो गया।

कपिल धारा आश्रम में एक बार रात को कुछ चोर आये। उन्होंने आश्रम पर पत्थरों के टुकड़े बरसाये। योगिराज एक कम्बल ओढ़ कर कुटी के बाहर लेटे हुए थे। पत्थर के एक टुकड़े से उन्हें थोड़ी-सी चोट आ गयी। योगी नृपतिनाथ तथा दूसरे भक्तों ने चोरों का पीछा करना चाहा। गम्भीरनाथ ने चोरों से कहा कि साधुओं को तंग नहीं करना चाहिये। उन्होंने बड़े प्रेम और मधुरता से कहा कि कुटी का दरवाजा खुला हुआ है, तुम भीतर जा कर जो कुछ भी आवश्यक समझो ले लो। उनके आदेश से नृपतिनाथ ने दरवाजा खोल दिया। चोर आश्चर्य चकित हो गये। वे बाबा के चरण पर नत मस्तक हो गये, कहा कि महाराज, हम गरीब है, हमारे परिवार वाले कई दिनों से भूखे मर रहे हैं। बाबा ने कहा वत्स, मैं तुम्हारी विवशता समझता हूँ। तुम जब चाहो, कुटी से आकर भोजन ले जा सकते हो, तुम्हें कोई न रोकेगा।' चोरों ने अपनी आवश्यकता के अनुसार थोड़ा बहुत सामान ले लिया। बाबा की चरण-धूलि मस्तक पर चढ़ा कर चल पड़े। दूसरी बार आश्रम में आने पर उनके जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन देखा गया। वे चोर नहीं, सत्यवादी हो गये। बाबा गम्भीरनाथ के आशीर्वाद के रूप में उन्होंने चावल, कम्बल आदि सामग्री प्राप्त की। गम्भीरनाथ की करुणा ने उनकी कृतज्ञता को श्रद्धा और भक्ति में रूपान्तरित कर दिया। बाबा प्रेम, माधुर्य, अहिंसा और शान्ति के साकार-सजीव विग्रह थे।

बाबा गम्भीरनाथ सिद्ध महापुरुष थे पर वे सिद्धि और चमत्कारों के प्रयोग से बहुत दूर रहते थे। शान्ति को ही वे बहुत बड़े चमत्कार की वस्तु स्वीकार करते थे। परिव्राजक - काल में महाराणा उदयपुर तथा महाराजा काश्मीर आदि ने बड़ी चेष्टा की कि योगीराज की चरण-धूलि राजप्रासाद में पड़ जाय पर ऐसा कभी सम्भव नहीं हो सका। बाबा के प्रसिद्ध सेवक माधव लाल पण्डा ने बड़ा प्रयत्न किया कि एक क्षण के लिये भी बाबा मेरे घर चलें पर बाबा गम्भीर- नाथ अपने नियम पर अडिग रहे। एक बार उनका निजी सेवक बहुत बीमार पड़ गया। उसका भाई मुन्नी दौड़ता हुआ बाबा के पास आया, आँखों में अश्रु भर कर कहा कि महाराज अक्क का अन्तिम समय है, उसे जीवन प्रदान कीजिये अथवा चलते समय उसे अपनी चरण-धुलि से आशीर्वाद दीजिये, वह आपके दर्शन के लिये विकल है। करुणासमुद्र परमशान्तिमय बाबा गम्भीरनाथ आसन से उठ बैठे। वे अक्कू के घर आये; शरीर ठन्डा हो रहा था, प्राण निकलने ही वाले थे कि बाबा का दर्शन करते ही अक्क की चेतना लौट आयी। बाबा ने उसे प्राण दिया, स्वस्थ होने पर वह बाबा की सेवा में संलग्न हो गया। बाबा गम्भीरनाथ की महिमा अकथनीय है। जिस समय कपिलाश्रम में योगिराज गम्भीरनाथ तप कर रहे थे, उसी समय महात्मा विजय कृष्ण गोस्वामी आकाश- गंगा पहाड़ी पर अपने कुछ भक्तों के साथ साधना में तल्लीन थे। वे योगिराज की योग-शक्ति से बहुत प्रभावित थे और उनके चरणों में अडिग थदा रखते थे। वे कभी-कभी योगिराज का दर्शन करने कपिल पारा वाया करते थे और प्रायः आधीरात के समय पधार कर दो-एक घंटे उनके में रह कर सत्संग और भजन की सात्विकता और मधुरता का आस्वादन करते थे। महात्मा गम्भीर- नाथ आधी रात में सितार बजाकर भगवान का भजन गाया करते थे। उनकी मंगीत-माधुरी और दिव्य वादन- कला मे हिंसक जीव जन्तु दिव्य प्रेमोन्माद में अहिंसक बन कर उनकी चरण-धूलि से अपने बाप को परम तृप्त मानते थे। कभी-कभी कपिल धारा की पहाड़ी की चोटी पर गम्भीरनाथ के सितार और भजन से आकृष्ट होकर आधीरात में प्रेमोत्माद से विह्वल होकर महात्मा विजय कृष्ण गोस्वामी आया करते थे। एक दिन रात की निर्जनता में बाबा गम्भीरनाथ पहाड़ी पर सितार बजाते हुए घूम रहे थे, भगवान के चरणों में हृदय का मधुर संगीत समर्पित कर रहे थे। चारों ओर ज्योत्सना फैली हुई थी। महात्मा विजय कृष्ण गोस्वामी ने शिष्यों से कहा, 'अहा, कितना मधुर संगीत बाबा गम्भीरनाथ अपने आराध्य देव के चरणों में अर्पित कर रहे हैं। बावा, साक्षात् प्रेमरूप हैं, ऐसे योगी का दर्शन भारत वर्ष में, इस समय दुर्लभ है। बाबा में सृष्टि स्थिति, प्रलय की शक्ति है। वे क्षणमात्र में संसार का सृजन और संहार कर सकते हैं। उन्होंने प्रेम का माधुर्य इस तपोभूमि के कण-कण में भर दिया है।'

सम्वत् १९५० वि. में वे कपिलधारा आश्रम से प्रयाग कुम्भ मेला में हुए थे। उनकी गम्भीर मुद्रा और शान्ति तथा तप-माधुरी ने दर्शकों का पधारे मन सहज में ही मुग्ध कर लिया। प्रत्येक समय उनके निवास-स्थान पर सन्तों और साधुओं की भीड़ लगी रहती थी। अपने शिष्यों के साथ महात्मा विजय कृष्ण उनका दर्शन करने आये थे। महात्मा विजय कृष्ण के शिष्य मनोरञ्जन ठाकुर ने कुम्भ की एक घटना का वर्णन किया है जिससे बाबा की तपस्या और शान्तिमयी त्याग-वृत्ति का पता चलता है। एक धनी व्यक्ति ने योगिराज के हाथ से सौं कम्बलों का वितरण कराना चाहा। बाबा उस समय गम्भीर चितन में थे। थोड़ी देर के बाद उन्होंने आँख खोली, अपने सामने कम्बलों का ढेर देखा। उन्होंने हाथ से वितरण का संकेत किया और क्षण मात्र में सारे दीन-दुखियों, असहायों में वितरित कर दिये। कुम्भ से लोगों के विशेष आग्रह पर वे गोरखनाथ मठ के अध्यक्ष का उत्तरदायित्व स्वीकार कर गोरखपुर आये और जीवन के अन्तिम क्षण तक उन्होंने अपना कार्य बड़ी सात्विकता और पवित्रता से सम्पादित किया। नाथ सम्प्रदाय के तत्कालीन सर्वश्रेष्ठ योगी के रूप में उनकी ख्याति चारों ओर फैल गयी। वे जीवन्मुक्त अवस्था में पहुँच गये थे। साधु मण्डली में सिद्ध पुरुष के रूप में विख्यात थे। गोरखनाथ मठ में आगमन के बाद लोग उन्हें 'बूढ़ा महाराज' के विशेषण से समलंकृत कर उनके प्रति श्रद्धा और आदर प्रकट करते थे। उनके आगमन से ऐसा लगता था कि मानो गोरखनाथ की तपोभूमि में हठ, लय और राजयोग ने ही त्रिमूर्ति शिव के रूप में प्रवेश किया हो।

महासाधक गोरखनाथ ने जिस नाथ योग साधना पद्धति को विकसित किया, उसके सबसे योग्य उत्तराधिकारी महायोगी गंभीरनाथ से जुड़े ऐसे कई किस्से साधक समाज में फैले हैं। हठ योगी गंभीरनाथ के युवा सन्यास अवस्था का एक किस्सा बहुत प्रचलित है| नर्मदा नदी के किनारे-किनारे यह युवा संन्यासी चला जा रहा था। उसकी लंबी जटाएं झूल रही थीं कमर के नीचे तक। शरीर पर बाघ की खाल लपेटे हुए हाथ में कमण्डल। मांसपेशियां उभरी हुईं। अमरकंटक से सागर संगम होकर उन्हें फिर नर्मदा के उद्गम पर स्थित अमरकंटक लौटना था। उस समय के संन्यासियों के लिए यह अति पवित्र परिक्रमा हुआ करती थी। यहां यह भी याद रखना होगा कि तब यह रास्ता अत्यंत दुर्गम हुआ करता था। उस परिक्रमा पथ पर ऐसी-ऐसी अलौकिक घटनाएं घटा करती थीं, जिसकी कोई व्याख्या मुश्किल है। खैर, लौटते हैं हम अपनी कहानी पर कई संन्यासी छोटे-छोटे दलों में बंटकर नदी के किनारे चले जा रहे थे। लेकिन, यह युवा संन्यासी किसी दल के साथ नहीं था। निपट अकेला था। चलते-चलते नर्मदा के किनारे एक निर्जन जगह पर पहुंचा। परिक्रमा करने वाले यात्री यहां बिल्कुल नहीं आते थे। आसपास इंसानी आबादी का नामोनिशान नहीं। पश्चिम दिशा में आसमान पर सूरज अस्त होने की ओर बढ़ रहा था। गंभीरनाथ जी ने तय किया कि रात नदी के इस सुनसान तट पर काटी जाए। रात काटने के लिए उसने एक ठीकठाक जगह खोजनी शुरू की। उसी समय निगाह पड़ी थोड़ी दूर स्थित एक कुटिया पर। उन्होंने सोचा कि यकीनन कोई साधक वहां रहता होगा। साधक की इजाज़त से कुटिया में रात काट लेंगे। फिर भोर होते ही सागर संगम की राह पकड़ ली जाएगी। लेकिन, कुटिया के पास पहुंचकर विचार बदल गया उनका। लगा कि किसी की साधना में खलल डालना ठीक नहीं रहेगा। वह कुटिया में जाने के बजाय पास में ही एक पेड़ के नीचे आसन बिछाकर ध्यान में बैठ गए। अभी कुछ ही देर हुई थी कि उनका ध्यान टूट गया आंख खोलते ही बाबा ने देखा कि सामने एक बड़ा-सा सांप फन उठाए बैठा है। ऐसा नज़ारा कि कोई भी डर से कांप उठे। लेकिन यह क्या! मन में कोई भय नहीं, बल्कि एक अद्भुत भाव उत्पन्न हो रहा था। वह अवाक होकर सांप को देखने लगे। यूं लगा जैसे साक्षात भगवान सामने उतर आए हों। काफी देर तक दोनों एक-दूसरे को एकटक देखते रहे। इसके बाद सांप ने फन नीचे कर लिया और उनकी परिक्रमा करने लगा। तीन बार घूमने के बाद सांप ने बाबा की ओर देखा और पलक झपकते ही पास के जंगल में कहीं समा गया।

ऐसी आश्चर्यजनक घटना का साक्षी बनने के बाद उन्होंने कुछ दिन वहीं रुकने का फैसला किया। उन्हें लगा कि इस घटना का कोई न कोई दैवीय संबंध ज़रूर है। बाबा फिर ध्यान में बैठ गएँ। रात गुजरी, अगले दिन सुबह हुई। उस कुटिया में सचमुच एक साधक थे। वह बाबा को वहां ध्यान में बैठा देख हैरत में पड़ गए। अनुनय-विनय कर उसे अपनी कुटिया में ले गए। जंगल के ताज़ा फलों और नर्मदा के पवित्र जल से अतिथि सत्कार किया। बातचीत का सिलसिला शुरू हुआ, तो बाबा ने बीती रात की आश्चर्यजनक घटना का ज़िक्र उस साधक से किया। यह सुनकर कुटी में रहने वाले वृद्ध साधु चकित रह गए। उनके मुंह से एक शब्द नहीं फूटा। वह टकटकी बांधे बाबा को बस निहारे जा रहे थे। इस पर युवा गंभीरनाथ ने थोड़ा नाराज़ होते हुए पूछा, 'क्या मैं कुछ ग़लत कह रहा हूं?'

साधक ने आह्लादित स्वर में कहा, 'हे योगीवर! आपने कुछ ग़लत नहीं कहा। जिस सांप की बात आप कर रहे हैं, वह दरअसल एक महापुरुष हैं। सांप के वेश में रह रहे उसी महापुरुष का आशीर्वाद पाने के लिए मैं लगभग 12 साल से यहां साधना किए जा रहा हूं, लेकिन अभी तक उनके दर्शन मुझे नहीं मिले। लेकिन, इतना मुझे पता है कि उनके दर्शन से ही मेरी योग साधना सिद्ध होगी। आप कितने महान साधक हैं कि एक दिन में ही उस महापुरुष का आशीर्वाद प्राप्त कर लिया। आज से योग साधना की दुनिया में आप हमेशा महायोगी के रूप में जाने जाएंगे। आप मेरा प्रणाम स्वीकार करें।'[34]

---

[34] कोलकाता के अपने एक सत्संग में श्री सद्‌गुरु विजय कृष्ण गोस्वामी ने यह कहानी बताई|

गंभीरनाथ जी के जीवन के समय में अन्य कई महत्वपूर्ण घटनायों का जिक्र आता है| उस दिन सुबह से ही आसमान में घने बादल छाए थे। रह-रहकर बिजली कड़कने से मानो कान फटे जा रहे थे । किसी भी पल बादल बरस पड़ने को तैयार लग रहे थे । ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति के बीच महासाधक गंभीरनाथ अपने 8-10 संगी साथियों को लेकर उदयपुर पहुंचे। उन्हें वहां एक सुनसान जगह पर ध्यान में बैठना था। लगातार तीन दिन और तीन रात चलनी थी नाथ पंथ की यह योग साधना। इस बीच कोई अपना आसन छोड़कर उठ नहीं सकता था।

गंभीरनाथ ने सभी को तय समय और तय स्थान पर पहुंचा दिया। संगी-साथियों ने कहा, 'बाबा इस हाल में क्या यह कठिन साधना कर पाना संभव है? क्या हम लोग कुछ इंतज़ार के बाद यह साधना शुरू करें?' महायोगी ने हल्का-सा हंसते हुए कहा, 'किसके लिए इंतज़ार करोगे? तुम्हारे लिए समय तो रुका नहीं रहेगा!' बिना कोई जवाब दिए सभी ने ध्यान की जगह तैयार की और धूनी जलाकर बैठ गए। ठीक उसी समय मूसलाधार बारिश शुरू हो गई। गंभीरनाथ क्रोधित हो उठे। गुस्से में चिल्लाते हुए उन्होंने सामने रखा अपना दंड आसमान की ओर उठाया और उसे हवा में घुमाने लगे। कहते हैं कि इसके बाद जो हुआ उसे देख उनके साथी हैरान रह गए। चारों ओर भयंकर पानी पड़ रहा था, लेकिन उनकी ध्यान की जगह बिल्कुल सूखी थी। बारिश की एक बूंद तक वहां नहीं थी। ऐसा लग रहा था मानो उनके सर पर किसी ने विशाल छतरी तान दी हो, जिसके नीचे धूनी की आग जल रही है। संन्यासी अपनी आंखों पर यकीन नहीं कर पा रहे थे। फिर कुछ देर बाद गंभीरनाथ ने अपना दंड नीचे किया और दोबारा उनकी योग साधना निर्विघ्न शुरू हुई।

योगी गंभीरनाथ के जीवन से जुड़ी इस तरह की अलौकिक घटनाओं के क़िस्से इतने साल बाद भी लोगों की ज़ुबान पर हैं। गोरखपुर में बाबा गोरखनाथ के आश्रम में देश के विभिन्न हिस्सों से आज भी बहुत से लोग पहुंचते हैं, जहां वे नाथ योग पद्धति के संस्थापक गोरखनाथ और नाथ योग का साधकों से परिचय कराने वाले योगी गंभीरनाथ के स्नेहिल स्पर्श को खोजते हैं। इस स्नेह से सिर्फ इंसान नहीं, बल्कि कोई भी जीव वंचित नहीं होता था। कहते हैं इस स्पर्श के लोभ में बाघ, भालू, चीता जैसे खूंखार जंगली जानवर भी आकर गंभीरनाथ के पैरों के पास सोए रहते। योगी गंभीरनाथ की जो कहानी अब हम बताने जा रहे हैं, उसके गवाह हज़ारों लोग रहे हैं। कुंभ मेले के इतिहास में वह घटना आज भी स्वर्णाक्षरों में दर्ज है। उस साल प्रयाग में पूर्ण कुंभ था। पूरे 12 साल के इंतज़ार के बाद आता है पूर्ण कुंभ। लिहाजा उस साल पूरे देश से साधु-संन्यासी और लाखों-लाख आम लोग पूर्णकुंभ के पुण्य स्नान के लिए प्रयाग में जुटे थे। लोगों की इतनी भीड़ कि कहीं तिल रखने तक की जगह नहीं। अचानक कहीं से कुछ गड़बड़ होने की आवाज़ आई। धीरे-धीरे शोरगुल बढ़ने लगा। चारों ओर हाहाकार मच गया। लोगों की चीख-पुकार से आसमान गूंजने लगा।

सब तो ठीक ही चल रहा था, अचानक आखिर हो क्या गया? योगी गंभीरनाथ के भक्तों ने देखा कि सामने जैसे रणक्षेत्र बना हुआ है। वैष्णव नागा संन्यासियों और योगियों के बीच हिंसक संघर्ष छिड़ गया है। खून-खराबा मचा हुआ है योगीवर गंभीरनाथ के भक्त अपने गुरु की सुरक्षा को लेकर बहुत डर गए। गुरुदेव एक तंबू में ध्यान में बैठे थे, कैसे उनका ध्यान तोड़ा जाए? बताते हैं कि भक्त अभी यह सोच ही रहे थे कि नागा संन्यासी धड़धड़ाते हुए उनके तंबू में घुस आए। वे गंभीरनाथ पर हमला करने ही जा रहे थे कि योगीवर के दोनों नेत्र खुल गए। नागा संन्यासियों को सामने देख उन्होंने गरजते हुए कहा, 'रुको, एकदम हिलना नहीं... शांति शांति शांति'। बस, नागा संन्यासी मानो पत्थर की मूर्ति बन गए। पलक झपकते ही सारा बवाल थम गया। चारों दिशाओं से ' योगीवर गंभीरनाथ जी की जय' का जयकारा गूंज उठा। आज भी यह अविश्वसनीय कहानी साधु-संत समाज में सुनी और सुनाई जाती है। लेकिन, यह चमत्कार कैसे हुआ, इसका जवाब किसी के पास नहीं।[35]

---

[35] बांग्ला भाषा के लेखक अतींद्र दनियारी के नवभारत टाइम्स गोल्ड में छपे लेख से बांग्ला से हिंदी अनुवाद : सरोजिनी बिष्ट, 27 जून 2023

गोरखपुर में गोरखनाथ मठ निवास काल में एक बार उन्होंने अद्भुत यौगिक चमत्कार दिखाया था। एक धनी परिवार की विधवा का एकलौता पुत्र लन्दन में बारिस्टरी का प्रमाणपत्र प्राप्त करने गया था। चार माह तक उसके सम्बन्ध में माता को कोई समाचार नहीं मिला था। वह योगिराज गम्भीर नाथ के पास आयी। उस समय उनके पास स्थानीय राजविद्यालय के प्रधाना- ध्यापक रायसाहब अघोरनाथ अपने सहकर्मी अटल बिहारी गुप्त के साथ बैठे हुए थे। विधवा ने निवेदन किया कि महाराज मेरा पुत्र लन्दन में हैं। उसके मित्र का तार आया है कि वह वहाँ नहीं है। हम लोगों की आँख का तारा है। आप विदेश में उसकी रक्षा कीजिये। महाराज ने कहा कि मैं तो एक साधारण- सा मनुष्य हूँ| मैं इस सम्बन्ध में क्या कर सकता हूँ। महिला उनके चरणों पर सिर रख कर फूट-फूट कर रोने लगी। उसकी ममता ने योगिराज के हृदय को द्रवित कर दिया। वे तो असम्भव को सम्भव और सम्भव को असम्भव करने वाले थे। बड़ी शान्ति के साथ वे एक कोठरी में चले गये । उन्होंने दरवाजा बन्द कर लिया। बुधवार था। आधे घंटे के बाद वे बाहर आये। लोगों ने देखा कि वे किसी गहरे चिंतन में थे। उन्होंने विधवा से कहा कि तुम्हारा लड़का स्वस्थ और सुरक्षित है। वह सोमवार को पहुँच जायेगा । अगले बुधवार को एक नौजवान रायसाहब अघोर नाथ की कोठी पर उनको प्रणाम करने गया। दैवयोग से अटल बिहारी गुप्त उपस्थित थे। राय साहब ने कहा कि ये महाशय विधवा महोदया के पुत्र हैं जो पिछले बुधवार को योगिराज के पास गयी थी। विधवा का पुत्र यह नहीं समझ सका कि किस विषय में बात हो रही है। रायसाहब नौजवान को साथ लेकर बाबा का दर्शन करने गये। अटल बिहारी गुप्त भी साथ थे। नौजवान ने बाबा के चरण पर सिर रखकर प्रणाम किया। देखते ही आश्चर्य चकित हो गया।

अध्याय-तेरह

पूज्य महंत दिग्विजय नाथ जी महाराज

औरंगजेब के समकालीन महंत बुद्धनाथ के समय के बाद से करीब सभी गोरक्षपीठाधीश्वरो के नाम प्राप्त हो जाते हैं। महंत बुद्धनाथ के बाद से गोरक्षपीठ के महंतो की प्राप्त सूची कुछ इस प्रकार हैं – महंत रामचंद्रनाथ, महंत पियनाथ, मंहत बालकनाथ। इसी कालखंड के बीच १७५७ में प्लासी के युद्ध मे विजय प्राप्त कर भारत पर अंग्रेजो ने अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया था। विभिन्न मध्य एशियाई आक्रान्ताओ के बाद अब भारत के आकाश पर अंग्रेजी साम्राज्य का झंडा लहरा रहा था।

महंत बालकनाथ के बाद गोरक्षपीठाधीश्वर हुए महंत मंसानाथ, जिनका कार्यकाल करीब २५ वर्षो का रहा एवं उनके बाद १८११ मे संतोषनाथ जी ने यह पद संभाला। इनके बाद मेहरनाथ एवं मेहरनाथ जी के बाद गोपालनाथ जी गोरक्षपीठाधीश्वर बने। गौरतलब है कि इसी बीच सन १८५७ के क्रांति के विफल होने के बाद सन १८५८ से भारत पर इस्ट इंडिया कंपनी की सरकार हटा कर सीधे तौर पर अंग्रेजी सरकार का शासन स्थापित कर दी गई।

महंत गोपालनाथ का योगदान गोरक्षपीठ के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। एवं अपने बाद वे अपने अनेक तेजस्वी शिष्यों को छोड़ गये जिन्होने गोरक्षपीठ व नाथ पंरपरा के यश वृध्दि मे एक विशेष भूमिका निभाई। इन्ही शिष्यों मे जहां एक तरफ उनके उत्तराधिकारी बलभद्रनाथ जी थे तो वहीं योग विद्या के प्रकांड ज्ञाता स्वामी गंभीरनाथ जी जैसे संत भी थे। मंहत गोपालनाथ जी के बाद उनके शिष्य बलभद्रनाथ महंत बने। बलभद्रनाथ जी का कार्यकाल बहोत लंबा नही रहा एवं उनके बाद गोरक्षपीठाधीश्वर की गद्दी उनके शिष्य दीलवरनाथ जी मंहत बने। सन १८९६ को दीलवरनाथ जी को महासमाधि प्राप्त हुई। उनके पश्चात सवर्गीय महंत गोपालनाथ के सुप्रसिद्ध शिष्य व सवर्गीय महंत बलभद्रनाथ के गुरुभाई योगीराज गंभीरनाथ जी को ही सब गोरक्षपीठाधीश्वर के पद पर आसीन देखना चाहते थे, परंतु उन योगी को किसी भी पद से स्वयं को बांधना स्वीकार न था। फलतः सवर्गीय महंत बलभद्रनाथ के शिष्य व सवर्गीय महंत दिलवरनाथ जी के गुरुभाई सुंदरनाथ जी का अभिषेक इस पद पर हुआ। आरंभ से ही नाथ योगीयों व गोरक्षपीठ से संबंधित महानुभावों मे यह धारणा थी कि सुंदरनाथ जी इन दायित्वों का निर्वहन नही कर पाएंगे। और वास्तव में हुआ भी ऐसा ही।

जहां एक ओर सुदंरनाथ जी के अंतर्गत गोरक्षपीठ शनैः-शनैः अराजकता व अव्यवस्था के घने मेघो मे ढकती जा रही थी तो वहीं गोरक्षपीठ व नाथ परंपरा के पुनरुत्थान करने वाले सुर्य का उदय भी कहीं दूर हो गया था। पूर्वी भारत से बहोत दूर देश के पश्चिमी छोर मे एक ऐसे वंश मे जिसकी कीर्ति की साक्षी स्वयं भारत का इतिहास है व जिसका संबंध नाथ परंपरा से युगों- युगों का है। यह वो वंश है जिसने राष्ट्र को बप्पा रावल, राणा हम्मीर, राणा कुंभा, राणा सांगा, महाराणा प्रताप जैसे कितने ही तेजस्वी नक्षत्र दिये। जी हां, हम मेवाड़ के उसी सुप्रसिद्ध सिसोदिया राजवंश की बात कर रहे हैं जिसकी ख्याती विश्वव्यापी है।

युग पुरुष एवं देवदूत महन्त दिग्विजयनाथ जी बचपन में राणा नान्हू सिंह के नाम थे। उनका अविर्भाव बप्पा रावल के उस इतिहास प्रसिद्ध वंश से हुआ, जिसमें उत्पन्न होकर राणा सांगा और महाराणा प्रताप जैसे स्वदेशाभिमानी वीरो ने देश और धर्म की रक्षा के लिए आजीवन संघर्ष किया महाराणा प्रताप की तलवार मे जिस वंश के इतिहास को, त्याग, वीरता और आत्म सम्मान का इतिहास बना दिया, उसी मेवाड़ की घाटी पर सिसोदिया वंश में जन्म लेकर राणा नान्हू सिंह ने भी अपने जीवन को त्याग और बलिदान का अप्रितम उदाहरण बना दिया। राणा नान्हू सिंह का जन्म उदयपुर के राजावासी परिवार में 1894 में

वैसाखी पूर्णिमा को हुआ था। बचपन में माता-पिता के स्वर्गवासी होने के परिणामस्वरूप इनका पालन, घोषणा चाचा द्वारा किया गया। उस समय उदयपुर के निकट एक नाथपंथी योगी महात्मा फूलनाथ जी साधनारत थे। वे गोरखपुर स्थित की गोरखनाथ मंदिर के तत्कालीन महन्त श्री बलभद्रनाथ जी के शिष्य और महन्त सुन्दरनाथ जी के गुरुभाई थे। उनके चाचा सम्पत्ति के लोभ में उनसे छुटकारा चाहते थे। उन्होंने फूलनाथ जी से निवेदन किया, सन्तान प्राप्ति हेतु हमने यह मनौती मानी थी कि अपनी प्रथम सन्तान श्री गोरखनाथ जी के चरणों में समर्पित करना चाहता हूँ, किन्तु घर के लोगों का इस बालक के प्रति विशेष स्नेह एवं ममत्व है इस कारण वे इस बालक को अपने से अलग करना नहीं चाहते, जिससे मुझे बराबर हार्दिक कष्ट रहता है अतः आप मेरी इस भगौती को पूरा करने में सहयोग करें। श्री बाबा फूलनाथ जी को चाचा के षड्यन्त्र का पता नहीं था। वे अर्थात फूलनाथ जी बच्चे को लेकर गोरखपुर आ गये। गोरखपुर पहुंचते ही उन्होंने तत्कालीन योगिराज श्री बाबा गंभीरनाथ जी एवं अन्य लोगों से बालक राणा नान्हू सिंह के भी गोरखनाथ जी को समर्पित करने की कहानी से अवगत कराया और बताया कि उदयपुर के राणा ने अपने पुत्र का श्री गोरखनाथ जी के चरणों में समर्पित किया है । तत्पस्थात नान्हू सिंह जी मंदिर के योगियों, सिद्धो एवं महात्माओ के बीच रहने लगे।

महान गुरु गोरखनाथ की यह तपस्या भूमि प्रारम्भ में एक तपोवन के रूप में ही रही होगी। इस जनश्रुति शान्त तपोवन में योगियों के निवास के लिए कुछ छोटे-छोटे मठ रहे होगें। मन्दिर का निर्माण बाद में हुआ होगा। आज हम जिस विशाल और भव्य मन्दिर का दर्शन हर्ष और विस्मय का एक साथ अनुभव करते हैं, वह पूज्य श्री दिग्विजयनाथ जी भी देन है पुराना मंदिर इस नव निर्माण की विशालता और व्यापकता में समाहित हो गया है। यह करना अधिक समीचीन ज्ञात होता है की पुराने मंदिर ने अपनी विशाल साधन का चतुर्दिक प्रसार करके आज के अर्थवाद एस्थुल संसार को अपनी शास्वत महानता का अनुभव करने का अवसर दिया है। दिगविजयनाथ जी ने मंदिर को नवीन रूप में व्यस्थित किया । अब तक यह मंदिर केवल नाथ पंथी साधुओ का साधना केन्द्र और पर्यटक साधुओ एवं श्रद्धालुओं के लिए पूजा का मंदिर मात्र था । महंत जी की ने इसे नाथ-योग के प्रचार एवं प्रसार का प्रमुख केन्द्रबिन्दु बनाया, साथ ही हिन्दू धर्म और संस्कृति के समस्त अंगो को प्रोत्साहित करने के लिए ही उन्होंने इसे महान सांस्कृतिक का केंद्र बना दिया। शिवावतार महायोगी गुरु गोरक्षनाथ जी की पूजा तो प्रतिदिन यहाँ होती ही थी । राम और कृष्ण के नामोच्चारणों से भी मंदिर का प्रांगण गुंजित होने लगा। ब्रिटिश शासनकाल में इस मंदिर ने हिन्दू धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए निरंतर संघर्ष किया अन्यथा इस क्षेत्र में हिन्दू जाति का रूप कुछ दूसरा ही होता। सन् 1935 में गोरखनाथ मन्दिर के पीठाधीश्वर के पद पर होने के पश्चात् महन्त दिगविजयनाथ की व्यक्ति को बहुमुखी प्रसार का अवसर मिला।

युगपुरुष ब्रह्मलीन महन्त दिग्विजयनाथ जी आदिनाथ शिव के अभिन्न स्वरुप महायोगी गोरखनाथ की योग गुरु परपरा के महान योगाचर्या महन्त योगिराज दिग्विजयनाथ जी असाधारण व्यक्तिव्त से सम्पन्न अप्रतिम महान कर्मयोगी थे। उन्होंने विक्रमीय बीसवीं' शती के तीसरे- चौथे चरण से इक्कीसवीं सदी के पहले दूसरे चरण की अवधि को दिव्य सम्पत्ति अथवा दिव्य विभुतियोग अत्मेश्वार्य से पूर्ण रूप से सम्पन्न कर अपनी पवित्र उपस्थिति से भारतीय संस्कृति, धर्म और शिक्षा दीक्षा का वेदविहित सनातन आचार- विचार सम्मत संरक्षण किया। पूज्य दिग्विजयनाथ श्री महाराज योगराज्य के योगापरक जीवन के निष्काम कर्म- महारथी थे। उनका परम उद्देश्य योग की शिक्षाओ का प्रचार-प्रसार का मानव जीवन के प्रमुख क्षेत्रों में कल्याण करना। महाराज जी को योगी के साथ-साथ कर्मयोगी एवं महापुरुष की श्रेणी में माना जाता है।

हनुमान प्रसाद पोदार जो महंत दिग्विजयनाथ जी के समकालीन माने जाते है एवं पात्र कृष्ण भक्त उन्होंने गोरखपुर में गीता प्रेस की स्थापना की जो विश्व प्रसिद्ध हिन्दुवादी प्रेस है महन्त जी के सम्मान में उसी प्रेस से "कल्याण" नामक पत्रिका प्रकाशित होती है, जिसमें भारतीय आध्यात्मिक, धार्मिक, यौगिक, एवं समसामयिक सामाजिक लेख प्रकाशित होते है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि हिन्दू धर्म का जो मानव जीवन से सम्बंधित है सार तत्व कल्याण

पत्रिका वादा प्रकाशित किया जाता है। इस पत्रिका के पाठक विश्व के अपेक देशों में भी व्याप्त हैं। वैसे तो महंत दिग्विजयनाथ जी महाराज सम्पूर्ण विश्व एवं मानवता के हितैषी थे, पर विशेष रूप से वे हिन्दू धर्म के प्रहरी एवं स्तम्भ थे। दिग्विजयनाथ जी अपने दिन के प्रति हढ़ विश्वयी, दृढ विश्वासी अस्पष्ट भाषी और निर्भिक राष्ट्रप्रेमी होने के साथ ही बड़े विचारशील और मिलनसार थे। अध्यात्मिक, यौगिक क्षेत्रों को साथ वो साथ जीवन के समस्त क्षेत्रों में उनका प्रभाव था, और उनके प्रति सभी का प्रेम था। महन्त दिग्विजयनाथ जी को अवतारी एवं ऐतिहासिक पुरुष कहना अतिशयोक्तित नही होता। उनमें दिव्य प्रकाश ऐश्वर्य और तेज था। उन्होंने अपने यौगिक आत्मबल से कर्मयोग में तिथि प्राप्त की थी। वे उस जीवन-परमारा के योग पुरुष थे, जिसमे सर्वोच्च्व पद में प्रतिक्षित होने का सौभाग्य उपलब्ध होता है। महायोगी गोरखनाथ के वियोगपीठ को अलंकृत करने वाले योगी राजों में के विशिष्ट विद्युति संपन्न युग पुरुष थे। महंत दिग्विजयनाथ जी महाराज जी निर्भीक राष्ट्रप्रेमी एवं उदार मानवता के अग्रदूत थे। महन्त जी मेवाड केसरी बप्पा रावल के वंशज होने का गौरव तो प्राप्त किया ही था, वे वीर प्रसवनी राजस्थान भूमि के पुरुष तो थे ही पर साथ ही साथ ऐतिहासिक धरातल पर वे महाराणा प्रताप के स्वराज्यव्रत के संजीव पुष्यविग्रह थे। महाराष्ट्र की पवित्र भूमि पर जन्म लेकर जिस प्रकार छत्रपति शिवाजी ने महाराणा प्रताप के जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर भारतीय सनातन धर्म और भारत वर्ष संरक्षण किया था, ठीक उसी प्रकार विक्रमीय बीसवी सदी में महाराणा प्रताप के ही वंश में जन्म लेकर योगी दिग्विजयनाथ जी गोरखनाथ जी के योगी को अलंकृत कर भारतीय अध्यात्म, सामाजिक मुल्यों और राजनीति के क्षेत्र में प्रस्थात हो उठे। योगी गोरखनाथ जी ने भारत के राजकीय स्वत्व-राज्य के संरक्षण के लिए योग अभिमन्त्रित तलवार प्रदान कर बप्पा रावल को गौरवान्वित किया था। यह ऐतिहासिक सर्वमान्य तथ्य है कि महायोगी गोरखनाथ जी के प्रति पूर्ण रूप से चित्रग्यता के ज्ञापनस्वरूप बापा रावल के वंशज योगी दिग्विजयनाथ जी ने योगिवेश धारण किया और गोरखनाथ पीठ की सेवा में सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर कैवल्यण्ड अमृतत्व प्राप्त किया। उन्होंने गोरखनाथ जी की योग सिद्धपद्यति में सम्पूर्ण निष्ठा व्यक्त कर भारतीय संस्कृति चौर, राष्ट्रहित का आजीवन संरक्षण कर भारतीय इतिहास में अपना नाम अमर कर लिया। महंत दिग्विजयनाथ जी महाराज अपने समय के राजनैतिक, धार्मिक नैतिक सामाजिक, शैक्षिक एवं ऐतिहासिक आवश्यकता थे, उनके उदय होने से उत्तर भारत की महता प्रत्येक क्षेत्रों में बढ़ गयी। वे स्वधर्म एवं स्वराष्ट्र के अपराजेय सेनानियियो में अगतराज्य महापुरुषों में एक थे। सिद्ध योगी चमत्कारी पुरुष योगी गंभीरनाथ की परम्परा के प्राणवान एवं योगिरत्न पुरुष थे।

बाबा दिग्विजनाथ महाराज जी की दृष्टि दूरदर्शी थी, उनका व्यक्तित्व अपने आप में असाधारण एवं तेजस्विता से अति-प्रोत था। उनके विशाल प्रशस्त ललाट से ऐश्वर्य की गंगा निरंतर प्रवाहित होकर उनके सम्पूर्ण शरीर का पवित्र अभिषेक करती थी। उनके नेत्र में असीम तेज था। एक से प्रखर रत्न और दूसरे से शीतल ज्योत्सना, सूर्य चन्द्र की प्रथा और शीतलता के रूप में अविरल निह्सिरत होती रहती थी। ऐसा लगता था मानो अन्याय, अत्याचार, पाप-ताप और असत्य के अन्धकार का वक्षस्थल विदीर्ण करनें वाली प्रकाश द्वारा एक नेत्र है निकलती थी तो दूसरे के मैत्रीभाव, विश्व मात्र को प्रेम, मैत्री कल्याण और आनन्द में संयोजित करें वाली कृपा और करुणा वात्सल्य की अमृतवर्षिण किरणावली प्रस्फुटित थी। महाराज का गौर वर्ण था। उसका गौर शहर ऐसा दिखता था मानों सत्वा के प्रकाश थे। महन्त जी ऐसे दिव्य पुरुषकर्मी थे जिनके दर्शन करने मात्र से जनसामान्य का मस्तक झुक जाता था। महाराज जी का व्यक्तित्व आकर्षण और मोहक था, उनके सन्निधि में जो भी व्यक्ति जाता था वह इन्ही का बन जाता था। उनके शौर्य और ऐश्वर्य से मुक्त हो जाता था। महाराज जी के कर्ण देश के स्वान कुंडल की गरिमा दीप्ति उनकी क्षमता और पवित सत्यव्रत की निष्ठा तथा संयमित नियात्मक बुद्धि- की प्रभामयी विजयिनी पताका थी महाराज जी का शरीर विराट लम्बा सम्मोहक और विशाल था। उनके शरीर से प्रकट होता था कि इसमें बिहारथील जीवाला में संगठन की अपार शक्ति है। महायोगी दिग्विजयनाथ जी महाराज उनकी अंग-पति उनके चौरिक परिधान से विभोषित होने पर उनकी अनुरागमयी, प्रेममयी सहज प्रकृति की परियायिका थी । वे कमल से भी कोमल थे। बिना भेद भाव के सम्पूर्ण प्राणीमात्र की विपत्ति मिताने की दिशा में वे हिमालय की तरह अडिंग, और वज्र की तरह कठोर थे। अन्याय पाप और अधर्म के श्रंगार में वे योगाचार्य, धर्माश्वर्यकी महिमा से संपन्न वो महन्त ही नहीं, अप्रतिम लोकनायक जननायक, चतुरमुखी प्रतिभा सम्पन्न, प्रचण्ड आध्यात्मिक राष्ट्र संत थे। महन्त योगी दिग्विजयनाथ, धर्म क्षेत्र के महारज थे। उन्होंने राजनीतिको को का अंग स्वीकार कर लोक जीवन को पवित्र आचार

विचार से सम्पन्न करने का विल्ता प्रयास किया। यह धर्माचाण ही उनका जीवन व्रत था। उन्होंने अपनी रहनी, कथनी और करनी तीनों को निर्भिकता, स्वाभिमान, अनुशासन प्रियता और सत्यनिष्ठा से सदैव निर्भय रखा। वे सत्वगुण के प्रतीक थे।

योगी दिग्विजयनाथ महाराज जी का जन्म ऐसे काल में हुआ तब भारतीय राजा विदेशी शासन की प्रयुक्त में कैद था, धर्म-सनातन धर्मी पाटणाल आचार-विचारूपी राहु से प्रायः ग्रस्त होता जा रहा था। यह स्वीकार करने में चिमात्र भी आपत्ति नहीं है महाराज "का श्रीमान् कुल में जन्म प्ररण करताना मन के पर पर विराजमान होता एक ऐतिहासिक अनिवार्य कार्यक्रम था, जिसका सम्पादन करने में महंत दिग्विजयनाथ जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। यह कार्यक्रम स्वराज और स्वधर्म का संरक्षण। - महाराज जी का जन्म एम के उदयपुर के राणा-परिवार में सम्वत् 1951 की वैशाख पूर्णिमा को हुआ था। उनका बचपन का नाम राणा नान्बू सिंह था। सैशन अवस्था के "मास-पिता का सत्रका होने पर उनके पालन-पोषण का "दाचित उनके पितृष को पैतृक सम्पत्ति से वादित लिए उन्होने उदयपुर के निकट स्थित दिन नाम मन्दिर के फूल के गोरखपुर में चढ़ा के रूप में शिशुनान्द्र सिंह से समर्पित कर दिए और दिव्य के नान् सिंह को बालक से ही गोरखनाथ मदिर के लवण में पुरुष गुरुनाथ देख देख में पालित पोषित होने भाग्य प्राप्त होगा। संरक्षण में हम सीमा शुरू हुआ। की राजधामी के हुए कल्पतरू मी असल्यपी काला में उनका नवीन अधिकार- पति से उठा उन्हें यशस्वी होने का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। उन्हे राम्रोचित ढंग से पालन पोषण शिक्षा-दीक्षा की संतोषजनक व्यस्वस्था की गयी है।

विश्व प्रसिद्ध मठ गोरखनाथ मंदिर से प्रकाशित आदर्श योगी ग्रन्थ की भूमिका में महत दिग्विजयनाथ जी ने अपने प्रारम्भिक जीवन और योगिराज गंभीरनाथ जी की अभिवावक्ता पर पूर्ण प्रकाश डाला है। दिग्विजयनाथ जी महाराज का कथन है कि- योगिराज गम्भीरनाथ जी थे मेरे परमगुरु - मेरे गुरु महाराज (ब्रह्मनाथ जी के गुरु)। अपने जीवन-विकास के प्रारंभ से ही मुझे योगीराज जी के अभय श्री चरणों में निरापद आश्रय मिला था और उनके अहेतुक स्नेह तथा करुणा धारा से अभिषक्ति होकर मेरा किशोर जीवन पल्लवित हुआ था। मेरा जन्म उदयपुर के राजकुल में हुआ था। ये बाल्यकाल में समय के भीतर ही मेरे माता-पिता दोनों का देहान्त हो गया। मेरा प्रितिव्य ही मेरा पालन-पोषण करने लगे। राजकुल के सभी लोगों को जागीर (रानावत) मिलती है, मेरे पिता को भी प्राप्त थी। मेरे पितृव्य समझते थे कि वह बड़ा होने राणावत का हिस्सेदार होगा। सम्पूर्ण राणावत "हड़पने के उद्देश्य से वे मुझे हटा अपना रास्ता का उपाय सोचा करते थे। वहीं पर विकास के स्थान में नाथ के प्रसिद्ध योगी बाबा फूलनाथ जी महाराज साधना कर रहे थे। मेरे पितृव्य उनके पास आते जाते थे, एक दिन उन्होंने कहा कि मैंने प्रथम सन्तान को गोरखनाथ जी के चरणों में अर्पण करने का व्रत धारण किया है। मेरी और से आप बालक को नाथ मन्दिर में अर्पित कर दें। उस समय उदयपुर के राज सिंहासन पर महाराणा फतह सिंह आसीन थे। उन्हें पुत्र भूपाल सिंह हाथ पैर से लुंज थे, उन्हे गद्दी पर बैठाना अनुचित समझा जा रहा थे। राज पद के लिए एवं कुल का बालक होने के नाते मेरे चुने जाने की सम्भावना थी। मुझे फूल नाथ जी को सौपा गया। वे गोरखपुर आये मन्दिर में महन्त थे। फूलनाथ जी के गुरु भाई बाबा सुन्दरनाथ। मुझे बाबा गम्भीर नाथ जी के अध्श्रय में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। योगिराज की कृपादृष्टि से उनके प्रमुख शिष्य ब्रह्मनाथ जी ने मुझे शिष्यरूप होगा में ग्रहण किया। उस समय इस बात की कल्पना भी नही कर सकता था कि भविष्य में किसी दिन गोरखनाथ प्रतिष्ठित इस सुप्रसिद्ध आश्रम के महन्त के गौरवपूर्ण आसन पर बैठने का सौभाग्य मुझे प्राप्त होगा और श्रीनाथ जी की सेवा में मेरा जीवन चरितार्थ होगा वैसे तो नाथपंथ भारत के इतिहास में अपना गौरवशाली स्थान रखता ही है, किन्तु मानव जीवन, जगत से सम्बंधित प्रत्येक क्षेत्रों में इसका वैभवशाली प्रभाव देखा जा सकता है। नाथ माघगये महत्वपूर्ण है इस सभी का गोरखनाथ के साधना योग विधा पर अलग से चर्चा हो सकती है क्योंकि यह योग की विधा अत्यन्त कठिन है। यौगिक विद्या पर भारत सहित अनेक देशों में शोध हुए है फिर भी कम है क्योकि यह विषय बहुत वृहद है। आचार्य रजनीश (ओशो) ने गोरक्षनाथ को अपनी दार्शनिक प्रणाली में खूब महत्व दिया हैं। रजनीश (ओशो) के भी तो योगी, परंपरा में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। नाथ पंथ का क्षेत्र विराट है। महंत दिग्विजयनाथ महाराज जी ने योगिराज गंभीरनाथ महाराज जी के सानिध्य में रहते हुए आरंभिक जीवन के विषय में उल्लेख हुए अभिकक जीवन में घटित हो घटनाओ का 'आदर्शमोनी' ग्रन्थ

की भूमिका में ही वर्णन किया है- मेरे जीवन के आरम्भ से ही मेरे उपर परम गुरु (गभ्भीरनाथ) जो की कृपादृष्टि हुई, उसका और भी कुछ परिचय दे देना अपांसर्गिक नहीं होगा। एक बार मेरी अवस्था लगभग आठ या नौ साल की रही होगी, मुझे बड़े जोर का ज्वर हो गया , गुरु जी बाबा गम्भीरनाथ जी ने साधुओं को ज्वर देखने को कहा, एक साधू ने बाबा जी को मेरे ज्वर को प्रचंडल बताई। बाबा जी ने एक बर्तन में पानी मंगवाया और उस पर मात्र अपना हाथ फेर कर मुझे पिला दिया। मेरा भयंकर ज्वर ना जाने कहाँ चला गया और मैं स्वस्थ्य हो गया। इसी प्रकार एक अत्यंत भयंकर घटना मेरे जीवन में घटित हुई उस समय मेरी अवस्था तेरह या चौदह वर्ष की रही होगी, एक दिन एक वृद्ध मनुष्य बाबा जी के पास आया, उसके पास एक अचकन और एक पजामा था बाबा जी ने उस कपड़े को मुझे पहनने का आदेश दिया, उस कपडे को पहनना मुझे पसंद नहीं था, पर बाबा जी के यह कहने पर कि वृद्ध की ऐसी इच्छा है, मैंने कपड़ों को पहना। जेब में केश का लट निकला। वृद्ध ने कहा कि सोते समय लडको के रख दिया होगा। रात्रि में मुझे बहुत तेज का बुखार चढ़ा, फिर चेचक निकल आया और अन्त में मेरी मृत्यु तक हो गयी। बाबा जी को जब मेरी मृत्यु का समाचार दिया गया तो उन्होंने मेरे प्राणहीन शरीर को अपने चारपाई के नीचे रखवा लिया । साधुओं ने प्रातकाल मुझे देखा तो मुझे जीवित पाया। इस विषय में इतनी बात तो स्पष्ट याद थी कि मृत्यु के बाद मुझे कई अमानुष मूर्तियां लिए जा रही थी। वे कह रही थी कि इनको अब नहीं ले जाना है वापस कर देनी चाहिए। तब मैं वापस कर दिया गया। यह मेरा निज का अनुभव है। बाबा गम्भीर नाथ जी ने मुझे पुनर्जीवन प्रदान किया था, इसमें तनिक भी संदेह नही है।

दिग्विजयनाथ महाराज जी ने गम्भीरनाथ जी से सम्बंधित आश्चर्यजनक एवं विलक्षण घटना का वर्णन करते हुए आदर्शयोगी' की भूमिका में ही कहा है कि गया में योगी राज के एक सच्चे भक्त रहा करते थे, वे दो भाई थे छोटकू एवं बडकू के नाम से पुकारे जाते थे उनका एक लड़का बहुत बुरी तरह से बीमार हो गया। उनको जब बालक को बचने की आशा नहीं दिखी तो एक भाई दौड़कर गोरखपुर बाबा की शरण में आया, उसकी कातर प्रार्थना पर बाबा जी का ह्दय विगलित हो गया। वे उसके साथ गया जी को चल पड़े, मैं भी गुरु जी के साथ था उस सज्जन ने उसी बागीचे में हम लोगों को ठहराया, जिसमें बाबा जी पहले रहते थे। बाबा जी के पहुंचने के पहले ही बालक की मृत्यु हो गयी थी। बाबा जी को यह दुखद समाचार दिया गया। वे उठे और उसकी घर की ओर चल दिए, मैं भी बाबा जी के पीछे-पीछे गया वे लोग बाबा जी को घर के भीतर शव के पास ले गये। बाबा जी ने अपना हाथ शव पर फेर दिया, मैने अपनी आंखो से देखा, तत्काल मृत शरीर में प्राण का संचार प्रारम्भ हो गया । महंत दिग्विजयनाथ का आदर्शयोगी' की भूमिका में उद्गार है - बाबा जी की योगविभुतियों' से समझना मेरे लिए संभव नहीं है । जब तक के देह में विराजमान थे तब तक उनके स्नेह और करुना का उपभोग मुझे निरंतर मिलता रहा। सह्रदय पितामय जिस तरह अपने शिशु पौत्र पर स्नेह करता है और बच्चे का अनुचित हठ भी मान लेता है, उसी तरह मेरे प्रति उन सर्ववंदन विनियुक्त आत्मा समाहित निर्विकार महापुरुष का व्यवहार था।

[नाथसिद्धचरितामृत- प्र. 363-372]

महंत दिग्विजयनाथ जी महाराज की शिक्षा दीक्षा गोरखपुर के ही उच्चातिउच्च महाविद्यालय में संपन्न हुई। उनका विद्यार्थी जीवन बड़ा ही भवय और चमत्कारिक था। जिस समय वह अपनी उच्च शिक्षा का सफल समापन करने वाले ही थे कि उसी समय महात्मा गांधी भी ने अपने स्वराज आन्दोलन का शंखनाद किया । बड़ी संख्या में नवयुवक, विद्यार्थी अपनी शिक्षा को तिलांजलि देकर महात्मा गांधी के आहवान पर संग्राम के सहयोग तथा सविनय अवज्ञा आंदोलन में कूद पड़े। युवक नान्हू सिंह (दिग्विजयनाथ जी) पीछे न रह सके स्वतंत्रता युद्ध के इतिहास में गोरखपुर जनपद में घटित विश्व प्रसिद्ध चौरीचौरा काण्ड का असाधारण राजनीतिक महत्त्व है। तत्काल अंग्रेजी सरकार ने उस काण्ड में युवक नान्हू सिंह जी को अभियुक्त के रूप में मृत्युदंड देकर फासी पर चढ़ना चाहा था, अंततः वह निर्दोष सिद्ध हुए। यद्यपि स्वंतंत्रता युद्ध में वे महात्मा गांधी का साथ नीति और सिद्धान्त के कारण अधिक समय तक न दे सके और राजनीति से अलग होकर धर्म और भारतीय संस्कृति की प्रेरणात्मक ज्योति में स्वराष्ट्र-हित-का चिन्तन करने लगे तथापि स्वतंत्रता आन्दोलन के एक महान सेनानी के रूप में, हिन्दुत्व के कर्जदार के रूप में इनका पावन स्मरण उसी तरह सदा अक्षुण्ण है। जिस तरह स्वराज और भारतीय संरक्षण में गुरु गोविन्द सिंह और समर्थ

रामदास तथा वीर शिवाजी के नाम इतिहास में अमिट है। भारतीय संस्कृति की निष्ठा में उनका एतिहासिक योगदान अविशमर्नीया है। महंत दिगविजयनाथ जी महाराज लोक कल्याण के लिए ही इस धरा पर अवतरित हुए थे। उन्होंने अपने पुरुष पराक्रम पार्मथिक जीवन, आस्था और अटूट विश्वास से श्रेयस्कर लोक कल्याण की सिद्धि की है। 1989 वि० में गम्भीरनाथ जी के शिष्य ब्रह्मनाथ जी महन्त के पद पर अधिष्ठित हुए और 1990 वि० में उन्होने योग दीक्षा प्रदान कर नान्हू सिंह (दिग्विजयनाथ जी) को अपना शिष्य बनाया। उनके ब्रह्मलीन होने पर दिग्विजयनाथ जी ने महंत के पद का सुशोभित किया और लगभग 1992 वि० से बाबा दिग्विजयनाथ जी महाराज आजीवन महन्त पद का दायित्व संभालते रहे। उन्होने प्राचीन गोरखनाथ मन्दिर का कायाकल्प एवं पुननिर्माण कराया। योगाचार्या होने के साथ ही साथ वे भारतीय चिन्तन परम्परा के अग्रदूत भी थे, साथ ही साथ शिक्षा, स्वास्थ संस्कृति राजनीति को भली भाति भी जानते थे। योग परम्परा के विस्तार के साथ मानवीय मूल्यो एवं नैतिकता की मिसाल थे।

महाराणा प्रताप जी के शौर्य एवं प्रताप से प्रभावित होकर उन्होंने महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् के अंतर्गत महाराणा प्रताप विद्यालय गोरक्षनाथ संस्कृत विद्यापीठ, महाराणा प्रताप शिशु शिक्षा विहार आदि की स्थापना के रूप में अपनी विशाल हृदयता, दक्षता तथा शैक्षिक योग्यता का अत्यंत अनुभव पूर्ण परिचय दिया।

नाथसिद्धचरित्रामृत- 364

पूर्वी उत्तर प्रदेश में शिक्षा का मुख्य केंद्र गोरखपुर विश्वविद्यालय उन्हीं की देन हैं। गोवर्धनपिथादिश्वर जगद्रुरु शंकराचार्य श्री निरन्जनादेव तीर्थ की उनके प्रति मांगलिक प्रशस्ति में दिग्विजयनाथ जी के राजनीतिक, शैक्षणिक और योगमय जीवन तथा राष्ट्रीयता पर प्रकाश पड़ता है। शंकराचार्य के शब्द है - हिन्दी एवं हिन्दुस्तान की मूर्तिमान स्वरूप श्री गोरक्षनाथ मन्दिर के ब्रह्मलीन महन्त, अखिलभारत हिन्दू महासभा के भूतपूर्व अध्यक्ष, विश्व हिन्दूधर्म सम्मेलन के संस्थापक एवं भूतपूर्व सांसद सदस्य श्री दिग्विजयनाथ जी के महान व्यक्तिव्त से सम्पूर्ण भारत भलीभांति परिचित है। उन्होंने देश और समाज की जो सेवायें की है, उनसे समाज का भारी उपकार हुआ है। राजनिति धर्म संस्कृति शिक्षा एवं समाजसेवा आदि विविध क्षेत्र उनके द्वारा किए गए कार्य चिरकाल तक उनकी स्मृति को सजाये रखेंगे। श्री गोरखनाथ मन्दिर के भव्य रूप का पुननिर्माण, महाराणा प्रताप इंटर कालेज, महाराणा प्रताप पालीटेकनिक, श्री गोरक्षनाथ संसकृत विद्यापीठ, महाराणा प्रताप शिशु शिक्षा विहार आदि संसथाओ की स्थापना इनके पुण्य कार्य है। पूर्वी उत्तर प्रदेश के जनता की महाराज जी आवाज थे। हिन्दू, हिन्दी, धर्म, समाज के वे मूर्तिमान स्वरूप थे। स्वतंत्रता- संग्राम के वे अग्रणी नेता रहे।

युग पुरुष महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज जन्मजात योगी थे। उन्होंने अखिल भारतवर्षीय अवधूत योगी महासभा का अध्यक्षीय पद भी शुशुभित किया था। उन्होने इस अखिल भारतवर्षीय अवधूत भेष बारह पंथ योगी महासभा की 1996 वि0 में स्थापना कर योगियों के जीवन में अद्भूत सक्रिय क्रान्ति विकसित की 1946 ई० महंत दिग्विजयनाथ महाराज जी ने महायोगी गोरखनाथ जी की तपोभूमि गोरखपुर नगरी में अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के विशाल अधिवेशन का परम सम्मान महामति भोपतकर के सभापतित्व में आयोजन किया था। इसमें समग्र भारत देश के कोने कोने से हजारों प्रतिनिधि आये थे। चारो ओर शुद्ध हिंदू का वातावरण छा गया था। यह अधिवेशन उनके यशस्वी जीवन का महत्वपूर्ण सुनहरा अध्याय कहा था सकता है। 2017 वि० में ग्वालियर में सम्पन्न होने वाले अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के अधिवेशन के अध्यक्ष पद को सुशोभित कर दिग्विजयनाथ जी महाराज ने भारतीय संस्कृति, स्वधर्म और स्वराष्ट्रनिष्ठा का जो शंखनाद किया था, वह अपने आप में बड़ा ही महत्वपूर्ण था। नैमिषारण्य के तपस्वी नारदानन्द सरस्वती ने महाराज जी की प्रशस्ति में कहा है महंत दिग्विजयनाथ जी महाराज एक महान व्यक्ति थे। 1946 ई० में उसके द्वारा गोरखपुर में आयोजित अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के विशाल ऐतिहासिक अधिवेशन में सम्मिलित होने का मुझे भी अवसर मिला था। उस समय उनके व्यक्तित्व की एक झलक देखी थी।

समस्त साधु-समाज को उन पर गर्व है। महत दिग्विजयनाथ जी आचार्य शंकराचार्य, गुरुनानक देव, दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामतीर्थ की परमपरा के प्राणवान अंग थे। महाराज जी हिन्दू महासभा को केवल मात्र राजनितिक संस्था ही नहीं मानते थे, वे उसे भारतीय संस्कृति धर्म और जीवन धारा का प्रतिनिधित्व करने वाली एक प्राणमयी प्रक्रिया समझते थे, यही कारण है कि वे हिन्दू महासभा के प्रति चिरसमाधि पर्यन्त निष्ठावान् और अमित

अनुरक्त बने रहे। महाराज ने हिन्दूधर्म और हिंदुत्व मे निष्ठा और श्रद्धा का प्रतिपादन करते हुए कहा था - हमारे धर्म का सार इष्ट चुनने की स्वतंत्रता में है। इस वैज्ञानिक हिन्दू धर्म में इष्ट की स्वतंत्रता बहुत बड़ा शिद्धान्त है । इसके द्वारा समस्त संसार को एक सूत्र मे पिरोया जा सकता है। इसलिए हिन्दू-धर्म में जो अपने अपने सम्प्रदाय में इष्ट-चयन द्वारा समाजों की श्रृंखलाए निश्चित की गयी है, इसी के कारण आप भी हम विश्व का मार्ग दर्शन करने में समर्थ है। योगी एवं महान चिन्तक दिग्विजयनाथ महाराज जी ने हिन्दूत्व के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किये है- हिन्दू नाम न तो सांप्रदायिक है और न ही राष्ट्रविरोधी यह युगों से इस देश की राष्ट्रीयता का बोधक बना हुआ है। हिन्दू शब्द का प्रयोग का हमारा मुख्य उद्देश्य यह है कि हिंदुत्व की थाती राष्ट्रीय एकता की सर्वाधिक सुरक्षित सुसंगहित शक्ति रही है, जिसने विभिन्न जातियों, विरोधी जलवायु अनेक भाषाओं और धार्मिक विश्वासों के बीच इस देश को एक राष्ट्र बनाया। हिंदुत्व न एक ऐसा एकीभूत तल रहा है, जिसने बोध धर्म, जैन धर्म और सिख तथा अनेक धार्मिक विश्वासों को एक राष्ट्र के रूप में मिला दिया है। बहुत विचारक हिन्दू शब्द के अर्थ से घबरा जाते हैं वे यह समझने में असफल रहते हैं कि हिन्दू उस ऐतिहासक प्रक्रिया की संज्ञा है, जिनसे सभी धर्मो, संस्कृतियों और सामाजिक प्रभावों को एक राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठापित किया है। जो हिंदुत्व को विभेदक और पक्षपातपूर्ण बना का उसकी निंदा करते हैं वे इस ऐतिहासिक प्रक्रिया की गरिमा को नहीं समझ सके हैं। जो लोग भारत में राष्ट्रीय एकत्र को प्रतिस्थापित करना चाहते हैं, उन्हें इस एकीकरण की शक्ति हिंदुत्व का अधिकाधिक उपयोग करना चाहिए , जो विभिन्न भाषा-भाषियों विभिन्न जलवायु में निवास करने वालों, विभिन्न रीति-रिवाजो और विश्वास लोगों को राष्ट्र के रूप में ढाल सके। हिंदुत्व एक सागर है, जिसमें भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय रूपी नदियां आकर विलीन हो जाती है और विलीन होने पर सागरमय हो जाती है।

महन्त दिग्विजयनाथ स्मृतिग्रन्थ) [नाथसिद्धा चरितामृत पृ० 367-372]

गौ रक्षा एवं गौ सेवा के सन्दर्भ में महाराज जी का उलेखनीय योगदान रहा है । दिग्विजयनाथ जी महाराज ने 'गाय को राष्ट्रीय चिंतन का प्रतीक कहा । महाराज जी के उद्गार है "इतिहास की ज्ञानराशियां जहा तक अतीत को प्रकाशित कर सकी हैं, उसके साक्ष्य पर निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है - गाय हमारे राष्ट्रीय चिन्तन का प्रतीक है। हमारी राष्ट्रीय विचारधारा की मूल प्रेरणा गाय ही रही है। जब हम अपने अतीत में झांक कर देखते है तो हमें ज्ञात होता है कि हमारे समस्त ऐतिहासिक प्रतीको में गाय सर्वाधिक श्रद्धास्पद रही है। हमारा सांस्कृतिक इतिहास गाय की चारो ओर केन्द्रित है, भगवान के समस्त प्रमुख अवतार पृथ्वी, गाय और ब्राह्मण की रक्षा के निर्मित हुए हैं। गाय हमारे लिए राष्ट्रीय पशु है यदि हम अपनी सतत को एक नया आयाम और अपने ऐतिहासिक अतीत को एक नया आधार देना चाहते हैं , तो हमें यह घोषित करना होगा कि भारतीय गणतंत्र में गाय राष्ट्रीय पशु है और इसकी हत्या एक जगण्य अपराध है। महन्त दिग्विजयनाथ जी हिंदुत्व भारतीयता के प्रतीक थे। मानव जीवन से सम्बंधित अधिकांश क्षेत्र में महन्त जी की ही एक मात्र अमित पहचान है महाराज जी अवतारी एवं दिव्य पुरुष थे।

गाय के समान ही उन्होंने हरिजनों की गरिमा को स्वीकार कर उन्हें हिन्दू-समाज का आभिन्न अंग कहा महाराज जी के शब्दों में अश्पृश्यता के सम्बन्ध में मेरे और हिन्दू महासभा के विचार स्पष्ट है। हम लोगों ने सदैव इसे सिद्धान्त रूप में स्वीकार किया है कि हरिजन भी हिन्दू समाज के उसी भांति अभिन्न अंग है, जिस प्रकार ब्राह्मणन,क्षत्रिय,, वैश्य, जैन, बौद्ध सिख्य आर्य समाजी अथवा सनातनी लोग हैं उनका मूल भारतीय है। उनके प्रति समाज में उत्पन्न भेदभाव की भावना, चाहे वह धार्मिक हो या सामाजिक, राजनीतिक अथवा आर्थिक समाप्त कर दी जानी चाहिए। यदि कोई व्यक्ति इन विचारों के विपरीत कोई अन्य विचार प्रकट करता है तो वे उसके निजी विचार हो सकते हैं,, हिन्दू महासभा के नहीं। हमारा दृढ़ विश्वास है कि जीवन में मनुष्य का सामाजिक, स्तर उसके जन्म के आधार पर नहीं, जीवन मैं उसके द्वारा किये गये कर्मो के आधार पर आँका जाता है। खेद है कि पूर्व से अस्पृश्यता का यह अभिशाप हमारे समाज में बहुत व्यापक से गया है। व्यवहार भगत, वैज्ञानिक, जगत एवं शास्त्रों की दृष्टि से इसके लिए कोई स्थान नहीं है । भूतकाल में इसके कारण अधिक छति उठानी पड़ी है। वह हिंदू समाज के लिए पूर्ण आत्महत्या समान ही है। समाज में इस कृत्रिम विभाजन से हिन्दुओं का वास्तविक जीवन-दर्शन अधिक पीछे पड़ गया है। महाराज जी ने सनातन धर्मं को सुसंगठित करने का भरपूर प्रयास किया है।

महन्त जी का जीवन दर्शन उनके पवित्र आचरण और निर्मल सिद्धान्त का पर्याय है। महाराज अध्यात्म योग के स्वामी होकर भी राजकीय भोगों में निस्पृह बुद्धि का भी योग में गुप्त रखने के सिद्धान्त के लोकहित की दृष्टि से समर्थक थे। उनका मन पर सामिल था, यही कारण है कि वे बात की बात में अपने संकल्प और निश्चय में सुदृदता का प्रकाशन करते हुए महान से महान कार्य सम्पादीत का दिया करते थे।

महाराज जी के योग के विषय में अत्यन्त निष्पक्ष विचार व्यक्त किया है - 'मानव जाति के अन्तर्गत धर्म का परम उद्देश्य योग है, वियोग नहीं, प्राणी प्राणी के बीच के व्यवधान को दूर करना है। धर्म मनुष्य को दिव्यता के उच्च सोपान पर ले जाता है। वह नर को नारायण बनाने का अभिक्रम करता है। इस भूमि पर भगवान् का ऐसा राज्य स्थापित करना ही धर्म का लक्ष्य है, जिसमें मनुष्यों के व्यक्तिगत, सार्वजनिक सभी व्यापारों में सत्य एवं एकता, विश्वप्रेम एवं मैत्री भाव विश्व शांति एवं सामाजस्य, विश्व कल्याण, विश्व आनन्द एवं सौन्दर्य का राज हो । सत्य तो यह है कि मानव की अभ्यंतर धार्मिक एवं आध्यामिक चेतना को न्याय, स्वतंत्रता, समान बन्धुता एकता शान्ति और सामाजरूप की आवश्यकता है। यह मानव की सत्य- प्रकृति में निहित ईश्वत्व की ही आवश्यकता है। धर्म का परम सूक्ष्म सार ही योग है, योग का अर्थ मिलाप है, जिसमें कर्म परायण जीव का मिलाप विरात समस्त रूप विश्वहृदय से होता है। प्रत्येक का मिलाप सभी से होता है जिसमें ब्राह्म संसार भी समस्त विभिन्नताएं उस एक परमात्मा में एक हो जाती है, ओतप्रोत हो जाती है, जो इन सारी विबिन्ताओ में स्वयं अपना अवतार अभिव्यक्त कर रहा है। समस्त ज्ञान, अनुभूति, अभिलाषा एवं अभिकर्म के सनियम द्वारा मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष में इस पूर्ण योग का अभ्यास ही धर्म का अंतिम उद्देश्य है। सभी मत मतानारों, कर्म काण्डों और संस्थाओ में आध्यामिक गुणों का अस्तित्व तभी माना जाएगा, जब वे इस योग प्राप्ति की ओर मानव को ले जाते हैं। यह योग ही समस्त विभेद के बीच अभेद की सजीव सक्रिय चेतना है और यही मानव जीवन के सभी पक्षों का विश्वजीवन के साथ समन्वय है। धर्म व्यवस्था देता है कि हमारे व्यक्तिगत एवं पारिवारिक, राजनैतिक एवं आर्थिक, सामाजिक एवं साम्प्रदायिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय जीवन के सभी कार्य - व्यवहार इसी योग दर्शन से संचालित एवं आलोकित होते रहे। यहीं योग धर्म मानव संसार" में सच्ची सुख-शान्ति, सच्ची मधुरता और मंजूलता का आनयन कर सकता है।

योगी दिग्विजयनाथ जी महाराज जी ने धन के सम्बन्ध में अपने सीमांत एवं जीवन-दर्शन का रुपण कर हुए एक कुम्भ मेले के अवसर पर कहा था कि व्यक्ति साम्प्रदायिकता, राष्ट्रीयता आदि के निम्न स्तरों में मानव चेतना को ऊपर उठाकर विश्वात्मकता एवं परम अध्यायतमवाद के उच्चतर स्तर पर ले जाने ही धर्म का कार्य है। महाराज भारतीय राष्ट्रवादिता के प्राण थे। वे आदर्श हिन्दू थे वे उच्च कोटि को शिक्षाविद थे। उनका कथन है- "हमारी संस्कृति तथा सभ्यता बहुत ही प्राचीन सम्भवतः सबसे प्राचीन है उनका मानना था की मानव को सर्वोच्च लक्ष्य-प्राप्ति तक ले जाने सम्बंधित विचार जगत के अन्य कोई समाज संस्कृति या देश पछाड़ नहीं सकता है। अज भी हमारे पास आदर्श एवं मूल्य है जिससे सम्पूर्ण विश्व का पथ प्रदर्शन किया जा सकता है।

विशुद्ध अर्थों में महन्त जी योगी दार्शनिक, पथ प्रदर्शक होने के साथ ही साथ 'हिन्दू' धर्म पर अटूट थे। हिन्दू की परिभाषा भिन्न-भिन्न प्रकर से की गयी है, पर सबसे विषद प्रमाणित और सरल परिभाषा अखिल भारतवर्षीय हिन्दू महासभा की ओर से निम्नलिखित प्रकार से है-

आसिन्धौ : सिन्धुपर्यन्ता यस्य भारत भूमिका ।

पितृभूः पुण्य भूरचैब स वै हिन्दुरिति स्मृतिः ॥

अर्थात जो इस सिन्धु नदी से लेकर सागर (कन्या कुमारी) पर्यंत विस्तृत इस भारत भूमि को अपनी पितृ-भूमि और पुण्य भूमि मानता है, उसे ही हिन्दू कहा जाता है (वह हिन्दू है)। कितनी असाम्प्रदायिक परिभाषा है ये ! साम्प्रदायिकता की इसमें बू तक नहीं है। यह किसी श्री सम्प्रदाय विशेष या धर्म विशेष भी ओर इंगित करती प्रतीत नहीं होती न तो इसके अनुसार केवल शिवलिंग की पूजा करनें वाला हिन्दू है और न ही गायत्री मन्त्र जपने वाला । पर हिन्दू वह है, जो इस समग्र भारत भूमि को अपनी पितृ-भूमि और पुष्प-भूमि मानता है। इसमें कितनी राष्ट्रीयता है, कितनी देश भक्ति, जो मनुष्य इस भूमि को अपनी पितृ-भूमि

मानेगा, वह अभी इसको धोखा नहीं दे सकता। हिन्दू हिन्दुस्थान के लिए जी सकता है, मर सकता है और कर सकता है, अपना सर्वस्व समर्पण। पर एक हिन्दू के लिए इस भूमि को अपनी पितृ-भूमि मानना ही पर्याप्त नहीं है, इसको इसे अपनी पुण्य-भूमि भी मानना ही पड़ेगा और तभी वह हिन्दू कहला सकता है।

भारत में भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय है, पर व्यापक रूप में ये सभी केवल हिन्दू हैं। एकत्रित होने पर इनकी सत्ता एक राष्ट्रीयता को जन्म देती है - जिसे हिंदुत्व कहते है। न तो ब्राह्मण अधिक हिन्दू है और न शुद्र कम, दोनों हिन्दू है और उपर्युक्त सम्प्रदाय की परिभाषा थी "हिन्दू शब्द को कसने से यह स्पष्ट हो जाता है, कि न तो हिन्दू साम्प्रदायिक है और न हिन्दू का अर्थ सामप्रदायिकता है। हिंदुत्व एक सागर है जिसमें भिन्न-भिन्न संप्रदाय रूपी नदियां आकर विलीन हो जाती हैं और विलीन होने पर वे सागरमय हो जाती हैं। वे विभिन्न तरंगों के रूप में लहराती हुई एकमात्र समुद्र की ही शोभा बढ़ाती और उसकी महत्ता को घोषणा करती हैं। ये सब मिलकर सागर का ही प्रतिनिधित्व करने लगती है। अतेव हिन्दू एक महान राष्ट्र" का नाम है, न कि किसी के फिरके का तब हिन्दुत्व है क्या ? हिंदुत्व एक आदर्श भारतीय राष्ट्रीय समाजवाद है, जिसमें समस्त भारतीय समाज को एक सूत्र में आबद्ध कर लिया है। बौद्ध धर्म के नाम पर मात्र बैद्ध धर्मानुयायी आ बढ़ेंगे, सनातन धर्म के नाम पर केवल सनातनी आगे आयेगें। पर हिंदुत्व के नाम पर सब एक आएँगे और सम्मिलित रूप से आएंगे और उनमें सनातनी, आर्य समाजी, सिक्ख, बौद्ध, जैनी सभी रहेगें।

अतेव हिंदुत्व साम्प्रदायिकता नहीं राष्ट्रीयता है ऐसी राष्ट्रीयता जिसका भारत के अतिरिक्त कोई अस्तित्व ही नहीं है।स्मरण रखिये कितने सम्प्रदाय नष्ट हो चुके है, नष्ट होगें और हो रहे हैं पर हिन्दुत्व इन सबके उपर ले और अमर है। वह न कभी नष्ट हुआ है, न होने वाला है और न ही हो रहा है। यदि किसी दिन भारत की इस राष्ट्रीयता (हिन्दुत्व) के समाप्त होने की बात सोची जा सकती है तो उसी के साथ यह भी सोच लेना चाहिए कि उस दिन भारत ही समाप्त हो जाएगा। धर्म का परम उद्देश्य विश्वशान्ति है। धर्म का पाम सूक्ष्मसार ही योग है। योग का अर्थ मिलाप है जिसमें कर्म पारायण जीव का मिलाप परस्पर आत्मा से होता है, व्याक्ति का मिलाप विराट समस्तीरूप विश्वहृदय से होता है। प्रत्येक का मिलाप सभी से होता है। यह मिलाप होता है जिसमे बाह्यत: संसार भी सारी विभिन्नताएँ उस एक परमात्मा में ओत-प्रोत हो जाती हैं, जो इन सारी विभिन्नताओं में स्वयं अपना अवतार अभिव्यक्त कर रहा है। समस्त ज्ञान अनुभूति, अभिलाषा एवं अभिकर्म के संयमन द्वारा मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष में इस पूर्ण योग का अभ्यास ही धर्म का अन्तिम उद्देश्य है।

दिगविजयनाथ जी महाराज ने कर्मयोग को आत्मशुद्धि और लोक-कल्याण की दृष्टी से अपने जीवन में चरितार्थ किया। 'आदर्श योगी ' ग्रन्थ की भूमिका में दिगविजयनाथ जी महाराज के शब्द है- महापुरुषों की जीवन-धारा का दर्शन कर और उनकी उपदेश वाणी का श्रवण कर साधारण जनता के मन में भी ऐसा सुहद्ध संस्कार पैदा होता है कि भोग से त्याग श्रेष्ठ है, काम से निष्कामता, क्रोध से प्रेम, विरोध से मिलन, हिंसा से अहिंसा, अहिक अभ्युदय से आत्मिक कल्याण, जड़ पदार्थ की अपेक्षा आत्मा, विश्व प्रपंच का मूल तत्व परमात्मा परमेश्वर श्रेष्ठ है। इसी तरह यह भी दिखाई पड़ने लगता है कि विश्व प्रपंच में सबकुछ अनित्य है, देह भी अनित्य है समस्त सम्बंध अनित्य है एकमात्र परमात्मा ही नित्य है। परमात्मा के साथ सम्बन्ध ही नित्य सम्बन्ध है।

राष्ट्रीयता के अनन्य साधक महंत अवैद्यनाथ (द्वितीय खण्ड) पृ० 46

परमात्मा का ध्यान, चिन्तन, मनन आराधना ही मानव जीवन का मुख्य कर्म है, सभी सांसारिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति छोड़कर अध्यात्मिक साधन, भजन में देहेन्द्रिय मन, बुद्धि को लगा देना ही मनुष्य- जीवन को सम्पूर्ण रूप से दुखमुक्त और शांतिमय बनाने का श्रेष्ठ उपाय है। जागतिक धन-सम्पत्ति, राज्य- सामराज्य या लौकिक ज्ञान और शांति के प्रसार से परा शान्ति नहीं मिलती, दु:ख की आत्यन्तिक निवृति नहीं होती। एक ही परम देवता, सच्चिदानंद परमात्मा विभिन्न नामों से अभिहित होता है। वही विभिन्न उपाधियों से विभूषित होकर विभिन्न मूर्तियों में प्रकट होता है और विभिन्न प्रकार के लीला विलास करता है। महाराज जी कभी भी सत्य, आदर्श और व्याय के पथ से विचलित नहीं हुए। वे अवधूत मार्गी योगी थे। वे उस पंथ के योगी थे, जिस पर चलने वाले योगी बिना और प्रशंसा, दोनों में तटस्थ और उदासीन रहते थे।

महंत दिग्विजयनाथ जी महाराज सम्वत् २०२६ वि० में अश्विन कृष्ण कृतीया (28 सितम्बर 1969 ई०) को सांयकाल 77 वर्ष की अवस्था में अमरत्व प्राप्त कर शिव स्वरूप कैवल्यपद में चिरसमाधिस्थ हो गये। उनके उत्तराधिकारी योग दर्शन ही नहीं वरण सम्पूर्ण भारतीय दर्शन और अध्यात्म के परम मर्मज्ञ

योगिराज गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवेधनाथ जी ने अपने पूज्य गुरुदेव के चरण में श्रद्धान्जलि समर्पित की थी- "स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावह:" गीता का आदर्श उन्हें पूर्णत: मान्य था। हिन्दू समाज को व्याप्त ऊँच-नीच, छुआछूत, जाति-पाति, एवं धनी- निर्धन का भेदभाव उन्हें किंचित भी स्वीकार नहीं था। मेवाड़ के अधिपति महाराणा भगवत सिंह ने महन्त दिग्विजयनाथ जी की प्रशस्ति में कहा है- वे आजीवन हिन्दू संस्कृति एवं धर्म के उत्थान के लिए प्रयत्नशील रहे। उनका जन्म ही लोककल्याणार्थ हुआ था। उनका जीवन, आदर्श एवं अलौकिकता मानवता को सदैव प्रकाशित करता रहेगा। अयोध्या के परमहंस रामचन्द्रदास की श्रद्धान्जलि के शब्द महन्त दिग्विजयनाथ जी श्री महाराज हिंदुत्व के प्राण थे। उनकी वाणी में शक्ति थी। अयोध्या स्थित श्री राम जन्म भूमि की रक्षा में भी वे अग्रणी थे। वर्तमान गोरखनाथ मंदिर का विशान एवं विकसित स्वरूप उन्ही महान आत्मा की कल्पना का साकार रूप है। महाराज जी की पुण्यतिथि, अश्विन कृष्ण तृतीया के अवसर पर श्रद्धाजंली स्वरूप प्रत्येक वर्ष श्री गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर में उनके जीवन से सम्बन्धित विषयों के सन्दर्भ में योग-सम्मेलन, संस्कृत-सम्मेलन, धर्म एवं दर्शन- सम्मेलन और श्रद्धांजलि समारोह आदि का आयोजन श्री महाराज जी के पुष्यस्मृतिस्वरूप निर्मित "श्री दिग्विजयनाथ स्मृति-भवन" में सम्पन्न होता है जिसमे देश-विदेश के विद्वान, दार्शनिक, योगी, चिन्तक उपस्थित होते है महन्त दिग्विजयनाथ का नाम भारतीय इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णक्षरों में अंकित है। ऐसे महापुरुष दिव्य आत्मा को सत्-सत् नमन है।

अध्याय- चौदह

राष्ट्रीयता के अनन्य साधक : महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज

भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि अन्त:करण की प्रसन्नता होने पर सम्पूर्ण दु:खों का अभाव हो जाता है और उस प्रसन्नचित कर्मयोगी की बुद्धि एक परमात्मा में भलीभाँति स्थिर हो जाती है। यथा-

प्रसादे सर्व दुःखानां हादिरस्योपजायते ।

प्रसन्नचेतसो माशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ।। (2/65)

भगवान आगे कहते हैं कि जैसे नाना नदियों का जल सब ओर से परिपूर्ण, अचल प्रतिष्ठ वाले समुद्र में उसे बिना विचलित किये ही समा जाता है, वैसे ही सब भोग जिए स्थितप्रज्ञ पुरुष में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न किये बिना ही समा जाते है, वही पुरुष परम शान्ति को प्राप्त होता है- अर्थात

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमाः प्रविशन्ति यद्वत्।

तवत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी 2/70

स्थितप्रज्ञ महात्मा के बारे में भगवान कृष्ण की ये बातें गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज के विराट व्यक्तित्व में किंचित अन्य रूपों में महसूस की जा सकती है। महन्त जी के चौड़े ललाट, चेहरे की दिव्य आभा और सामने वाले को अपना बना लेने वाली मुस्कराहट इस बात की साक्षी है कि वे अन्तःकरण की प्रसन्नता से युक्त प्रसन्नचित रहने वाले ऐसे कर्मयोगी है जिनकी चिन्ता ईश्वर को पाने अथवा मोक्ष पाने की कम राष्ट्रीय एकता-अखण्डता और सामाजिक समरसता की प्रतिष्ठा करने की अधिक है। पूज्य योगी महन्त जी के असाधारण व्यक्तित्व को निकट से देखकर समझा जा सकता है कि उनमें भगवान श्री कृष्ण के स्थितप्रज्ञ महात्मा की भाँति सब प्रकार के भोग बिना कोई विकार उत्पन्न किये ही समा गये हो। एक राजसी ऐश्वर्य वाले मठ के पीठाधीश्वर का सामान्य जीवन इसी बात का प्रमाण है।

लौकिक जीवन का एक-एक क्षण जन-कल्याण में व्यतीत हआ। जीवन के अन्तिम समय में भी उन्हें लोक की चिन्ता थी। हिन्दू और हिन्दुत्व के लिए वह सब कुछ करने को तैयार थे, क्योंकि वह जानते थे कि इस विश्व का कल्याण सनातन परम्पराओं से ही किया जा सकता है।

महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज के बारे में शब्दों में कुछ कहा जाए तो यह कम होगा, उनका स्वरूप एवं हदृय बहुत विराट था। उन पवित्र आत्मा का उदय संसार में शरीर के रूप में हुआ था, इसलिए संक्षेप में कुछ बातों को जानना आवश्यक है, ऐसे महापुरुषों के सम्बन्ध में भविष्य में शोध की अन्नत सम्भावनाएं बनी रहेगी। वे भौतिक पुरुष होने के साथ ही साथ योगी एवं तात्विक पुरुष थे।

28 सितम्बर, 1969 ई. को युग पुरुष महन्त द्विग्विजयनाथ जी महाराज ब्रह्मलीन हुए। उनके बाद उनके योग्य शिष्य अवैद्यनाथ जी गोरक्षपीठ के महन्त पीठ पर आसीन हुए। महन्त द्विग्विजयनाथ जी के शिष्यत्व में ही अवैद्यनाथ जी राजनीतिक, सामाजिक, एवं सांस्कृतिक पहचान बना चुके थे। 1962 में ही उत्तर-प्रदेश विधान सभा के सदस्य निर्वाचित हुए। महन्त अवैद्यनाथ जी ने श्री गोरखनाथ मन्दिर को भव्य स्वरूप प्रदान किया। नाथ सम्प्रदाय का मठ होने के पश्चात् की समन्वयवादी दृष्टि परिचय देते हुए सनातन धर्म को ध्यान में रखकर अनेक विग्रहों के मन्दिर बनवाये। हिमालय की गोद में बसे पौड़ी गढ़वाल के काण्डी नामक ग्राम में 18 मई 1919 को एक बालक ने जन्म लिया। संसार दिखने में जितना सुन्दर दिखता है, वस्तुतः उतना सुन्दर होता नहीं, इसी प्रकार पर्वतीय क्षेत्र के लोगों का जीवन भी अत्यन्त कठिन होता है। बालक का नाम कृपाल सिंह बिष्ट रखा गया। इस बालक को भी संसार 'दुखालय' है इस बात की अनुभुति प्रारम्भ से ही होने लगी। अभी होश को नही संभाला था कि माता- पिता की छत्र-छाया बालक के सिर से उठ गई। पिता श्री राम सिंह बिष्ट और 'माता' का निधन असमय हो

जाने के कारण बालक के पालन पोषण का भार वृद्धा पितामही के कन्धों पर आ पड़ी, किन्तु क्रूर काल के आघातो को वह वृद्ध माता-पिता कब तक सहन कर पाते, बालक के आठवी कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते दादी भी इस भौतिक संसार को छोड़ चली।

राजकुमार सिद्धार्थ ने जिस सत्य का अनुभव (जन्म, जरा, व्याधि, मृत्यु, युवावस्था में किया, इस सत्य का साक्षात्कार बालक कृपाल सिंह बिष्ट ने होश सम्भालते ही कर लिया। इतिहास साक्षी है कि संसार की प्रतिकूलताओं ने बहुत से महान सन्त- महात्माओं का गठन किया है। बालक कृपाल सिंह बिष्ट भी इन सांसारिक घात- प्रतिघातों को सहन करते हुए संसार से विरत हो चला था। भगवान जिस पर कृपा करते है, उसके धन, मान और स्वजनों का हरण कर लेते है। अत: ध्रुव, प्रहलाद या अन्य भक्तो की भाँति विपरीत परिस्थितियों को प्राप्त कर यदि जीव भगवदोन्मुख हो जाय तो इससे बड़ी उपलब्धि क्या हो सकती है? बालक कृपाल पर भी भगवान की कृपा प्रगट होने लगी थी, तभी हो बालक के मन में संसार के प्रति गहन वैराग्य के भाव उदित होने लगे थे।

माता-पिता और दादी का निधन भी बालक कृपाल सिंह के लिए वरदान ही सिद्ध हुआ, क्योंकि गृहकार्य और सामाजिक, पारिवारिक जिम्मेदारियां की प्रबल श्रृंखला स्वतः विच्छिन्न हो चुकी थी और गृह त्याग भूमिका सहम ही निर्मित हो गयी थी। जिस प्रकार बालक ध्रुवः जब भगवन्मार्ग पर अग्रसर हुए तो उनके सहयोग के लिए देवर्षि नारद जी जैसे सन्त का आगमन हुआ। उसी प्रकार बालक कृपाल सिंह बिष्ट संसार के निर्मम प्रहारों से सुब्ध होकर जब गृह त्याग कर आगे बढ़ा तो मार्ग दर्शन के लिये साधु-महात्माओं का मिलन होता गया और निरन्तर सत्यंग के परिणामस्वरूप वैराग्य पुष्ट होता गया।

प्राय: जितने 'महापुरुष हुए है, उनमें प्रवर्जन का गुण स्वाभाविक होता है। तभी तो कहा जाता है रमता जोगी बहता पानी' ही पवित्र होता है। बालक कृपाल सिंह बिष्ट की धारा को भी जगन्नियन्ता जिस दिशा में ले जाना चाह रहे थे, उसी से अभिभूत हुए बालक के मन में उस अद्भुत चित्रकार की चित्रकारी को देखने की लालसा जग उठी और बदरीनाथ यात्रा के साथ ही कैलाश मानसरोवर की यात्रा का विचार भी पुष्ट हो गया। संम्भवत संसार में रचे-बसे सांसारिक लोगों की स्वार्थी दुनिया से परिचित बालक को साधु वेश धारी लोगों की दुनिया का सत्य दिखाने के लिए ही ईश्वर हैजा" का रूप धारण कर आये। मानसरोबर में आध्यात्मिक अनुभूतियों का जो आनन्द मिला, उसकी परीक्षा लौटते समय इस व्याधि के द्वारा ली गई। अत्यधिक वमन एवं अतिसार ने शरीर को सर्वथा अशक्त बना दिया और ऐसी हो अवस्था में साथी सन्यासियों ने अचेत अवस्था में छोड़कर आगे की यात्रा प्रारंभ कर दी। इस संसार का सच्चा स्वरूप देख लिया था बालक कृपाल ने और यह भी समझ लिया था कि संसार के सारे संबंध कितने आसार और क्षणभंगुर हैं। जिस प्रकार ज्ञान की खोज में राज कुमार सिद्धार्थ व्यग्र हो उठे थे, वैसी ही ज्वाला इस बालक के हृदय में धधक उठी और जब भी हृदय व्याकुल होकर परमात्मा की ओर उन्मुख होता है तो परमात्मा किसी न किसी रूप में मार्ग दर्शन करने आ ही जाते है। कृपाल सिंह जी के लिये भी प्रभु ने निवृत्तिनाथ जी के माध्यम से निवृत्ति का मार्ग प्रशस्त किया। निवृत्तिनाथ जी महाराज की योग साधना, अध्यात्मिक दर्शन एवं नाथपंथ के विचारों ने किशोरवय साधक के हृदय पर गहरी छाप छोड़ी और संसारिक धन वैभव के प्रति अत्यन्त विरक्त भाव भर दिया।

यह तेजस्वी बालक अपने लक्ष्य भेदन हेतु जिस मार्ग पर चल पड़ा था, उससे लौटने की सम्भावना तो नहीं थी, किन्तु संसारिक लोग इस बात को कैसे हृदयंगम कर पाते । अत: चाचा लोगों की दृष्टि बालक की पैतृक सम्पत्ति पर थी। उन्हें इस बात से भी सीख नहीं मिली कि उसका बच्चा ही संसार से विरक्त होकर प्रभु चरणों का अनुगामी बन चुका है। चाचा लोग तो चाहते थे कि बालक अपनी पैतृक भूमि को दो चाचा लोगों में बराबर-बराबर बांट दे। इसी कार्य के लिए यह तेजस्वी बालक जब अपने घर जाकर बयान देने के लिए मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित होता है तो मजिस्ट्रेट के द्वारा पुनः विचार रखने का प्रस्ताव रखा गया था। यह कह गया कि साधना का मार्ग बहुत कठिन है और यदि आप पुन: गृहस्थ होना चाहें तो यह भूमि आपकी गृहस्थी का आधार बन सकती है, किन्तु जिसने सारे विश्व, ब्रह्माण्ड को सहारा देने वालों का सहारा ले लिया, उसे किसी अन्य सहारे की क्या आवश्यकता ? बालक कृपाल सिंह जी के मन में कोई सन्देह नहीं था, अत: बड़े ही स्पष्ट शब्दों में उन्होंने कहा- "मैं अतिशीघ्र इस सम्पत्ति से छुटकारा पाना चाहता हूं, जिससे सन्यास जीवन में विमुख होने की कोई सम्भावना ही ना रहें।" इस प्रकार सन्यास पूर्व ही संसार के सूत्रों को छिन्न-*भिन्न* कर यह किशोरवय का बालक शान्ति के मार्ग पर बढ़ा तो योगी 'शान्तिनाथ' जी के द्वारा लिखित 'प्राच्य दर्शन समीक्षा' का अध्ययन किया। ऋषिकेश में रहते हुए इस अध्ययन के फलस्वरूप योगी शान्तिनाथ जी के प्रति उत्सुकता बढ़ी। पूछनें से ज्ञात

हुआ कि वे भी योगी गम्भीरनाथ जी के शिष्य है और कराची से 10 मील दूर आश्रम बना का एक सेठ के बगीचे में रहते है। योगी निवृत्तिनाथ जी ने बताया कि शान्तिनाथ जी महाराज दर्शन, अध्यात्म के प्रकाण्ड विद्वान और नाथपंथ के ज्ञाता होने के साथ-साथ स्वतंत्रतता संग्राम सेनानी भी है। शान्तिनाथ जी से मिलन की लालसा लिए अपने मार्ग दर्शक निवृत्तिनाथ जी के साथ यह किशोर योगी एवं सन्यासी कराची के लिए चल पड़ा। वहाँ पहुंचकर शान्तिनाथ जी के दर्शन एवं सत्संग में खूब मन रमने लगा। योग दर्शन और गोरखबानी नामक ग्रन्थों का अनुशीलन करने तथा गम्भीरनाथ जी एवं पूज्य दिग्विजयनाथ जी के बहुआयामी व्यक्ति की चर्चओं ने इन महापुरुषों के दर्शन की प्रेरणा प्रदान की। सत्संग और स्वाध्याय में समय आनन्दपूर्वक व्यतीत हो रहा था, किन्तु नियति को इस घट नाक्रम का भी पटाक्षेप करना ही था और वह इस रूप में हुआ कि जिस सेठ के बगीचे में संतों का निवास था, उन्हीं के जिम्में भोजन की व्यवस्था भी थी, किन्तु एक घटना ऐसी घटित हुई, जिससे शान्तिनाथ जी को यह 'लगा कि हम इस सेठ पर बोझ बन गये हैं। सन्त तो वही है, जो दूसरे को दुख न दे और उस आश्रम को छोड़ने का निर्णय हो गया। शान्तिनाथ जी ने कहा कि गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त दिग्विजयनाथ जी किसी योग्य उत्तराधिकारी की खोज में है, तुम वहीं चले जाओ। इसके दो वर्ष पूर्व भी तीर्थयात्रा के दौरान महन्त दिग्विजयनाथ जी के दर्शन हुए थे और उन्होंने यह प्रस्ताव बालक के समक्ष रखा था, किन्तु प्रवल वैराग्य के प्रवाह में बहते हुए तब इस तपस्वी को यह सात्विक बन्धन भी स्वीकार नहीं था। अत: अनिच्छा प्रगट कर वे अपनी आगे की यात्रा पर निकल पड़े, किन्तु पुनः आज यह प्रस्ताव सम्भवतः ईश्वरीय प्रेरणा से ही आया और यह योग्य शिष्य अपने गुरु से मिलने के लिए गोरखपुर की ओर चल पड़ा । यह घटना 1942 ई० की है।

नाथ परम्परा में महंत अवैद्यनाथ जी महाराज - विश्वविख्यात गोरखनाथ मन्दिर महायोगी गोरक्षनाथ जी की त्रेतायुगीन पुरातन तपः स्थली पर निर्मित है। यह सिद्धपीठ है इस गोरक्षनाथ पीठ को नाथपंथ में बहुत प्रतिष्ठा प्राप्त है और इस पीठ के श्री महन्त की भी व्यापक लोक स्वीकृति है। श्री गोरक्षपीठ के महन्त नाथ योगियों के प्रमुख माने जाते हैं। इस मन्दिर की दीर्घ कालीय महन्त परम्परा में ऐसे महान सिद्ध योगी हुए है जिन्होंने अपने आध्यात्मिक ज्ञान से हिन्दू समाज का मंगल किया है। उनकी अलौकिक उपलब्धियां भारतीय जनमानस में जीवन्त है। इस श्रृंखला में युगपुरुष महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज एवं उनके योग्य शिष्य उदारना राष्ट्रसंत महन्त अवैद्यनाथ का नाम स्मरणीय है।

महन्त वरदनाथ जी इस मठ के प्रथम महन्त थे । उनके बाद के महन्तों में बाबा अमृतनाथ, परमेश्वरनाथ, बुधनाथ, रामचन्द्रनाथ पीरनाथ, अजबनाथ तथा पियारनाथ के नाम उल्लेखनीय है। सन् 1758 से 1786 ई० तक बालनाथ यहाँ के महन्त थे। उनकी ख्याति अलौकिक सिद्ध सम्पन्न योगी के रूप में बताई जाती है। इसके बाद माननाथ जी, सन्तोषनाथ जी, मेहरनाथ जी, गोपालनाथ जी, बलभद्रनाथ जी और दिलवरनाथ जी का नाम आदरपूर्वक लिया जाता है। इसके बाद सुन्दरनाथ जी गोरक्षपीठ के महन्त बने। इसी समय मंदिर का दायित्व योगिराज गम्भीरनाथ जी के कन्धों पर आया, जो अपने समय के महान सिद्धपुरुष थे। महन्त सुन्दरनाथ जी के बाद ब्रह्मनाथ जी गोरक्षपीठ के महन्त बनें।

सन 1934 ई0 में दिग्विजयनाथ जी महाराज को महन्त पद का दायित्व सौपा गया। बप्पारावल के तेजस्वी वंशज दिग्विजयनाथ जी हिन्दूधर्म और संस्कृति के प्रति अटूट निष्ठावान थे। राष्ट्र जागरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले दिग्विजयनाथ जी ने हिन्दू संस्कृति के जागरण एवं उत्कर्ष के लिए आजीवन प्रयास किया। महन्त जी ने गोरक्षपीठ मन्दिर और उसके आस-पास के वातावरण को भव्य आध्यात्मिक एवं अलौकिक बनाया। पूर्वी उत्तर-प्रदेश में शिक्षा के प्रसार के लिए "महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद्" की स्थापना की। वर्तमान गोरखपुर विश्वविद्यालय की स्थापना में महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् ने संचालित - महाराणा प्रताप महाविद्यालय का भवन, शिक्षक विद्यार्थी सहित सम्पूर्ण सम्पत्ति प्रदान कर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सन् 1942 ई. में श्री कृपाल सिंह का गोरक्षपीठ में दूसरी बार आना हुआ। इस बार उन्होने पूर्ण निर्विकल्प एवं सुस्थिर चिर से स्वयं को गोरक्षपीठ की सेवा के निमित्त, महन्त दिग्विजयनाथ श्री महाराज के श्री चरणों में समर्पित कर दिया। वे विधानपूर्वक फरवरी सन् 1942 ईस्वी से नाथपंथ में दीक्षित हुए और श्री अवैद्यनाथ नाम से अलंकृत हुए। सन् 1969 ई. में महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् गोरक्षपीठ के महन्त पद पर आसीन हुए। ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी ने अपने गुरु द्वारा प्रारम्भ किये गये शैक्षिक सामयिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक कार्यो को गति प्रदान की। शिक्षण, प्रशिक्षण, तकनीकी और चिकित्सा के अनेक संस्थान स्थापित किये। लगभग 40 संस्थाओं की स्थापना की । हिन्दू समाज के समनवय और उत्थान एवं एकता के लिए आजीवन संलग्न रहे। श्री राम जन्म भूमि मुक्ति के लिए

देशव्यापी आंदोलन के माध्यम से हिन्दू जनजागरण किये। समाज के दबे कुचले, शोषित- उपेक्षित, दलित, बनवासी - गिरिवासी कहे जाने वाले बृहत्तर जन समुदाय को समाज की मुख्यधारा से जोड़ा। इसके लिए कथा कथित सवर्ण समाज की हठ धर्मिता से संघर्ष किया। इसके लिए इन्होंने किसी भी साधु-महात्माओं, शंकराचार्य या अन्य किसी के समक्ष समझौतापूर्ण दृष्टिकोण नहीं अपनाया । महन्त पद के गुरूतर दायित्व का निर्वहन करते हुए महराज जी 12 सितम्बर को ब्रह्मलोक के लिए प्रस्थान किये तथा 14 सितम्बर 2014 ई० को समाधिस्थ हुए और पीठ की सामाजिक सरोकार से जुड़े कार्यों का दायित्व अपने योग्य शिष्य योगी आदित्यनाथ जी महाराज पर छोड़ा ।

राजनीति में महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज—

राजनीति में आयी गिरावट और जनप्रतिनिधियों द्वारा लोकहित की उपेक्षा से महन्त अवैद्यनाथ राजनीतिक सुचिता और लोक कल्याणार्थ राजनीति में आये। वैसे तो महाराज जी को राजनीति अपनें दिव्य गुरु जी से विरासत में मिली थी। प्रथम बार सन् 1962 में उत्तर प्रदेश विधान सभा चुनाव में मनीराम क्षेत्र से विजय प्राप्त कर पहली बार विधान सभा के सदस्य बने थे और सन् 1977 तक के विधान सभा चुनाव में विजयी होते रहे। सन् 1969 में महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के ब्रह्मलीन होने से गोरखपुर लोकसभा उपचुनाव में सांसद निर्वाचित हुये। सन् 1980 में मीनाक्षीपुरम में हुई 'धर्म परिवर्तन' की घटना ने महाराज जी को इतना विचलित कर दिया कि वे राजनीति से सन्यास लेकर हिन्दू समाज की सामाजिक विषमता के विरुद्ध जन- जागरण के अभियान पर चल पड़े। सन्त का जीवन लोक के लिए समर्पित होता है। ये ही समर्थ भाव है। जो तारता हुआ तरे' इस उक्ति को चरितार्थ करते हुए महाराज जी पुनः राजनीति में सक्रिय हुए। सन् 1989 में लोकसभा चुनाव में श्रीरामजन्म भूमि पर -श्रीराम के भव्य मंदिर के निर्माण के मुद्दे पर सम्पूर्ण हिन्दू सन्त महात्माओं के समर्थन से विजयी हुए। लोकसभा के 1999 के मध्यावधि चुनाव और 1996 के लोकसभा चुनाव में महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज विजयी होते रहे। उसके बाद के लोक सभा चुनाव में उनके शिष्य सम्प्रति गोरक्षपीठाधीश्वर महंत योगी आदित्यनाथ जी महाराज को गोरखपुर की जनता निरन्तर बढ़ते भारी मतो से सांसद चुनती आ रही है। लोकसभा में सम्मानित सदस्य रहते हुए महन्त अवैद्यनाथ महाराज सन् 1977, 1990 एवं 1999 में भारत सरकार के गृह मन्त्रालय की परामर्शदात्री समिति के सदस्य रहे। राजनीति में भी महंत अवेद्यनाथ महाराज की अपराजेय शक्ति को सभी ने स्वीकारा । वह जितने बड़े सन्त थे, उतने बड़े राजनेता भी थे। पूर्वी उत्तर-प्रदेश के वह एक मात्र राजनेता थे, जिन्होंने पांच बार 1962, 1967, 1969, 1974, और 1977 में विधान सभा का चुनाव जीता और 1969,1989, 1999, 1996 में गोरखपुर लोकसभा के सम्मानित प्रतिनिधि बने। श्री गोरक्षपीठ के महन्तों के लिए राजनीति लोक कल्याण, हिन्दूत्व की रक्षा एवं विकास के लिए रही है। लोक कल्याण की यह धारा अनवरत अबाधित रूप से प्रवाहमान है।

सामाजिक समरसता के अग्रदूत—

संत ह्मदय नवनीत समाना। कहा कविन्ह पर कहै न जाना ॥

निज परिताप द्रवहिं नवनीता । पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता ॥

सन्त के कदम की उपया नवनीत से करना भी गोस्वामी जी को सहन नहीं होता है और अकाट्य तक देते हुए कहते है कि मक्खन तो स्वयं ताप पाकर पिघलता है किन्तु सन्त का हृदय तो इतना कोमल है कि वह दूसरे के ताप से ही विचलित हो जाता है। वस्तुत: सन्त के हृदय की परदु:ख कातरता ही उसे सामाजिक कार्यो में लगाती है, अन्यथा जिसने कंचन, कामिनी, कीर्ति का त्याग कर दिया और उस परमानंद कोश को प्राप्त कर लिया, जिसके बाद कुछ प्राप्तव्य नहीं रह जाता। ऐसे महापुरुष इस दुःखमय संसार की ओर क्यों देखते, किन्तु महान सन्तों के हृदय की करुणा ही उसे विवश कर देती है कि वे संसार के दुख से त्रस्त प्राणियों के ताप-त्रय की विनाश हेतु लौकिक कार्यों में प्रवृत्ति हुए से जान पड़ते है। जिस प्रकार अपने कर्मो से दुग्ध सागर पुत्रों के ताप का हरण करने के लिए भगवती गंगा हिमालय की कंकरीली, पथरीली तथा संकीर्ण राहों को पार कर समतल भूभाग पर आकर अपने स्वरूप का विस्तार करती है तथा लोक कल्याण करते हुए अपने गन्तब्य की ओर बढ़ चलती है, उसी प्रकार राष्ट्र संत महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज हिमालय की गोद में अवस्थित काण्डी से निकलकर

विभिन्न स्थानों एवं मत मतान्तरों को अपने अन्दर समाहित करते हुए अपने गुरु पूज्य महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के उत्तराधिकारी के रूप में 1969 में प्रतिष्ठित हो चुके थे। अब अपने गुरु के द्वारा दिये गये संस्कारों के प्रतिफलित होने का समय था।

देश काल और परिस्थिति के अनुसार संसार की प्रत्येक वस्तु परिवर्तित होती है। हमारा धर्म की युगानुरूप परिवर्तन की अपेक्षा करता है। यदि संस्कृति और धर्म का यह परिवर्तन नहीं हो, तो जो धर्म प्रजा के धारण का कार्य करता है, वही अपने लक्ष्य से च्युत होकर प्रजा के इस और विनाश का कारण भी बन जाता है। ऐसे अनेक कार्य जो धर्म के आडम्बरो से दूषित होकर प्रजा के त्रास का कारण बन चुके थे, उन्हें समय-समय पर सन्तो महात्माओं ने प्रतिबंधित किया। एक ऐसा ही अवसर 19 फरवरी 1980 को आ गया, जब मीनाक्षीपुरम में सामूहिक धर्मान्तरण ने आदरणीय महन्त जी के सहज, शान्त ह्रदय को शुद्ध कर दिया। अस्पृश्यता के विरोध की जो आग ह्रदय में बहुत दिनों से सुलग रही थी, वह प्रज्वलित हो उठी। अपने गुरु महन्त दिग्विजयनाथ की महाराज द्वारा समय-समय पर छूआछूत को हिन्दू समाज की एकता में बाधक के रूप में प्रतिबम्बित किया जाता था। उसका प्रत्यक्ष दुष्परिणाम देखकर महन्त अस्पृश्यता के इस अभिशाप को समूल नष्ट करने का संकल्प लेकर उठ खड़े हुए। गोरखनाथ मन्दिर के लिए राजनीति कभी साध्य नहीं रही, सदैव लोकहित के साधन के रूप में राजनीति का प्रयोग किया गया। महन्त जी को जैसे ही यह प्रतीत हुआ कि इस हिन्दू एकता और राष्ट्र एकता के कार्य में राजनीति बाधक बन सकती है, उन्होंने राजनीति से स्वयं को अलग कर लिया और धर्मान्तरण के विरोध में अपनी कोई आपत्ति दर्ज कराते हुए कहा- "मुझे यह लगा कि उस मूल कारण पर चोट होनी चाहिए, जिससे हमारे ही बन्धु-बान्धन हजारों वर्षों की अपनी परम्परा धर्म और उपासना पद्धति बदलने के लिए तैयार हो जा रहे हैं। मैंने महसूस किया कि जब तक हिन्दू समाज में अस्पृश्यता का कोढ़ बना रहेगा, अपने ही समाज में उपेक्षित और तिरस्कृत बन्धुओं को कोई भी गुमराह कर धर्मान्तरण हेतु प्रोत्साहित और प्रेरित कर सकता है। अतः मैंने गांव-गांव जाकर छुआछूत के विरुद्ध अभियान छेड़ने का निश्चय किया। इसी समय मेरे माँ में यह बात आयी कि मेरे इस सामाजिक समरसता अभियान पर लोग यह न सोचें कि यह सन्त वोट के लिए ऐसा का रहा है। मैंने राजनीति को तिलांजलि दे दी और चुनाव न लड़ने का निर्णय घोषित कर दिया। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मातिस्वनुष्ठितात्।

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः॥

आज उसी धर्म की रक्षा के लिए महाराज जी ने न केवल अपने राजनीतिक पद के परित्याग का निर्णय लिया अधिक सामाजिक समरसता के विरोध में आने वाली अपने प्रिय धर्माचार्य, सन्त महत्तमाओं और यहाँ तक कि जगद्गुरु शंकराचार्य तक को क्षमा नहीं किया। सच ही कहा है-

"वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादवि।

लोकोत्तराणी चेतांसि को तु विज्ञातुमर्हसि॥

अह्यन्त शान्त एवं मधुर स्वभाव वाले पूज्य महन्त जी की यह वज्रादपि कठोरता उनके लोकोत्ता चरित्र को ही प्रगट करती है। पूज्य महाराज जी के जीवन में सामाजिक समरसता का विचार न किसी राजनीतिक महत्वाकांक्षा के कारण था, न ही किसी यश की कामना से था। उनका सहज स्वाभाविक संवेदनशील कदम उनका सहज स्वाभाविक संवेदनशील हदृय उस वर्ग की पीड़ा से द्रवित था, जो समाज का सबसे कठिन कार्य (सेवा) करते हुए भी उपेक्षित एवं दुःखी था। योगीराज भर्तृहरि लिखते है- **"सेवा धर्मो परम: गहन, योगीनामप्यगम्यः।"** अर्थात सेवा का कार्य परम गहन और योगियों के लिए भी अगम्य है। ऐसे महत्वपूर्ण कार्य को करने वाला वर्ग सामाजिक उपेछा एवं अन्याय का शिकार हो रहा था।

इससे "महंत अवेद्यनाथ का ह्रदय व्याकुल हो उठा और इस बात की परवाह किये बिना कि कौन क्या कहेगा, क्या सोचेगा, महंत पर इस अस्पृश्यता और छुआछूत के विरुद्ध उठ खड़े हुए।

1980 ई. से गाँवों में लगातार महन्त जी के जनसम्पर्क एवं समाज के उपेक्षित लोगों के साथ बैठकर सहभोज ने क्रांति पैदा कर दी। पूज्य महाराज जी के इस कार्य का परिणाम उस समय दिखाई पड़ा, जब काशी में 'डोम राजा के घर आपके नेतृत्व में देश के अनेक धर्माचार्यो ने भोजन किया। उन दिनों का प्रमुख

समाचार पत्र 'आज' ने लिखा- "सदियों से, बिखरी पड़ी हिन्दू एकता की सभी कड़ियों को परस्पर मजबूती से जोड़कर सशक्त हिन्दू समाज का पुनर्निर्माण करने के उद्देश्य से छुआछूत मिटाने के प्रयासों को ठोस आधार प्रदान करते हुए गोरक्षपीठाधीश्वर तथा सांसद महन्त अवैद्यनाथ जी ने अनेक प्रमुख सन्त महात्माओं के साथ गुरुवार (18 मार्च 1994) को प्रातःकाल काशी के डोमराज सुजीत चौधरी के घर उनकी मां के हाथों भोजन का अस्पृश्यता की धारणा को जोरदार चोट दी।"

कलियुग में महन्त अवैद्यनाथ महाराज की तुलना भगवान राम एवं कृष्ण से किया जाये तो यह अतिश्योक्ति न होगा। महाराज जी अति गम्भीर न्यायप्रिय सभी के कल्याण के लिए सदैव पूजे एवं जाने जाएगें। डोमराज के आवास पर श्री संजीव चौधरी की देख-रेख में सूर्योदय से पूर्व ही तैयारियाँ प्रारम्भ हो गयी थीं। किसी को विश्वास नहीं हो रहा था कि हजारों वर्ष पुरानी इस कुरीति को छिन्न-भिन्न करने के उद्देश्य से महंत अवैद्यनाथ जी के साथ अनेक धार्माचार्य धर्म की ओट में चलने वाले इस अमानवीय कृत्य को आज अधार्मिक घोषित कर देंगें। नौ बजे के आस-पास सन्तों की टोली दशाश्वमेध घाट से डोमराजा के आवास की ओर जाने वाली गली में प्रविष्ट हुई। इस अभूतपूर्व घटना का अपार जन समूह ने गद्गद हद्दृय से दर्शन किया। संजीव चौधरी की माता श्रीमती सारंगा देवी भोजन करते करते भाव विहल हो गयी। उनके नेत्रो से अविरल धारा प्रवाहित होने लगी। पत्रकारों के पूछने पर अपने दिवंगत पति की स्मृतियों में खोती हुई बोली, "आज, संजीत क वाउ होतन त केतना खुश होतना" हृदय के निश्छल उद्‌गार माँ शबरी के याद दिला गये, जिसने अपने राम की प्रतीक्षा में पूरा जीवन बिता दिया। ऐसा लगा कि भक्तिमती शबर बाला की उपेछा कर ऋषियों ने जो अपराध उस समय किया था, उसी का परिमार्जन आज भगवती गंगा को साक्षी मानकर महाराज जी कर रहे हैं। भोजन के बाद महाराज की डोमराजा के घर में राम जानकी मंदिर के समक्ष सिर नवा का सन्त समाज के प्रतिनिधि के रूप में मानों यह कह दिया कि प्रभो ! पहले समाज के द्वारा उपेक्षित आपके अन्त्यज स्वरूप का सम्मान करने के उपरान्त आपके अर्चा विग्रह को प्रणाम कर रहा हूँ, क्योंकि आपने स्वयं कहा है-

अहम सर्वेषु भूतेषु भूतात्मावस्थितः सदा।
तमवज्ञाय माम् मर्त्य कुरुतेऽर्चा विडम्बनम्॥

अर्थात मैं ही सभी प्राणियों में आत्मा रूप में स्थित है उसकी उपेक्षा कर लोग मूर्तियों के रूप में मेरी अर्चना करते है, यह एक विडम्बना है। भोजनोंपरान्त दक्षिणा का प्रसंग आने पर सरल चित महाराज जी की व्यवहारिक एवं राजनीतिक सूझ-बूझ कर भी पता चलता है। महाराज जी ने कहा कि कोई दक्षिणा नहीं लेगा, क्योंकि भावपूरित हृदय से समर्पित दक्षिणा को भी राजनीतिक विरोधियों एवं मीडिया के द्वारा दुष्प्रचारित किया जा सकता है/ पूज्य महाराज जी का कारूणिक हद्दृय इस बात से व्यथित रहता था कि जिस वर्ग ने सबसे अधिक समाज की सेवा भी उसको समाज से सदैव उपेछा, तिरस्कार और अपमान मिला। दूसरी ओर धर्माचार्य और भारत के प्रतिष्ठित पीठ का - महन्त होने के कारण धर्म का यह विकृत रूप कहीं हिन्दू एकता को ही खण्डित न कर दे। इन विचारों ने पूज्य महन्त जी को यह निर्णय करने पर विवश कर दिया कि यदि हम रामराज्य की स्थापना का सपना देखते है तो उसमें निषादराज केवट और शबरी की अनदेखी नहीं की जा सकती है।

श्री राम जन्म भूमि पर बनने वाले मन्दिर का शिलान्यास हिन्दू समाज के किसी अछूत से कराने के प्रस्ताव में न राजनीति थी, न यश प्राप्त करने की लालसा। इसमें केवल संत का एक निर्मल संकल्प था और सिद्धपीठ के महन्त का अपने विखण्डित हो रहे समाज को संगठित करने का प्रयास। इस प्रयास का परिणाम यह हुआ कि श्रीराम जन्मभूमि पर प्रस्तावित विशाल मन्दिर की पहली ईट हमारे समाज के तथाकथित एक दलित और अस्पृश्य व्यक्ति के द्वारा रखी गई। जिस समय बिहार में जातिवाद का नग्नतांडव हो रहा था, राजनीति मानों विशेषकों की बन्धन बन गई थी। राजनीति में अधोगामी सारी मर्यादाएं भंग कर दी थीं। उस समय बिहार की राजधानी (पटना) में ही स्थित महावीर मन्दिर' में 'सूर्यवंशी लाल' उर्फ फलाहारी बाबा जो जाति से 'हरिजन' थे, को महन्त जी महाराज ने पुजारी नियुक्त का दिया इस समारोह में स्वामी चिन्मयानन्द जी महाराज भी महन्त जी के साथ थे। गोरखपुर लौटकर पत्रकारों के प्रश्नों का उत्तर देते हुए महाराज जी ने बिल्कुल स्पष्ट रूप से अपने विचारों को रखा और कहा कि हिन्दू समाज में अस्पृश्य जाति में जन्म लेने वाले साधु, सन्तों, महापुरुषों की एक लम्बी श्रृंखला

रही है। पुजारी होने के लिए सच्चरित्र गुणवान, ज्ञानी और भक्त होना आवश्यक है, न कि जाति विशेष का होना । दूसरी बात जो महराज जी ने कही उसका आशय अत्यन्त गहरा और विचारणीय है कि हमारी संस्कृति, 'हमारे धर्म में, युगानुरूप प्रवाह होना चाहिए, यदि उसमें ठहराव आ जाए तो वह दूषित होने लगती है, जड़ हो जाती है और यह जड़ता ही मृत्यु है। मूल सुरक्षित रखते हुए जैसे वृक्ष काल धर्म का निर्वाह करते हैं नवीन किसलय, पुष्प और फलों को धारण करने के लिए पुराने पत्तो और डालियों को त्याग देते हैं, उसी प्रकार समाज को धारण करने के लिए समय समय पर धर्म में घुसी हुई कुरूतियों, आडम्बरों और समाज के लिए अनावश्यक एवं अनुपयुक्त हो चुकी मान्यताओं को त्यागना होता है तथा कुछ नवीन विचारों, नियमों एवं समाजोपयोगी कर्तव्यों को स्थापित करना होता है। महन्त अवेधनाथ महाराज के हृदय का संकल्प, उनके हृदय की पीड़ा और उसी समाज के होने का क्षोभ, जिसमें अपने ही भाईयों के प्रति भेदभाव होता हो, उनके इस वक्तव्य से प्रगट होता है, जो उन्होंने 7 सितम्बर 1990 को *जब* "आज' समाचार पत्र को दिया था और कहा था - " हिन्दू समाज की एकता के लिए यदि अपने ही बधु- बान्धवों हरिजनों के सामने झुकना भी पड़े तो हमें हिचक नहीं।" 26 अप्रैल 1992 को गोरखपुर महानगर के मानसरोवर स्थित रामलीला मैदान में बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर की मूर्ती का अनावरण करते हुए उन लोगों को भी ललकारा, जो केवल जाति की राजनीति करते है और जातीय विद्वेष की ऐसी आग लगा रहे हैं, जो हमारे राष्ट्र को भी भस्मीभूत कर देगी? पूज्य महंत जी ने कहा " बाबा साहब किसी दल, सम्प्रदाय या जाति के नहीं, वे राष्ट्र की थाती है। वे सच्चे अर्थों में राष्ट्र पुरुष है।" महाराज जी ने बाबा साहब के नाम पर राजनीति करने वाले उन लोगों को भी आडे हाथों लिया, जो राष्ट्र से उपर अपनी महत्वाकांक्षाओं को रखते है। उन्होंने कहा कि बाबा साहब के समय में हुआ-छूत और भेदभाव की कुरीति इस प्रकार से व्याप्त थी कि समाज में "शूद्रों' का चलना दुरुह था, किन्तु उस समय अम्बेडकर जी ने उन सारे अपमानों और कष्टों को झेला, किन्तु तमाम प्रलोभनों के बाद भी इस्लाम या ईसाई पन्थ को स्वीकार नहीं किया अपितु हिन्दू समाज के ही महत्वपूर्ण पन्थ बौद्ध मत के अनुयायी बनें ।

सनातन संस्कृति के प्रबल पक्षधर होते हुए भी महाराज जी उसमें व्याप्त कुरीतियों पाखण्डों एवं आडम्बरों पर खुलकर प्रहार करते थे। सदियों पहले संत कबीर ने जिस प्रकार खरी-खरी बाते "लोगों को सुनाई, उसी प्रकार महंत अवैधनाथ जी लोगों से पूछते थे- गार्गी, लोपामुद्रा, अपाला, घोषा, मैत्रेयी, मदालसा आदि अनेक उदाहरण भरे हैं, जो वेदज्ञ एवं विदुषी रही है, फिर स्त्रियों के वेदपाठ पर प्रतिबंध कैसा? होटलों में कौन बनाता और कौन परोसता है, इन सब पर विचार न करने वाले लोग जब घरों में होते हैं तो उँच-नीच, छूत- अछूत की विकृत मानसिकता से ग्रस्त हो जाते हैं, यह कैसा धर्म है? पूज्य महाराज आजीवन रामाजिक, आस्थालिक, बौद्धिक समरसता की बात की और अन्त में हिन्दुत्व एवं श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति अभियान को बल एवं पूर्ण समर्थन दिया ।

शिक्षा और स्वास्थ्य के संचेतक- शिक्षा किसी भी राष्ट्र की आत्मा होती है, देश काल का सम्पूर्ण विकास शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है। महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज शिक्षा के प्रति बहुत जागरुक थे, उनका मानना था कि किसी भी देश का मूल शिक्षा होता है। शिक्षा का यह महत्व राष्ट्र के लिए कितना आवश्यक है और उपयोगी है, इस बात को भारतीय मनीषियों ने न केवल समझा अपितु उस दिशा में अपने स्तर से काली सर्व प्रयास की प्रारम्भ कर दिया था। महामना मदन मोहन मालवीय जी के द्वारा जहाँ काशी 'हिन्दू विश्वविद्यालय' की स्थापना 1916 में की गई, वही गोरखपुर कैसे शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़े इलाके में शिक्षा का जो बीज पूज्य महन्त दिगिवजयनाथ जी के द्वारा 1932 में महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद के रूप में आरोपित किया गया वह आज योग्य उत्तराधिकारियों की देखरेख देखभाल से एक विशाल वट वृक्ष का रूप धारण कर चुका है, जिसकी शाखा प्रशाखाएं जनपद ही नहीं, समस्त पूर्वाचल का भी अतिक्रमण कर रही अंग्रेजों द्वारा स्थापित शिक्षा पद्धति हमारी संस्कृति के प्रति कुठाराघात ही था। यदि हमारे विचारकों के द्वारा इस प्रकार के प्रभाव नहीं हुए होते तो आज हमारी संस्कृति का नाम लेने वाला भी नहीं बचता और लार्ड मैकाले का उद्देश्य भी यही था।

अपने युगदृष्ट्रा गुरु के द्वारा स्थापित इस परम्परा को महन्त अवैद्यनाथ महाराज ने अभूतपूर्ण विस्तार दिया तथा लगभग उतने ही शिक्षण, प्रशिक्षण, चिकित्सा, संस्कृत एवं सेवा संस्थानों की श्रृंखला खड़ी कर दी, जितने वर्षो का उनका 'गोरक्षपीठाधीश्वर के रूप में जीवन रहा। पूर्वी भारत के इस सिद्धपीठ ने अमीर गरीब उच नीच को भी शिक्षा सहित प्रत्येक क्षेत्रों में पूर्ण अवसर प्रदान किया।

पूज्य महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज ने शिक्षा पर सबका अधिकार माना तथा कभी भी अपने शिक्षण संस्थानों का व्यवसायीकरण नहीं होने दिया। गोरक्षपीठ द्वारा संचालित प्रताप आश्रम (छात्रावास) का लाभ सुदूर ग्रामीण क्षेत्र के बालकों के लिए वरदान के समान है। व्यवस्था एवं गुणवत्ता पर अभिभावकों एवं छात्रों के विश्वास का परिचायक होता है, प्रतिवर्ष आयोजित होने वाला संस्थापक-सप्ताह समारोह, इसमें महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद के सभी विद्यालय, महाविद्यालयों के छात्र एवं अध्यापक अपनी सांस्कृतिक छटा को बिखेरते हुए महाराणा प्रताप के इन्टर कालेज के प्रांगण में एकत्र होते है तथा वहाँ से नगर भ्रमण करते हुए नगरवासियों का आशीर्वाद और स्नेह प्राप्त करते हैं।

4 दिसम्बर से 10 दिसम्बर तक सप्ताह पर्यन्त चलने वाले इस शैक्षणिक उत्सव में विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिला आयोजित की जाती है तथा समापन के अवसर पर लगभग 650 पुरस्कार एवं छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जाती है। गोरखपुर ही नहीं वरन पूरे देश में इस प्रकार का अनुशासित, विराट एवं भव्य शैक्षणिक कार्यक्रम दूसरा नहीं होता यह सम्पूर्ण आयोजन महन्त अवेद्यनाथजी महाराज की परिकल्पना का परिणाम है।

स्वास्थ्य सेवाएँ. "शरीरमाध: खलु धर्म साधनम्" "हमारा शरीर ही हमारे समस्त पुरुषार्थो को प्राप्त करने का साधन होता है। इस बात को हमारे मनीषी भली-भाँति जानते थे कि इस विनाशी शरीर के द्वारा ही हम अविनाशी तत्व को प्राप्त कर सकते है। जब तक हमारा शरीर स्वस्थ नहीं होगा, तब तक हमारा मन भी स्वस्थ नहीं होगा और हमारा शरीर ही हमारे अन्न और मोक्ष का कारण है। अत: शरीर साध्य भले ही न हो, किन्तु साल कल्याण का प्रबल साधन है। अत: शरीर के स्वास्थ के लिए आयुर्वेद एवं योग के अनेकानेक आसन-प्राणायाम आदि उपायों का विधान किया गया। कुपोषण, अशिक्षा, और अज्ञानता के अन्धकार में डूबे हुए हमारे नागरिकों को समुचित शिक्षा के साथ उच्चकोटि की चिकित्सा की व्यवस्था भी की है। यह सभी महापुरुषों और विचारकों द्वारा स्वीकार किया गया, किन्तु इत क्षेत्र में विष्ठापूर्वक व्यक्तिगत प्रयास उतने' नही हो रहे थे, जितने होने चाहिए। पूज्य महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज श्री गोरखनाथ जनपद में पढ़ने वाले चिकित्सकीय दबाव को जान रहे थे। मेडिकल कालेज एवं सरकारी अस्पताल अधिकाधिक रोगियों के दवाब से दबे जा रहे थे। निष्काम कर्मयोगी महन्त अवैद्यनाथ जी ने इन्सेफेलाइटिस जैसी भयंकर बीमारी से जूझ रहे गोरखपुर के लिए एम्स की मांग जारी रखते हुए एक नये चिकित्सालय 'गुरु श्री गोरक्षनाथ चिकित्सालय" का निर्माण करवाया। काल की गति अनुकूल होते ही गोरखपुर की जनता की पीड़ा और अपने गुरु के संकल्प का समादर करते हुए सांसद, गोरखपुर गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त योगी आदित्यनाथ जी ने माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के हाथों से न केवल 'एम्स' का शिलान्यास करवाया अपितु फर्टिलाइटर कारखाने के पुनः प्रारंभ होने की आशा छोड़ चुके क्षेत्रवासियों को फर्टिलाइजर का भी शिलान्यास कराकर एक साथ से दो पुरस्कार प्रदान किये। साथ ही साथ अपनी प्राचीन एवं किसी प्रतिकूल प्रभाव से रहित पद्धति आयुर्वेद पर आधारित "महन्त दिग्विजयनाथ आयुर्वेदिक चिकित्सालय की स्थापना कर महन्त अवैद्यनाथ जी ने जहाँ अपने गुरु चरण में स्वास्थ्य सेवा के पुष्प समर्पित किये, वही बीमारी से जूझ रही क्षेत्रीय जनता के रूप में उन विश्वात्मा भी आराधना की, जो सभी जीवधारियों में आत्म रूप से विद्यमान है। जहाँ एक तरफ अंग्रेजी एवं आयुर्वेदिक चिकित्सा का प्रबन्ध हो रहा था वही दूसरी ओर प्राकृतिक चिकित्सा एवं जीवन शैली को सुधारने के लिए यौगिक क्रियाओं के माध्यम से जन-जन तक पहुंचाने का कार्य किया "गुरु श्री गोरखनाथ योग संस्थान' की स्थापना महन्त जी के द्वारा की गई। सभी संस्थाएं दिन दोगुनी रात चौगुनी उन्ही के आशीर्वाद से फली भूत हो रही है। महन्त अवैद्यनाथ महाराज जी कहने के गुणों की भाख्या शब्दों के माध्यम से करने पर उनको छोटा करने जैसा होगा। जो भी व्यक्ति कही से भी आया उनके सम्पर्क में उन्ही का होकर रह गया, वह स्वानुभुति के विषय थे। उन्को कलियुग का देवता माना जा सकता है।

भारतीय संस्कृति और संस्कृत के वाहक

भारतीय संस्कृति के ध्वजवाहक के रूप में महन्त अवैद्यनाथ महाराज ने गौ रक्षा जैसे भारतीय अस्मिता के प्रकरण पर सदैव गौ सेवा के महत्व को प्रतिपादित किया तथा केवल उपदेश ही नहीं अधिक गोरखनाथ मन्दिर में सदैव गोशाला में गौ माता की सेवा पर विशेष ध्यान दिया। जैसे किसी वृक्ष का सुन्दरतम भाग उसका फूल होता है, वैसे ही किसी देश का सबसे सुन्दर भाग वहाँ की संस्कृति होती हैं। भारत की सुन्दर संस्कृति को यदि जानना है, सीखना है और स्थापित

करना है तो हमें संस्कृत को सुरक्षित रखना होगा। अन्य भाषाओं को जानना और सीखना बुरा नहीं है, किन्तु अपनी गौरवमयी संस्कृत का मान न होना दुर्भाग्यपूर्ण है।'

आज तक न जानें कितने महापुरुषों के जीवन का पाठन इसी भाषा की सूक्तियों, बोध वाक्यों और दार्शनिक विचारों के द्वारा हुआ है। स्वयं पूज्य महन्त अवैद्यनाथ भारतीय दर्शन के अध्येता और नाथपंथ के महान रत्न रहे हैं। "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ""तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा" " माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या: ", "वसुधैव कुटुम्बकम्" "सर्व भवन्तु सुखिन:" उपरोक्त कथनों को महाराज जी ने अपने जीवन में पूरा उतारा।

सन् 1985 में नयी शिक्षा प्रणाली नीति लागू होने पर 'त्रिभाषा' के अन्तर्गत समाहित संस्कृत को बाहर किया तो भारतीय संस्कृति के इस अमर सपूत ने दो टूक शब्दो में कहा - "संस्कृत को नई शिक्षा नीति से हटाकर राजनीतिज्ञों ने आत्मघाती कृत्य किया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी भारतीय राजनेता गुलाम मानसिकता के शिकार है। भारतीय संस्कृति और धर्म भारत का प्राण है। हमारी संपूर्ण सांस्कृतिक एक धार्मिक विरासत् संस्कृत भाषा के ग्रन्थों में ही संरक्षित है। संस्कृत से अनजान भावी पीढ़ी अपनी सांस्कृतिक विरासत से अनभिज्ञ होगी।" 3 मार्च 1987 को सनातन धर्म संस्कृत महाविद्यालय लखीमपुर खीरी में 'विश्व संस्कृत प्रतिष्ठानम्' द्वारा आयोजिक त्रिदिवसीय सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए महन्त जी ने कहा, "इतिहास साक्षी है कि-कभी इस देश में पनिहारिन भी संस्कृत वार्तालाप करती थी। दु:ख है कि आज उसी देववाणी संस्कृत को 'त्रिभाषा' से निकाल दिया गया। संस्कृति और संस्कृत की रक्षा के लिए सम्पूर्ण भेदभाव छोड़कर हिन्दू समाज एक जुट हो तथा संस्कृत कर्मकाण्डों भर पण्डितों की भाषा न रहकर जनभाषा बने, इसका प्रयास होना चाहिए।

<u>हिन्दूत्व और राष्ट्रीयता के साधक-</u>

सम्पूर्ण विश्व में नागपंथ का प्रधान केन्द्र गोरखपुर है, किन्तु सदैव सम्प्रदाय की संकीर्णताओं से उठकर सदैव इस पीठ ने हिन्दुत्व और राष्ट्रीयता को महत्व दिया तथा सम्पूर्ण धार्मिक, सामाजिक सरोकार इसी वैचारिक अधिष्ठान के परिपेक्ष्य में सम्बद्ध रहते है। गुरू श्री गोरखनाथ मंदिर का विकसित भव्य स्वरूप हिन्दुत्व के वैचारिक अधिष्ठान का साक्षात् स्वरूप है। मन्दिर प्रांगण में गुरु श्री गोरखनाथ जी के साथ-साथ हिन्दू धर्म के सभी प्रमुख देवी देवताओं के मन्दिर, उनकी मूर्तिया प्रतिष्ठित है, जिनकी प्रतिदिन पूजा-अर्चना होती है। मन्दिर की यह भव्यता ब्रह्मलीन महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के विराट व्यक्तित्व की वैचारिकता का मूर्त रूप है। इस सम्बन्ध में जब महाराज जी से पूछा गया कि नाथपंथ निर्गुण साधना में विश्वास रखता है, जबकि गोरखनाथ मन्दिर में विभिन्न देवी-देवताओं अवतारों की मूर्तियों की स्थापना की कल्पना कैसे और कब की गयी, के उत्तर में महन्त जी ने कहा कि "नाथपंथ की स्थापना का मूल उद्देश्य ही सामाजिक संकीर्णता का विरोध करना एवं समनवयवादी समतामूलक समाज की स्थापना करना था। सगुण-निर्माण की संकीर्ण सोच में नाथपंथ का दर्शन विश्वास ही नहीं करता। नाथपंथ के आदि गुरु शिव है, जो शक्ति के बिना अधूरे हैं। शक्ति का ही रूप देवी दुर्गा है। ब्रह्म का स्वरूप तो साकार या निराकार हो सकता है, परन्तु गुरु जिसकी महिमा एवं महता का महायोगी गुरु श्री गोरखनाथ जी ने गुणगान किया है, जो जीव के शिव या ब्रह्म से मिलन का माध्यम होता है, वह तो साकार और सगुण ही होता है। हमने इसी दर्शन को आत्मसात किया। भारतीय धर्म एवं संस्कृति के पन्थों का अभ्युदय संघर्ष का नहीं, समनवय और निरन्तर शुद्धीकरण एवं विकास का सूचक है। भारतीय संस्कृति की विशेषता ही 'अनेकता में एकता की है। हिन्दूत्व के उसी स्वरूप को स्वीकार कर मैंने श्री गोरखनाथ मन्दिर में हिन्दुत्व" का समग्र दर्शन प्रस्तुत करने का प्रयास किया। अपने गुरुदेव की स्मृति में मैने 'महन्त दिग्विजयनाथ स्मृति भवन के सभागार में भारत माता की मूर्ति के साथ-साथ भारत के सम्पूर्ण पन्थों विचारधाराओं के प्रतिनिधि देवी देवताओं एवं महापुरुषों की प्रतिष्ठा कराई। महाराज जी सदैव हिन्दुत्व को ही एक राष्ट्रीयता का पर्याय मानते रहे। उनका मानना था कि राष्ट्र का निर्माण उस राष्ट्र का बहुसंख्यक समाज होता है। राष्ट्रीयता भी उसी बहुसंख्यक समाज के अनुसार तय होती है। जब हिन्दू राष्ट्रवाद के सिद्धान्त पर भारत बँट गया, तभी भारत हिन्दू राष्ट्र हो गया। 23 सितम्बर 1989 की बात है। महाराज जी ने हिन्दू समाज को सजग रहने की अपील करते हुए कहा था कि ईसाई मिशनरियाँ हिन्दुस्तान में ही हिन्दू समाज के धर्मान्तिरण के बहाने राष्ट्रान्तरण कर अल्पसंख्यक बनाकर भारत को पुन: गुलाम बनाने

का षड्यन्त्र कर रही है। 6 मार्च 1990 को वृन्दावन सोहम् आश्रम में आयोजित अखिल भारतीय सन्त सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए महन्त जी ने कहा था कि हिन्दू साम्प्रदायिक नहीं है। हिन्दुओं में बहुत से घर ऐसे मिलेंगे, जहाँ एक बेटा सिख, एक बेटा सनातनी, तो एक बेटा आर्यसमाजी है। संसार में प्रताडित तथा अपमानित यहूदी समाज को हिन्दू -भारत ने ही शरण दी। ऐसा इसलिए हुआ कि हिन्दू दूसरों की पांथिक भावनाओं, पूजा पद्धतियों से द्वेष नहीं रखता है बल्कि उसका भी सम्मान करता है। महाराज जी का मानना था कि सनातनी, आर्य समाजी, सिख, बौद्ध जैन आदि विविध पंथ अथवा सम्प्रदाय हिन्दू धर्म की व्यापक परिधि में आते है। हिन्दू समाज ने कभी भी किसी अन्य पंथ की उपासना भूमि अथवा प्रतीक का ध्वंस अथवा उसे अपवित्र नहीं किया।

हिन्दू न कभी साम्प्रदायिक था और न ही कभी होगा, क्योंकि हिन्दू धर्म और संस्कृति के वैचारिक अधिष्ठान में साम्प्रदायिकता का कही कोई स्थान नहीं है। भारत में सामायिकता की समस्या राजनैतिक कारणों से उत्पन्न हुई। सच तो यह है कि भारत के राजनीतिज्ञ इस तथ्य से परिचित है कि हिन्दू जहाँ भी अल्पमत हुआ, वह हिन्दुस्तान से अलग हुआ, फिर भी राजनीतिक इस सच को मानने के लिए तैयार नहीं है। यह भी सच है कि भारत में लोकतंत्र तभी तक फल-फूल रहा है, जबतक हिन्दू बहुमत में है।

श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति आन्दोलन के महानायक- श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों के कारण भगवान श्रीराम भारतीय समाज में प्राचीन काल से आस्था और श्रद्धा के केन्द्र है। भगवान राम विष्णु के अवतार है। आदर्श राजा हैं, पुरुषोत्तम हैं, जिन्होंने सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में यथा स्वजनों, आत्मीयजनों, परिजनों, प्रजाजनों तथा अन्य सामाजिक सम्बन्धों में आदर्श मानदण्ड स्थापित किये। भगवान राम भारत की आत्मा है। भारतीय जनमानस को अनुप्राणित करने वाले आदर्शोन्मुख मनस्वी महापुरुषों में मर्यादा पुरुषोत्तर श्रेष्ठ हैं। इनकी पावन भूमि अयोध्या विश्व हिन्दू जनमानस में श्रद्धा का केंन्द्र है। कालान्तर में यह स्थान मुसलमानों के हाथ में जा चुका था। आक्रान्ता द्वारा इस पवित्र मन्दिर को नष्ट कर बाबरी मस्जिद के रूप में परिवर्तित कर दिया गया। श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति हेतु अनेक संघर्ष हुए, परन्तु श्रीरामजन्मभूमि मुक्त न हो सकी। बात 1949 की है। अक्टूबर के महीने में वेदान्ती राम परार्थ दास जी की अध्यक्षता में मानस-यज्ञ प्रारम्भ हुआ। पाठ समाप्ति के दिन आयोजित सभा में अखिल भारतीय संघ के संस्थापक स्वामी करपात्री जी, उत्तर-प्रदेश हिन्दू महासभा के अध्यक्ष श्री गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज ने सक्रिय भाग लिया। इस सभा में श्री राम जन्मभूमि के उद्धार के लिए इस प्रकार के 1908 नवाह्न -पाठ के आयोजन का संकल्प किया गया। पाठ प्रारम्भ करने से पहले परमहंस श्री रामचन्द्र दास जी सहित अनेक सन्त-महात्माओं ने स्वयं अपने हाथों से सुचारू रूप से स्थान की सफाई की और विधिवत पाठ प्रारम्भ करवाया। अनेक रामभक्तों नवाह्न पाठ किया गया। 22 एवं 23 दिसम्बर 1949 के बीच की रात को भगवान श्रीराम का प्राकट्य हुआ। 18 जून, 1984 को लक्ष्मण किला अयोध्या में संत महात्मायों एवं विश्व हिन्दू परिषद की बैठक में श्री गोरक्षपीठाधीश्वर महंत अवेद्यनाथ जी महाराज के संयोजकत्व में श्रीराम जन्मभूमि को मुक्त करानें के लिए एक समिति गठित करने का निर्णय किया गया। 29 जुलाई सन् 1984 को वाल्मीकि भवन अयोध्या में हुई बैठक में श्रीराम जन्म भूमि यज्ञ समिति का विधिवत् गठन किया गया। महन्त श्री अवैद्यनाथ जी महाराज इस समिति के सर्वमान्य अध्यक्ष चुने गये। तब से आजीवन श्रीराम जन्मभूमि यज्ञ समिति के अध्यक्ष है। श्री राम जन्म भूमि मुक्ति और उस स्थन पर भव्य मंदिर निर्माण के लिए महंत अवैद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में योजनापूर्वक जनान्दोलन की रूपरेखा बनी और सन् 1984 से प्रारम्भ किये गये आन्दोलन का परिणाम यह हुआ कि उस स्थान पर स्थित विदेशी आक्रान्ता द्वारा निर्मित ढाँचा धवस्त कर दिया गया। लगभग पाँच शताब्दियों से चल रहे संघर्ष को अन्ततः पूज्य महाराज जी के नेतृत्व में एक बड़ी सफलता मिली। महन्त जी ने सन् 1984 के बाद से श्रीरामजन्मभूमि यज्ञ समिति द्वारा चलाये गये जन-संघर्ष का सफलतम् नेतृत्व किया।

31 अक्टूबर तथा 1 नवम्बर 1985 को सम्पन्न धर्म संसद के द्वितीय अधिवेशन (उडूपी) में 175 सम्प्रदायों के लगभग 850 धर्माचार्य सम्मिलित हुए। इसमें निर्णय लिया गया कि 8 मार्च 1986 तक श्रीराम जन्मभूमि का ताला नहीं खोला गया, तो सम्पूर्ण देश के हजारों धर्माचार्य 9 मार्च 1986 से प्रारम्भ होने वाले सत्याग्रह में अपने लाखों शिष्यों के साथ भाग लेगें। सम्मेलन में इस सत्याग्रह के संचालन के लिए महन्त अवेद्यनाथ महाराज को अखिल भारतीय संयोजक नियुक्त किया गया। विश्व हिन्दू परिषद के प्रयत्न और फैजाबाद जनपद के हिन्दू युवक वकील के कोर्ट में आवेदन ने 1 फरवरी 1986 को न्यायालय के

आदेश से श्रीराम जन्मभूमि का ताला खुलवा दिया गया। 18 मार्च, 1987 को श्री अवैद्यनाथ जी महाराज ने वाराणासी में आयोजित सभा में कहा "भगवान श्री राम की स्थली अयोध्या, भगवान शिव का प्राकट्य स्थल ज्ञानवापी एवं श्रीकृष्ण जन्म-स्थान मथुरा हिन्दुओं को वापस किये बिना राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता का आधार स्थापित नहीं किया जा सकता।" ५ अप्रैल १९८६ को पवित्र सरयू के तट पर विशाल जन समूह ने खड़े होकर प्रतिज्ञा की कि हम श्री रामलला की मूर्ती हटने नहीं देंगें और इसके लिए बलिदान देकर इस स्थान पर भव्य मंदिर का निर्माण करायेंगे। 26 जुलाई 1988 को श्रीराम जन्मभूमि यज्ञ समिति के अध्यक्ष श्री अवेद्यनाथ जी महाराज ने कहा कि श्रीराम जन्म भूमि मुक्ति के लिए राजनीतिक परिवर्तन आवश्यक है। इसके लिए जनमानस को तैयार करना होगा।

श्री रामजन्म भूमि के स्थान के विषय में - महाराज जी ने कहा था कि अनेक प्रमाणों, शिलालेखो, कसौटी के खम्भों, बाबरनामा, सीता-रसोई एवं श्रीराम चबूतरा से भलिभांति स्पष्ट है कि यह स्थान हिन्दूओं की श्री राम जन्म भूमि है। सन्तो धर्माचार्यो को संगठित कर महन्त जी जन-जन में श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति की आवाज बन गये। आपकी एक आवाज पर समस्त हिन्दू-समाज खड़ा हो गया था।

धर्म संसद का तीसरा अधिवेशन एवं सन्त महासम्मेलन प्रयाग में सम्पन्न हुआ, जिसमें 9 नवम्बर 1989 को श्रीराम जन्म भूमि पर मन्दिर निर्माण हेतु भारत के प्रत्येक ग्राम से ग्रामीणों द्वारा पूजित एक श्रीराम शिला (ईट) और प्रत्येक हिन्दू से सवा रूपये संग्रह के सम्बन्ध में प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया। इस अवसर पर महन्त अवैद्यनाथ ने कहा कि मदिरों को तोड़कर मस्जिद बनाते समय, उनमें मन्दिरों के चिन्ह जानबूझ कर छोडे गये ताकि सदियों तक हिन्दुओ की पीढ़ी दर पीढ़ी अपने को निरन्तर तिरस्कृत, हतोत्साहित और अपमानित अनुभव करती रहे।

1 फरवरी 1989 को प्रयाग में महाकुम्भ के अवसर पर पूज्य देवराहाबाबा के उद्‌गारों ने उपस्थित जनसमुदाय में उठती राम भक्ति को लहर को और प्रवाहमान बना दिया। उन्होंने कहा कि श्रीरामजन्मभूमि हिन्दूओं की है और वहाँ मन्दिर अवश्य बनेगा। देश में श्री राम जन्मभूमि मुक्ति एवं श्री राम के भव्य मंदिर के लिये महन्त अवेधनाथ जी महाराज का जन जागरण चलता रहा।

22 सितम्बर, 1989 को नई दिल्ली के बोट कल्ब पर विराट हिन्दू सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसकी अध्यक्षता महन्त अवैद्यनाथ महाराज जी ने की। इस विराट हिन्दू सम्मेलन में तीन प्रस्ताव पारित किये गये-

1- श्रीराम जन्म भूमि हिन्दुओं की थी और रहेगी।

2- श्रीराम जन्म भूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण हेतु 9 नवम्बर 1989 को समारोह पूर्वक शिलान्यास सम्पन्न होगा।

3-लोकसभा चुनाव में श्रीराम जन्म भूमि पर मन्दिर निर्माण के समर्थक,चरित्रवान और योग्य प्रत्याशी को ही हिन्दू जनता मतदान करेगी। इस सम्मेलन में सन्त महापुरुषों ने स्पष्ट घोषणा की कि श्रीराम द्रोही को हम सतारूढ नहीं होने देंगे। बोट क्लब की रैली से पूर्व की २० सितम्बर को भारत सरकार में तत्कालीन गृहमन्त्री बूटा सिंह ने महाराज जी से बातचीत करने का आग्रह किया, किन्तु महन्त जी ने रैली के बाद ही वार्ता का निमन्त्रण स्वीकार करने का प्रस्ताव किया। निर्धारित तिथि 25 सितम्बर को प्रात: 9 वाले गृहमंत्री के साथ महन्त जी की घंटे भर वार्ता हुई। गृहमंत्री चाहते थे कि 9 नवम्बर 1989 को सम्पन्न होने वाला श्रीराम जन्मभूमि पर भव्य मंदिर के निर्माण का शिलान्यास कार्यक्रम स्थगित कर दिया जाए। महन्त जी ने दृढतापूर्वक अपना पक्ष रखते हुए कहा कि यह फैसला करोड़ो हिन्दू समाज का है। महन्त जी के अपने निर्णय पर अडिग रहने के कारण पुनः लखनऊ में तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी के साथ गृहमंत्री बूटा सिंह और महन्त जी की वार्ता तय हुई। मुख्यमंत्री आवास पर हुई इस बैठक में महन्त जी के साथ 'महन्त नृत्यगोपालदास, श्री दाऊदयाल खन्ना एवं विहिप के अन्तराष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अशोक सिंहल भी शामिल हुए। इस बैठक में भी श्री महन्त जी ने स्पष्ट कर दिया कि यह मामला न्यायालय क्षेत्र के बाहर का है, यह राष्ट्रीय सम्मान एवं हिन्दू समाज की आस्था है।

देश भर में शिलान्यास समारोह हेतु श्रीराम शिला पूजन अभियान प्रारंभ हो गया। महन्त जी की अगुवाई में देश भर में गाँव-गाँव से श्रीराम शिला पूजन कर अयोध्या के लिए चल पड़ी। 29 सितम्बर को उत्तर-प्रदेश में कुशीनगर के खण्ड्डा में श्रीराम शिला पूजन के समारोह के अवसर पर आयोजित विशाल

हिन्दू सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए महन्त जी ने कहा कि आज राष्ट्र की एकता-अखण्डता एवं प्रभुसत्ता खतरे में है। इसलिए गुफाओं को साधन एवं मठ मन्दिरों की आराधना से बाहर निकलकर धर्माचार्य देश को दिशा देने के लिए प्रस्थान कर चुके है। हिन्दू समाज को जगाना होगा। श्रीराम जन्मभूमि पर विदेशी आक्रान्ता द्वारा स्थापित परतन्त्रता के प्रतीक एवं हमारी राष्ट्रीय सम्प्रभुता को चुनौती देने वाले ढ़ाचे के स्थान पर भव्य मन्दिर के निर्माण के शिलान्यास समारोह को सम्पन्न कराने एवं इसका विरोध करने वाली सरकार तथा राजनीतिक दलों को सबक सिखाने हेतु राष्ट्र भक्त जनता भी घरों से निकली।

महन्त जी ने श्रीराम शिला पूजन अभियान में देश भर की अनेक जन सभा को सम्बोधित किया तथा उत्तर- प्रदेश में जन जागरण की अलख जगाने की बागडोर स्वयं अपने हाथ में ले ली। महन्त जी का मानना था कि हिन्दुस्तान की एकता का पहला सूत्र हिन्दू समाज की एकता है। देश का हिन्दू यदि संगठित रहा तो सम्प्रदायिक एवं विघटनकारी तत्व राष्ट्रीय एकता और अखण्डता को खतरा नही पैदा कर सकेंगे। हमारी निष्ठा एवं आस्था भारत की एकता एवं संस्कृति में निहित है।

1989 में लोकसभा चुनाव घोषित होने तथा देश भर के धर्माचार्यो के आग्रह पर महन्त जी ने गोरखपुर सदर लोकसभा से चुनाव लड़ने की घोषणा कर दी। 19 नवम्बर को शंखनाद के साथ वैदिक रीति से मन्त्रोच्चार एवं श्री राम भक्तो के गगनभेदी जयघोष के बीच प्रस्तावित श्री रामजन्मभूमि मंदिर का शिलान्यास समारोह प्रारम्भ हो गया। शुभ घड़ी के अनुसार 10 नवम्बर को एक बजकर 35 मिनट पर वर्तमान गर्भगृह से 112 फीट दूर पूर्व निर्धारित स्थान पर हवन और भूमि पूजन के पश्चात गोरक्षपीठाधीश्वर ने सांकेतिक रूप से नींव खोदने के पश्चात् शिलान्यास हेतु पहली शिला हिन्दू समाज में तथाकथित अछूत दक्षिणी विहार के श्री कामेश्वर प्रसाद (हरिजन) से रखवाकर एक और नये भविष्य की शुरुआत कर दी। इस अवसर पर महाराज जी ने कहा कि यह श्रीराम मन्दिर का नहीं वरन् हिन्दू राष्ट्र के सिंह द्वार का शिलान्यास हुआ है, हिन्दू समाज की एकता का शिलान्यास हुआ है, सामाजिक समरसता की प्रतिष्ठा का शिलान्यास हुआ है।

"अयोध्या से वापस आने पर १० नवम्बर को रात्रि नौ बजे महाराणा प्रताप इन्टर कालेज, गोरखपुर के मैदान में आयोजित अपनी विशाल चुनावी सभा में कहा- "मैं राजनीति से अलग हट चुका था, किन्तु आज हिन्दू समाज के साथ अन्याय हो रहा है, राजनीतिज्ञ हिन्दू समाज को अपमानित कर रहे हैं, धर्म निरपेक्षता का ढोंग करने वाली सरकारों के एक समान कानून बनानें के मुद्दे पर हाथ-पाँव फूल रहे हैं। हमारी राष्ट्रीयता के प्रतीक पुरुषोत्तमश्रीराम, श्रीकृष्ण, एवं भगवान शिव के जन्म स्थानों पर विदेशी आक्रान्ताओं के ध्वंसावशेष हमें मुँह चिढ़ा रहे हैं, हमें अपमानित कर रहे हैं। उनका भी हम जीर्णोद्वार नहीं कर सकते। हिन्दू हिन्दुस्तान में ही सम्मान से नहीं जी सकता और वोट बैंक की राजनीति' तथा चुनावी हार-जीत के गणित में सच बोलने का साहस राजनीतिज्ञ नहीं कर पा रहे तो चुनावी समर में उतरना हमारी मजबूरी है। हिन्दू समाज अपमान का घूँट अब और नहीं पी सकता।

श्रीराम जन्मभूमि आन्दोलन को आगे बढ़ाते हुए महंत जी के नेतृत्व में 26 जनवरी 1990 को प्रयाग में सन्त सम्मेलन तय किया गया। २२ दिसम्बर, 1989 को महन्त जी ने कहा कि सरकार सन्त सम्मेलन से पूर्व श्रीराम जन्मभूमि स्थान हमें सौपे। सरकार की ओर से कोई पहल न होने पर 26 जनवरी को प्रयाग में महन्त जी की अध्यक्षता में आयोजित सन्त सम्मेलन में 14 फरवरी से श्रीराम जन्म भूमि पर मन्दिर निर्माण कार्य प्रारंभ करने का संकल्प लिया गया।

९ फरवरी को दिल्ली में श्री राम जन्म भूमि मुक्ति यज्ञ समिति एवं विश्व हिन्दू परिषद की ग्यारह सदस्यीय उच्चाधिकार प्राप्त समिति की बैठक में महन्त अवैद्यनाथ जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। तत्कालीन प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह द्वारा चार माह के अंदर श्रीरामजन्मभूमि विवाद का स्थायी समाधान कर दिये जाने के आश्वासन पर महन्त जी ने इसे स्वीकार कर सरकार को चार महीने का समय दे दिया। किन्तु भारत सरकार ने चार माह में श्री राम जन्म भूमि मंदिर निर्माण हेतु समाधान निकालने की दिशा में कोई पहल नहीं की। 9 जून को महन्त अवैद्यनाथ जी के नेतृत्व में सन्त- महात्माओं का एक प्रतिनिधिमण्डल प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह से मिला। डेढ़ घंटे वार्ता चली। वार्ता के बाद महन्त जी ने कहा कि प्रधानमंत्री की अपील पर हमने चार माह का समय सरकार को इसलिए दिया था कि लोग हमे दुराग्रही न समझे, पर इन चार माह में कुछ भी नहीं हुआ। अब दो बातों पर कोई समझौता नही हो सकता। पहली बात यह कि 23-24 जून को हरिद्वार के सन्त - सम्मेलन मे जो तिथि तय होगी, वह किसी भी दशा में नहीं टलेगी। दूसरी कि यह कि श्रीराम मन्दिर वहीं बनेगा, जहाँ श्री राम

लला की पूजा होती है। सरकार के उपेक्षात्मक रवैये से दुखी महन्त जी ने यहीं घोषणा कर दी कि अब अयोध्या में जिन पाँच लाख गांवो से श्रीराम शिलाएं आयी है उन्ही गावों से अब पाँच लाख श्रीराम भक्त अयोध्या आयेगें।

महंत अवैद्यनाथ जी के नेतृत्व में श्रीराम जन्मभूमि आंदोलन तेज होता गया। उत्तर-प्रदेश सरकार द्वारा हिन्दू समाज को चिढ़ाने और अपमानित करने वाले निन्तर दिये जाने वाले बयानों ने आग में घी का काम किया। 26 जुलाई को महन्त जी लखनऊ पहुँचे एवं उत्तर प्रदेश सरकार को चेतावनी देते हुए बोले कि श्रीराम जन्मभूमि मन्दिर विरोधी सरकार ज्यादा दिन तक नहीं चल सकती। हिन्दुओ के धैर्य की सीमा समाप्त हो रही है। 30 अक्टूबर को हर हाल में मन्दिर निर्माण का कार्य शुरू होगा। युवकों का बलिदानी जत्था अयोध्या जायेगा । कारसेवा में सरकारी तंत्र बाधा डाली तो अहिंसक गिरफ्तारी दी जायेगी और शासन यदि गोली चलाता है तो हम हर तरह से कुर्बानी देने को तैयार है।

श्रीराम जन्मभूमि मुक्ति यज्ञ समिति ने व्यापक जन-जागरण अभियान आरम्भ कर दिया। समिति के अध्यक्ष महन्त जी ने कहा कि सम्पूर्ण देश में दीपावली दीप राम ज्योति से जलाये । अयोध्या में अरणी मंथन से प्रज्वलित दीप से भगवान की आरती कर श्रीराम ज्योति विजय दशमी के दिन दस बज कर सैतालीस मिनट से दस बजकर एकावन मिनट के शुभ मुहूर्त में श्रीराम भक्त हर मुहल्ले, हर गाँव के मन्दिर से श्रीराम संकीर्तन करते हुए गाँव के जलाशयों तक विजययात्रा निकाले। स्वतंत्रता दिवस को रात्रि नौ बजे शंख, घण्टा- घडियाल की ध्वनि के साथ युवक इसे चेतावनी दिवस के रूप में मनायें।

श्री मुलायम सिंह के नेतृत्व में उत्तर-प्रदेश सरकार तथा श्री विश्वनाथ प्रतात सिंह के नेतृत्व में केन्द्र सरकार हिन्दू समाज में पनप रहे आक्रोश को भांप न सकी। उत्तर प्रदेश सरकार जहाँ हिन्दू समाज के प्रति हमलावर होती गयी, वही केन्द्र सरकार ने हिन्दू समाज को अगड़ों पिछडों में बांटने के उद्देश्य से 'मण्डल - आयोग' का ब्रह्मास्त्र चला दिया। श्री मुलायम सिंह यादव ने गोरखपुर में 20 सितम्बर को साम्प्रदायिकता विरोधी रैली करने की घोषणा की। उन्होंने कहा कि गोरखपुर में महंत जी रहते है, अत: गोरखपुर में ही यह रैली कर अपनी शक्ति दिखा दूँगा ।

महन्त जी ने कहा कि उत्तर प्रदेश सरकार साम्प्रदायिकता विरोधी सम्मेलनों के नाम पर बहुसंख्यक हिन्दू समाज के विरुद्ध विषवमन कर रही है। वोटों के लिए सरकार स्वयं सम्प्रदायिकता को बढ़ावा दे रही है। उत्तर प्रदेश सरकार के इस कृत्य से सामाजिक सद्भाव टूट रहा है और सम्प्रदयिक टकराव की भयावह स्थिति पैदा होने जा रही है। महन्त जी ने कहा कि श्री मुलायम सिंह अपनी सरकारी रैली कर ले, फिर गोरखपुर में ही नहीं, देश-प्रदेश भर में जहाँ -जहाँ उनकी सरकार हिन्दू विरोधी रैली करेगी, हम उसका जबाब रैली से देगें। महराज जी के नेतृत्व में देश भर में जनान्दोलन तेज होता गया। प्रदेश सरकार को समय-समय पर-महन्त जी चेताते रहे। उत्तर-प्रदेश सरकार ने जब पंचकोशी परिक्रमा पर रोक लगा दी तो महन्त जी ने सरकार को चेताया कि श्रीराम जन्म भूमि मन्दिर निर्माण तथा पंचकोसी परिक्रमा सरकार की अनुमति की मोहताज नही ।

मुख्यमंत्री श्री मुलायम सिंह यादव द्वारा २० सितम्बर को गोरखपुर में की गयी रैली के जबाब में महंत श्री अवैद्यनाथ जी द्वारा पाँच अक्टूबर को श्रीराम भक्तों की विशाल रैली का आयोजन किया गया। महाराणा प्रताप इंटर कालेज के मैदान में श्री राम भक्तों की ऐतिहासिक रैली हुई। इस रैली में महन्त जी ने श्रीराम जन्म भूमि पर भून्म भन्दिर के निर्माण का संकल्प कराते हुए कहा कि प्रदेश सरकार स्वयं जगह-जगह साम्प्रदायिक दंगे करा रही है। हिन्दू समाज एक होकर राष्ट्रीय स्वाभिमान की रक्षा एवं श्रीरामजन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण हेतु आगे बढ़े। मुस्लिम तुष्टीकरण की पराकाष्ठा ही है कि श्रीराम नवमी पर अवकाश की माँग को अनसुना करनें वाली सरकार बिना मांगे मोहम्मद साहब के जन्म दिन पर अवकाश घोषित कर रही है।

प्रदेश सरकार द्वारा जगह-जगह साधु सन्त की गिरफ्तारी की गयी। राष्टीय स्वयंसेवक संघ के स्वयं सेवकों का उत्पीड़न किया जाने लगा। मुख्यमन्त्री और उनके मन्त्रियों के भड़काऊ बयान आते रहे। इसी बीच मुख्यमंत्री श्री मुलायम सिंह जी का बहुचर्चित बयान आया कि अयोध्या में परिन्दा भी पर नहीं मार पायेगा ।

30 अक्टूबर को घोषित कार सेवा हेतु महन्त जी 26 अक्टूबर को दिल्ली से अयोध्या के लिए प्रस्थान किये। मुख्यमंत्री ने महन्त जी की गिरफ्तारी का आदेश दे दिया। पनकी में टेन रुकवाकर महन्त जी को गिरफ्तार किया गया तथा वही 'सर्किट हाउस' से उन्हें कड़ी सुरक्षा व्यवस्था के बीच रखा गया। गिरफ्तारी

के बाद महन्त जी ने कहा कि श्रीरामजन्मभूमि का आन्दोलन हमारी गिरफ्तारी से ठण्डा नहीं पड़ेगा। हर हिन्दू के सीने में धधक रही ज्वाला को बुझाना सरकार के बस की बात नहीं है। इधर गोरखपुर में महन्त जी की गिरफ्तारी की सूचना मिली। देखते-देखते गोरखनाथ मन्दिर में हजारों की संख्या में भक्तों की भीड़ इकट्ठा हो गयी। साधू-सन्तों के नेतृत्व में उत्तेजित भक्तों की रैली गोरखनाथ मन्दिर से निकल पड़ी । पूरे महानगर की सड़कों पर हिन्दू आबाल-वृद्ध-नारी निकल चुके थे। महानगर स्वतः स्फूर्त बंद हो गया । व्यापारियों ने 28 अक्टूबर को महानगर बंद की घोषणा कर दी।

30 अक्टूबर को सरकार के अनेक दम्भपूर्ण दावों के बावजूद लाखों कार सेवक अयोध्या पहुँचे। प्रदेश सरकार की दमनकारी कार्यवाही में कार सेवकों पर गोलियाँ चलवायी गयी। अनेक कार सेवक मारे गये। इस घटना से महन्त जी अत्यन्त दुःखी हुए। मारे गये कार सेवको को श्रद्धांजलि देते हुए महाराज जी ने कहा था कि रामभक्तों के खून का एक-एक कतरा हम पर कर्ज है। "अयोध्या में 30 अक्टूबर को परिंदा भी पर नहीं मार सकेगा" की मुख्यमंत्री की दम्भपूर्ण घोषणा को उनकी जगह-जगह की गयी नाकेबन्दी को रौंदकर जिस प्रकार कार सेवकों ने घोषित कार सेवा का शुभारम्भ किया और श्रीराम जन्मभूमि पर भगवा ध्वज फहराया, वह हमारे लिए प्रेरणादायी है। सरकारी उत्तेजनात्मक कार्यवाहियों के बावजूद हिन्दू जनता का अहिंसक बने रहना राष्ट्रीय एकता और अखण्डता को अक्षुण्य बनाने के प्रति उनके निष्ठा का प्रतीक है।

महन्त अवैद्यनाथ जी में 15 नवम्बर को अयोध्या जाकर 30 अक्टूबर और दो नवम्बर को अयोध्या में प्रदेश सरकार द्वारा नित्थे एवं शान्तिपूर्ण भजन कीर्तन का रहे कार सेवकों पर गोली चलाये जाने तथा इसमें मारे गये कार सेवकों के बारे में जानकारी प्राप्त की तथा अयोध्या में हुए इस नरसंहार की न्यायिक जाँच की माँग की। 29 नवम्बर, 1990 को महन्त जी ने हिन्दू समाज को याचना नहीं, अब रण होगा की हुँकार के साथ संघर्ष के लिए तैयार रहने का आहवान किया।

अयोध्या में श्रीरामजन्मभूमि पर भव्य मन्दिर निर्माण के लिए, जन जागरण अभियान चलाते हुए महन्त जी नेअ नेक सभाएँ की। बड़हलगंज, पीपीगंज, कैम्पियरगंज, बाखिरा में विशाल हिन्दू सम्मेलन हुआ। २२ जनवरी 1999 को महाराणा प्रताप इंटर कालेज, गोरखपुर के मैदान में विशाल जनसभा महन्त अवैद्यनाथ जी के नेतृत्व में एवं अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इस सभा को साध्वी ऋतम्भरा ने भी सम्बोधित किया था।

27 फरवरी 1999 को गोरखपुर में महाराणा प्रताप इंटर कालेज के मैदान में एक बार फिर महन्त जी के आह्वान पर हिन्दू समाज जुटा । इस जनसभा को विश्व हिन्दू परिषद के अन्तर्राष्ट्रीय महामंत्री श्री अशोक सिंहल जी ने भी सम्बोधित किया। अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में महन्त जी ने कहा कि हिन्दू सर्वदा से सहनशील और शान्तिप्रिय रहा है। वह सामान्यतः आक्रामक नहीं होता, किन्तु वर्तमान युग में न्याय शान्तिपूर्ण ढंग से मांगने से नहीं अपितु शक्ति और संघर्ष से मिलने वाला है। श्रीराम जन्मभूमि की यदि शान्ति के साथ न्याय से मिलने वाली होती तो हमें कभी की मिल गयी होती। श्रीराम जन्म भूमि पर वर्तमान सत्ताधीश न्याय नहीं होने देना चाहते ।

हमें अपने आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामजन्मभूमि शक्ति और संघर्ष से ही प्राप्त करनी होगी। महन्त अवेधनाथ जी ने "आहवान किया कि 11 से 15 मार्च तक देश के सभी प्रान्तों में जिला मुख्यालयों पर हिन्दू जनता प्रदर्शन करे। 17 मार्च को सभी हिन्दू अपने-अपने घरो पर भगवाध्वज फहरायेगें । 23 अप्रेल 1994 को महाराज जी ने गोरखपुर संसदीय क्षेत्र से अपना पर्चा "राम और रोटी" के मुद्दे पर भरा। लोकसभा चुनाव में महन्त जी विजयी हुए। अपने विजय पर महन्त जी ने कहा कि मेरी विजय तथा प्रदेश में भारतीय जनता पार्टी को प्राप्त जनाधार श्रीराम जन्म भूमि पर मंदिर निर्माण का स्पष्ट जनादेश है। भारतीय जनता पार्टी भी इस जनादेश को स्वीकार करेगी और उसका सम्मान करेगी। यदि भारतीय जनता पार्टी की प्रदेश सरकार श्रीराम जन्म भूमि पर मन्दिर निर्माण में आनाकानी करती है तो हम भारतीय जनता पार्टी की सरकार का भी विरोध करेगें।

30 अक्टूबर 1999 को अयोध्या में शौर्य दिवस का आयोजन हुआ। इस समारोह की अध्यक्षता महन्त जी ने की। इस अवसर पर महन्त जी ने कहा कि राम जन्म भूमि पर भव्य मन्दिर का निर्माण किसी की कृपा से नहीं, हिन्दू जनता के शौर्य से होगा।

23 जुलाई 1992 को श्रीरामजन्मभूमि निर्माण हेतु महंत अवैद्यनाथ जी महाराज की अगुवाई में एक प्रतिनिधि मण्डल तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री पीवी नरसिम्हा राव से मिला । महन्त जी की प्रधानमंत्री जी से यह तीसरी मुलाकात थी। प्रधानमंत्री द्वारा श्रीरामजन्भूमि मुद्दे के समाधान हेतु तीन महीने का समय मांगे जाने पर शिलान्यास स्थल पर प्रस्तावित कार सेवा रोके जाने की घोषणा करते हुए महन्त अवेद्यनाथ की महाराज ने कहा कि विवादित स्थल के बाहर शेषावतार मंदिर के निर्माण स्थल पर कार सेवा आरम्भ कर दी जायेगी।

29 जुलाई 1992 को लोकसभा में श्रीरामजन्मभूमि मुद्दे पर बोलते महाराज जी ने कहा था कि पूर्वाग्रह से ग्रस्त राष्ट्रीय जनमोर्चा और वाम मोर्चा को साथ लेकर अयोध्या विवाद का हल नहीं निकाला जा सकता। हम इस समस्या का हल बातचीत से चाहते हैं।

31 जुलाई 1992 को महन्त जी ने कहा कि यदि सरकार बातचीत के माध्यम से अयोध्या में श्रीराम जन्मभूमि पर मन्दिर निर्माण का हल नहीं निकाल पाती तो हमारे लिए मन्दिर निर्माण कार्य पुन: शुरू करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं रहेगा।

30 अक्टूबर 1992 को दिल्ली में महारानी झांसी स्टेडियम में पांचवी धर्म संसद का आयोजन हुआ। धर्म संसद ने 6 दिसम्बर 1992 से श्री राम मन्दिर निर्माण हेतु कार सेवा प्रारम्भ करने का निर्णय लिया अवेद्यनाथ जी महाराज ने कहा कि मन्दिर निर्माण की तिथि के कारण सरकार को एक माह का और समय हमने दे दिया है, किन्तु 6 दिसम्बर से कार सेवा का निर्णय अन्तिम है और निर्णायक है।

धर्म संसद के निर्णय के अनुसार सन्त महात्माओं के आह्वान पर 6 दिसम्बर 1992 को अयोध्या में एकत्रित कार सेवकों ने अवैद्यनाथ जी महाराज सहित देश के सभी प्रतिष्ठित पंथो के प्रमुख धर्माचार्यो, सन्त-महात्माओं तथा भारतीय जनता पार्टी के प्रमुख नेताओ की उपस्थिति में निर्णायक कारसेवा प्रारम्भ की और देखते-देखते विदेशी आक्रमणकारी द्वारा मन्दिर तोड़कर बनाया गया विवादित ढाँचा मलवे में बदल गया तथा मर्यादा भगवान श्रीराम की जन्मभूमि अपमानजनक ढाँचे से मुक्त हो गयी। श्रीराम भक्तों ने श्री रामलला का अपनी श्रद्धा से एक छोटा सा मन्दिर बना दिया और श्रीरामलला की प्रतिष्ठा का पूजन अर्चन प्रारंभ कर दिया। इससे बौखलायी केन्द्र की सरकार ने अयोध्या में श्रीराम लला के दर्शन एवं पूजन पर रोक लगा दिया।
अवैद्यनाथ महाराज जी की अध्यक्षता में 23 दिसम्बर को अयोध्या में जुटे साधु-सन्तों ने 26 दिसम्बर से श्री रामलला के दर्शन हेतु पुन: संघर्ष की घोषणा कर दी। महाराज जी ने कहा कि श्री रामलला के पूजन-दर्शन पर यदि सरकार प्रतिबंध नहीं हटाती तो 26 दिसम्बर को हम निषेधाज्ञा तोड़कर जेल भरो आंदोलन शुरु करेगें। सरकार को झुकना पड़ा और कड़ी सुरक्षा के बीच श्रद्धालुओं को श्रीरामलला के दर्शन की अनुमति प्रदान कर ही गयी। इसी बीच इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने भी श्रीराम भक्तों को श्रीरामलला के दर्शन का निर्णय दे दिया।

महाराज जी का संघर्ष जारी रहा। तत्कालीन प्रधानमंत्री द्वारा अयोध्या के मन्दिर निर्माण के साथ साथ मस्जिद निर्माण भी घोषणा पर महाराज जी ने कहा कि जब तक एक भी सन्त जीवित है, तब तक अयोध्या में मस्जिद निर्माण नहीं होने दिया जायेगा। अयोध्या में मस्जिद निर्माण दिवा स्वपन है।

9 मई 1993 को श्रीराम मन्दिर निर्माण के लिए दस करोड़ नागरिकों के हस्ताक्षरों से युक्त एक ज्ञापन तत्कालीन महामहिम राष्ट्रपति महोदय को सौपा गया, जिसमें संकल्प था - "आज जिस स्थान पर श्रीरामलला विराजमान है, वह स्थान ही श्रीरामजन्मभूमि है, हमारी आस्था का प्रतीक है और वहाँ एक भव्य मन्दिर का निर्माण करेगें।"

18 अक्टूबर 1994 को महन्त जी ने जोधपुर के गांधी मैदान में आयोजित धर्मसभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि सरकार संसद में घोषित करें कि जिस स्थान पर भगवान श्रीराम का जन्म हुआ था, वहीं मन्दिर का निर्माण कराया जायेगा तो श्रीराम मन्दिर निर्माण हेतु अनवरत जारी अपना आन्दोलन हम स्थगित कर देगें।

1998 के लोकसभा चुनाव में अपने उत्तराधिकारी शिष्य योगी आदित्यनाथ जी महाराज को प्रत्याशी बनाकर महन्त जी ने घोषित कर दिया कि राजनीतिक मोर्चा अब उनके शिष्य योगी जी सँभालेंगे तथा धर्म के मोर्चे पर वे स्वयं डटे रहेंगे। श्रीरामजन्मभूमि मुक्ति का आन्दोलन चलता रहा। महाराज जी ने

कहा कि न तो यह यज्ञ रुकेगा और न मन्दिर निर्माण । अन्ततः प्रधामन्त्री श्री अटल बिहारी बाजपेई के विशेष प्रतिनिधि की उपस्थिति में शिलापूजन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज के नेतृत्व में लगभग दो दशक तक अनवरत चले श्रीरामजन्मभूमि आन्दोलन ने न केवल श्रीराम जन्मभूमि पर हिन्दू समाज को अपमानित करने वाला ढाँचा ध्वस्त किया अपितु स्वतंत्र भारत में हिन्दू विरोधी राजनीति का ढांचा भी ध्वस्त किया। भारत सहित सम्पूर्ण विश्व में हिन्दुत्व' बहस का मुद्दा बना, साथ ही हिन्दुत्व पुनर्जागरण के एक नये युग, का सूत्रपात भी हुआ । हिन्दू समाज के विविध पंथों के धर्माचर्यो को एक सूत्र में जोड़ा। श्रीरामजन्म भूमि आन्दोलन की सफलता "महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज के कारण मिली । यदि विश्व में कभी भी श्रीरामजन्मभूमि की चर्चा होगी बिना महंत अवेद्यनाथ जी के पूर्ण नहीं होगी।

परम पूज्य महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज का इतना विराट व्यक्तित्व यानि शब्दों में उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती है। आध्यात्म और जन जागरण के अमर योद्धा पूज्य महन्त अवैद्यनाथ जी के ब्रह्मलीन होने पर चारो और छाये शोक से उनके योगदान का पता चलता है। ऐसे महापुरुष हजारों वर्षों में एक बार अवतरित होते है। महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज को शत - शत नमन।

गोरखनाथ मन्दिर को सर्वोत्तम उत्तराधिकारी प्रदान किया-

इस प्राचीन मठ जिसको नाथपंथ का महत्वपूर्ण केन्द्र माना जाता है, उसको वर्तमान ऊँचाई पर पहुंचाने में महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज का महत्वपूर्ण स्थान है। महन्त जी की रचनात्मक ऊर्जा, साधना और सिद्धि की जीवन्तता का साक्षी है। श्री गोरखनाथ मन्दिर महाराज जी ने श्री गोरक्षपीठ को योग्य उत्तराधिकारी योगी आदित्यनाथ जी के रूप में दिया, जिन्हें 21वर्षो तक अपने गुरु -महन्त अवैद्यनाथ जी महाराज का आध्यात्मिक और भौतिक सानिध्य प्राप्त हुआ। पूज्य महन्त जी से उनका पहला साक्षात्कार 1990 में हुआ था। यह वह समय था जब श्री रामजन्मभूमि मुक्ति आंदोलन अपने जोर पर था और आन्दोलन के अध्यक्ष के नाते पूज्य महन्त जी महाराज का पूरे देश में प्रवास रहता था। श्री रामजन्मभूमि मुक्ति आन्दोलन स्वतंत्रता के बाद का सबसे बड़ा सांस्कृतिक आन्दोलन था। इस आन्दोलन का ही प्रतिफल रहा कि मण्डल कमीशन के आधार पर समाज को बाटने और वर्ग संघर्ष की स्थिति से बचाने में इस आन्दोलन ने बड़ी भूमिका का निर्वाह किया।

महायोगी गोरखनाथ जी द्वारा प्रवर्तित नाथपंथ की सर्वोच्च पीठ- गोरक्ष पीठ के पीठाधीश्वर-महन्त योगी आदित्यनाथ जी महाराज अपने गुरु के पद-चिह्नों पर चलते हुए अनेक सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक और लोकोपकारी अभियानों का संचालन कर रहे हैं। आपकी लोकप्रियता का प्रमाण विगत पाँच बार से गोरखपुर ससंदीय क्षेत्र से सांसद चुना जाना है। वर्तमान में योगी आदित्यनाथ जी महाराज उत्तर-प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप में हिन्दुत्व के अधूरे कार्यो को पूर्ण कर रहे है। वर्तमान समय में जहाँ जाति-पाति, उँच-नीच, तुष्टीकरण, क्षेत्रवाद, सम्प्रदायवाद का बोलबाला है, इन सभी भेदो को समाप्त करना है, और हिन्दूत्व एवं सनातन धर्म को विश्व पटल पर मजबूती से स्थापित करना है तो योगी जी को भारत के प्रधानमंत्री पद पर अवश्य सुशोभित होना चाहिए।

अध्याय-पंद्रह

महाराज योगी आदित्यनाथ

आदित्यो नाथयोगी स्वबलविभवभूविश्वनाथ- प्रसिद्ध श्रीकाश्यां धाम भव्यं निजमतिकृतिभिर्गडगया योजयित्वा। देव श्रीरामजन्मप्रथितसुकृतभूभव्यधाम व्यधास्त्वं ब्रह्माप्रामाण्यचारी दलित दुरितकृद् यूपि - राज्ये जयेस्तत्॥

भारतीय आध्यात्म, धर्मिक सांस्कृति, चिन्तन धारा की अविच्छिन्न परम्परा में नाथपंथ का महत्वपूर्ण स्थान है। यह भारतीय इतिहास भी वह प्रबल धारा है, जो भारतवर्ष में अखण्ड रूप सें कई शताब्दियों तक प्रवाहित होती रही तथा जिसने विभिन्न साधना पद्धतियों और साहित्य की धाराओं को प्रभावित किया। इस पंथ के आदिपुरूष भगवान शंकर आदिनाथ माने जाते है, तत्पश्चात् मत्येन्द्रनाथ जी एवं उनके परम शिष्य गुरु योगी गोरखनाथ जी, को भगवान शिव के अवतार रूप में मान्यता है। महायोगी गोरखनाथ एक महान ऐतिहासिक व्यक्तित्व थे। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार- शंकराचार्य के बाद इतना प्रभावशाली और महिमान्वित व्यक्तित्व सर्म्पण भारतवर्ष में दूसरा नहीं हुआ। इस नाथपंथ के अनुयायी भारत सहित विश्व के कई देशो में पाये जाते है। गुरु गोरखनाथ अपने युग के सबसे बड़े धार्मिक नेता थे। योगिराज गोरखनाथ जी ने सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया। योगिराज गोरखनाथ की सबसे महत्वपूर्ण देन यह कि उन्होंने अनेक मत मतान्तरों में विभक्त भारतीय समाज को धार्मिक एक सूत्रता में बांधा। इस पंथ का दूसरा महत्वपूर्ण देन यह है कि नाथपंथ अपने सामाजिक आशय में अत्यन्त प्रगतिशील है। इसमें जातिवाद, वर्णव्यवस्था, बाह्याडम्बर, अन्धविश्वास आदि का प्रत्याख्यान बड़े ही प्रभावशाली ढंग से किया गया है। इसका वैयक्तिक साधना वाला पक्ष शास्त्रीय है, इसलिए जनमानस की रूचि उसमें उतनी नहीं बन पायी, पर जहां तक उसकी सामाजिक, सांस्कृतिक चेतना का प्रश्न है, वह लोकोन्मुख है और उसने समाज को बहुत अधिक प्रभावित किया। वैसे तो नाथपंथ की अनेक विशेषताएं है किन्तु महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय विशेषता.. यह भी है कि इसमें उच्च नैतिक मूल्यों को अनन्य स्थान दिया गया है। चित की शुद्धता एवं दृढ़ता को साधना के लिए आवश्यक बताया गया है। इसमें ब्रह्मचर्य, वाक्संयम, शारीरिक मानसिक पवित्रता को सर्वाधिक महत्व प्राप्त है। यदपि नाथ- साहित्य में यौगिक क्रियाओं का महत्वपूर्ण स्थान है तथापि सहज जीवन का आदर्श भी सामने रखा गया है, जो प्रत्येक गृहस्थ के लिए अनुकालीय सहज है। नाथ पंथ में सहज शीलवान गृहस्थ को गंगा जल के समान पवित्र बताया गया है। नाथ साहित्य ने परवर्ती सन्त साहित्य की एक प्रकार से पृष्ठभूमि तैयार कर दी थी। भारतीय सामाजिक सांस्कृति चेतना को इतने गहरे स्तर पर प्रभावित करने वाले नाथपंथ के विभिन्न पक्षों पर अनेक विद्वानों ने गम्भीर रूप से विचार विमर्श किया है। नाथपंथ का महत्वपूर्ण पीठ-गोरक्षपीठ के पीठाधीश्वर के व्यक्तित्व निरूपण के क्रम में नाथपंथ के उद्भव और विकास, उसके महत्वपूर्ण वैशिष्टय् तथा भारतीय संस्कृति परम्परा में उसके स्थान पर प्रकाश डालना समीचीन था। इस नाथपंथ पर हमारे दृष्टि से गम्भरतापूर्वक बहुत सूक्ष्म दृष्टि से अनुसंधान एवं शोध की आवश्यकता है। महायोगी गोरक्षनाथ जी ने मानव जीवन के प्रत्येक पहलुओं पर बहुत सरलतापूर्वक विचार किया है, आवश्यकता है, उन पहलुओं को विद्वत समाज द्वारा व्यवहारिक स्तर पर समाज में प्रसारित एवं प्रचारित करने का ताकि हर मजरब, धर्म, के लोग समक्ष सके एवं अपने व्यक्तित्व जीवन एवं सामाजिक रूप में सबकों समझाने की जिससे कि समाज में आध्यात्मिकता यौगिक, भौतिक स्वरूप का विस्तार से सके एवं उन्नत समाज की स्थापना हो सके। आधुनिक विद्वान एवं दार्शनिक प्रो. रजनीश ने तो यहाँ तक कहा है कि देश, काल, भौतिकता, आध्यामिकता एवं स्वयं को जानना है, तो नाथपंथ मुख्यतः गोरक्षनाथ जी का उपदेश अवश्य समझना पड़ेगा।

इस महान परम्परा लोक परलोक कल्याणकारी गौरवशाली नाथपम्परा का देरिप्यमान् नक्षत्र के समान योगी आदित्यनाथ जी महाराज को बार-बार प्रणाम है। किसी व्यक्ति, स्थान, वस्तु की चर्चा शब्दों के माध्यम से की जा सकती है किन्तु जो महान योगी, तपस्वी एवं साधक हो उसके बारे में शब्दों द्वारा चर्चा करना उसके कद को (रूप) को लघु करता है। अपितु योगी आदित्यनाथ महाराज जी के स्वरूप की चर्चा शब्दों द्वारा की जाय, उनके व्यक्तित्व को छोटा करना

है फिर भी शब्दों के द्वारा एक छोटा प्रयास किया जा रहा है इससे उनके सम्पूर्ण विराटता को नहीं बताया जा सकता फिर भी एक छोटा सा प्रकाश डाला जा सकता है। वैसे तो भारतीय धर्म, साहित्य, एवं दर्शन के क्षेत्र के गुरु-शिष्य की परम्परा देखने को मिलती है, किन्तु नाथ मत में कुछ अधिक ही महत्व है। नाथपंथ में गुरु-शिष्य की परम्परा सर्वाधिक महत्वपूर्ण है योगी आदित्यनाथ महाराज का कलयुग में श्रेष्ठ मानव अवतार माना जा सकता है| इस अवतार को जानने का काम पूज्य गुरु महन्त अवैद्यनाथ महाराज को जाता है। वैसे तो नाथ परम्परा में किसी भी सिद्ध या योगी को महानतम् स्थान प्राप्त है, किन्तु जहाँ तक योगी आदिनाथ महाराज के आविर्याव का प्रश्न है, वह अन्य गुरुओं योगियों की अपेक्षा कुछ पृथक है, कहने का तात्पर्य योग मार्ग के साथ ही साथ सच्चे अर्थात में ये कर्म योगी भी है। हिन्दूत्व के प्रबल समर्थक, निरपेक्ष, सहज प्रवृति एवं कर्म के प्रति पूर्णत सजग एवं सतर्क।

पूर्वान्चिल का राजनीतिक केन्द्र गोरखपुर- वैसे तो इस पुस्तक में गोरखपुर एवं गोरखपुर मंदिर के धार्मिक, यौगिक, सामाजिक पक्षों की चर्चा संक्षिप्त में हुई है, जहां तक राजनीतिक पक्ष का सवाल है, संक्षेप में उसको भी जानना आवश्यक है। गोरखपुर पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोक सभा की काफी महत्वपूर्ण सीट है, जो नेपाल एवं बिहार राज्य के समीप स्थित है। सम्भवतः सम्पूर्ण भारत में सबसे धनी आबादी इसी क्षेत्र में निवास करती है। गोरखपुर देश की राजनीति को प्रभावित करती है, गोरखपुर लोकसभा सीट वाराणसी, अयोध्या, लखनऊ, इलाहाबाद तक के क्षेत्र को प्रभावित करती है, निसन्देह इस लोकसभा सीट का प्रभाव सम्पूर्ण पूर्वान्चल पर देखा जा सकता है। यह मठ प्राचीन काल से लेकर भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन तक आध्यात्मिक चेतना, यौगिक चेतना, स्वास्थ सेवा, सामाजिक सेवा एवं अन्य अनेक क्षेत्रों में अपना योगदान देता रहा है, सर्वप्रथम राजनीतिक रूप से इसका महत्व 1952 में हुए पहले आम चुनाव से लेकर 1967 तक यह सीट भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के श्री सिंहासन सिंह जी के पास रही। 1967 में गोरखनाथ मठ के मुख्य पुजारी, हिन्दु राष्ट्रवादी कार्यकर्ता और हिंदू महासभा के नेता दिग्विजय नाथ महाराज निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में चुनाव में उतरे और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के श्री एस एल सक्सेना को 42,000 से भी अधिक मतों से हरा कर सीट जीत लिया। ऐसा कहा गया कि महन्त दिग्विजय नाथ जी ने 1949 में राज जन्मभूमि आन्दोलन में प्रमुख भूमिका निभाई थी, जिसका परिणाम था कि बाबरी मस्जिद के भीतर भगवान राम की प्रतिमा स्थापित की गयी। स्थानीय और क्षेत्रीय राजनीति में गोरखनाथ मठ का व्यापक प्रभाव था, लेकिन ऐसा पहली बार हुआ था, कि जब मठ से किसी योगी ने औपचारिक राजनीतिक गतिविधि में हिस्सा लिया।

उदयपुर के एक राजकीय परिवार और जाति से क्षत्रीय, गोरखनाथ मन्दिर के महन्त दिग्विजयनाथ जी का जन्म 1894 में हुआ, बचपन से ही उनका पालन-पोषण गोरखनाथ मन्दिर में ही हुआ। वह 1921 में कांग्रेस में शामिल हुए और चौरी-चौरा की घटना में सक्रिय रूप से शामिल होने के लिए निरफ्तार किया गया। 1937 में महंत के रूप में आसीन किये जाने के तीन वर्षों बाद वे हिन्दू महासभा में शामिल हुए, जब वीर सावरकर ने कार्यभार संभाला और जल्दी ही संयुक्त प्रान्त (अब उत्तर प्रदेश) में पार्टी की इकाई के सदस्य बन गये। महासभा के कई सदस्यों की तरह ही दिग्विजयनाथ महाराज ने भी महात्मा गांधी का कड़ा विरोध किया। कई लोगों का आरोप है कि. महात्मा गांधी की हत्या से तीन दिन पहले उन्होंने अनेक हिंदू राष्ट्रवादियों को महात्मा गांधी के उस फैसले के खिलाफ भड़काया, जिसमें पाकिस्तान के निर्माण की बात थी। बाद में प्रोफेसर रामसिंह और बी०जी० देश पाण्डेय के साथ उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया, किन्तु कोई पुख्ता प्रमाण के अभाव में 9 महीने बाद रिहा कर दिया गया। गोरखनाथ महंत पद के प्रतिष्ठा के साथ ही अपने राजनितिक कौशल के कारण वे तेजी से आगे बढ़े। हिन्दू राष्ट्रवादी होने के कारण सब उनकी भावना से अवगत थे कि वे मुसलमान से अपेक्षा रखते थे कि देश का हिस्सा रहना चाहते है तो उन्हें भारत के प्रति अपनी निष्ठा सिद्ध करनी होगी। महन्त दिग्विजयनाथ महाराज जी के समय से ही यह मठ राजनीतिक रूप से सक्रिय हो गया था, चूकि लोकतंत्र में नेतृत्व का महत्व होता है, इस प्रकार पूर्वान्चिल की जनता ने महन्त दिग्विजयनाथ जी के नेतृत्व में आगे बढने का फैसला ले लिया, तत्पश्चात उनके परम शिष्य एवं महान चितंक, सन्त उदार व्यक्तित्व के धनी महन्त अवेधनाथ जी महाराज के कंधो पर यह भार आ गया। महन्त अवेधनाथ जी महाराज का व्यक्तित्व एवं प्रभा मंडल ऐसा निरपेक्ष था कि वे सभी के हो गये एवं सभी लोग उनके हो गये। उनका व्यक्तित्व बहुत ही विराट था।

सर्वप्रथम 1940 में महन्त अवैद्यनाथ जी का संपर्क महन्त दिग्विजयनाथ जी से हुआ और 1942 तक वे गोरखधाम पीठ के उत्तराधिकारी बन गये। इस क्षेत्र के सामाजिक, राजनीतिक मामलों में मठ का हमेशा से ही अच्छा खासा प्रभाव रहा है, लेकिन महन्त अवेधनाथ मठ की ओर से पहले ऐसे सदस्य थे,

जिन्होंने राजनीतिक पद के लिए चुनाव लड़ा और मानीराम विधान क्षेत्र से 1962, 1967, 1968, 1974 एवं 1977 में पांच बार चुने गये। 1962 में वे गोरखपुर की मानीराम विधान सभा सीट से हिन्दू महासभा के टिकट पर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के श्री केशव पाण्डेय के विरुद्ध मैदान में उतरे और उन्हें 17664 वोटो से हराया। सर्वप्रथम मानीराम सीट 1962 में ही बनाई गई थी और महन्त अवैद्यनाथ उसके प्रथम प्रतिनिधि थे। 1967 में इसी सीट से वे निर्दल चुनाव लड़े और विजयी हुए। 1969 और 1974 में वे पुनः हिन्दू महासभा के टिकट पर चुनाव लड़े और जीत दर्ज की। उन्होंने 1977 में इमरजेंसी के बाद हुए पहले चुनाव में जनता पार्टी के टिकट पर चुनाव लड़ कर भी सीट पर जीत हासिल किया।

महन्त अवैद्यनाथ जी के गुरु महंत दिग्विजयनाथ जी की मृत्यु 1969 में हुई, तब वे गोरखपुर लोक सभा क्षेत्र से सांसद थे। 1970 में हुए उपचुनाव में महन्त अवैद्यनाथ अपने गुरु की सीट से चुनाव लड़े और निर्दलीय उम्मीदवार वे रूप में जीत दर्ज की। इसी लोकसभा सीट से एक बार फिर उन्होंने 1989 में हिन्दू महासभा के उम्मीदवार के रूप में जीत हासिल की। 1991 और 1996 के आम चुनावों में भारतीय जनता पार्टी के उम्मीदवार के रूप में उन्होंने इस सीट से विजय पताका फहराया। महंत अवैद्यनाथ जी महाराज ने अपनी आध्यत्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक विचारधारा को आगे बढाने के लिए योग्य शिष्य की खोज कर लिया था, जिसका नाम अजय सिंह बिष्ट था, गुरु-शिष्य परम्परा के अंतर्गत वे योगी आदित्यनाथ जी महाराज के नाम से विख्यात हुए।

गोरखनाथ मन्दिर एवं मठ की राजनीतिक विरासत को आगे बढाते हुये योगी आदित्यनाथ जी महाराज देश के उन शीर्षस्य सन्तों में है, जिन्होनें राजनीति में जाकर देश की व्यवस्था और राजनीति को भी सुधारने का प्रयास किया। योगी आदित्यनाथ जी राष्ट्रीयता के अनन्य साधक तो है ही हिन्दू धर्म के सशक्त पुरोधा एवं सामाजिक समरसता के अग्रदूत भी है। योगी आदित्यनाथ जी महाराज अद्भुत प्रतिभा के अनूठे संत एवं योगी है, योगी जी का जीवन बच्चों जैसी सरलता लिए है, अपनों के लिए आलीयता और प्यार है, वहीं वह अपनी नीतियों, सिद्धान्तों और विरासत में मिली परम्परायों के प्रति बहुत ही दृढ है। सामाजिक समरसता और हिन्दुत्व उनकी आस्था के मुख्य विषय है। पूज्य श्री महन्त जी सर्व समावेशी व्यक्तित्व से आध्यात्मिक, सामाजिक, यौगिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक सरोकार से लोक मंगल का सुचारू रूप से बेहतर कार्य कर रहे है। हिन्दुओं के आराध्य प्रभु श्री राम जन्मभूमि आन्दोलन में एवं मन्दिर निर्माण में अग्रणी भूमिका में है।

संक्षिप्त जीवन परिचय- बचपन का नाम अजय सिंह बिष्ट, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड, भारत के मूल निवासी । तत्पश्चात् गोरखपुर स्थित विश्व प्रसिद्ध मंदिर गोरखनाथ मठ के पूज्य एवं महान योगी अवेद्यनाथ जी महाराज के शिष्य एवं उत्तराधिकारी है। इनका जन्म 5 जून 1972 है, ये विरक्त ब्रह्मचारी है, इनकी शिक्षा स्नातक (विज्ञान) तक की है। स्थाई पता गोरखनाथ मन्दिर, गोरखपुर, उत्तर-प्रदेश, भारत है, वर्तमान में योगी जी उत्तर प्रदेश जैसे विशाल राज्य के मुख्यमंत्री है। इनकी महत्वपूर्ण रचनाओं में हठयोगः स्वरूप एवं साधना, राजयोगः स्वरूप एवं साधना प्रधान सम्पादक - योगवाणी पत्रिका-जो गोरखपुर मन्दिर से प्रकाशित होती है।

योगी आदित्यनाथ महाराज जी द्वारा चार दर्जन से अधिक शिक्षण संस्थाएं, स्वास्थ एवं धमार्थ संस्थाओ का संचालन एवं संरक्षकत्व है। योगी आदित्यनाथ ने विज्ञान विषय में स्नातक की पढ़ाई उत्तराखंड से पूरी की। 1994 में 22 वर्ष की उम्र में उनके गुरु महन्त अवैद्यनाथ, जो उस समय गोरखनाथ मन्दिर के मुख्य मठाधीश थे, ने योगी आदित्यनाथ महाराज को नाथपंथ की दीक्षा दी। पूर्वाचल में उस समय जो भी अराजकता, जाति-पाति, उच-नीच का भेदभाव था, योगी आदित्यनाथ जी ने अपने अथक प्रयास से समाप्त किया।

अवैद्यनाथ जी के आशीर्वाद से और गोरखपुर में अपनी लोकप्रियता के दम पर योगी आदित्यनाथ ने 1998 का लोकसभा चुनाव लड़ा तथा पहली बार 26000 से अधिक मतों से जीत दर्ज की। 1998 में योगी जी महज 26 वर्ष की उम्र में 12 वीं लोकसभा के सबसे युवा सांसद थे। उसके बाद योगी आदित्यानाथ कभी चुनाव नहीं हारे। वर्तमान में योगी आदित्यनाथ जी महाराज जी पूर्वान्चल के ही नहीं वरन् सम्पूर्ण भारत में अजातशत्रु के रूप में प्रतिष्ठित है।

योगी जी राष्ट्रीय समस्याओं का तो हल करते ही है फिर भी अपनी नित्य दिनचर्चा एवं गोरखपुर मे प्रर्याप्त समय देते हैं। साथ ही इतनी व्यस्तता के साथ ही साथ जनता दरबार लगाना नहीं भूलते है। उनकी स्मरण शक्ति अत्यन्त मजबूत है। अन्य राजनीतिज्ञयों तरह वह कार्यकर्तायों पर आश्रित नहीं रहते, उनका

तो व्यक्तिगतः लोगों से संवाद एवं संबंध बना रहता है। आज भी वे गोरखपुर आते है तो जनता दरबार लगता है एवं सभी लोगों की बात सुनी जाती है एवं निराकरण किया जाता है। उनके बारे में यदि यह कहा जाए की वह रात दिन राष्ट्र की समस्याओं पर चिंतन -मनन करते रहते हैं तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

योगी आदित्यनाथ जी महाराज कम उम्र में ही सांसद बन गये किन्तु उनकी चैतन्यता और सक्रियता अन्य सांसदों से उन्हें अलग करती है। 12वीं लोक सभा का सदस्य बनने से लेकर 16वीं लोकसभा में सांसद के रूप में अपने आखिरी भाषण तक योगी जी हमेशा ही काफी सक्रिय सदस्य रहे। किसी सांसद के सक्रियता का आकलन उसकी उपस्थिति, उस सांसद की ओर से संसद के विभिन्न नियमों के अनुसार चर्चाओं में शामिल होने और इस आधार पर किया जाता है कि उनसे कितने प्रश्न पूछे और सांसद ने कितने प्राइवेट मेंबर बिल प्रस्तुत किये। तीनों ही दृष्टि से योगी आदित्यनाथ जी का प्रदर्शन राष्ट्रीय औसत से अधिक है। यदि हम 16वीं लोक सभा की बात करे, तो योगी जी 57 चर्चाओं में शामिल हुए, जबकि राष्ट्रीय औसत 50.6 है। योगी जी ने 199 के राष्ट्रीय औसत के मुकाबले वाले 306 प्रश्न पूछे और 105 के राष्ट्रीय मुकाबले 3 प्राइवेट मेंबर बल पेश किये। यह आंकड़ा संसद में उनकी सक्रियता पर बहुत कुछ कहता है।

योगी आदित्यनाथ जी महाराज ने संसद में जिन चर्चायों की शुरुआत की या संसद के विभिन्न नियमों (विशेष उल्लेख, ध्यानाकर्षण, नियम-377 आदि) के अनुसार उनमें हिस्सा लिया, तो पता चलेगा कि वे विभिन्न प्रकार के विषयों से सम्बधित थे। योगी जी ने अघोषित विदेशी आय और सम्पत्ति, देश में समान नागरिक संहिता की आवश्यकता, गन्ना किसानों का भुगतान न होने आदि के राष्ट्रीय मामलों को उठाते रहे है, तथा उतनी ही चिन्ता उन्हें उत्तर-प्रदेश के पूर्वी हिस्से और गोरखपुर से जुड़ी समस्याओं को लेकर रहती हैं, जैसे गोरखपुर विश्वविद्यालय को केन्द्रीय विश्वविद्यालय और मदन मोहन मालवीय प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय को भारतीय प्रौद्योगिक संस्था का दर्जा दिलाना, गोरखपुर में एम्स जैसे संस्थान की स्थापना, गोरखपुर में गौर्रा और आमी नदियों को प्रदूषण मुक्त करना, गोरखपुर में हिन्दुस्थान फर्टिलाजर कारपोरेशन लि0 की एक नई इकाई स्थापित करना, पूर्वी उत्तर प्रदेश के वन क्षेत्रों में वन्य ग्रामों (जंगल के गांवों) को भूमि के स्थायी पट्टे दिलाना, देश में दिमागी बुखार से रोकने के लिए कार्यवाही करने के आवश्यकता, प्रतिवर्ष बाढ को रोकने के लिए उपयुक्त कदम उठाना, विशेष रूप से पूर्वी उत्तर प्रदेश में संविधान की आठवी अनुसूची में भोजपुरी भाषा को शामिल का आदि।

संसद तथा अपने क्षेत्र में योगी जी का व्यवहार पिछले दो दशको से भी अधिक समय में जैसा रहा है, उससे उनकी छवि को पूर्णतः अलग ही तरीके से मुख्य धारा की मीडिया में दिखाया जाता है। मीडिया लगातार योगी जी के कुछ उत्तेजित करने वाले भाषण दिखाता है, लेकिन संसद में उनकी ओर से उठाये गये विभिन्न सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं समसामाजिक मुद्दो पर उनके बयान वह कभी नही दिखाता है। नाथ मत सर्वे भवन्ति सुखिनः की बात में विश्वास करता है, विशेष रूप से हिन्दू समुदाय के अधिकारों की बात को केन्द्र में रखकर। ससंद में योगी जी ने कुछ ऐसे प्रश्न भी पूछे, जोकि सांस्कृतिक आयाम है, जैसे अवैध बूचड़खानों को बन्द करना और उत्तर प्रदेश के कोने कोने में खुले में हो रही मांस की बिक्री, जिससे लोगों के स्वास्थ को खतरा पैदा होता है, पश्चिम उत्तर प्रदेश के मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों से हिन्दुओं का पलायन, देश में समान नागरिक संहिता की आवश्यकता, श्रीमद भगवतगीता को राष्ट्रीय पुस्तक घोषित करने की अपील तथा सभी छात्रों को गीता की शिक्षा देना।

संसद में अपनें कई कार्यकालों के साथ ही योगी आदित्यनाथ जी विभिन्न संसदीय समितियों के अध्यक्ष और बड़े ही सक्रिय सदस्य रहे है तथा कंबोडिया, मलेशिया, नेपाल, सिंगापुर, थाईलैण्ड और अमेरिका जैसों देशों में जाने वाले संसदीय प्रतिनिधि मंडलो का हिस्सा रहे है। पूर्वांचल साहित उत्तर भारत की प्रतिनिधित्व योगी जी ने किया है आज उसी का प्रतिफल है कि बिहार, नेपाल, दूर-दराज से लोग गोरखपुर आते जाते है उत्तर भारत, नेपाल ही नही वरन सम्पूर्ण भारत के लिए गोरखपुर मठ एवं यहाँ की कृतियाँ सम्पूर्ण रूप से हिन्दुत्व के लिए समर्पित है। इस मठ के हाथों में हिन्दुत्व पूरी तरह सुरक्षित है।

योगी आदित्यनाथ जी उत्तर प्रदेश के 21वें मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ली और कहा ''मै आदित्यनाथ योगी ईश्वर की शपथ लेता हूँ। सत्य निष्ठा से प्रतिज्ञा करता हूँ कि मै विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूगां, मै भारत की प्रभुता अंखडता अक्षुण्य रखूगां, मै उत्तर प्रदेश राज्य के मुख्यमंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक और शुद्ध अन्तःकरण से निर्वहन करूँगा तथा मै भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना सभी प्रकार के लोगों के प्रति संविधान और विधि के अनुसार कार्य करूगां। मै ईश्वर की शपथ लेता हूँ। सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञा करता है कि जो विषय उत्तर प्रदेश राज्य के

मुख्यमंत्री के रूप में मेरे विचार के लिए लाया जाएगा अथवा मुझे ज्ञात होगा, उसे किसी व्यक्ति या व्यक्तियों को तब के सिवाय जबकि मुख्यमंत्री के रूम अपने कर्तव्यों के सम्यक निर्वहन के लिए ऐसा करना अपेक्षित हो, मै प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से संसूचित या प्रगट नही करूगां'' इस शपथ से पहले इस समारोह के संचालक ने घोषित किया-''माननीय राज्यपाल महोदय की आज्ञा से हम शपथ ग्रहण समारोह का औपचारिक आरम्भ करते है। माननीय राज्यपाल महोदय ने योगी आदित्यनाथ को उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री नियुक्त किया है'' इस घोषण के साथ ही लोगो का जोश फूट पड़ा और योगी आदित्यनाथ ने खडे होकर हाथ जोडकर सभी का अभिवादन किया। शपथ के बाद कार्यकर्ताओं की नारेबाजी के बीच योगी ने सबसे पहले राज्यपाल को प्रणाम किया, फिर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी, उसके बाद पार्टी अध्यक्ष अमित शाह बी0जे0पी0 के वरिष्ठ नेताओं राजनाथ सिंह, लाल कृष्ण आडवाणी, मुरली मनोहर जोशी, वैकेया नायडू, बी0जे0पी0 तथा राष्ट्रीय लोक तान्त्रिक गठबंधन के अन्य मुख्यमंत्रियों तथा वरिष्ठ नेताओं को प्रणाम किया। विनम्रता और आत्म विश्वास के साथ जब योगी जी मंच पर चल रहे थे, तब देश एक नये जननेता को आगे बढ़ते देख रहा था अब तक राजनीति के पंडितों ने भारत के भावी वैश्विक नेता के रूप में योगी जी को लेकर कल्पना, चर्चा एवं लिखना शुरू का दिया हैं।

व्यापक अर्थ में देखा जाय तो योगी आदित्यनाथ जी मात्र भारतीय जनता पार्टी के लिए वरदान सिद्ध नही हुए वरन सम्पूर्ण भारतीय चितंन परम्परा, हिन्दुत्व के वाहक बने, इनकी चितंन पद्धति, विचार एवं भावनाएं भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की ओर प्रखर एवं मुखर करती है। योगी जी न्याय की प्रतिमूर्ति है, इनकी दृष्टि में ऊंच-नीच, अमीर, गरीब, महिला-पुरूष सभी समान है। सक्रिय राजनीति में योगी जी के आने के पश्चात भारतीय राजनीति में एक नये युग का प्रारम्भ हुआ। योगी जी आध्यात्मिक सोच के साथ मानव जीवन से सम्बन्धित प्रत्येक क्षेत्रों जैसे सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, चिकित्सकीय, शैक्षिक क्षेत्रों में समाज का पथ प्रर्दशन कर रहे है।

उत्तर प्रदेश भारत का एक विशाल राज्य है यहाँ की आबादी लगभग 22 करोड़ के आस-पास है, 2017 में योगी जी के मुख्यमंत्री बनने के पूर्ण यह राज्य जाति-पाति, छुआ-छूत एवं अनेक प्रकार के संकटों से जूझ रहा था पूर्व की सरकारे प्रदेश के चर्तुभखी विकास की चिंता किये बगैर अपनी-अपनी झोली भरने में व्यस्त थी। यह उत्तर प्रदेश का सौभाग्य था कि योगी जी जैसा निरपेक्ष, आध्यत्मिक शक्ति से ओत-प्रोत व्यक्ति को प्रदेश की जिम्मेदारी मिली तत्पश्चात उत्तर प्रदेश के प्रत्येक क्षेत्रों में समुचित विकास का अवसर मिला जिसका परिणाम अब अर्थात 5, 6 वर्षो में दिखना प्रारम्भ हो गया है। जब योगी जी प्रदेश की बागडोर संभाले तो सर्वप्रथम नौकरशाही पर अंकुश लगा, कार्य स्थल समयबद्धता एवं वित्तीय सूचिता, अवैध, बूचडखानों पर कार्यवाही, एंटी-रोमियों स्क्वैड, राज्य में कानून व्यवस्था में सख्ती, गढ्ढा मुक्त सड़के किसानों की कर्जमाफी, गन्ना किसानों का बकाया भुगतान, सभी लोगों के लिए बिजली, भ्रष्टाचार के मामलो की जांच, चिकित्सा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगाति हुई।

यदि कुछ समय और प्रदेश को योगी जी का कुशल नेतृत्व मिल गया तो उत्तर प्रदेश सम्पूर्ण देश के लिए एक माडल बन जाएगा। योगी जी सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश को अपना परिवार मानकर विकास के नये-नये कीर्तिमान स्थापित करते जा रहे है। गोरखनाथ मठ की मंहत परम्परा की एक अनोखी विशेषता यह है कि पूर्व के महंत बिना राजनीतिक पद प्राप्त किये बिना भी जनता की सेवा में सदैव तत्परता दिखाई है। यह विशेषता धर्म, आध्यत्मिकता योग के साथ वे राष्ट्रवाद को भी महत्व देते है। मठ के अनुसार परम्पराओं के अनेक रीति-रिवाजो के साथ मिला दिया है। नवरात्र, विजयादशमी, श्रीराम अभिषेक, होली आदि जैसे भारतीय त्योहर मठ के उत्सवों का अभिन्न अंग बन गये है। योग आध्यात्मवाद के साथ जन-कल्याण और लोगो की सेवा मठ की गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण अंग है। मठ का दैनिक जनता दरबार, गरीबों के लिए भोजन गोरखनाथ मन्दिर की ओर संस्थान मठ के देखरेख में चलने वाले कुछ बड़े क्लयाणकारी प्रयास है। वैसे तो यह मठ उत्तर भारत के लिए सदैव प्रेरणा-स्त्रोत रहा है, इस मन्दिर में अनेक सिद्ध योगीयों ने समाज का पथ-प्रदर्शन किया। विशेष रूप से महन्त दिग्विजयनाथ जी महाराज के नेतृत्व में मठ की सामाजिक गतिविधियों में कई गुना वृद्धि हुई जो आज भी जारी है। हिन्दुओं के आराध्य भगवान श्रीराम मन्दिर आंदोलन में मठ की भूमिका सर्वाधिक महत्वूर्ण रही है। राम जन्मभूमि आंदोलन ने विभिन्न जातियों और हिन्दू धर्म के सम्प्रदायों को एकजुट कर दिया। राष्ट्रीय सांस्कृतिक गौरव के एक व्यापक उद्देश्य सम्पूर्ण हिन्दू समाज एक साथ आ गये। राम जन्मभूमि आंदोलन ने कांग्रेस तथा अन्य क्षेत्रीय दलों द्वारा हिन्दू बहुसंख्यकों की कीमत पर

घोर मुस्लिम तुष्टीकरण की नीति का पर्दाफाश करने में भारतीय जनता पार्टी की बहुत सहायता की इससे भारतीय जनता पार्टी के पक्ष में वोटो को जुटाने में भी मदद मिली जिसकी शुरूआत 1990 के दशक में आरम्भ हुई। गोरक्षनाथ मन्दिर के महंतो ने राम जन्म भूमि आंदोलन का नेतृत्व करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। श्रीराम जन्म भूमि आंदोलन के विषय में अधिक जानकारी प्राप्त करने के इच्छुक महन्त अवेधनाथ जी महराज के अभिनन्दन ग्रन्थ को पढ़ सकते हे।

योगी आदित्यनाथ महाराज के मुख्य मंत्री बनते ही लगभग सैकड़ो वर्ष पुराना राम मन्दिर का विवाद समाप्त हो गया एवं योगी जी के नेतृत्व एवं देखरेख में भव्य मन्दिर निर्माण हो रहा है। योगी आदित्यनाथ जी महाराज के सम्बन्ध में इस पुस्तक में सम्पूर्ण तथ्यों का दर्शाना सम्भव नही हो पा रहा है, भवष्यि में योगी जी पर शोध की अनन्त सम्भावनाए बनी रहेगी।

पूज्य महाराज योगी आदित्यनाथ के राजनीतिक व्यक्तित्व के विभिन्न आयाम-

1. सेवा भाव के साथ राजनीति

'सेवा परमो धर्म:' के मूल मंत्र के साथ माननीय योगी आदित्यनाथ जी ने अपने राजनीतिक जीवन की शुरुआत की और मुख्यमंत्री बनने के साथ ही उन्होंने पुनः प्रदेश के नागरिकों को यह विश्वास दिलाया कि 'सेवा भाव' ही उनके राजनीतिक जीवन का मूल आधार है | एक योगी के रूप में, एक मुख्यमंत्री के रूप में 'सेवा' ही उनका परमधर्म है और इसी के अनुरूप प्रदेश की 22 करोड़ जनता के विश्वास को जगाकर उत्तर प्रदेश के भाग्योदय हेतु माननीय योगी आदित्यनाथ जी कृतसंकल्पित हैं |

2. 'युवा' : राष्ट्र और राज्य की सबसे बड़ी शक्ति

सैकड़ों वर्ष पहले एक योगी ने युवाओं को सन्देश देते हुए कहा था "उठो, जागो और तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य कि प्राप्ति न हो जाए" | आज के दौर में भी एक मुख्यमंत्री के रूप में योगी आदित्यनाथ जी का युवाओं को सन्देश है कि आप स्वामी विवेकानंद जी के मार्ग का अनुसरण कीजिए, विश्व पटल पर माँ भारती के भाल को गर्व से ऊँचा कीजिए, क्योंकि आप (युवा) ही हमारी आशा हैं , युवाओं के ज्ञान, दक्षता, परिश्रम और संकल्प से ही उत्तर प्रदेश और देश का डंका पूरी दुनिया में सुनाई देगा | सबसे युवा देश भारत की सबसे बड़ी युवा आबादी उत्तर प्रदेश में ही है जिसके आत्मविश्वास को बल प्रदान कर उनका बेहतर कल सुनिश्चित हो सके , इसके लिए युवाओं को केंद्र में रखकर ऐसी नीतियों का निर्माण हो रहा है जिससे युवा शक्ति का समुचित उपयोग हो सके |

3. 'जनसेवा ही साधना'

19 मार्च 2017 को उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप में एक 'योगी' ने शपथ ली, तब लोगों ने कहा कि ये भगवा पहनने वाला धार्मिक व्यक्ति देश के सबसे बड़े राज्य का शासन भला कैसे चला पाएगा ? मुख्यमंत्री बन भी गया है तो ज्यादा दिन टिक नहीं पाएगा, एक तरह से देखा जाए तो बात सही भी थी माननीय योगी आदित्यनाथ जी को शासन चलाने का बहुत ज्यादा अनुभव हो ऐसा नहीं था, इससे पहले भारतीय जनता पार्टी के सांसद होने के नाते उन्हें जो भी दायित्व दिया जाता उसका निर्वहन वे पूरी ईमानदारी, लगन व निष्ठा के साथ किया करते थे लेकिन जैसा कि हम सभी जानते हैं 'सेवा भाव' को मूल आधार मानकर राजनीतिक जीवन कि शुरुआत करने वाले योगी आदित्यनाथ जी ने प्रदेश की 22 करोड़ जनसंख्या के विश्वास को जीतकर दिखाया है | योगी आदित्यनाथ जी ने जब मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ली तो एक अफसर ने आकर उन्हें बताया कि अबसे गोरखपुर में 24 घंटे बिजली मिलेगी, तब महाराज जी ने उस अधिकारी से कहा कि केवल गोरखपुर ही नहीं पूरे प्रदेश के 75 जिलों में हमें 24 घंटे बिजली देनी है, हमें जाति, मत, पंथ, मजहब, लिंग, क्षेत्र आदि किसी भी आधार भेदभाव नहीं करना है, हमारा एकमात्र ध्येय 'अन्त्योदय' आधारित जनसेवा है |

4. विकास की मजबूत नींव

वर्ष 2017 में माननीय योगी आदित्यनाथ जी के नेतृत्व में भारतीय जनता पार्टी की सरकार बनने से पहले उत्तर प्रदेश में अराजकता का माहौल था | कमजोरों कि भूमि पर कब्जा, दबंगई, गुंडागर्दी, छेड़खानी इत्यादि जैसी घटनाओं का चहुँओर बोलबाला था, पुलिस तंत्र भी निष्क्रिय हो चुका था लेकिन जैसा कि हम सभी जानते हैं एक मजबूत इमारत को खड़ा करने के लिए एक मजबूत नींव की आवश्यकता होती है और हम यह भी जानते हैं कि नींव को मजबूत करने का 'बुलडोज़र' से सीधा सम्बन्ध है, इसलिए माननीय योगी आदित्यनाथ के प्रथम कार्यकाल से ही बुलडोज़र द्रुत गति से 'नींव' को मजबूत बनाने के अपने कार्य में संलग्न है, अच्छी कानून व्यवस्था का प्रत्यक्ष सम्बन्ध 'औद्योगिक निवेश' से होता है और उत्तर प्रदेश में हुए दोनों कार्यकालों के 'इन्वेस्टर समिट्स' उत्तर प्रदेश के विकास की मजबूत नींव के साक्षी हैं |

5. 'चुनौतियों' को ही बनाया 'अवसर'

योगी आदित्यनाथ जी को मुख्यमंत्री के रूप में शपथ लेने के बाद विरासत में पूर्ववर्ती सरकारों की अनुचित कार्यप्रणाली के फलस्वरूप प्रदेश की जनता का खजाना खाली मिला, लचर कानून व्यवस्था मिली, बार-बार लीक होते पेपरों तथा नौकरी लगने में होने वाले भेदभावों से त्रस्त हताश युवा मिले, असुरक्षा महसूस करती हुई माताएँ-बहनें मिलीं, गुंडागर्दी व आराजकता भरे माहौल से परेशान व्यापारी व औद्योगिक वर्ग मिला, ये समस्त चुनौतियाँ पहले ही कदम पर सम्मुख खड़ी थीं, जिनको स्वीकार करते हुए माननीय मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी ने सबसे पहले कानून व्यवस्था को दुरुस्त करने का काम किया, माताओं-बहनों कि सुरक्षा के लिए 'एंटी रोमियो स्क्वाड' का गठन किया, प्रदेश में निवेश हेतु वातावरण उपलब्ध कराने के बाद 'इन्वेस्टमेंट समिट्स' आयोजित कर भरी-भरकम निवेश का रिकॉर्ड बनाया, नक़ल विहीन, किसी भी प्रकार के भेदभाव से मुक्त पारदर्शी परीक्षाओं का सफल आयोजन कराकर युवाओं के तथा प्रदेश के नागरिकों के हृदय में महाराज जी ने अपना विशेष स्थान बनाया है |

6. उत्तर प्रदेश का किसान 'उत्पादक' नहीं 'उद्यमी' बना

उत्तर प्रदेश पर परमात्मा और प्रकृति दोनों की असीम कृपा है, उत्तर प्रदेश के पास दुनिया की सबसे उर्वर भूमि, भरपूर जल संसाधन, अथक श्रमशक्ति तथा वैविध्यपूर्ण कृषि जलवायु है | इस सब के बावजूद भी ज्ञान व इच्छाशक्ति के अभाव के फलस्वरूप प्रदेश में किसान भाइयों की आर्थिक स्थिति उतनी अच्छी नहीं थी जितनी होनी चाहिए | वर्ष 2014 में केंद्र में माननीय प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के नेतृत्व में 'किसानों कि आय दोगुनी करने' का बीड़ा उठाया, ऐसा पहली बार हुआ जब किसी सरकार ने किसानों के हितों के बारे में सोचा, इससे पहले स्मृतिशेष पूजनीय अटल बिहारी वाजपेयी जी की सरकार ने किसानों को अपनी प्राथमिकता में रखा था | माननीय मुख्यमंत्री श्री योगी आदित्यनाथ जी की यह अभिलाषा रही है है कि उत्तर प्रदेश के किसान केवल 'उत्पादक' बनकर न रह जाएँ, बल्कि वे 'उद्यमी' बनें |'जागरूकता' को मूल मंत्र बनाने से ही किसानों कि आय कई गुना बढ़ सकती है जिसके लिए सरकार ने कई प्रयास किए और सफल भी रही | कर्ज माफ़ी, फसलों के न्यूनतम मूल्य में लगातार बढ़ोत्तरी, इसके दायरे में नई फसलों को लाना, धान, गन्ना, गेहूँ की रिकॉर्ड खरीददारी कर समय से भुगतान करना, मंडी अधिनियम में सुधार करना, सभी मंडियों को ऑनलाइन करके जोड़ना, कृषि एवं किसानों कि समस्याओं के निस्तारण हेतु मोबाइल एप विकसित करना, प्रधानमंत्री सिंचाई योजना और सिंचाई क्षेत्र में विस्तार करना, माननीय प्रधानमंत्री जी द्वारा सहकारिता मंत्रालय का गठन करना इत्यादि इसी कड़ी का हिस्सा हैं |

7. उत्तर प्रदेश को बनाना है नम्बर-1

मुख्यमंत्री के रूप में योगी आदित्यनाथ जी के शासन को देखने बाद उत्तर प्रदेश के नागरिकों की चित्तवृत्तियों में एक आत्मविश्वास पैदा हुआ है, जनमानस में यह भाव है कि हम आगे बढे हैं और अब हमें माननीय प्रधानमंत्री जी के मार्गदर्शन से माननीय योगी आदित्यनाथ जी के नेतृत्व में उत्तर प्रदेश को नम्बर 1 राज्य बनाना है | आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में उत्तर प्रदेश ने महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल की है | कई राज्यों के जनप्रतिनिधियों ने, कई राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने यहाँ तक कि कुछ न्यायाधीशों ने भी अपनी-अपनी समझ व सुविधा के हिसाब से 'योगी मॉडल' अपनाने का सुझाव दिया है | अब उत्तर प्रदेश 'समस्या प्रदेश नहीं रह गया है बल्कि अब हर समस्या का 'उत्तर' प्रदेश बन रहा है और ऐसा एक 'योगी' के नेतृत्व में हुआ है, एक सन्यासी के नेतृत्व में हुआ है | एक योगी ने , एक सन्यासी ने पूरे प्रदेश की तस्वीर बदल दी है | भारत का सन्यासी केवल आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त नहीं करता बल्कि अभिभावकों और मार्गदर्शकों के नेतृत्व में 'लोक कल्याण' का सर्वश्रेष्ठ उदहारण भी बन सकता है, कहना गलत न होगा कि 'योगी मॉडल' अपनी विशिष्ट कार्यप्रणाली के साथ सही दिशा में 'उत्तर प्रदेश को नम्बर 1' बनाने के रास्ते पर ले जा रहा है |

9. लक्ष्य अंत्योदय, प्रण अंत्योदय, पथ अंत्योदय

हमारे आदर्श, युगदृष्टा अन्त्योदय के प्रणेता पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी ने कहा था कि गरीब और अशिक्षित लोग हमारे ईश्वर हैं, और इनका विकास ही हमारा सामाजिक और मानवीय धर्म भी है | दीनदयाल जी के दिखाए हुए इन्हीं आदर्शों पर चलकर उत्तर प्रदेश में योगी आदित्यनाथ जी की सरकार ने इन विचारों को आत्मसात करते हुए 'लक्ष्य अंत्योदय, प्रण अंत्योदय, पथ अंत्योदय' के लक्ष्य को साधते हुए 'राष्ट्रोदय' की संकल्पना पूर्ण करने के भाव से अवध के मन, पूर्वांचल कि आशा, बुंदेलखंड की अपेक्षा और पश्चिमाञ्चल की अभिलाषा को संतुष्ट करने के क्रम में भी अनवरत श्रम किया गया है | आदरणीय प्रधानमन्त्री जी ने 'आत्मनिर्भर भारत' तथा 'पाँच ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर' की इकॉनमी बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया है, इन सपनों को पूरा करने के लिए माननीय प्रधानमन्त्री जी ने एक मंत्र भी दिया था " रिफार्म, परफॉर्म एवं ट्रांसफॉर्म" जिसे उत्तर प्रदेश ने अक्षरशः लागू किया है | इन्फ्रास्ट्रक्चर हेतु बजट आवंटन बढाने के साथ-साथ सरकार ने अभी तक के कार्यकाल में ही प्रति व्यक्ति आय को लगभग दोगुना करने का लक्ष्य भी प्राप्त कर लिया है इसके साथ ही पूरे देश के अन्दर वर्ष 2015-16 में उत्तर प्रदेश छठवीं अर्थव्यवस्था था जबकि वर्तमान में उत्तर प्रदेश देश की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनकर उभरा है तथा सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने की ओर बढ़ रहा है |

10. दल नहीं, देश बड़ा

भारतीय जनता पार्टी देश का एकमात्र ऐसा राजनीतिक दल है जो कहता है 'सेवा ही संगठन' , यह एकमात्र ऐसा दल है जो सर्वोच्च पदाधिकारी से लेकर बूथ लेवल तक के एक कार्यकर्ता से ये अपेक्षा रखता है कि वह प्रतिदिन किसी न किसी प्रकार से सेवा कार्य में संलग्न हो | भारतीय जनता पार्टी के कार्यकर्ताओं के लिए प्रतिदिन लोगों का कल्याण, उनकी सेवा ही सबसे बड़ा कर्तव्य है, इसलिए हर दिन कार्यकर्ताओं लिए इलेक्शन है, हर दिन लोक कल्याण का उत्सव है |भाजपा के लिए 'चुनाव एक साधन मात्र है, चुनाव साध्य नहीं हैं | चुनाव लोक कल्याण के मार्ग पर जाने और जनता के बीच अपने शासन की योजनाओं को पहुँचाने का साधन है | भाजपा ने कभी तुष्टीकरण की राजनीति नहीं की | उत्तर प्रदेश में माननीय योगी आदित्यनाथ जी की सरकार ने हमेशा ही प्रधानमंत्री जी के मार्गदर्शन में 'सबका साथ-सबका विकास- सबका विश्वास-सबका प्रयास' का ध्येय मंत्र को प्रमुखता से आत्मसात कर प्रदेश की 24 करोड़ जनता के लिए बहुआयामी विकास स्थापित करके दिया है |

11. हमारी जीवन पद्धति : हिंदुत्व

भारत की सनातन आस्था हमारे जीवन मूल्यों तथा आदर्शों में निहित है और इसी संपूर्ण परम्परा के प्रति माननीय मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी की अगाध आस्था है | जो भारत का है, उसपर गर्व करना और उसके संरक्षण व संवर्धन के लिए अपनी पूरी सामर्थ्य से प्रयास करना ही उनका परम कर्त्तव्य है | पिछले कुछ वर्षों में महारज जी के नेतृत्व में उत्तर प्रदेश सरकार ने वही किया है जो प्रदेश की 24 करोड़ जनसंख्या के हित में रहा है | एक बार माननीय योगी जी ने कहा था "मैंने एक ऐसे पंथ में जन्म लिया है जिसका इतिहास बहुत ही स्वर्णिम है, संपूर्ण विश्व में इसका आदर,सम्मान व सत्कार है हमेशा ही विश्व भर ने हमें मान की नज़रों से देखा है | मुझे अपने हिन्दू होने पर गर्व है | हिन्दू धर्म ने हमेशा ही दूसरे धर्मों के लोगों को शरण दी है | हिंदुत्व में ही 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना है जिसके बल पर हाल ही में भारत माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी के नेतृत्व में ने विश्व भर को नेतृत्व प्रदान करते हुए G20 का सफलतापूर्वक भव्य व दिव्य आयोजन किया | हिंदुत्व एक संस्कृति है, हिंदुत्व ही हमारी जीवन पद्धति है |

12. अन्त्योदय से प्रेरित जीवन

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ जी कहते है भारत में एकता और एकीकरण अर्थात एकात्मता और अन्त्योदय के माध्यम से विकास को तेज गति दी जा सकती है| हमें आज समझना होगा कि मत और उपासना हमारे लिए 'सेकेंडरी' है| हमें आज देश को सर्वोपरि रखने की आवश्यकता है| वो कहते है कि भारत को विकसित बनाने के लिए आवश्यक है कि हम अपनी विरासत पर गौरव की अनुभूति करें| गुलामी के अंशों से मुक्त हो| एकता और एकीकरण का आह्वान कर भारत के सर्वांगीण विकास और सुरक्षा की जिम्मेदारी लेकर सजगता, सहजता, सरलता, समझदारी को साथ लेकर तेजी के साथ कार्य करें|

योगी आदित्यनाथ जी का मत है कि, ''एकता और एकीकरण इस रूप में हो कि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, धर्म, पंथ, जाति, मत, मजहब, क्षेत्र और भाषा नहीं बल्कि भारत माता हम सबके लिए सर्वोपरि हो| यही हमारी प्राथमिकता होनी चाहिए| देश सेवा हमारे लिए प्रथम हो, मत और उपासना हमारे लिए हमेशा द्वितीय स्थान पर होनी चाहिए| वह हमारा व्यक्तिगत विषय हो सकता है, लेकिन 'माटी को नमन, वीरों का वंदन' हमारा संकल्प होना चाहिए| वो कहते है कि विकसित भारत की परिकल्पना को साकार करने के लिए आगामी 25 वर्ष की व्यापक कार्ययोजना के साथ हम सभी को नए संकल्प, नए उत्साह और नई उमंग से जुड़ने का अवसर प्राप्त हो रहा है| हर भारतीय नागरिक का कर्तव्य है कि समाज व राष्ट्र के लिए कार्य वो हर आवश्यक कार्य करे| तन, मन, धन से माँ भारती की सेवा करे|

जब हम अन्त्योदय का विचार करते है तो हमने पंडित दीनदयाल उपाध्याय के विचारों को समझना होगा| वर्तमान की केंद्र सरकार और अन्य कई भाजपा शासित राज्य सरकारें पंडित जी के अन्त्योदय व एकात्म मानव दर्शन के विचार को लेकर विकास और सुरक्षा की नीति पर कार्य कर रही है| पंडित दीनदयाल उपाध्याय अन्त्योदय के सम्बन्ध में कहते थे कि " भारत में जब तक पंक्ति के अंतिम मे खड़े व्यक्ति का उदय नही होगा उसका विकास नही होगा तब तक भारत का सम्पूर्ण विकास संभव नही है | भारत के उदय के लिए पंक्ति के अंतिम व्यक्ति का उदय होना भी आवश्यक है |" वे अश्रुपूर्ण आँखों से आसूँ पोछने और उसके चेहरे पर मुस्कान को अन्त्योदय का पहला पायदान मानते थे | दीनदयाल जी के अन्त्योदय का आशय राष्ट्रश्रम से प्रेरित था | वे राष्ट्रश्रम को राष्ट्रधर्म मानते थे | अत: कोई भी श्रमिक वर्ग प्रथक नही है हम सभी ही राष्ट्र निर्माण मे श्रमिक की भूमिका निभा रहे है | उसी विचार को साकार करने का कार्य उत्तर प्रदेश की वर्तमान योगी सरकार अपनी विभिन्न नीतियों और योजनाओं के साथ कर रही है|

किसी भी राज्य के विकास के लिए अहम् होता है निवेश| निवेश के मुख्य बात होती निवेशक की सुरक्षा और निवेश के लिए अनुकूल माहौल और व्यवस्था| राज्य के नागरिकों के लीये भी सुरक्षा व्यवस्था का होना योगी जी पर विश्वाश का प्रतीक है| उ.प्र. की कानून व्यवस्था को लेकर योगी जी सदैव सजग रहते है| वो कानून व्यवस्था का जिक्र करते हुए कहते है कि प्रदेश की सुरक्षा और क़ानून व्यवस्था के साथ खिलवाड़ करने की इजाज़त किसी को नहीं दी जा सकती है| उत्तर प्रदेश में अब सुरक्षा के भाव ने यहां का परसेप्शन भी बदला है, आज प्रदेश की कानून व्यवस्था पर कोई सवाल नहीं खड़ा कर सकता है| कानून व्यवस्था की वजह से विश्व के बड़े से बड़े निवेशक आ रहे हैं| धार्मिक पर्यटन की पहचान पूरे विश्व को आकर्षित कर रहा है| आज कानून व्यवस्था की वजह से आज एक नया काशी बना है, जहां लाखों पर्यटक आ रहे हैं| कानून व्यवस्था में सुधार होने से उत्तर प्रदेश में निवेशको की संख्या बड़ी है| सुरक्षा और सुशासन से निवेश का उत्तम प्रदेश अब उत्तर प्रदेश बन रहा है| योगी आदित्यनाथ के प्रयासों से उत्तर प्रदेश में 36 लाख करोड़ के निवेश के लिए निवेशको ने सरकार के साथ समझौता किया है, इस निवेश से प्रदेश के लगभग एक करोड़ नौजवानों को नौकरी की व्यवस्था हो सकेगी, आज ये सब उस यूपी में हो रहा है जहां कभी कोई नहीं आना चाहता था| जिसे कभी अपराधो के नाम से भी जाना जाता था| प्रदेश की कानून व्यवस्था की वजह से बड़े-बड़े निवेशक आ रहे हैं| विदेशी निवेशको के मध्य भी उत्तर प्रदेश और योगी जी लोकप्रिय हो रहे है| आज इंफ्रास्ट्रक्चर के तौर पर भी प्रदेश की नई पहचान बन रही है| जहां साल 2017 तक प्रदेश में सिर्फ दो एयरपोर्ट ही क्रियाशील थे आज यहां 9 एयरपोर्ट बन गए हैं| देश के सबसे ज्यादा एक्सप्रेस वे राज्य के पास है| डिफेन्स कॉरिडोर जैसा सफल दांव यहाँ की वर्तमान योगी सरकार के द्वारा चला गया| 73 वें नेशनल सेम्पल सर्वे के अनुसार उत्तर प्रदेश में लगभग 90 लाख एमएसएमई है| जो देश में सर्वाधिक है| इनके जरिये परोक्ष रूप से लगभग 2 करोड़ लोगों को रोजगार मिलता है| उत्तर प्रदेश के पास कुल 11 प्रतिशत कृषि भूमि है| नई तकनीक और किसानो के प्रशिक्षण से उत्पादन के क्षेत्र में भी नए आयाम स्थापित कर रहा है उत्तर प्रदेश|

इन सभी बातों की प्रेरणा दीनदयाल उपाध्याय जी के विचारों से प्रेरित है| अन्त्योदय के सम्बन्ध में दीनदयाल जी ने कहा है की राष्ट्र के सर्वागीण विकास के लिए राष्ट्र के हर नागरिक के लिए कुछ मूलभूत बातो का होना अतिआवश्यक जैसे रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधा, सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा और संस्कार आदि | अन्त्योदय की भावना मे ये सभी बातें निहित है | जब हम विकास की ओर दृष्टि करते है तो व्यक्ति का सुख उसका आधार बनता है | मगर दीनदयाल जी कहते कि मेरी अवधारणा व्यक्ति के संबध मे जैसी है वैसे ही राष्ट्र के सम्बन्ध मे है | यहाँ पर वह धर्म की विवेचना करते हुए सर्वोदय की बात बताते है "महर्षि कणाद ने सर्वांगीण उन्नति की व्याख्या करते हुए कहा था 'यतो भ्युदयनि:श्रेय स सिद्धि:स धर्म:' जिस माध्यम से अभ्युदय अर्थात् भौतिक दृष्टि से तथा नि:श्रेयसयानेआध्यात्मिक दृष्टि से सभी प्रकार की उन्नति प्राप्त होती है, उसे धर्म कहते हैं। उसी तरह गरीब के उत्थान के लिए किये गए प्रयासों को अन्त्योदय या सर्वोदय के भाव से प्रज्वलित करते है |

उत्तर प्रदेश की योगी जी की सरकार इन सभी संकल्पों को पूरा करने के लिए संकल्पित है| मुख्यमंत्री आर्थिक सहायता कोष से प्रतिदिन हजारों जरुरतमंदों की सहायता प्रदान की जाती है| जनता दर्शन के माध्यम से प्रतिदिन राज्य की जनता से सीधा संवाद करके उनकी सहायता के उचित प्रयास किये जाते है| IGRS पोर्टल से जनता की शिकायतों का निस्तारण करने का कार्य उत्तर प्रदेश शासन द्वारा किया जाता है| शिक्षा, रोजगार, नागरिक सुरक्षा, किसानो को सिचाई, उन्नत किस्म बीज वितरण, मकान, चिकित्सा आदि प्रकार की मुलभूत सुविधायों पर विशेष ध्यान और कार्यवाई मुख्यमंत्री योगी जी के नेतृत्त्व में की जाती है| अंतिम छोर की चिंता और उनके विकास के लिए योगी आदित्यनाथ जी अग्रणी भूमिका निभा रहे है|

"सर्वजन सुखाय का यह आदर्श" भारतीय संस्कृति की अनन्य विशेषता है – मानव मात्र का कल्याण | भारतीय संस्कृति का उद्देश्य है-

"सर्वे भवन्तु सुखिनःसर्वे सन्तु निरामया ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखभाग् भवेत्।।"

पंडित दीनदयाल जी के विचारो का केंद्र भी सर्वजन हिताय और सर्वजन सुखाय | भारतीय संस्कृति का यह आदर्श अन्त्योदय की परिकल्पना मे परिभाषित होता है | सरकार द्वारा बनायी गयी नीतियों और योजनायों का लाभ सभी को होना चाहिए | समाज के सभी वर्ग इस सरकार की इन नीतियों और योजनाओ से लाभान्वित हो, यही शासन और प्रशासन का उद्देश्य होना चाहिए , इसी को सरकार की सफलता कहा जा सकता है | हमारी प्रगति का आंकलन सामाजिक पीढ़ी के सर्वोच्च पायदान पर पहुँचे व्यक्ति से नही यदपि समाज के अंतिम पंक्ति मे खड़े व्यक्ति से होगा | भारत की वर्तमान मोदी सरकार और राज्य की योगी सरकार अंतिम व्यक्ति को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का कार्य तेजी के साथ कर रही है | पंडित दीनदयाल जी ने राष्ट्र व समाज को जोड़ने के लिए निरंतर संघर्ष किया है जिसका परिणाम वर्तमान समय मे दिखने लगा है | हमारी संस्कृति मे मानव मात्र के कल्याण की बात निहित है, दीनदयाल जी ने इस तत्व को महत्त्व देते हुए अन्त्योदय को शासन के लक्ष्य के रूप में अवगत कराया है | देश मे सभी वर्गों की सरकार एवं समाज से संतुष्टि व ख़ुशी अपेक्षित है | यदि श्रम करने वाला श्रमिक वर्ग इन से नाराज है तो राष्ट्र व समाज के विकास पथ पर चलने की परिकल्पना अधूरी ही रह जाएगी | इसके लिए पंडित जी कहते थे की देश के हर नागरिक के हाथ में काम होना अनिवार्य है | बेरोजगारी से बचाव की दृष्टि से कर्मशीलता व कर्मचेतना एक सार्थक उपाय है | कर्मशीलता और कार्य दक्षता का विकास कर देश में बेरोजगारी और गलत कार्यो को रोका जा सकता है और इन प्रयासों के द्वारा राष्ट्र की प्रगति सुनिश्चित है | वर्तमान सरकार इन कार्यो पर अपना ध्यान केन्द्रित किये हुए है उसके प्रयास निरंतर इन कार्यो की सफलता की ओर अग्रेषित है | मगर यह सभी बाते सरकार पर ही निर्भर नही होनी चाहिए समाज और व्यक्तिओं का भी इसमें योगदान होना चाहिए | उच्च, दलित, पिछड़ा, जनजाति, विमुक्त और खानाबदोश इनमे किसी में विकास, सामाजिक और भौतिक किसी भी प्रकार से भेदभाव नही होना चाहिए | स्वामी विवेकानंद जी के बात को वो हमेशा कहते थे कि इस देश को उठाने दो- गरीब, मछुआरो, बुनकरों और मजदूरो आदि को विकसित होने दो | भेदभाव रहित समाज की रचना करो | एकात्म भाव को विकसित होने दो | सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाए के मंत्र पर व्यक्ति का विकास करो |

पूज्य महाराज योगी आदित्यनाथ के व्यक्तित्व के विभिन्न आयाम-

13. **भगवा जीवन की साक्षात् प्रतिमूर्ति-**

योगी आदित्यनाथ जी महाराज एक खुली किताब हैं जिन्हे कोई भी कभी भी पढ़ सकता है। उनका जीवन एक योगी का जीवन है, सन्त का जीवन है। पीड़ित, गरीब, असहाय के प्रति करुणा, किसी के भी प्रति अन्याय एवं भ्रष्टाचार के विरुद्ध तनकर खड़ा हो जाने का निर्भीक मन, विचारधारा एवं सिद्धान्त के

प्रति अटल, लाभ-हानि, मान-सम्मान की चिन्ता किये बगैर साहस के साथ किसी भी सीमा तक जाकर धर्म एवं संस्कृति की रक्षा का प्रयास उनकी पहचान है।

14. **नर सेवा नारायण सेवा में समर्पित जीवन** –

वैभवपूर्ण ऐश्वर्य का त्यागकर कंटकाकीर्ण पगडंडियों का मार्ग उन्होंने स्वीकार किया है। उनके जीवन का उद्देश्य है - 'न त्वं कामये राज्यं, न स्वर्ग ना पुनर्भवम्। कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामर्तिनाशनम्।। अर्थात् ''हे प्रभो! मैं लोक जीवन में राजपाट पाने की कामना नहीं करता हूँ। मैं लोकोत्तर जीवन में स्वर्ग और मोक्ष पाने की भी कामना नहीं करता। मैं अपने लिये इन तमाम सुखों के बदले केवल प्राणिमात्र के कष्टों का निवारण ही चाहता हूँ।'' पूज्य योगी आदित्यनाथ जी महाराज को निकट से जानने वाला हर कोई यह जानता है कि वे उपर्युक्त अवधारणा को साक्षात् जीते हैं। वरना जहाँ सुबह से शाम तक हजारों सिर उनके चरणों में झुकते हों, जहाँ भौतिक सुख और वैभव के सभी साधन एक इशारे पर उपलब्ध हो जायं, जहाँ मोक्ष प्राप्त करने के सभी साधन एवं साधना उपलब्ध हों, ऐसे जीवन का प्रशस्त मार्ग तजकर मान-सम्मान की चिंता किये बगैर, यदा-कदा अपमान का हलाहल पीते हुए इस कंटकाकीर्ण मार्ग का वे अनुसरण क्यों करते?

15. **सामाजिक समरसता के उत्प्रेरक-**

'जाति-पाँति पूछे नहिं कोई-हरि को भजै सो हरि का होई' गोरक्षपीठ का मंत्र रहा है। महायोगी गोरक्षनाथ ने भारत की जातिवादी-रूढ़िवादिता के विरुद्ध जो उद्घोष किया, उसे इस पीठ ने अनवरत जारी रखा। गोरक्षपीठाधीश्वर परमपूज्य महन्त अवेद्यनाथ जी महाराज के पद-चिह्नों पर चलते हुए पूज्य योगी आदित्यनाथ जी महाराज ने भी हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों, जातिवाद, क्षेत्रवाद, नारी-पुरुष, अमीर-गरीब आदि विषमताओं, भेदभाव एवं छुआछूत पर कठोर प्रहार करते हुए, इसके विरुद्ध अनवरत अभियान जारी रखा है। गाँव-गाँव में सहभोज के माध्यम से 'एक साथ बैठें-एक साथ खाएँ ' मंत्र का उन्होंने उद्घोष किया।

16. **भ्रष्टाचार-अराजकता-अपराध विरोधी संघर्ष के नायक** –

योगी जी के भ्रष्टाचार-विरोधी तेवर के हम सभी साक्षी हैं। अस्सी के दशक में गुटीय संघर्ष एवं अपराधियों की शरणगाह होने की गोरखपुर की छवि योगी जी के कारण बदली । अपराधियों के विरुद्ध आम जनता एवं व्यापारियों के साथ खड़ा होने के कारण पूर्वी उत्तर प्रदेश में अपराधियों के मनोबल टूटे। पूर्वी उत्तर प्रदेश में योगी जी के संघर्षों का ही प्रभाव था कि माओवादी-जेहादी आतंकवादी इस क्षेत्र में अपने पॉव नही पसार पाए। नेपाल सीमा पर राष्ट्र विरोधी शक्तियों की प्रतिरोधक शक्ति के रुप में हिन्दु युवा वाहिनी सफल रही है। आज उनका यही स्वरूप माननीय मुख्यमंत्री के रूप में सबके सामने है। प्रदेश भ्रष्टाचार-आतंक एव अपराध मुक्त होने की राह पर तेजी से बढ़ चला है।

17. **स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी नायक-**

सेवा के क्षेत्र में शिक्षा एवं स्वास्थ्य क्षेत्र को प्राथमिकता दिये जाने के गोरक्षपीठ द्वारा जारी अभियान को पूज्य योगी आदित्यनाथ जी महाराज ने भी और सशक्त ढंग से आगे बढ़ाया। योगी जी के नेतृत्व में महाराणा प्रताप शिक्षा परिषद् द्वारा अनवरत आज चार दर्जन से अधिक शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थाएँ गोरखपुर एवं महाराजगंज जनपद में कुष्ठरोगियों एवं वनटांगियों के बच्चों की निःशुल्क शिक्षा से लेकर बी0एड0 एवं पालिटेक्निक जैसे रोजगारपरक सस्ती एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने का भगीरथ प्रयास जारी है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में गुरु श्री गोरक्षनाथ चिकित्सालय ने अमीर-गरीब सभी के लिये एक समान उच्च कोटि की स्वास्थ्य सुविधाएँ उपलब्ध करायी है। महायोगी गोरखनाथ विश्वविद्यालय, गोरखपुर के माध्यम से समाज में शिक्षा का जन जागरण करने का अभूतपूर्व प्रयास है| निःशुल्क स्वास्थ्य शिविरों ने जनता के घर तक स्वास्थ्य सुविधाएँ पहुचायी जाती हैं।

18. **विकास के पथ पर अनवरत गतिशील –**

योगी आदित्यनाथ जी महाराज के व्यक्तित्व में सन्त और जननेता के गुणों का अद्भुत समन्वय है। ऐसा व्यक्तित्व विरला ही होता है। यही कारण है कि एक तरफ जहॉ वे धर्म-संस्कृति के रक्षक के रूप में दिखते हैं तो दूसरी तरफ वे जनसमस्याओं के समाधान हेतु संवेदनशील रहते हैं। सड़क, बिजली, पानी, खेती आवास, दवाई और पढ़ाई आदि की समस्याओं से प्रतिदिन जुझती जनता के दर्द को समझने वाले जन-नेता के रूप में उनकी ख्याति के आज सभी साक्षी बन रहे हैं।

हिंदी ग्रन्थसूची संदर्भिका

1) महन्त अवैद्यनाथ, नाथ सम्प्रदाय में योगसाधना, योगवाणी विशेषांक, वर्ष 11 अंक 1, 1986, पृ. 37

2) शिवसंहिता 5.248 ‘शिवविद्या महाविद्या गुप्ता चाग्रे महेश्वरी’

3) अस्मिन मार्गे अद्वैतोपरवर्ती नाथो देवता प्राप्या निराकर ज्योतिर्नाथे ध्येय, साकारनाथ उपास्योऽथ च आदिगुरूः साधनं योगः। (गोरक्षसिद्धान्त संग्रह)

4) ‘योगात्परतरं पुण्य योगात्परतरं सुखम्। योगात्परतरं सूक्ष्मं योगमार्गात्परं न हि।।’ (योगबीज 87)

5) योगी आदित्यनाथ, हठयोगः स्वरूप एवं साधना, नवीन संस्करण, वर्ष 2019 ई. पृष्ठ 25,49,51,54,55,95,118,119,124,128-140,154,161

6) हकारः कीर्तितः सूर्यष्टकारश्चन्द्र उच्यते। सूर्याचन्द्रमसोर्याेगाद हठयोगो निगद्यते।। (सिद्धसिद्धान्तपद्धति)

7) योगी आदित्यनाथ, हठयोगः स्वरूप एवं साधना; नवीन संस्करण, वर्ष 2019 ई. पृष्ठ 27

8) धीतिर्वस्तिस्तथा नेतिनलिकत्राटकस्तथा। कपालभातिश्चौतानि षट्कर्माणि समाचरेत्।।

9) अन्तर्धीतिर्दन्त-घौतिर्हृदधीतिर्मूलशोधनम्। धीतिश्चतुर्विधा कृत्वा घटं कुर्वन्ति निर्मलम्।।

10) सिद्धसिद्धान्तपद्धति

11) कुर्यान्तदासनं स्थैर्यमारोग्यं चांगलाधतम्। (हठयोग प्रदीपिका 1/19)

12) गोरखवाणी, रामलाल श्रीवास्तव द्वारा सम्पादित; द्वितीय संस्करण, पृ. 82

13) सिद्धं पदं तथा भद्रं मुक्तं बज्रं च स्वास्तिकम्।

सिंहं च गोमुख वीरं धनुरासनमेव च।।

मृतं गुप्तं तथा मत्स्यं मत्स्येन्द्रासनमेव च।

गोरक्ष पश्चिमोत्तान उत्कंट संकट तथा।।

मयूरं कुक्कुटं कूर्म तथा चोत्तानकूर्मकम्।

उत्तानमण्डूक वृक्ष मण्डूकं गरुड़ वृषम्।।

शालभं मकर चोष्ट्र भुजंग योगमासनम्।

द्वात्रिंशदासनानि तु मर्त्यै सिद्धि प्रदानि च।। (घेरण्ड संहिता)

14) लोपामुद्रा वृषणं नी रिणाति धीरमधीरा अयति श्वसन्तम्। (ऋग्वेद 1.179.4)

15) योगवाणी, योगाभ्यास विशेषांक, वर्ष 11 जनवरी 1986 अंक 1, पृ. 177

16) महामुद्रा नभोमुद्रा उड्डीयान जलन्धरम्।

मूलबन्धं महाबन्धं महावेधश्च खेचरी

विपरीतकारिणी योनि वज्रोली शक्तिचालिनी

तडागीमाण्डवी मुद्रा शाम्भवी पंचधारणा।।

अश्विनी पाशिनी काकी मातंगी च भुजंगिनी

पंचविंशति मुद्राः वै सिद्धिदाश्चेद्धयोगिनाम्।। (घेरण्ड संहिता)

17) प्रत्याहारमिति चौतन्यतुरङ्गाणां प्रत्याहरणं विकारग्रसन उत्पन्नविकारस्यापि निवृत्तिर्निर्मातीति प्रत्याहार लक्षणम्।। (सिद्धसिद्धान्त पद्धति, 2.36)

18) आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु।

बुद्धि तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।

इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।

आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेव्याहुर्मनीषिणाः।।

यस्त्वविज्ञानवान् भवत्ययुक्तेन मनसा सदा।

तस्येन्द्रियाण्यवश्यानि दुष्टाश्वा इव सारथेः।।

यस्तु विज्ञानवान् भवति युक्तेन मनसा सदा।

तस्येन्द्रियाणि वश्यानि सदश्वा इव सारथेः।। (कठोपनिषद् 1/3/3-6)

19) तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।। (गीता 2/68)

20) स्वविषयसम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।

ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम् (पातंजल योगदर्शन 2 54-55)

21) प्राणायाम द्विषट्केन प्रत्याहारः प्रकीर्तितः। (विवेकमार्तण्ड 117)

22) यं यं जानाति योगीन्द्रस्तं तमात्मेति भावयेत्। यैरिन्द्रियैद् विधान स्तदिन्द्रियजयो भवेत्।। (शिव संहिता 3/68)

23) योगवाणी, योगाभ्यास विशेषांक, वर्ष 11 जनवरी 1986, अंक 1, पृ. 189

24) सिद्धसिद्धान्त पद्धति, दूसरा उपदेश, 37

25) विवेकमार्तण्ड, 158-162

26) पतंजलि योगदर्शन 3/1

27) सिद्धसिद्धान्त पद्धति, गोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित, दूसरा उपदेश, 38

28) गोरखवाणी, गोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित, तृतीय संस्करण, 2071 वि., सबदी 275

29) पतंजलि योगदर्शन 3/2

30) शिव संहिता 5, 195197

31) घेरण्ड संहिता -6/1

32) विवेकमार्तण्ड 165-66

33) योगदर्शन 3/3

34) सिद्धसिद्धान्तपद्धति, दूसरा उपदेश 39

35) शिव संहिता, 5 / 216

36) विवेकमार्तण्ड, 196

37) गोरखवाणी, तृतीय संस्करण, सं. 2071, सबदी 106-181,

38) गोरक्षसिद्धान्त संग्रह, प्रथम संस्करण, संवत् 2036, 47-50

गोरक्षसिद्धान्त संग्रह, प्रथम संस्करण, संवत् 2036, 4/70-71

गोरक्षसिद्धान्त संग्रह, प्रथम संस्करण, संवत् 2036, 4/72-73

गोरक्षसिद्धान्त संग्रह, प्रथम संस्करण, संवत् 2036, 4/74-75

गोरक्षसिद्धान्त संग्रह, प्रथम संस्करण, संवत् 2036, 4/76

39) अक्षय कुमार बनर्जी, नाथयोग तृतीय संस्करण 1986 का डॉ. रामचन्द्र तिवारी द्वारा हिन्दी अनुवाद पृ. 73-74

40) वही, पृ. 74

41) अग्निपुराण 214 / 2

42) सदानन्द प्रसाद गुप्त एवं प्रदीप कुमार राव द्वारा सम्पादित 'राष्ट्रसन्त महन्त अवैद्यनाथ स्मृति-ग्रन्थ, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली 2016, पृ. 193

43) अमनस्कयोग 2/21

44) योगीराज गम्भीरनाथ योग रहस्य, महन्त दिग्विजयनाथ ट्रस्ट गोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित, पृ. 76-77

45) 'अहनिसि मन लै उनमन रहे, गम की छाड़ि अगम की कहें (गोरखबानी, सबदी 16)

46) हजारीप्रसाद द्विवेदी, नाथसिद्धों की बानियाँ, 344

47) योगवाणी, योगाभ्यास विशेषांक, वर्ष 11, 1986, अंक 1, पृ. 130

48) अक्षय कुमार बनर्जी, नाथयोग, तृतीय संस्करण, 1986. पृ. 61

49) सिद्धसिद्धान्तपद्धति, द्वितीय संस्करण, श्रीगोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित, चौथा उपदेश, 3-4 पृ. 135

50) सिद्धसिद्धान्तपद्धति, द्वितीय संस्करण, श्रीगोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित, चौथा उपदेश, 10, पृ. 137

51) सिद्धसिद्धान्तपद्धति, द्वितीय संस्करण, चौथा उपदेश, 14, पृ. 140

52) स्थूलेति निखिलग्राह्याधारविग्राह्य स्वरूपापि पदार्थन्तरे भ्रभ्यामाणा चिद्रूरूपा या वर्तते सा कुण्डलिनी साकारास्थूला पुनस्त्वियमेव स्वः प्रसार चातुर्यतया वर्तमाना योगिनां परमानन्दतया कुण्डलिनी या निश्चयभूता वर्तते सा सूक्ष्मा निराकारा प्रबुद्धा महासिद्धानां मते प्रसिद्धा।। (सिद्धसिद्धान्तपद्धति, द्वितीय संस्करण, चौथा उपदेश, 22)

53) सिद्धसिद्धान्तपद्धति, द्वितीय संस्करण, चौथा उपदेश, 23

54) ओशो, 'मरौ हे जोगी मरौ' 1978, भूमिका, पृष्ठ टप्.टप्प्

55) कवितावली, उत्तरकाण्ड, छन्द 84

56) प्रदीप कुमार राव, नाथपन्थ का समाज-दर्शन 2019, पृ. 20

57) अक्षय कुमार बनर्जी, गोरख दर्शन आमुख संवत् 2028. श्रीगोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित।

58) जार्ज वेस्टन ब्रिग्स, गोरखनाथ एण्ड द कनपफटा योगीज, पृ. 125, 150-51

59) अक्षय कुमार बनर्जी, गोरख दर्शन, पृ. 1. संवत् 2028 श्रीगोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित।

60) सिद्धसिद्धान्त पद्धति-

न ब्रह्मा विष्णुः रुद्रौ न सुरपति सुराः नव पृथ्वी न चापा

नैवाग्निर्नापि वायुनं च गगनतलम् नी दिशो नैव कालः।

नो वेदा नैव यज्ञा न च रविः शशिनौ नो विधिनैव कल्पाः

स्वः ज्योतिः सत्यम् एकं जपति तव पद्म सच्चिदानन्द-मूर्तेः ॥

61) रामलाल श्रीवास्तव द्वारा सम्पादित, गोरखवाणी, वि.सं. 2035

बसती न सुन्यं सुन्यं न बसती अगम अगोचर ऐसा।

गगन सिषर महिं बालक बोलै ताका नांव धरहुगे कैसा (सबदी -1)

62) रामलाल श्रीवास्तव द्वारा सम्पादित, गोरखवाणी, वि.सं. 2035

अदैषि देषिया देषि बिचारिबा अदिसिदि राषिबा चीया।

पाताल की गंगा ब्रह्मंड चढ़ाइवा तहां बिमल बिमल जल पीया (सबदी - 2)

63) रामलाल श्रीवास्तव द्वारा सम्पादित, गोरखवाणी, वि.सं. 2035

इहां ही आछे इहां ही अलोप इहां ही रचिले तीनि त्रिलोक ॥

आछे संगै रहे जू धा ता कारिण अनंत सिधा जोगेश्वर हुवा॥

वेद कतेब न षांणी बांणी सब ढंकी तलि आंणी।

गगन सिषर महिं सबद प्रकास्या। तहं बूझे अलख बिनाणी ॥

अलख बिनांणी दोइ दीपक रचिले तीन भवन इक जोती।

तास विचारत त्रिभुवन सूझै चुणिले माणिक मोती ॥

64) अमनस्कयोग

भावभाव विनिर्मुक्तं नाशोत्पत्ति विवर्जितम्।

सर्वसंकल्पनातीतम् परब्रह्म तदुच्यते।

65) अक्षय कुमार बनर्जी, गोरख दर्शन, पृ. 38

66) अन्तः शून्यो बहिः शून्यो शून्य कुम्भ इवाम्बरे।

अन्तः पूर्णे बहिः बहिः पूर्णः पूर्णः कुम्भ इवार्णवे।

67) गोरख दर्शन-

शून्य- अशून्य- विलक्षणम् स्फुरतिः तत् तत्वम् परम संभवम्।

68) गोरख दर्शन-

'भवेत् चिंत्यानन्दः शून्ये चित् सुख रूपिणी।

69) के. आर. नजुण्डन

70) सिद्धसिद्धान्त पद्धति

निजा पराऽपरा सूक्ष्मा कुण्डलिन्यसु पञ्चधा।

शक्ति चक्र क्रमेणोत्था जातः पिण्डपरः शिवः। (सिद्धसिद्धान्त पद्धति 1/16)

71) अक्षय कुमार बनर्जी, गोरख दर्शन, श्रीगोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित, पृ. 84

72) अपरंपरं परमपद शून्यं निरंजन परमात्मेति। (सिद्धसिद्धान्त पद्धति 1/17)

73) सिद्धसिद्धान्त पद्धति 1 / 18, 1 / 19, पृ. 24

74) सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ. 11-12,13, 23. सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ. 12

75) सिद्धसिद्धान्त पद्धति, पृ. 13, 15, 16, 17-28,29,30,31

76) अक्षय कुमार बनर्जी, गोरख दर्शन, श्रीगोरखनाथ मन्दिर द्वारा प्रकाशित, पृ. 70-72, 115-125,136-137

77) गोरक्षशतक 13

षट्चक्र षोडशाधार द्विलक्ष्य व्योमपंचकम्।

स्वदेहे ये न जानन्ति कथं सिद्धयन्ति योगिनः ॥

78) गोरक्षशतक में षडंगयोग का वर्णन है, जबकि सिद्धसिद्धान्त पद्धति में अष्टांगयोग का वर्णन है।

79) भारती सिंह, पातंजल योग नाथ परम्परा, दर्शन साधना एवं वैशिष्ट्य, 2008, पृ. 100

80) हजारी प्रसाद द्विवेदी, नाथ सम्प्रदाय, पृ. 137 हठयोग प्रदीपिका - 3 / 15 44. योगी आदित्यनाथ, हठयोग स्वरूप एवं साधना, चतुर्थ संस्करण, संवत् 2071, पृ. 25, पृ. 137, पृ. 138 एवं 139

81) प्राणतोषिणी, पृ. 835 योगी आदित्यनाथ, हठयोग स्वरूप एवं साधना, चतुर्थ संस्करण, संवत् 2071, पृ. 26, पृ. 27

82) योगी आदित्यनाथ, हठयोग स्वरूप एवं साधना, चतुर्थ संस्करण, संवत् 2071, पृ. 163

सहस्रमेकयुतं षट् शतं चौव सर्वदा। उच्चरन्पतितो हंसः सोऽहमित्यभिधीयते ॥

83) भारत के संत महात्मा, लेखक-श्री रामलाल, प्रकाशन बोरा एंड कंपनी पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई (मुंबई)

84) श्रीनाथ सम्प्रदाय : एक संक्षिप्त परिचय, चन्द्र अघोर आश्रम, रांची

85) राजनीतिक व सांस्कृतिक स्वाधीनता संघर्ष में गोरक्षपीठ का योगदान -प्रणय विक्रम सिंह

86) नाथ संप्रदाय: धार्मिक मेल-जोल की राजनीति से हिंदुत्व की राजनीति तक-सी मरेंवा कारवोस्की फुलब्राइट

87) नाथपंथ का राष्ट्रीय जीवन पर प्रभाव,राष्ट्रीय संगोष्ठी 'नाथ पंथ और भक्ति आन्दोलन' कार्तिक, कृष्ण, पंचमी - अष्टमी: २०६७ (२८, २६, ३० अक्टूबर : २०१०), महाराणा प्रताप महाविद्यालय गोरखपुर -डॉ. बृजभूषण यादव

88) स्वाधीन चेतना के विकास में संतों की भूमिका,राष्ट्रीय संगोष्ठी 'नाथ पंथ और भक्ति आन्दोलन' कार्तिक, कृष्ण, पंचमी - अष्टमी: २०६७ (२८, २६, ३० अक्टूबर : २०१०), महाराणा प्रताप महाविद्यालय गोरखपुर -डॉ. कन्हैया सिंह

89) भारतीय संस्कृति के रक्षक संत

90) दीक्षा की भारतीय परम्पराएँ

91) नाथ सम्प्रदाय - डॉ. मधुकर रामदास जोशी

92) नाथ इतिहास - प्रकाशनाथ चौहान (सरस्वती प्रकाशन)

93) सिद्ध संत और योगी - शम्भूनाथ त्रिपाठी

Government Records

National Archives of India (NAI), New Delhi

Nehru Memorial Library (NML), New

Delhi All India Hindu Mahasabha Papers

Unpublished Manuscripts

Buchanan, Francis. "An Account of the Northern Part of the District of Gorakhpur, 1812." MSS. D91-D93. Nehru Memorial Library, New Delhi.

Avali Silūk. MS 217/45. Jaipur, City Palace.

Avali Silūk. MS 12. Jaipur, *Rājasthan Prācya Vidyā Pratiṣṭān. Avali Silūk*. MS 74. Jaipur, *Rājasthan Prācya Vidyā Pratiṣṭān. Avali Silūk*. MS. 67. Jaipur, *Rājasthan Prācya Vidyā Pratiṣṭān*.

Avali Silūk. MS. 3190. Jaipur, Shree Sanjay Sharma Museum and Research Institute. Hindi MS 371. London, Wellcome Library.

Kāfir Bodh. MS 217/45. Jaipur, City Palace.

Kāfir Bodh. MS 12. Jaipur, *Rājasthan Prācya Vidyā Pratiṣṭān. Kāfir Bodh*. MS 74. Jaipur, *Rājasthan Prācya Vidyā Pratiṣṭān. Kāfir Bodh*. MS. 67. Jaipur, *Rājasthan Prācya Vidyā Pratiṣṭān.*

Kāfir Bodh. MS. 3190. Jaipur, Shree Sanjay Sharma Museum and Research Institute.

Primary Sources in English

Natha sampradaya and the Formation of Hathayoga Practices in India, Author-Adrián Muñoz-The College of Mexico

Imprinted Identity: A History of Literature and Communal selfhood in the Nath sampradaya, Author- Marrewa Karwoski, Christine- Academic Units Middle Eastern, south Asian, and African studies

Nath sampradaya_1-20.indd 20 ath sampradaya_1-20.indd 20, Author- James Mallinson

Historical Dictionary of Hinduism, Author- Bruce M. sullivan

Ahmad Ali Shah Miyan Sahib. Trans. Farhat Nasreen. *Kashful Baghaavat Gorakhpur: Unveiling the Revolt at Gorakhpur*. New Delhi: Rupa, 2010.

An Introduction to Nath-Yoga. Gorakhpur: Gorakhnath Mandir Press, nd

Alexander, E. *Statistical, Descriptive and Historical Account of the Gorakhpur District.* Allahabad: North-Western Provinces and Oudh Government Press, 1880.

Banerjea, Akshaya Kumar. *Discourses on Hindu Spiritual culture*. New Delhi: S. Chand & Co., 1967.

The Nath-Yogi Sampraday and The Gorakhnath Temple. Gorakhpur: Gorakhnath Temple, 1964.

Philosophy of Gorakhnath: With Gorakhsa-Vacana-Sangraha. 1961. Reprint, Delhi: Motilal Banarsidas, 1999.

Yogiraj Gambhirnath. Gorakhpur: Gorakhnath Temple, 1954.

Faisal, Abul. *Akbarnāma*. trans. H. Beveridge. Vol III. Calcutta: Asiatic Society of Bengal, 1939.

Final Report on the Revision of Settlement in the Gorakhpur District, United Provinces (*Tahsils Padrauana, Hata, and Deoria*).Allahabad, Superintendent, Government Press United Provinces, 1919.

Goswami, C.L. "Our Greetings" in *The Kalyana-Kalpataru: A monthly for the propagation of spiritual ideas and love of God*. 1. (1934): 9-11.

Martin, Robert Montgomery. *The History, Antiquities, Topography, and the Statistic of Eastern India, Vol. 2 Bhagulpoor, Goruckpoor, and Dinajepoor: In Relation to their Geology,*

Mineralogy, Botany, Agriculture, Commerce, Manufacturers, Fine Arts, Population, Religion, Education, Statistics, etc. Cambridge: Cambridge University Press, 1838.

Monserrate, Antonio. *The Commentary of Father Monserrate: S.J., On His Jounrey to the Court of Akbar*. trans. John S. Hoyland and S.N. Banerjee. London: Oxford University Pres, 1922.

Nevill, H.R. *Gorakhpur: A Gazetter Being Volume XXVI of the District Gazeteers of the United Provinces of Agra and Oudh*. Allahabad: Government Press, United Provinces, 1909.

North Indian notes and Queries. Allahabad: Pioneer Press, 1892.

Pantanjali, *The Yoga Sūtras of Pantañjali*. Ed., Trans., and Commentary by Edwin F. Bryant New York: North Point Press, 2009.

Santinath, Nathyogi. *Experiences of a Truth-Seeker*. Ed. And Trans. Askhaya Kumar Banerjea. n.d. Reprint, Gorakhpur: Gorakhnath Temple, 1989.

Tod, James. *Annals and antiquities of Rajasthan*. 1829. Reprint. New Delhi: Munshiram Manoharlal Publishers, 1920